सागर
के
रहस्यों की कहानी

डॉ० एच० एस० बिश्नोई

एस० चन्द एण्ड कम्पनी (प्रा०) लि०
रामनगर, नई दिल्ली-110055

विषय-सूची

सागर
के
रहस्यों की खोज

(EXPLORING THE SECRETS OF THE SEA)

१
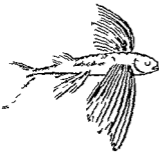
महासागर की उत्पत्ति

"तेरे नीले ललाट पर नहीं छोडता काल कोई सलवटें,
सष्टि के सजन मे था जैसा, वसा ही बना रहता तू आज भी।"—बाइरन

विज्ञान कभी न समाप्त होने वाली एक खोज है—ज्ञान की खोज, नए-नए ज्ञान की खोज, और उन निर्विवाद प्रमाणो की खोज जिनसे स्वीकृत ज्ञान की सत्यता सिद्ध की जा सके। आज यह खोज सभी दिशाओ मे बडी व्यग्रता के साथ की जा रही है। कितने ही विज्ञानी उन अति-सूक्ष्म कणो के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने मे जुटे है जिनके द्वारा परमाणु की रचना होती है और वे उस पदार्थ का अध्ययन कर रहे हैं जिसका अस्तित्व केवल एक सेकंड के कुछ अरबवे भाग तक ही रहता है। वे इस समस्त विश्व की, और इसकी रचना करने वाली लाखो-करोडो आकाश-गगाओ की जानकारी प्राप्त करने मे लगे हुए है। वे बाहरी अन्तरिक्ष मे आखे गडाए बैठे है और उसकी ओर कान भी लगाए है। उनकी बातचीत ऐसी काल मापनियो के शब्दो मे होती है जिसमे दस लाख वर्ष की कालावधि मानो भू-वैज्ञानिक घडी की सेकंड की सुई की एक टिक के बराबर होती है।

सभी विज्ञानियो मे कई बातें समान रूप मे पाई जाती है जिनमे से एक ऐसी प्रबल जिज्ञासा का पाया जाना भी है जो कभी तृप्त नही होती। कुछ विज्ञानी समुद्र को इस जिज्ञासा का विषय बनाते हैं। वे सुनहली धूप मे चमचमाती नील खुले जल की चचल लहरो के दृश्य एव उनकी ध्वनि का आनन्द तो लेते ही है किन्तु वे यह जानना भी चाहते है कि लहर किस प्रकार बनती है और साथ ही

कितनी दूर तक तथा कितने वेग से चलती ह। समुद्र की बार-बार उठती गिरती छाती की भीषण लहरा म भयकर हिचकाला क आभास म उन्हे तब आनद आता है जब वे एक अचरजभरी कल्पना करते है कि आखिर यह समुद्र कितना गहरा है और उसके नीचे क्या कुछ विद्यमान है। किसी रग बिरगी मछली का प्रवाल म बन उसके छिपने के स्थान से लालच देकर बाहर निकालना या मात मील की गहराई से किसी विचित्र एव विरल जन्तु को ड्रेज द्वारा ऊपर निकालना कितना मनोरजक है किन्तु उससे हजार गुना अधिक मनोरजक यह जानना है कि मछलिया मे रग कैसे आर क्या बनते हैं और यह कि उनकी पीठ क प्रति वग इच पर टना जल का भार पडते हुए भी वे किस प्रकार जीवित रह पाती है। अध्ययन एव परीक्षण मे प्रकृति के सौदय एव उसकी नवीनता म किसी भी प्रकार काई कमी नही आता। वास्तव मे उस समय जब कि हम प्रकृति के तौर-तरीका एव उसके उद्देश्या का समझने लगते ह ता उसके वचित्र्य एव अनभूति म इतनी वद्धि हा जाती है जिसकी कोई सीमा नही।

सागर समस्त व्यवसाया के व्यक्तिया को आपस म मिलाता है। व अधिकाश सामजस्यपूण जीवन बिताते है आर अपन जलयाना का एक बदरगाह स दूसरे बदरगाह तक लान-ल जान का काय करते है। समुद्र विज्ञानी बहुत कुछ नाविका के समान हैं। वास्तव म उन्हे ऐस नाविक बताया गया है जा बडे बडे शब्द प्रयोग करते है। व विज्ञान के हर क्षेत्र से आते ह— भौतिकी से रसायन स, जीव विज्ञान स, भू विज्ञान से, और समुद्र के रहस्या का पता लगान के लिए व सब एक साथ मिलकर काय करते है। अत समुद्र-विज्ञान अपन आप मे कोई **विशिष्ट** विज्ञान नही है अपितु उसे विभिन्न विज्ञाना का एक समुच्चय कहा जा सकता है जिसका उद्देश्य समुद्र की विभिन्न समस्याआ का अध्ययन करना एव उनका हल निकालना है भले ही व भौतिकीय रासायनिक जीव-वैज्ञानिक भू-वैज्ञानिक अथवा मौसम विज्ञान सम्बन्धी समस्याए क्या न हा।

नाविक गण अपने जहाजा का एक बदरगाह से दूसरे बदरगाह तक ल जाते है किन्तु समुद्र विज्ञानी अपन यन्त्रो एव साधना का स्वय समुद्र म एक स्थान से दूसर स्थान पर ले जाते है। जब उन्हे समुद्र तक अपनी तकनीका का लाना सम्भव नही होता ता वे समुद्र की कुछ कच्ची सामग्री यन्त्र आदि की सहायता स भीतर से निकाल लेते है या उसकी तली का कुछ भाग खुरच कर बाहर निकाल लेत है और उस प्रयागशाला म अध्ययन करन क उद्देश्य से समुद्र-तट पर ले आते है। एक एक नमूना करके एक समुद्री-मील के बाद दूसरे समुद्री-मील का फासला

तय करत हुए समुद्र विज्ञानी गण ज्ञान की सूक्ष्म नौका का उस विस्तृत सागर पर खेते जात है जिसकी विशालता की जानकारी न के बराबर है।

किंतु यह निश्चित ह कि कभी एक ऐसा समय अवश्य था जब समुद्र का अस्तित्व ही नहीं था, अर्थात एसा समय जब कि जल भरन के लिए एक धारक तक भी मौजूद नही था। वतमान धारक भू-पपटी म बनी गहरी द्राणिया ह, किंतु वे वहा हमशा से मौजूद नही रही ह। तो प्रश्न उठता ह कि पथ्वी पर गहर गहरे गढ़ो से युक्त भू पपटी का निर्माण किस प्रकार हुआ, और इन गड्ढो म जल किस प्रकार भरा ?

पृथ्वी का उदभव

दो हजार वष पूव रोम के दाशनिक सेनेका का मत था कि पृथ्वी सागर म से निकली है। उसकी कल्पना के अनुसार पथ्वी के जन्म के समय वह पूरी तरह जल से आच्छादित थी—ऐसे जल से जिसम हर तत्त्व घुला हुआ था। यह जल गम था और प्रचण्ड रूप म इधर उधर अव्यवस्थित ढग से बहता फिरता था। समय बीतने के साथ पथ्वी ठडी हुई जल शात हुआ और उसके भीतर घले हुए कण धीरे धीरे नीचे जमते गए और उनसे विभिन्न महाद्वीपो का निर्माण हुआ।

उसके तेरह सौ वष बाद, मध्य युग मे, दांते नामक एक व्यक्ति न पथ्वी

चित्र १ एक समुद्र विज्ञानी।
फोटो जान हान, वुडज होल आशेनोग्राफिक इंस्टीटयूशन

की कहानी का सशोधित रूप प्रस्तुत किया । वह सेनेका से सहमत था कि पथ्वी का जन्म समुद्र में हुआ । किन्तु उसके विचार में थल का जल के ऊपर उभरना तारा के प्रभाव के द्वारा हुआ—'उसी प्रकार के आकर्षण के द्वारा जैसा कि लोहे को खींचने वाले चुम्बक के द्वारा प्रभावित होना है ।

उसके पाच सौ वर्ष बाद, १७४९ में, काम्टे द बुफान जार्जेज लुई ल्यक्लेक ने कहा कि पथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से हुई । उसने ऐसा चित्र प्रस्तुत किया कि किसी समय एक धूमकेतु था—एक बहुत विशाल धूमकेतु जिसमें एक लम्बी अग्निसम पूछ थी—और वह इस अनन्त अन्तरिक्ष में लकीर की तरह दौडता हुआ सूर्य से जा टकराया । इस टक्कर से सूरज में से ज्वलनशील गैस के चक्कर खाते हुए गोले निकले जो घूमते हुए, अन्तरिक्ष में बढने लगे । इनमें से कुछ गैस पिंड फिर से सूरज में जा गिरे और कुछ पिंड हमेशा के लिए ओझल हो गए किन्तु नौ बडे गोलक सूर्य के इर्द गिर्द स्थायी कक्षाओं में घमन लगे । इन पिघले हुए गोलों की गर्मी शीघ्र ही अन्तरिक्ष में विकिरित होती गई और ठोस बनकर वे उन ग्रहों के रूप में बदल गए जिनसे हम आज परिचित हैं ।

सन १९०० में दो अमरीकी विज्ञानियों थामस सी० चैम्बरलेन तथा फॉरेस्ट आर० माल्टन ने यह सुझाव रखा कि वास्तविक सघट्टन अर्थात् टक्कर आवश्यक नही थी । उन्होंने धूमकेतु के स्थान पर एक तारे की कल्पना की क्योंकि तब यह पता चल गया था कि धूमकेतु केवल धूलि एव गैस के हल्के पुज के स्वरूप होते हैं । उन्होंने यह प्रस्तावना रखी कि सूर्य के निकट से गुजरते हुए किसी तारे के गुरुत्व के आकर्षण से सूर्य की सतह पर लाखों और यहा तक कि करोडो मील ऊचा ज्वार उत्पन्न हो गया । यदि वह अन्य तारा सूर्य से दस गुना बडा रहा होगा तो उसे इतना विशाल ज्वार उत्पन्न करने के लिए दो करोड मील (पथ्वी और चन्द्रमा के बीच की दूरी से पचास गुना) के फासले के भीतर आना पडा होगा। चैम्बरलेन और मोल्टन ने ऐसी कल्पना की कि यह ज्वार गुरुत्व के भीषण आकर्षण के द्वारा तब तक बाहर को खिचता गया जब तक कि ज्वार का ऊपरी सिरा एक भग्नोर्मि के समान न बन गया और फिर इस आगन्तुक तारे ने उस लहर को बहुत कुछ उसी प्रकार खीच कर तोड दिया जैसे तेज समुद्री हवा तरग शृग के शीर्ष को अपने साथ उडा ले जाती है । कुछ विशाल तप्त बूदे खिच कर उस अन्य तारे में समा गइ और तरग का प्रधान भाग पुन सूर्य में आ गिरा । किन्तु नौ बूदो को इन दो वहत् पिंडो की गति के द्वारा इतनी ऊर्जा प्राप्त हो गई जो इन्हें सूर्य के चारों ओर सदा-सदा के लिए चक्कर खिलाते रहने के लिए पर्याप्त थी ।

१९६० मे निर्माण के इस सिद्धान्त के एक नए रूप की प्रस्तावना रखी गई। इगलैंड स्थित मचेस्टर के डाक्टर एम० वुल्फसन की ऐसी धारणा है कि अन्य तारा के द्वारा सभी ग्रह सूरज मे से केवल १२ घटा मे ही उस समय बाहर निकले, जब वह तारा बहुत समीप—यहा तक कि ४० लाख मील (पृथ्वी और चद्रमा के बीच की दूरी की १७ गुनी) की दूरी पर—आ गया था। यह तारा सूर्य से सौ गुना अधिक बडे आकार का था और ६० मील प्रति सेकड के वेग से दौड रहा था। इसने सूर्य पर ज्वारीय तरगो का एक क्रम पैदा कर दिया और इन तरगो के शृग गुरुत्व के आकर्षण से खिच कर अतरिक्ष मे पहुच गए। प्लूटो, यूरेनस, शनि और वृहस्पति उस समय टूट कर अलग हुए जब कि वह दूसरा तारा समीप आता जा रहा था क्षुद्र ग्रह तब अलग हुए जब वह सूर्य के सबसे ज्यादा निकट था, और मगल, पृथ्वी, शुक्र एव बुध तब निकले जब कि वह तारा अपने मार्ग पर दूर हटता जा रहा था।

सृष्टि के प्रारम्भ के सम्बन्ध मे दिए जाने वाले ये सारे विवरण सिद्धान्त मात्र ही हैं। वास्तव मे हुआ क्या था, यह कोई नही जानता क्योकि उस समय देखने वाला कोई न था। विभिन्न सिद्धान्त विज्ञान के दाहिने हाथ है और उनके द्वारा सावधानीपूर्वक सोची-समझी हुई उस घटना का चित्र प्रस्तुत होता है जो विज्ञानियो के विचार के अनुसार घटी थी। विज्ञान का दूसरा हाथ प्रेक्षण है जिसमें विज्ञानी गण किसी सिद्धान्त को सत्य अथवा असत्य सिद्ध करने के लिए आकडे इकट्ठे करने के उद्देश्य से प्रयोगो का आयोजन करते है।

खगोलज्ञो ने आकाश मे झाक कर देखा कि क्या कही कोई ऐसी चीज

चित्र २ सघट्टन सिद्धान्त के अनुसार ग्रहो का निर्माण तब हुआ जब पास से गुजरते किसी तारे के गुरुत्व खिचाव से सूर्य में से विशाल 'तप्त बूदें' टूट कर अलग हो गई। इस प्रकार सामना होने से सूर्य के चारो ओर, कक्षाओं में जाने के लिए पर्याप्त ऊर्जा प्राप्त कर लेने के बाद तप्त बूदें ठडी होकर ठोस गोले बन गईं।

मिल सकती है जिससे इस बात का सकेत मिल सके कि सघटटन सिद्धात सही था या गलत। उन्होने देखा कि सबसे बडा ग्रह बहस्पति हर १२ वष म सूय की एक परिक्रमा करने के अतिरिक्त प्रति दस घटे म स्वय अपने ही अक्ष पर एक चक्कर लगाता है। इसका अथ यह हुआ कि बहस्पति म काफी अधिक घूणन ऊर्जा मौजूद है। यह अनुभव किया गया कि अय ग्रहो म भी काफी अधिक ऊर्जा है। वास्तव म सौर-परिवार की ९७ प्रतिशत घूणन-ऊर्जा ग्रहो म ही पाई जाती है जब कि सूय मे जो कि अपने अक्ष पर हर २७ दिन मे एक बार घूम जाता है, केवल ३ प्रतिशत घूणन-ऊर्जा है। यदि विभिन्न ग्रह किसी अय तारे के विदारी प्रभाव के द्वारा सूय मे से टूट कर निकले हुए होते तो सूय मे कही अधिक घूणन ऊर्जा बनी होती और वह बहुत ज्यादा वेग से, यहा तक कि एक घटे मे सात बार की रफ्तार से, अपने अक्ष पर घूमता होता। ऐसा इसलिए है क्योकि उस स्थिति म विभिन्न ग्रह ज्वारीय-तरग की शिखर की फुहार मात्र ही होते और तरग का प्रधान भाग और इस हेतु अधिकाश ऊर्जा भी, पुन सूय म जा मिली होती।

इन सघटटन सिद्धातो के आधार पर इस विश्व का एक ऐसे अस्त-व्यस्त स्थान के रूप म चित्र बनाया जा सकता है कि जिसमे विभिन्न तारे एक दूसरे मे जा टकराते हैं अथवा एक दूसरे पर जबदस्त धक्का सा लगाते हुए नजदीक से गजर जाते हैं और इस प्रकार उनमे टूटना फूटना लगा रहता है। तब प्रश्न उठता है कि यदि अन्तरिक्ष म इस कदर यातायात है तो क्या ग्रहो के उसी तरह छिन्न भिन्न हो जाने की काफी सम्भावना नही है, जिस तरह कि उनका सजन हुआ था ? खगोलज्ञो का कहना है कि इस प्रकार की कोई आशका नही है। एक तारे का चलते चलते किसी दूसरे तारे से टकरा जाना अत्यन्त दुलभ घटना है—इतनी दुलभ कि ठीक यही असम्भाव्यता तो वह चीज है जो सघटटन सिद्धात के स्वीकार करने म सबसे बडी आपत्ति है। अत्यन्त विस्तत अन्तरिक्ष म तारे इतनी ज्यादा दूर दूर फैले है कि इसम सन्देह है कि अरबो वष म एक बार भी कोई सघटटन अथवा तारो का नजदीक से गजरना सम्भव हो सके।

जब कभी विज्ञानियो को किसी सिद्धात के बारे मे बहुत ज्यादा आपत्तिया नजर आती हैं तो यह स्वाभाविक है कि वे तथ्यो से अधिक मेल खाने वाले किसी अय सिद्धात का विचार करते है। १७९६ म एक फ्रासीसी गणितज्ञ मार्की द लाप्लास पियरे सिमन ने एक अय सिद्धात का प्रतिपादन किया। लाप्लास और जमन दाशनिक इमैनुएल कट की धारणा थी कि विभिन्न ग्रह बिना

किसी अन्य आकाशीय पिंड के हस्तक्षेप द्वारा एक ही समय में ... से बने जिससे सूर्य बना।

लाप्लास ने कल्पना की कि प्रारम्भ में एक घूर्णन करता हुआ तारा था जिसमें एक प्रचण्ड विस्फोट हुआ और वह हर दिशा में अरबों-खरबों मील तक छितरा गया। तारे का घूर्णन, गैस और धूल के फैले गए हुए बादल में पहुंच गया जिसके कारण यह समस्त सहति धीमे धीमे घूमने लगी। जैसे जैसे यह चक्कर खाती गई, वैसे-वैसे विस्फोट से निकली गर्मी बादल में से अन्तरिक्ष में विकिरित होती गई और बादल ठंडा एवं संकुचित होना प्रारम्भ हो गया। ठीक उसी तरह जैसे कोई कलाबाज या चक्कर खाकर स्केटिंग करने वाला व्यक्ति अपनी भुजाओं को बाहर फैलाए रखने की बजाए उन्हें शरीर से सटाए रखकर अधिक तेजी से चक्कर खाता है, उसी तरह संकुचित होता जाता बादल भी अधिक तीव्रता से चक्कर खाने लगा। लट्टू की तरह चक्कर खाते जाने से बादल एक तश्तरी के रूप में चपटा होने लगा और अन्त में वह इस रफ्तार पर पहुंच गया कि उसके बाहरी सीमान्त से गैसीय पदार्थ का एक वलय टूट कर अलग हो गया। ऊर्जा की इस हानि से बादल के चक्कर खाने की रफ्तार में किसी कदर कमी आ गई किन्तु लगातार संकुचित होते जाने के कारण उसकी चाल में पुनः तीव्रता आती गई और उस हद तक पहुंच गई जब कि एक और वलय टूट कर अलग हो गया। अंततः बादल संकुचित होता हुआ आज के सूर्य के आकार तक पहुंच गया और उसके चारों ओर घूमते जाने वाले नौ या दस गैसीय वलय बन गए। लाप्लास ने सोचा कि इन वलयों की धूलि के कण अपने गुरुत्व के कारण एक दूसरे की ओर आकर्षित होते गए होंगे और ग्रहों के आकार के ठोस पिंड बनते गए होंगे।

पृथ्वी की उत्पत्ति के इस वर्णनात्मक सिद्धान्त को पहले तो अधिकांश विज्ञानियों ने स्वीकार कर लिया, हालांकि स्वयं ही लाप्लास ने सभी तफसीलों का गणितीय दृष्टि से हल नहीं किया था। साठ वर्ष इसी तरह निकल जाने पर एक अंग्रेज भौतिक विज्ञानी जेम्स क्लार्क मैक्सवेल ने इस सिद्धान्त का गणितीय परीक्षण किया। मैक्सवेल ने देखा कि पतले वलयों के गुरुत्व-बल इतने पर्याप्त नहीं रह सके होंगे कि उनके द्वारा दूर दूर छितराए हुए कण एक साथ लाए जा सकते थे। ग्रहों का निर्माण करने के बजाए वे सदा उसी तरह कायम रहते जैसे कि शनि के वलय जो गैस एवं धूलि के असंख्य कणों के बने हैं। ये कण शनि का चक्कर लगा रहे हैं किन्तु वे इतनी अधिक दूर दूर हैं कि उनमें परस्पर जमाव होकर उपग्रह नहीं बन सकता।

आज के विज्ञानी किसी विध्वंसक संघट्टन और विनाशकारी विस्फोट के

गब्दो मे नही सोचते । इसके विपरीत वे ऐसे सिद्धाता की ओर रुख वदल रह ह जिनमे विभिन घटनाऐं एक क्रमवद्ध रूप मे घटी और एक बहुत लम्बे काल म फैली हुई बताई जाती ह । इसके लिए मान शब्द विकास है । अब यह नात हो चुका ह कि अतरातारकीय आकाग रिक्त नही ह किन्तु उसमे धूलि और गैस के प्रकीण कणा से रचे हुए विरलित बादल पाय जाते हैं । इन नीहारिकाम्रा म लगभग वैसे ही पदाथ और उतने ही अनुपात मे पाए जाते हैं जितन कि सूय और अय तारा मे । इसका यह अथ है कि ये ९९ प्रतिशत हाइड्रोजन एव हीलियम की, आर लगभग १ प्रतिगत भारी तत्त्वा की बनी है । इसके विपरीत ग्रह अधिकागत भारी पदार्थों के बन है । पृथ्वी मुख्यत आक्सीजन, सिलिकन तथा लाहे की बनी ह ।

इस नई जानकारी के आधार पर डाक्टर काल वान वाइसकर नामक जमन भौतिक विज्ञानी तथा डाक्टर जेराल्ड कुयिपर नामक डच-अमरीकन खगोलन ने कैंट-लाप्लास क सिद्धात के विरोध म रखी गइ पुरानी आपत्तिया का हटाया । उन्होने सुझाव रखा कि सूय मूलत अन्तरातारकीय पदाथ के ठडे बादल अथवा किसी नीहारिका से सघनित हुआ । इस बादल का प्रधान भाग एक बहुत अधिक वडा सूय वन गया जो उस समय तक भी ठडा एव प्रकाशहीन था, तथा उसका लगभग ६ प्रतिगत भाग बाहर रह गया जो साढे तीन अरब मील की दूरी तक फैला था (यह प्लूटो तक की दूरी है) । सम्पूण तत्र किस प्रकार घूमने लगा, इस बारे मे अभी भी काइ जानकारी नही , किन्तु एक बार शुरू हो जाने के बाद लगातार सकुचन होते जान से यह घूणन लगातार जारी रहा होगा ।

कुछ मिलाकर बादल चन्द्रिका का आकृति का हो गया और चक्कर खाती हुई तश्तरी की तरह घूमने लगा । इसके विभिन्न भागा मे गुरुत्व मे अन्तर हाने के कारण, पूरा बादल कइ व्यष्टिगत काष्ठो अथवा वत्ताकार सघनना म टूट गया । इन टूटे हुए भागा के कणा मे विक्षुब्ध गति थी । ये काष्ठ केन्द्र अर्थात् सूय की ओर सब म छाटे थे और बाहरी सीमात की ओर उनका आकार बढता गया था । इनके द्वारा घूणन करते हुए वल्या का एक क्रम बन गया जिसम प्रत्येक वलय पाच काष्ठा का बना था और य कोष्ठ माला के दाना के समान अनक सकेन्द्रीय नकलसा पर बन थे (चित्र ३) । चक्कर खात हुए नकलसा के केन्द्र पर स्थित सूय अभी भी ठडा था ।

प्रत्येक नक्लस अथवा वलय का बाहरी भाग सूय के केन्द्र से लगभग उतनी ही दूर था जितनी दूर आज ग्रह है । प्रत्येक वल्य विभिन चाल के साथ घम रहा था किन्तु वल्या क बीच अथवा व्यष्टिगत कोष्ठो के बीच काई बडा सघटटन

नही हुआ। तथापि, जहा एक वलय का भीतरी सीमान्त दूसरे वलय के बाहरी सीमान्त से मिलता था, वहा ये कोष्ठ उस प्रकार से एक दूसरे के विरुद्ध चलते थे जैसे बेरिंग गीयर चलते है और सीमान्ता पर स्थित धूलि कणा म सघट्टन होता गया।
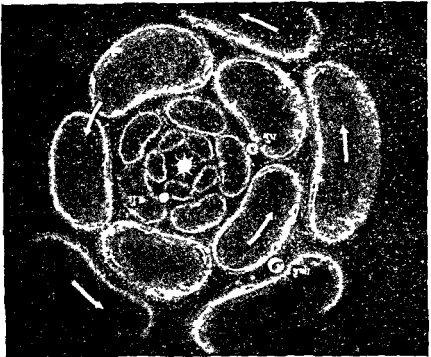
चित्र ३ सघनन सिद्धान्त के अनुसार, सूर्य और विभिन्न ग्रह एक ही समय पर धूलि और गैस के एक समस्त बादल में छितराए हुए सूक्ष्म कणों के एक-दूसरे से मिलते जाने के द्वारा बने। वान वाइसकर एव कुपियर नामक दो खगोलज्ञो का मत है कि चक्कर खाता हुआ बादल टूट कर कोष्ठो में विभक्त हो गया और, विभिन्न ग्रह उन स्थानो पर बने जहा दो कोष्ठो के सीमान्त एक दूसरे से आकर मिलते हैं।

जब कोई दो लगभग समान आकार के कण पास-पास आए तो उन्होंने एक दूसरे को पीस डाला। किन्तु जब कोई छोटा कण अपने से कहीं अधिक बडे कण से टकराया तो वह बडे कण म गड गया और इस तरह उसने उस बडे कण का आकार और भी ज्यादा बडा बना दिया। जब इस प्रक्रम म कणो ने पर्याप्त

बडा आकार ग्रहण कर लिया तब उनमे अपने गुरुत्व के कारण अपने से छोटे कणो को आकर्षित करने की क्षमता आ गई। फलत तमाम छोटे छोटे कण विलीन हो गए और पदार्थ के बहुत बडे-बडे पिंड बन गए। लगभग १० करोड वर्ष मे वे सभी भारी तत्त्व जो कि पहले महीन धूलि के रूप मे विद्यमान थे अब वलयो के बीच के मिलन स्थलो पर ग्रहो के आकार के पिंडो के रूप मे एकत्रित हो गए। वलयो की परस्पर दूरी के द्वारा इस तथ्य का स्पष्टीकरण हुआ माना जाता है कि प्रत्येक ग्रह सूर्य से लगभग उतने से दुगुनी दूरी पर स्थित है जितनी कि सूर्य की दिशा मे उससे निकटतम ग्रह की दूरी है। इसका यह अर्थ हुआ कि पृथ्वी सूर्य से लगभग उतने से दुगनी दूरी पर स्थित है जितनी वह शुक्र से है, और मगल उतने से दुगुनी दूरी पर है जितना वह पृथ्वी से है, इत्यादि, इत्यादि।

जब यह सब कुछ हो रहा था तो सूर्य सकुचित होता हुआ आधुनिक आकार पर पहुच गया और वह चमकदार एव प्रदीप्त हो गया। जब वह इस अवस्था पर पहुच गया तो उसमे से अत्यधिक मात्रा मे विकिरण बाहर निकलने लगा। यह विकिरण दबाव डालता है जैसा कि **एको I** नामक उपग्रह की कक्षा मे इसके द्वारा उत्पन्न हुए परिवर्तनो से पता चला है। इसी दबाव से धूमकेतुओ की पूछें भी बनती है जिसमे यह दबाव इन धूमकेतुओ के ऊपर आच्छादित गैस और धूलि के आवरणो को उनकी प्रधान देह से दूर की ओर उडा देता है और उसे आकाश मे एक लकीर का रूप दे देता है।

वाइसैकर-कुपियर सिद्धात के अनुसार शुरू शुरू मे विभिन्न ग्रह अवश्य ही विशालकाय धूमकेतुओ के रूप मे रहे होगे। उदाहरण के लिए, प्रारम्भिक पृथ्वी का व्यास आज की पृथ्वी के व्यास से १८०० गुना अधिक बडा था क्योकि तब यह हाइड्रोजन और हीलियम के एक बहुत बडे आवरण से घिरी थी और यह आवरण इस ग्रह के बनने मे काम नही आया था। सूर्य के विकिरण का बल ही ठीक वह चीज थी जिसके कारण यह गैस अत्यधिक लम्बी पूछो के रूप मे बाहर की दिशा मे निकलती गई और अत मे सूर्य के निकटतम ग्रहो—अर्थात बुध से मगल तक के ग्रहो—पर से पूरी तरह धक्का देकर इसे बाहर निकाल दिया गया। बाहरी ग्रह अर्थात बृहस्पति से नेप्चून तक, अधिक दूर है और उन्हे घेरे रहने वाले जो आज उनके बाहरी पर्दे है वे हो सकता है उस गैसीय पदार्थ के बने हो जो सौर-परिवार के जन्म के समय से शेष रह गया है।

इस सिद्धात द्वारा हमारी सौर-परिवार सम्बन्धी उससे कही अधिक बातो का स्पष्टीकरण हो जाता है जितना कि किसी भी अन्य पुराने सिद्धात द्वारा हो सकता था। किन्तु इस सिद्धान्त को भी हर विज्ञानी पूर्णत स्वीकार नही करता।

अनेक शंकाएं बनी है और ऐसे प्रश्न भी है जिनका कोई उत्तर नही बन पाता, फिर भी ठीक यही तो वह चीज है जिसके द्वारा और आगे अनुसंधान की उत्तेजना मिलती है। इस सिद्धान्त की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इससे इस बात की सम्भावना प्रकट होती है कि चूकि हर तारा इसी प्रकार से बना है जैसे हमारा सूर्य, इसलिए उनमे से अनेकों के अपने-अपने ग्रह-तन्त्र भी बने हो सकते है। ये ग्रह-तन्त्र इतने अधिक छोटे और प्रकाशहीन होगे कि उन्हे हम अपने टेलिस्कोपो से नही देख सकते किन्तु खगोलज्ञो का अनुमान है कि केवल आकाश-गंगा नामक गैलैक्सी मे ही बहुत ज्यादा संख्या मे—यहा तक कि एक लाख तक की बडी संख्या मे—पृथ्वी के समान ग्रह पाए जा सकते है। चूकि हमारे टेलिस्कोपो के परास मे दीख पडने वाली गैलैक्सियो की संख्या एक करोड के लगभग है इसलिए ऐसी सम्भावना है कि पूरे विश्व मे चक्कर लगाती हुई पृथ्वियो की संख्या १० खरब होगी। यदि हमारा ग्रह और सम्भवत उस पर पाई जाने वाली परिस्थितिया ये दोनो ही चीजे अद्वितीय नही है तो प्रश्न उठता है कि क्या जिस जीवन से हम परिचित है वह इस विश्व मे अन्य अनेक स्थानो पर नही पाया जा सकता?

पृथ्वी की भू पपटी

पृथ्वी चाहे सूर्य से टूटकर बनी हो या धूलि कणो के एकत्रित होते जाने से, लेकिन यह निश्चित है कि वह एक समय बहुत ज्यादा गर्म रही होगी। संघनन सिद्धान्त के अनुसार, बादलो के कोष्ठ तब बहुत ज्यादा ठडे, यहा तक कि शून्य (फारनहाइट) से भी ३७०° नीचे के तापमान पर रहे थे जब कि उनसे ग्रहो का निर्माण प्रारम्भ हुआ किन्तु संहनन (Compaction) रासायनिक परिवर्तनो एव रेडियोऐक्टिविटी के कारण गुरु के ग्रहो का तापमान बढकर २ २००—३ ३००° तक पहुच गया। धूलि कणो के बीच लगातार संघटना के कारण तथा ग्रह के केन्द्र अथवा क्रोड, मे भारी कणो के गिरने अथवा तीव्रता से घुसने से ऊष्मा के रूप मे ऊर्जा का निर्मोचन हुआ। साथ ही उस समय की रेडियोऐक्टिविटी आज की अपेक्षा १५ गुना अधिक थी और रेडियोऐक्टिवटी पदार्थों के विघटन से भी ऊष्मा मे वृद्धि हुई। इस प्रकार प्राप्त हुई ऊष्मा ग्रहो के पिंडो का निर्माण करने वाले शैलो का पिघलाव के लिए पर्याप्त हो सकती थी। उन प्रारम्भिक काल मे पृथ्वी पिघली हुई अवस्था मे रही होगी।

किन्तु, जैसे ही पृथ्वी सूर्य से अलग हुई, अथवा समस्त उपलब्ध कणो को एकत्रित कर उसकी और आगे वृद्धि रुक गई तो एक विशाल रेडियेटर के रूप मे अपनी गर्मी को आकाश मे छोडते जाने के द्वारा वह ठडी होने लगी। बाहरी

सतह ठंडी हुई और भू-पपटी बहुत कुछ उसी प्रकार से बनी जैसे देग मे पिघली हुई धातु के ऊपर धातुमल जम जाता है। यह सब जिस प्रकार हुआ उसके शब्द चित्र के लिए आइए डच भू भौतिक विज्ञानी वीनिंग माइनेज के सिद्धान्तो को लेते है ।

शुरू शुरू की बनी पथ्वी म दो बडी ऊर्ध्वाधर धाराए पिघले हुए पदार्थ को ऊपर से लेकर नीचे तक घुमाती रही । इस परिसचार से सबसे भारी पदार्थ जैसे निकेल और लोहा, केन्द्रीय भाग अथवा क्रोड मे एकत्रित होते गए और सिलिकेटो के समान भू-पपटी बनाने वाले अधिक हल्के पदार्थ सतह पर आ गए । भू-पपटीय धातुमल उस जगह इकटठा होता गया जहा पर दो धाराए मिलती और एक साथ केन्द्र की ओर समाती जाती थी । एक निश्चित क्रांतिक तापमान के नीचे तक ठंडा हो जाने से और निकेल-लोह के सघन क्रोड के बन जाने से कुछ समय के लिए ऊर्ध्वाधर धाराए चलनी रुक गई । तब धातुमल ... अवस्था म पहुच कर वीनिंग माइनेज के शब्दो मे उर महाद्वीप (Ur-

चित्र ४ विशाल परिसचारी कोष्ठो अथवा सवहन धाराओ ने पथ्वी की मूल भू पपटी को महाद्वीपीय आकारों के टुकडो में विभाजित कर दिया होगा, और ये टुकडे बाद में खिसक खिसक कर आज की स्थिति में पहुच गए होगे । भू पपटी ३ और ३० मील मोटाई के बीच में ह , प्रावार १,८०० मील मोटा (त्रिज्या वाला) ह, और क्रोड १,३०० मील त्रिज्या का ह ।
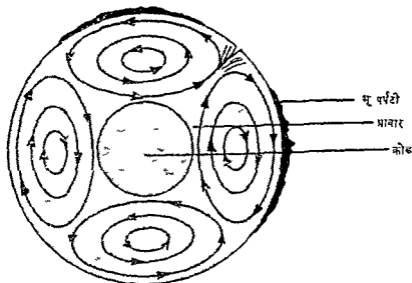
Continent) बन गया जो पृथ्वी की सतह के लगभग एक तिहाई भाग को घेर था।

हमारे ग्रह के भू-पपटी और क्रोड के बीच का वह भाग जिसे **प्रावार** (mantle) कहते है, अब ठोस अथवा सुघटय हो गया। कुछ समय बाद इस परत मे जो १८०० मील मोटी है, नये ऊर्ध्वाधर परिसचरण होने शुरू हुए। चूंकि अब उपलब्ध स्थान अधिक सीमित था इसलिए परिसचरण अनेक विभिन्न कोष्ठो मे अथवा भवरो मे विभाजित हो गया (**चित्र ४**)। ऊपर को उछल कर आने वाले पदार्थ के बल से अरं महाद्वीप खडित हो गया और उसके टुकडे उन क्षेत्रो की ओर खिसकते गए जहा दो सलग्न भवरो के, नीचे जाने वाले पार्श्व मिलते थे। तब ये स्थान और उन पर बने भू पपटी के खड अलग अलग महाद्वीप बन गए।

महाद्वीपो के बीच के स्थानो मे जब ठोस पदार्थ भर गए और आगे ठडा होने पर पुन धाराओ का चलना रुक गया तथा पदार्थ का ऊपरी भाग ठोस बनकर विभिन्न महासागरीय अधस्तल बन गया। महासागरीय अधस्तल केवल लगभग तीन मील मोटे है किन्तु महाद्वीपो की मोटाई औसतन २० से ३० मील है। महाद्वीपो मे पदार्थ तो अधिक है किन्तु भार कम है। ये दोनो ही नीचे स्थित *मुलायम प्रावार के ऊपर* 'तिर रहे है और *विभिन्न* महाद्वीप हल्के होने के कारण उछाल के द्वारा महासागर अधस्तल से ऊपर आ गए। जल मे तिरते हुए हिमशैलो की तरह महाद्वीपो का अधिकाश भाग सतह के नीचे गहरे 'मूलो के रूप मे छिपा है। महासागर-अधस्तल अधिक भारी शैल के बने होने के कारण महाद्वीपो की अपेक्षा अधिक नीचे समतल पर तिरते है—महाद्वीपो के औसत समतल के १३ ००० फुट नीचे। अत ये अधस्तल उन द्रोणियो की तली बनाते है जिनमे महासागरो का जल भरा होता है और महाद्वीपो के सीमान्त द्रोणियो के पार्श्व बनाते हैं।

पृथ्वी की आयु

अब प्रश्न है कि यह सब किस समय हुआ ? इसके उत्तर का सकेत रेडियो-ऐक्टिविटी से मिलता है—उसी रेडियोऐक्टिविटी से जिसने पृथ्वी के जन्म के समय इतनी अधिक गर्मी पैदा की थी और जो आज भी पृथ्वी के भीतरी भाग से सतह की ओर आने वाली ऊष्मा का स्रोत है।

रेडियोऐक्टिविटी का सिर्फ यह अर्थ है कि कुछ परमाणु टूटते जा रहे है—न कि दो भागो मे विपाटित हो रहे है जैसा कि परमाणु-बम मे होता है। उनमे से केवल छिपटिया निकलती जा रही हैं। बाहर निकलने वाली छिपटिया

अथवा खड हानिकारक विकिरण बन जाते है। यही विकिरण ता परमाणु युग की इतनी बडी समस्या है। रेडियाऐक्टिव पदार्थ का इस प्रकार छटते रहना पूर्णत याद्दच्छिक रूप मे होता है। यह इस बात पर निर्भर नही होता कि वह पदार्थ कहा पर है, अथवा वह अत्यधिक ठडा या अत्यधिक गर्म है, अथवा किसी भी समय वह किस विशेष दशा मे है। अनिश्चित कालान्तरा पर रेडियाऐक्टिव तत्त्व मे से—जैसे यूरेनियम मे से—उसका अपना ही एक खड प्रचड रूप मे बाहर निकल जाता है। इसमे से तब तब खड निकलते जाते है जब तक यह एक अन्य तत्त्व मे नही बदल जाता। यूरनियम मे क्षय होते हुए विभिन्न तत्त्वा का एक पूरा क्रम बनता जाता है और यह क्षय तब तक जारी रहता है जब तक अन्त मे लेड (सीसा) नही बन जाता।

इस क्षय अथवा रेडियाऐक्टिविटी को अर्ध आयु (*half life*) नामक शब्द मे मापा जाता है। अर्ध-आयु का अर्थ है कि यूरेनियम की (अथवा किसी भी अन्य रेडियाऐक्टिव तत्त्व की) किसी एक मात्रा के आधे भाग का सीसे मे (अथवा किसी भी अन्य अंतिम उत्पाद मे) बदलने मे कितना औसत समय लगता है। कुछ तत्त्वा मे अपने को आधा करने मे अरबो वर्ष लग जाते हैं जब कि अन्य तत्त्वा को केवल कुछ ही सेकंड लगते है। रेडियो एक्टिव यूरेनियम के दो प्रकार पाए जाते हैं—यूरेनियम २३८ और यूरनियम २३५। यूरेनियम २३८ की अर्ध-आयु ४,५०० ००० ००० वर्ष है और यूरनियम २३५ की अर्ध-आयु ७००,००० वर्ष।

भू विज्ञानी इन तथा अन्य क्षय कालो को सही-सही घडियो के रूप मे प्रयोग कर के पृथ्वी की भू-पपटी को बनाने वाले शैलो की आयु का पता लगा सकते हैं। जब तक कोई शैल पिघली अवस्था मे रहता है तब तक कोई भी नया बनते जाने वाला सीसा बहकर अपने निर्माण-स्थल से दूर हटता जाएगा। किन्तु जब यूरेनियम धारक शैल ठोस हो जाता है तो यूरेनियम से उत्पन्न हुआ सीसा अपने जनक यूरेनियम के तुरन्त निकट रहता है। शैल जितने अधिक काल तक बना रहता है, उत्पन्न होने वाले सीसे की मात्रा भी उतनी ही अधिक होती है। अत बस इतना करना होता है कि एक ही शैल मे सीसे और यूरेनियम की मात्रा माप ली जाए। यह जानते हुए कि एक विशिष्ट काल मे यूरेनियम से सीसे की कितनी मात्रा बनती है आप शैल की आयु का, अर्थात उस समय का पता लगा सकते हैं जब कि वह ठोस बनी थी। यदि एक पौंड यूरेनियम २३८ के बराबर मे चौथाई पौंड सीसा मिले, तो आप कह सकते है कि वह शैल २ अरब २५ करोड वर्ष पुराना है।

१९६० मे तमाम दुनिया मे आए हुए विभिन्न भू विज्ञानी एव भू रसायनज्ञ न्यूयार्क नगर म एकत्र हुए थ। उन सबका उद्देश्य विभिन्न महाद्वीपो के निर्माण करन वाले शैलो की आयु मे सम्बधित अपनी-अपनी टिप्पणियो की तुलना करना था। सबस पुरान शैल दक्षिणी अफ्रीका मे बताए गए आर व चार अरब वष से कुछ ऊपर की आयु के थ। यदि पथ्वी की भू-पपटी म इस प्रकार के शैल मिलत है जो चार अरब वप पहले ठास अवस्था म पहुचे तो इसका अथ यह होगा कि पथ्वी कम से कम इतनी पुरानी तो है ही। वास्तव म य चट्टाने कुछ अय चट्टानो म से काटती हुई गुजरती है जिनके बार म भू विज्ञानियो को मालूम है कि वे अपनी स्थिति के अनुसार और भी अधिक पहले काल की है किन्तु उनमे कोई रेडियोएक्टिव खनिज नही मिलता ह जिससे यह कहना सम्भव नही ह कि व कितनी अधिक पुरानी ह।

यूरनियम-सीसा विधि म कभी-कभी कठिनाई आ जाती ह क्योकि यह जरूरी नही कि किसी शैल म पाया जान वाला तमाम सीसा यूरनियम के ही क्षय से आया हो। उसम स कुछ अरेडियोजेनी (non radiogenic) सीसा हो सकता है अर्थात वह सीसा जो सदा सीसा ही रहा है अय कुछ कभी नही रहा। **रेडिओजेनी** (radiogenic) तथा स्थायी सीस का पृथक करने की समस्या उल्का पिण्डो (meteorites) की सहायता से हल कर ली गई ह।

मगल और वृहस्पति के बीच म अनक शैल समूह ह जो कक्षा म घूम रह है। इन शैलो की मोटाई ४८० मील से लेकर कुछ इच तक की है। इन्हें **क्षुद्र ग्रह** (asteroids) कहा जाता है और सामायत यह धारणा है कि य एक ऐसे ग्रह का प्रतिदश ह जो कि लगभग अय ग्रहो क निर्माण के समय ही बना था किन्तु बाद मे एक विस्फोट के कारण टुकडे टुकडे हो गया। जो उल्कापिड पृथ्वी से आकर टकरात ह, अथवा घषण के द्वारा इसके वायमडल मे ही जल जाते है उन्हे क्षुद्र ग्रह अथवा उनके टुकडे समझा जाता ह। उल्कापिड दो प्रकार के होते है आश्मिक उल्कापिड (stony meteorites) जिनकी रचना पृथ्वी के प्रावार क शैलो के समान होती ह और लोह उल्कापिड (iron meteorites) जिनकी लगभग वही रचना मानी जाती ह जो कि निकेल लोह क्रोड की है।

लोह उल्कापिड म यूरनियम नही होता। अत उनमे पाया जान वाला सीसा रेडियोएक्टिव क्षय क द्वारा नही बना हो सकता। यह सब स्थायी सीसा ही होना चाहिए जो कि उसी समय बना था जब कि उल्कापिड (और इसी से क्षुद्र ग्रह) तथा पथ्वी ठोस अवस्था मे बदल थे। आश्मिक उल्कापिडो मे यूरेनियम तथा दोनो प्रकार के सीस पाए जाते ह। इनमे से प्रत्यक का अनुपात उतना ही

होना चाहिए जितना पृथ्वी म है। ाह् उल्कापिडा मे पाए जा वाल स्थायी सीस की मात्रा का आदिमक उल्कापिडा म पाए जाने वाल कुल सीस म स घटाकर भू विज्ञानी इस वात का पता ाा लेते हैं कि ग्रहा के ममस्त जीवनकाल म हुए रेडियाऐक्टिव क्षय के द्वारा वन सीस की मात्रा कितनी है। इस मात्रा स हम यह नात होना है कि आदिमक उल्कापिडा और पथ्वी की आयु ८ ६ अरब वप हैं।

कैलिफोर्निया इस्टीटयूट आफ टेक्नालाजी के डाक्टर क्लेयर सी० पटरसन (Dr Clure C Patterson) न इसी प्रयाग को किया किन्तु उन्होंने आदिमक उल्कापिडा के स्थान पर प्रशान्त महासागर की तली की लाल मिटटी को लिया। यह मिट्टी महाद्वीपीय अपरदन द्वारा वन शल चूण की वनी है जा कि नदिया द्वारा समुद्रा मे पहुचता है। इस मिटटी के सघटन क रूप म महाद्वीपा पर पाए जाने वाले समस्त विभिन्न शैला का एक अच्छा औसत सघटन पता चल जाता ह। जब इस मिटटी की आयु का हिसाब लगाया जाता है तो वह ४ ७ अरब वप निकलती है—यह सख्या आदिमक उल्कापिडा के आधार पर निकाली गई आयु से बहुत ही उत्तम रूप म मिलती है।

विज्ञानिया द्वारा पृथ्वी की आयु निर्धारित करने के और भी तरीके हैं। इन सभी तरीको की एक उल्लेखनीय बात यह है कि हालाकि व बहुत ही विभिन्न सिद्धाता पर आधारित ह फिर भी उन सब के द्वारा पथ्वी की आयु ४ और ५ अरब वप के बीच ही आती है।

महासागरों में जल कसे आया

नई-नई बनी पृथ्वी अशात अवस्था मे रही होगी। इसकी मूल गसा का कुछ अश एक विशाल धूमकेतु पुच्छ के रूप मे बाहर निकल गया किन्तु फिर भी इस दमकते हुए ग्रह को एक सघन आवरण से ढके रख सकने के लिए उनकी पर्याप्त मात्रा बची रह गई। जब सूय के दवाव से यह मोटी आवरक परत फटी, तब पथ्वी मे से—जा कि बहुत तेजी से चक्कर खा रही थी—बहुत सारी मात्रा मे भाप और अन्य गैसें बाहर निकली और व भी पथ्वी के आद्य आवरण म मिल गइ। इस प्रकार हमार वतमान वायुमण्डल का प्रारम्भ हुआ।

जब पथ्वी ठडी और ठोस होनी शुरू हुई तो उस समय यह घना वायुमडल कदाचित जल-वाष्प (भाप) से पटा हुआ था। ठडे होते जाने से भाप पिघलती गई और इस काले उबड-खावड ग्रह पर मूसलाधार बारिशें पडने लगी—ऐसी बारिशें जैसी उसके बाद कभी नही आइ। कुल कितनी बारिश हुई यह कोई नही

जानता। पहले ऐसा सोचा जाता था कि यह अतिवृष्टि सदियों तक चलती रही और महासागरीय द्रोणियाँ जल से भर गईं। हाल ही में इस धारणा पर बहुत आपत्ति प्रकट की गई है। अनेक भू-विज्ञानियों की अब ऐसी विचारधारा है कि महासागर और हमारे ऊपर का आधुनिक वायु-आवरण दोनों ही इस पृथ्वी के पूरे जीवनकाल में उसके भीतर से धीरे-धीरे बाहर निकले हैं।

प्रारम्भिक भू-पपड़ी एक बहुत बड़े सुरंड अथवा पपड़ी के समान थी। इसकी असमेकित और अस्थिर गतियों के कारण चौड़ी-चौड़ी दरारें पड़ गईं और नाना लम्बाई की इन दरारों में भीतर से उबल-उबल कर कुछ पदार्थ ऊपर आ गए। ज्वालामुखियों, वाष्पमुखों एवं गर्म सोतों से जल बाहर आया—जो न तो भारी मात्रा में ही था और न ही सबका सब एक साथ बाहर आया—बल्कि अरबों वर्ष तक वह धीरे-धीरे बाहर को निकलता रहा। कालिफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉक्टर लॉरेन्स जे० कुल्प ने यह तक प्रस्तुत किया है कि बहुत ऊँचे तापमानों पर, जैसा कि नई-नई बनी पृथ्वी पर पाए जाने रहने की कल्पना की जाती है, (१८००—५६०० फा०) जल-वाष्प अन्य पदार्थों के साथ रासायनिक संयोजना में नहीं रहा रहता। यह एक अति भीषण प्रक्षोभ अवस्था में रहता है और अन्य गैसों के साथ मिलकर सतह की ओर आने का प्रयत्न करेगा।

यह मान लेते हुए कि उल्कापिंडों में उनके आकार के अनुसार उतने ही अनुपात में जल पाया जाता है जितना मूल पृथ्वी में था, डाक्टर कुल्प ने आश्मिक उल्कापिंडों में जल की मात्रा को मापा और उसे आधे से एक प्रतिशत तक पाया। भारी निकल लोहा क्रोड को छोड़कर पृथ्वी का भार ६० अरब-खरब टन (६ के बाद २१ शून्य) है। अतः अनुपात की दृष्टि से इसमें ३० करोड़ खरब (३० के बाद १८ शून्य) पानी होना चाहिए। यदि इस जल में से केवल ६ प्रतिशत ही भीतर से बाहर निकल कर आया हो तो उससे महासागरों में पाए जाने वाले तमाम जल का हिसाब निकल आता है (जो कि लगभग २ करोड़ खरब टन है अथवा पृथ्वी के हर व्यक्ति के लिए लगभग ६० करोड़ टन)।

डॉक्टर कुल्प का मत है कि महासागरीय द्रोणियाँ लगभग अपने आज के समतल तक पृथ्वी के जीवनकाल के प्रथम एक अरब वर्ष में ही भर गई थीं। उसके बाद से आज तक इनमें थोड़ी-थोड़ी मात्रा में लगातार और अधिक जल आकर मिलता रहा है। अन्य विज्ञानियों का ख्याल है कि जल का भरना इतनी तीव्रता से नहीं हुआ। संयुक्त राज्य अमेरिका के भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण (जियालाजिकल सर्वे) के डाक्टर विलियम डब्ल्यू० रूबे का मत है कि पृथ्वी के जीवन इतिहास के प्रारम्भ में आज के महासागरों का केवल ५ या

१० प्रतिशत भाग बना था और शेष भाग समस्त भू-काल में धीरे धीरे जन्ता गया। रूबे ने यह दर्शाया है कि ज्वालामुखियों, वाष्पमुखों और गर्म स्रोतों से जिस दर से आज जल निकल रहा है, यदि पिछले ४ अरब वर्ष से भी यही दर चली आ रही है तो महासागरों को भरने के लिए अब तक पर्याप्त जल निकल चुका होगा।

वैज्ञानिक बहुमत यह जान पड़ता है कि जैसे ही पृथ्वी इतनी सीमा तक पर्याप्त ठंडी हुई कि वायुमंडल की भाप म द्रवण होकर वह जल वृष्टि के रूप म पृथ्वी पर गिर सके तभी से किसी न किसी प्रकार का महासागर बन गया था। इन प्रारम्भिक महासागरों में कितना जल था और वह कितना खारी था, अभी तक इनके बारे म कोई जानकारी नही है। किन्तु ऐसा काफी निश्चित जान पड़ता है कि आज तक लगातार और अधिक जल इनमें जुड़ता रहा है। ऐसी सामान्य धारणा है कि महासागरों का आज का समतल ५० करोड़ वर्ष से पहले किसी समय पहुंच गया था और तब से जो धीरे धीरे वृद्धि हुई है उसमें आयतन में बहुत ही अल्प परिवर्तन हुआ है। जल की यह नगण्य वृद्धि अन्य प्राकृतिक घट बढ़ के द्वारा छिप जाती है जैसे बर्फ की टोपियों के रूप में पानी का जमा हो जाना अथवा पिघलने पर उसका पुन विमुक्त हो जाना।

जो भी हो, कम से कम एक विख्यात विज्ञानी—कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के स्क्रिप्स इंस्टीट्यूशन आफ ओशेनोग्राफी के निदेशक डाक्टर रौजेर रेवले इस मत को स्वीकार नही करते कि समुद्र इतने शुरू में ही भर गए थे। उनकी धारणा है कि बहुत-सा यहा तक कि महासागरों में पाए जाने वाले कुल जल का एक चौथाई भाग, बहुत बाद में १० से १५ करोड़ वर्ष पहले के बीच में शामिल हुआ होगा। डॉ० रेवल ऐसा मानते है कि उस समय पर महासागरीय अधस्तल एक अति भीषण ज्वालामुखी क्रिया का दृश्य था। अधस्तल पर बहुत विशाल मात्रा में लावा उगला और उसके साथ साथ जल और कार्बन डाइ-आक्साइड दोनो ही निकले जो महासागरों में तथा वायुमण्डल में भर गए। समुद्र विज्ञानियों ने लावा प्रवाहों एवं महासागरीय अधस्तल के अवसादों में ऐसी क्रियाओं के संकेत पाए है और उन्होंने ऐसे अन्य प्रमाण भी खोजे है, जिनसे पता चलता है कि भू-वैज्ञानिक इतिहास में लगभग इस अवस्था पर कुछ असाधारण घटना घटी। हालांकि, अधिकतर प्रमाणों से पता चलता है कि विभिन्न महासागर और महासागरीय द्रोणियां पिछले ६० करोड़ वर्ष से लगभग एक-से बने रहे है, फिर भी जैसे-जैसे और अधिक जानकारी प्राप्त होती जा रही है उससे यह

स्पष्ट होता जाता जान पडता है कि १० और १५ करोड वर्ष पहले के बीच के काल में निश्चय ही एक क्रांतिक परिवर्तन हुआ।

समुद्र विज्ञान एक नवीन और प्रगतिशील विषय है। इसकी संकल्पनाएं और इससे विभिन्न सिद्धांत लगातार बदलते जा रहे हैं यहां तक कि कभी-कभी वे 'तथ्य' भी बदल जाते हैं जो बड़ी कठिनता से स्थापित हो पाए थे। जैसे-जैसे नई जानकारी प्राप्त होती जाती है वह पुरानी जानकारी में जुड़ती जाएगी। हो सकता है कि परिणामी जानकारी कुछ पुराने सिद्धांतों के लिए भारी चोट सिद्ध होकर उन्हें छिन्न भिन्न कर दे किन्तु साथ ही वह नवीनतर सिद्धांतों के लिए आधारस्वरूप भी सिद्ध होगी—ऐसे सिद्धांतों के लिए जो तथ्यों और प्रेक्षणों का अधिक उत्तम स्पष्टीकरण प्रस्तुत करेंगे जो प्रयोगों के परीक्षणों पर टिक सकेंगे, और जो अन्ततः हमारी पृथ्वी और उसके महासागरों के विषय में विभिन्न समस्याओं का हल प्रस्तुत कर सकेंगे।

२

जीवन का जन्म-स्थान

"मेरे लिए सागर एक सतत चमत्कार है।"—ह्विटमैन

हालांकि पृथ्वी कम से कम ४॥ अरब वर्ष पुरानी है किन्तु मानव के पद-चिह्न एवं उसकी अस्थियां फासिल रिकार्ड में आज से १० लाख वर्ष से अधिक पूर्व से नहीं मिलती। चार्ल्स डार्विन के विचार से मानव का प्रारम्भ अफ्रीका में हुआ, और वस्तुतः वहां प्राचीनतम मानव के समान खोपड़ियां भी वहीं मिली हैं। कुछ मानव विज्ञानियों का मत है कि मानव पहले-पहल मध्य एशिया में रहता था। वह कहीं भी उत्पन्न हुआ हो पर यह निश्चित है कि मानव की सर्वोत्तम उन्नति समीप एवं दूर पूर्व की नदी घाटियों में हुई। लगभग ६५०० वर्ष पहले उसने बर्बरता से सभ्यता की ओर पहला कदम उठाया। उसके लगभग ५०० वर्ष बाद मिस्र वासियों ने लिखने की कला का आविष्कार किया और इतिहास ने जन्म लिया। उसके बाद अगले कुछ हजार वर्ष तक सभ्यता भू-मध्यसागर के इर्द गिर्द केन्द्रित रही।

गहरे समुद्र की ओर पहला साहसिक कदम उठाने वाली प्रथम मानव जातियों में से एक थे—फिनीशियन। चारों ओर थल से बंधे भू मध्यसागर की सुरक्षा को छोड़कर हर्कुलिस के स्तम्भों (जिब्राल्टर जलडमरूमध्य) में से खेते जाते हुए वे अज्ञात अटलांटिक में पहुंचे। आज से तीन हजार वर्ष पूर्व उन्होंने यूरोप और अफ्रीका के समुद्र-तट के सहारे साहसी यात्रा की और यहां तक कि वे ब्रिटिश

द्वीप समूह तक घूमे । अपनी समुद्र यात्राओं का हर दिशाओं में बढ़ाते हुए व हिन्द महासागर तक पहुचे। ऐसा करने के लिए व अपनी नावाजा को नील नदी में से खेते हुए और प्राचीन निस नहर को पार कर लाल सागर म पहुचे थे । इन समुद्री यात्राओं से फिनीशियनों का यह विचार आया कि महासागर दुनिया के तमाम स्थल को घेरा वाली एक अविच्छिन्न जल सहति है।

फिनीशिया और कार्थेज के प्राचीन नाविकों ने हर्कुलिस के स्तम्भों से पश्चिम की ओर स्थित महासागर का एसा चित्रित किया है कि वह 'एक ऐसा स्थान है जिसके क्षितिज का कहीं छोर नजर नही आता, जहा कभी कोई अनुकूल हवा नही बहती, स्वर्ग से निकला हुआ उच्छवास कभी पाला को नहीं भरता और वायुमण्डल सदैव कुहासे से घिरा रहता है—ऐसा कुहासा जो कि काली काली भाप का बना होता है और दिन के प्रकाश को धुधला कर देता है।'
मासिलो (मार्सेल्स) के पिथियास ने ४००-३५० ईसा-पूर्व म उत्तर की ओर उत्तर ध्रुव वत्त तक समुद्र यात्रा की। उसने उत्तर ध्रुव सागरों का वर्णन एक ऐसे स्थान के रूप में किया जहा न पृथ्वी न जल, और न वायु अलग-अलग पाए जाते है बल्कि उनका एक प्रकार का सग्रथन सा पाया जाता है—समुद्री स्पज से मिलता-जुलता—जिसमे पृथ्वी, सागर और सभी वस्तुए निलम्बित रहती है ।

ईसा के बाद की पाचवी शताब्दी के दौरान मध्य यूरोप म उत्तर और पूर्व से आने वाली बर्बर जातियों की एक लहर आई। इन आक्रमणों ने एक युग का प्रारम्भ किया जो ३०० वर्ष तक चला और जिसमें पश्चिमी यूरोप में अधिकतर विज्ञान, अनुसधान और चिंतन के स्थान पर जादू टोना आशका और बौद्धिक अधकार का साम्राज्य छा गया। फिर भी, लगभग १००० ई० के आसपास पश्चिमी मानव तमा-युग स बाहर आने लगा और इस बार वह पहले से भी अधिक शक्तिशाली एव साहसी रूप म बाहर आया।

खुली नौकाओं मे बैठकर और कुतुबनुमा तक की सहायता के बिना समुद्री डाकू स्कैंडिनेविया से लेकर, ग्रीनलैंड और आइसलैंड तक पहुचने लगे। ८७० ई० म ओथार ने नार्थ कैप का चक्कर किया और उत्तर ध्रुव महासागर म पहुचा। इनमें सबसे साहसी समुद्री डाकू एरिक 'दी रेड' का पुत्र लाइफ एरिक्सन था जिसने १००० ई० मे अमरीका की खोज की। वह लैब्रेडोर, न्यू फाउन्डलैंड और सम्भवत न्यू इंगलैंड के तटो पर उतरा और इस प्रकार अमरीका मे इसी ने सबसे पहले अस्थायी उपनिवेश स्थापित किए।

इसमें सदेह है कि अमरीका की १४९२ मे पुन खोज करने से पहले

कोलम्बस को कभी इन समुद्र यात्राओं के बारे में कोई ज्ञान था। नार्वे निवासियों ने कोई लिखित रिकार्ड नहीं रखे और उनकी कठिन भाषा बहुत ही कम लोग बोलते थे। वास्को ड गामा ने अफ्रीका का चक्कर लगाते हुए यात्रा की और १४९७ में भारत पहुंचा। १५१३ की २५ सितम्बर को सीएरा क्वारक्वा नामक पर्वत की चोटी से वास्को नने डे वालबोआ ने डूबते हुए सूरज की ओर फैला हुआ एक नया निस्सीम महासागर देखा—यह प्रशांत महासागर था।

फर्डिनैंड मैगेलान ने सितम्बर १५२० में दक्षिण अमरीका की दक्षिणी नोक पर स्थित शैल-द्वीपों के बीच-बीच के सकरे मार्गों में से अपने जहाजों को निकाला और इस प्रकार नौका द्वारा पूर्व से पश्चिम की ओर प्रशांत महासागर में पहुंचने वाला वह पहला व्यक्ति था। वह एक इतनी बड़ी समुद्र-यात्रा पर निकला था जिसके आगे उससे पहले की सभी समुद्र यात्राएं बहुत छोटी थी। उसने १५१९ में स्पेन से यात्रा शुरू की और पश्चिम की ओर वह तब तक चलता रहा जब तक अन्त में उसने १५२१ में फिलीपीन द्वीप-समूह की खोज नहीं कर ली। वहां के मूल निवासियों से युद्ध करते समय वह मारा गया। मगेलान की पांच नौकाओं में से **विक्टोरिया** नामक अंतिम नौका में सवार होकर सबैस्चियन डेल कानो ने यात्रा जारी रखी और १५२२ में पुनः स्पेन पहुंच गया। यात्रा शुरू करने वाले २८३ व्यक्तियों में से केवल १८ व्यक्ति जीवित बच जो अभियान की कठिनाइयों को झेल सके। यही वे सबसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने समुद्र द्वारा दुनिया की परिक्रमा की। इस यात्रा में तीन वर्ष और बारह दिन लगे।

उसके सत्तावन वर्ष बाद सर फ्रांसिस ड्रेक ने पूरी दुनिया का चक्कर लगाते हुए दूसरी यात्रा की और वह पहला यूरोपियन था जिसने संयुक्त राज्य अमरीका के पश्चिमी तट की खोज की। इतिहास के सब से महान् नौ-संचालक कप्टेन जेम्स कुक ने १७६९ से १७९९ की अपनी समुद्र यात्राओं में प्रशांत महासागर का बेरिंग जलडमरूमध्य से दक्षिण ध्रुव वृत्त तक का सर्वेक्षण किया।

बीगल की समुद्र यात्रा

कैप्टेन कुक की यात्राओं को छोड़कर १८०० ई० से पहले की अन्य सभी समुद्र-यात्राओं एवं खोज-यात्राओं का उद्देश्य व्यापार, संप्रयोजन अथवा उपनिवेश बनाना था। समुद्र में जाने वाले ऐसे बहुत ही कम व्यक्ति थे जो सिर्फ ज्ञान की ही दृष्टि से जानकारी हासिल करना चाहते थे, और उन्होंने प्रकृति का ध्यानपूर्वक देखने एवं उसके रहस्यों को खोज करने का लगभग प्रयत्न नहीं किया।

किन्तु कुछ ऐसा व्यक्ति था जिसके मन में नई-नई बातें जानने और समझने की प्रबल जिज्ञासा थी। हर यात्रा में वह अपने साथ प्रकृति विज्ञानियों एवं खगोलज्ञों को ले जाया करता था। इस विधि का विज्ञान में रुचि रखने वाले अन्य समुद्र कप्तानों एवं नौ संचालन अफसरों ने भी अपनाया। इस विधि के द्वारा ही खगोलज्ञ एडमंड हैली—जिसके नाम पर 'हैली धूमकेतु' नाम रखा गया—के समान व्यक्तियों को अटलांटिक में यात्रा करने का अवसर मिला जिससे वे नौ-संचालन की जानकारी में सुधार और पृथ्वी के चुम्बक-क्षेत्र का अध्ययन कर सकें।

१८३१ ई० में एक युवा प्रकृति विज्ञानी को जिसने तभी-तभी कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से शिक्षा पूरी की थी, एक ब्रिटिश सर्वेक्षण जहाज-यात्रा में पूरी दुनिया की समुद्र-यात्रा करने का निमंत्रण मिला। उसके पिता ने इसमें आपत्ति प्रकट की क्योंकि वह अपने पुत्र को पादरी बनाना चाहता था, किन्तु इस युवा व्यक्ति में प्रकृति के प्रेक्षण के लिए जो प्रबल उत्कण्ठा थी उसने हर विरोध एवं अन्य अभिरुचि को पीछे हटा दिया। उसने अपने बचपन के बारे में लिखा था— "मुझे पक्षियों की आदतों को देखने में बहुत आनन्द आता था ... मुझे याद है कि अपने सीधे स्वभाव में मैं सोचा करता था कि हर भद्र पुरुष पक्षी विज्ञानी क्यों नहीं बन जाता।"

अपनी समुद्र-यात्रा का वर्णन उसने इस प्रकार किया ... भीषण दक्षिण पश्चिमी तूफानों द्वारा दो बार पीछे हट जाने के बाद एच० एम० एस० 'बीगल' जो कि कप्तान आर० एन० फिट्जराय के नेतृत्व में दस गन वाली ब्रिगैंटीन नौका थी, २७ दिसम्बर, १८३१ को डेवनस्पोर्ट से रवाना हुई। इस जहाज-यात्रा का उद्देश्य पैटेगोनिया और टीएरा डेल फ्यूगो के समुद्र-तटों का सर्वेक्षण करना था ... और पूरी दुनिया की परिक्रमा करते हुए क्रमबद्ध काल मापन† करना था। चार्ल्स डार्विन ने अपने जीवन के अगले पांच वर्ष बीगल पर सवार होकर संसार के विभिन्न जन्तुओं और पौधों का अध्ययन करते हुए बिताए। इन्हीं अध्ययनों से वह अन्ततः अपने उस प्रसिद्ध सिद्धान्त पर पहुंचा जिसमें कहा गया है कि विभिन्न जन्तु धीरे धीरे एक स्वरूप से दूसरे स्वरूप में बदलते हुए परिवर्तित होते जाते हैं—अर्थात ये विकसित होते जाते हैं और यद्यपि आज वे एक दूसरे से पूरी तरह भिन्न और सम्बन्ध रहित जान पड़ते हैं तथापि वे समान पूर्वजों के वंशज हैं।

---

†इसमें समय के मापन किए जाते हैं जिनसे स्थान के निर्धारण में सहायता मिलती है।

बीगल कनरी तथा केप वर्डे द्वीपो पर पहुचा और फिर अटलांटिक को पार कर १८३२ की फरवरी म ब्राजील के समुद्र-तट की ओर पहुचा। अगले दो वर्ष तक डार्विन ब्राजील क अत्यधिक वर्षा वाले और जीव-जन्तुओ से भरपूर जगलो म तथा युरुग्वे एव आर्जेंटिना के पम्पास नामक खुले घास-स्थलो म घूमा और पैटैगोनिया के निर्जन प्राकृतिक मैदानो की खोज की। उपद्रवी इडियनो स उसे छुपना छिपना और जान बचाकर भागना पडा—ये इडियन चिली क
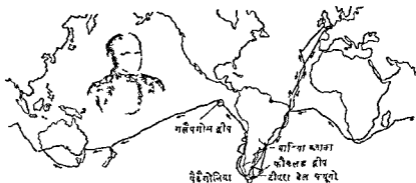
चित्र ५ लगभग ४० वर्ष की आयु का डार्विन, और १८३१ ३६ में दुनिया की परिक्रमा करने वाली समुद्र-यात्रा के लिए निकले हुए एच० एम० एस० बीगल का मार्ग। इसी समुद्र-यात्रा के दौरान डार्विन ने इतने प्रमाण एकत्रित कर लिए थे, जिनके द्वारा उसने सिद्ध कर दिया कि जन्तु एक स्पीशीज से दूसरी स्पीशीज में विकसित होते अथवा धीरे धीरे परिवर्तित होते जाते हैं। विकास एक वज्ञानिक तथ्य ह, सिद्धात नहीं। डार्विन के विकास सम्बन्धी सिद्धात में उसकी इस विचारधारा का निर्देश ह कि प्राकृतिक वरण द्वारा यह विकास किस प्रकार हुआ।

पर्वतो म लेकर आर्जेंटिना क अटलांटिक समुद्र-तट तक फैले थ और किसी भी अनजान व्यक्ति क सामने आने पर वे उसे तुरत मार डालते थे। इस प्रकृति विज्ञानी न इन इडियनो तथा जनरल रोसास की सेना क बीच एक खूनी युद्ध का हाल भी देखा।

पूरे दक्षिण अमरीका में घूमते समय डार्विन ने सूक्ष्म कीटो से लेकर मानव भक्षी प्यूमा तथा जागुआर तक हर जन्तु का अध्ययन किया। जैसे-जैसे वह उत्तर स दक्षिण की चलता गया तो उसने देखा कि एक ही प्रकार के जन्तु विभिन्न परिवेशो म किस प्रकार बदलते जा रहे थ। उनके स्वभाव एव शरीर रचना का

विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए उसने निष्कर्ष निकाला कि महान् भू वैज्ञानिक काल मे प्रत्येक जन्तु धीरे-धीरे बदलता रहा है।

बाहिया ब्लाका बन्दरगाह की लाल मिटटी मे डार्विन ने उन जातियो के जन्तुओ की फासिल हड्डिया पाइ जो बहुत काल पहले विलुप्त हो चुकी थी। उसने यह नतीजा निकाला कि इनमें से अनेक फासिल लुप्त कडियो के रूप म थ जिनके द्वारा सम्बध रहित जान पडन वाले आधुनिक जन्तुओ के बीच का शरीर सम्बन्धी सयोजन प्राप्त होता है। यदि लाखो वर्ष पहले समाप्त हो चुके कुछ फॉसिल सरीसृपो मे कुछ ऐसे लक्षण मौजूद हो जो आजकल पक्षियो और स्तनधारियो दोनो ही म पाए जाते हो तो क्या यह नही कहा जा सकता कि सरीसृप पक्षियो और स्तनधारियो के दूर के पूर्वज है? 'मनुष्य के हाथ चमगादड के पख, सील के पख और घोडे की टाग मे पाइ जाने वाली हड्डियो की समान व्यवस्था—जिराफ एव हाथी की गर्दन मे कशेरुका की समान सख्या का पाया जाना—और ऐसे ही अन्य असख्य तथ्यो का, धीमे और सूक्ष्म परिवर्तनो के साथ होने वाली वशजनो के सिद्धात के आधार पर तुरन्त अपने-आप स्पष्टीकरण हो जाता है।

अग्नि का देश

पैटेगोनिया तथा फाकलैंड द्वीपो को पीछे छोडकर 'बीगल' आगे बढा और दक्षिण अमरीका की अन्तिम दक्षिण नोक पर स्थित टीएरा डेल फयूगो अर्थात अग्नि के देश मे पहुचा। धूमिल और क्षीण होते जाते जगलो से ढके इस वीरान पर्वतीय प्रदेश को मैगेलान ने यह नाम इसलिए दिया था कि उसने अधकारयुक्त तट को प्रदीप्त ज्वाला बिन्दुओ द्वारा प्रकाशमान करने वाली इडियन शिविर-अग्नियो को देखा।

बीगल ने केप हार्न पर पहुच कर जहाज का रुख घुमाया ही था कि वह सीधे पश्चिम मे जाने वाले एक तूफान के मुह म आ गया। इसके बाद एक और तूफान आया और फिर उसके बाद एक और। यह क्रम तब तक चलता ही रहा जब तक कि प्रचण्ड हवाओ और धाराओ ने जहाज को और भी दूर दक्षिण म धकेल न दिया, जहा से किनारा आखो से ओझल हो गया था। व ५ धस कर चिपट गए। खीचातानी के जोर से मस्तूल तक मुड गए मुश्किल से किसी तरह व पुन समुद्र-तट तक पहुचने मे सफल हुए उछाले भरती प्रचण्ड लहरो ने २०० फुट ऊचे मेडे, मुखभा से टकरा तीव्र वेगवान ने उन्हे फिर से समुद्र म धकेल दि

'बीगल' अपने पथ से भटक गया। तूफान जारी था। डार्विन ने लिखा 'समुद्र अशुभ दीख पड़ रहा था, एक सूने ऊंचे-नीचे मैदान के रूप में, जिसमें बहकर आए हुए बर्फ के टुकड़े तिर रहे थे, और जब कि जहाज बड़ी मुश्किल से चल रहा था, तब गैल्बट्रास पक्षी अपने पंख फैलाए हवा में तैर रहे थे।' विशाल लहरों ने 'बीगल' में टक्करें मार-मार कर उसे हिला दिया। एक भारी लहर डेक के ऊपर से गुजरी और एक बड़ी जीवन-नौका को पानी से भर दिया। इस झटके से जहाज ऐसा डगमगाया कि एक ओर अतिरिक्त भार हो जाने से जहाज उस तरफ बहुत ज्यादा झुक गया। सुकान का जहाज पर कोई असर नहीं हो रहा था। यदि इस समय एक और लहर 'बीगल' पर चोट करती तो वह टूटकर छिपटियों का तैरता हुआ ढेर बन जाता।

जीवन-नौका को काट कर हटा दिया गया। जहाज सीधा हो गया और पाल काम करने लगे। किंतु कप्तान फिट्ज राय और उसके साथी जहाज को चीत्कार करते हुए तूफानों के विरुद्ध पश्चिम की ओर नहीं चला सके। मौसम में शांति आने पर उन्होंने टीएरा डेल फ्यूगो के इर्द-गिर्द स्थित निर्जन द्वीपों के बीच-बीच में चक्कर खाती हुई भूल-भुलैया जैसी खाड़ियों में से एक में आश्रय लिया। यही वह स्थान था जहां डार्विन को आदि फ्यूगोवासी इंडियनों को देखने का मौका मिला और वह यह लिखने के लिए प्रेरित हुआ कि मैं यह विश्वास नहीं कर सकता था कि जंगली और सभ्य मानव में इतना अधिक अंतर होगा।

"जितनी गिरी हुई और दयनीय दशा मैंने इन व्यक्तियों की देखी उतनी और कहीं देखने को नहीं मिली।' बर्फ जमने के निशान से केवल दस या पन्द्रह डिग्री ऊंचे ताप में रहने वाले ये इंडियन, केवल लामा अथवा सील की खाल के छोटे-छोटे ओढ़ने अपने कंधों पर डाले रहते थे। बहुत ही कम लेकिन कभी-कभी वे पूरी तरह नंगी अवस्था में रहते थे। डार्विन ने एक दृश्य की याद करते हुए लिखा 'एक दिन, अपने कुछ ही दिनों के पैदा हुए शिशु को छाती से लगाकर दूध पिलाते हुए एक स्त्री हमारे जहाज के समीप आई और वह बड़ी अचरज भरी दृष्टि से हमें देखती रही। उसी समय उसके नग्न स्तनों तथा उसके नग्न शिशु के ऊपर वर्षा के साथ आने वाले बरफ के टुकड़े गिरे और गर्मी पाकर पिघल गए।'

फ्यूगोवासी मुख्यतः शेल फिश तथा सील का भोजन करते थे और भोजन की तलाश में पथरीले तट पर जहां-तहां घूमते फिरते थे। हर मौसम में और दिन के हर समय ज्वार के उतरने पर इन व्यक्तियों को किनार की चट्टानों में शेल फिश की तलाश करते देखा जा सकता था। वस्त्रहीन स्त्रियां और बच्चे बर्फ जैसे ठंडे पानी में चलते फिरते या गोता लगाते—इसलिए कि खाने के लिए

वही कुछ समुद्री अडे या केकडे आदि मिल जाए। या फिर व छोटी छोटी नावो मे बैठकर अपने गुथ हुए बालो मे मछली पकडने के लिए चारा लगाकर उन्हे पानी मे लटका कर इस ताक म बैठ जाती कि कब कोई मछली उनके बालो म मुह मारे और कब व उसे झटका देकर जल के बाहर निकाल ले। वे झापडियो मे रहत थे। य झापडिया जमीन म गाडी हुई टूटी शाखाओ पर बनी होती थी जिनकी छत का घास और सरपत स पाट लिया जाता था। इन भद्दे आश्रयो मे "पाच या छह मानव प्राणी—वस्त्रहीन और वहा के तूफानी मौसम और बारिश से मुश्किल स ही बचने वाले—भीगी जमीन पर जानवरो की तरह गुडिया मुडिया हुए सोते ह।'

डार्विन न अनुभव करते हुए लिखा— आदतो को सवशक्तिमान, और उसके प्रभावो का वशानुगत बनात हुए, प्रकृति ने फयूगोवासियो को उनके दयनीय देश के जलवायु एव अन्य कठोर परिस्थितियो के लिए अनुकूल बना दिया है।" फयूगोवासी किसी तरह इन चरम परिस्थितियो के लिए अनुकूल बन गए थे। उनके सभी बच्चे कठोर थे, जो इस तरह के न थे वे बस जीवित ही नही रहत थे। इसी चीज को डार्विन न प्राकृतिक वरण का नाम दिया— यही प्राकृतिक वरण विकास का प्रेरक बल है।

इस प्रकृति विज्ञानी का यह विश्वास था कि मनुष्य और उससे निम्नतर जन्तु अपने आप को पृथ्वी के किसी भी पर्यावरण के लिए अनुकूल बना सकते है— भले ही वह पर्यावरण उनके लिए कितना ही प्रतिकूल क्यो न हो। उसे हर कान और सूराख मे, जहा जीव जन्तुओ के पाए जान की सबसे कम आशा थी, वहा भी जीवन देखने को मिला, और उसन लिखा हम यह कहना ही होगा कि ससार का हर भाग जीव सष्टि के निवास-योग्य है—भले ही वह खारी पानी की झीलें क्यो न हो अथवा ज्वालामुखी पवतो के पीछे छिपी हुई अन्त भूमिक झीलें ही क्या न हो। इसी तरह खनिज जल के गम स्रोत लम्बे चौडे गहर महासागर वायुमण्डल की ऊपरी सतह और यहा तक कि सतत जमी रहन वाली बर्फ की सतह—इन सभी स्थानो मे जीव जन्तु रहत ह।

सन् १८३६ की २ अक्तूबर को एच० एम० एस० **बीगल'** इगलैण्ड के फालमाउथ बन्दरगाह पर जाकर रुका और इस प्रकार चार्ल्स डार्विन जीव-विज्ञान के उस फल के उत्तम बीजो को लेकर घर लौटा था जिसे उसन अपनी विवादास्पद पुस्तक **'दि ओरिजिन आफ स्पीशीज'** (अथात् **'स्पीशीजो की उत्पत्ति'**) म लगाया ताकि उसके फलो का लाभ समस्त ससार को मिल सके।

जीवन की कहानी

'दि ओरिजिन आफ स्पीशीज़' नामक पुस्तक म जीव-सष्टि मे घटित हान वाले धीम परिवतन अथवा विकास का उल्लेख किया गया है, न कि जीवन की मूल उत्पत्ति का। डार्विन की धारणाओ क बारे म बहुत ज्यादा मतभेद ह फिर भी प्रभावशाली वैज्ञानिक तथ्यो के द्वारा न्हे सन्तोषप्रद ढग मे, और वास्तव मे निर्विवाद रूप म सिद्ध किया जा सकता है। अलबत्ता जीवन के उदभव के बारे मे हमे स्थापित तथ्यो के क्षेत्र से बाहर निकल कर एक अत्यन्त काल्पनिक सिद्धान्तो के क्षेत्र मे जाना होगा। इस दिशा म जाने का सबसे उत्तम माग रूसी जीव रसायनज्ञ ए० आई० ओपैरिन (A I Oparin) न स्थापित किया।

आपैरिन की धारणा थी कि जीवन का जन्मस्थान महासागर था। आज भी अधिकाश विज्ञानियो का यही विश्वास है। कुछ साधारण रसायन उपलब्ध हो जाने के बाद गुनगुने जल न वह स्थायी परिवेश प्रस्तुत किया जिसमे य पदार्थ अधिक लम्बे काल तक बिना परिवर्तित हुए कायम बन रह सकते थ। महासागरो की कभी न रुकने वाली गति के कारण य निर्जीव रसायन एक साथ पास-पास आए—उनम प्रतिक्रियाए हुई और व सयोजित हुए। प्रतिक्रिया क लिए मिलन वाले अरबो वष और अरबो की सख्या म सम्भावित सयोजनो के उपलब्ध होन क कारण यह कोई अचरजभरा चमत्कार नहीं था कि इस कार्बनिक शोरबे म जीवन का प्रारम्भ हो जाए अपितु प्रारम्भिक पथ्वी पर जो परिस्थितियाँ विद्यमान थी उनम जीवन का सजन होना एक स्वाभाविक तथा अनिवाय घटना थी।

सबसे पहले क सरल तत्व मूल अन्तरातारकीय बादल से आए। आज हर जीवित वस्तु म पाया जाने वाला कार्बन सूय मे पाया जाता ह और हाइड्रोजन इस विश्व के पदाथ क दस म-स-नौ भाग की मात्रा मे पाई जाती है। अत य दोनो तत्त्व पथ्वी क आदिकालिक वायुमण्डल म अवश्य ही मौजूद रहे होगे। कार्बन रसायन-जगत का बादशाह है। इसम अन्य तत्त्वो स सयोजित होन की विस्मयकारी क्षमता पाई जाती ह। ओपरिन की धारणा है कि कार्बन के बादल बनो के रूप म अथवा ठोस कणो क रूप मे द्रवित हुए और नीचे गिरते समय पथ्वी की भारी धातुओ के साथ—जैसे लोहे क साथ—सयोजित होकर उन्होने कार्बाइड नामक यौगिको का निर्माण किया। इस प्रकार कार्बन वायुमण्डल मे पथक होकर, ठडी और ठोस होती जाती भू-पपटी का भाग बन गया।

इस समय पर वायुमण्डल हाइड्रोजन गैस तथा अतितप्त वाष्प मे सम्पन्न

मरा था। जैसे जैसे पृथ्वी ठंडी होती गई, नई भूपपटी म मौजूद कार्बाइडा के साथ इन गैसा की प्रतिक्रिया हानी गई और हाइडोकाबन नामक सयोजन बन। काबन आर हाइडाजन का यह साहचय ही बहुत महत्त्वपूण है क्याकि इसके द्वारा ही सरलतम कावनिक यौगिको का निमाण हाता है। इहे कावनिक (अथवा आरगैनिक) इसलिए कहा जाता है क्योकि आज वे जीवित प्राणिया म अथवा इन पाणिया द्वारा उत्पन्न पदार्थों के अलावा अयत्र बहुत ही कम पाए जाते है।

रसायन की दृष्टि मे हाइड्रोकाबन बहुत ही सरल हात हैं लेकिन इनमे अत्यत विविध रसायन सयोजनो की क्षमता पाई जाती है। प्रतिक्रियाओ का तीव्र करने के लिए वायुमण्डल की ऊष्मा के द्वारा और सूय के पराबगनी विकिरण† तथा पथ्वी की रेडियोऐक्टिविटी से प्राप्त ऊर्जा के द्वारा जल-वाष्प एव अय गैसो के साथ हाइड्राकाबना का सयाजन सम्भव हो सका जिससे नाइट्रोजन और ऑक्सीजन के यौगिक बने। जैसे-जैसे पथ्वी का ठडे हात जाना जारी रहा मूसलाधार वर्षा वायुमण्डल से इन यौगिका को बहा कर लाती रही और अतत उन्हें प्रारम्भिक महासागर मे पहुचा दिया। सम्पूण जीवित पदाथ का ९९ प्रतिशत भाग काबन हाइड्रोजन, नाइट्राजन और आक्सीजन का बना होता है। अत जीवित पदाथ बनाने वाले ये सभी अश समुद्र मे उसके निमाण काल मे ही मौजूद थे।

इन कावनिक यौगिको के बीच होन वाली अयाय क्रियाए महासागर म समाप्त नही हुईं। उल्टे, उनमे न केवल एक दूसरे के साथ ही प्रतिक्रिया हुई बल्कि जल की हाइड्राजन तथा आक्सीजन के साथ और वर्षा द्वारा थल से बहाकर लाए हुए रसायनो के साथ भी हुई। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि ज्वालामखी पवता न पथ्वी के भीतर से गर्मी और कार्बाइडो को बाहर पहुचाया और पराबगनी विकिरण तथा पृथ्वी की उच्च रडियाऐक्टिविटी स वह ऊर्जा प्राप्त हुई जिसके द्वारा सरल यौगिका का उनसे भी अधिक जटिल यौगिका म परिवतन सम्भव हुआ। य यौगिक अणुओ के रूप म मौजूद थे—अथात उन सूक्ष्मतम रचनाओ के रूप म जिनमे किसी भी पदाथ को तब तक विभाजित किया जा सकता है जब तक कि उस पदाथ की रासायनिक प्रकृति उनम कायम रहती है।

जल के परिसचार द्वारा अणु लगातार एक-दूसरे के समीप आत रह। उनमे टक्कर हुइ प्रतिक्रियाए हुइ व पथक हुए, सयाजित हुए और उन्होंने एक दूसर को नष्ट किया। हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन आर काबन के

†यह एक ऊर्जा विकिरण है जो सूय स निकलता है और कोरी आखा से नही देखा जा सकता। धूप मे काला पड जाना इसी विकिरण के कारण होता है।

कुछ मूलभूत यौगिक, ओपैरिन के शब्दों में, "अपार रासायनिक सम्भावनाओं से प्रभावित थे।' उनमें अत्यंत विविध प्रकार के संयोजन हो सकते थे, और कल्पना किए जा सकने वाले हर प्रकार के जटिल अणु का उनके द्वारा निर्माण हो सकता था जिसमें जीवधारियों में पाए जाने वाले अणु भी शामिल हैं।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि ऐमोनिया (नाइट्रोजन और हाइड्रोजन का एक यौगिक) और कार्बन डाइआक्साइड महासागर में मौजूद थे तथा ऐमोनिया, हाइड्रोजन और मथेन गैस (कार्बन और हाइड्रोजन का एक यौगिक) वायुमण्डल के अंश थे। सन १९५२ में कैलिफोर्निया इन्स्टीट्यूट आफ टैक्नॉलॉजी के स्टैनले एल० मिलर ने यह सिद्ध करके दिखाया कि इस प्रकार के संयोजन और पराबैंगनी विकिरण से क्या किया जा सकता था। उसने विकिरण के स्थान पर एक विद्युत स्फुलिंग का प्रयोग किया और जल तथा इन गैसों को इस स्फुलिंग के बराबर से घुमाते हुए एक सप्ताह तक गुजारते रहे। इतना समय बीत जाने के बाद इस जल का विश्लेषण करने पर उसे अनुभव हुआ कि इसमें ऐमीनो अम्ल नामक पदार्थ बन चुके थे। ऐमीनो अम्ल वे इकाइयां हैं जिनसे प्रोटीनों का निर्माण होता है और विभिन्न प्रोटीन उन दो मूल पदार्थों में से एक हैं जिनके द्वारा तमाम जीवधारियों की रचना होती है।

आदिम महासागर में सरल अणुओं का निर्माण एक सप्ताह तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि कम से कम दो अरब वर्षों तक ऐसा हुआ। महाद्वीपों का निर्माण करने वाली खुली हुई अपरदनशील भू-पपटी की तुलना में महासागर एक शांत आश्रययुक्त पर्यावरण था। उस समय कोई बैक्टीरिया न थे जिनसे क्षय हो सकता था और आक्सीजन जो कि मुक्त अवस्था में अणुओं का विघटन कर देती है अन्य तत्वों के साथ सयोजित होकर बंधी हुई थी। अतः यह सम्भव है कि शर्करा (जो कि हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और कार्बन का एक यौगिक होती है) के समान पदार्थ बन सकते थे और पूर्ण बने रह सकते थे।

सभी अणुओं में गठन की प्रवृत्ति होती है अर्थात परस्पर मिलने पर वे स्वतः अनुस्थितियुक्त और सु-आकृति वाली रासायनिक संरचनाओं में व्यवस्थित हो जाते हैं। एक ऐसी संरचना जिसमें पांच भुजाओं वाले एक वलय अथवा पंचभुज के बाहर-बाहर व्यवस्थित नाइट्रोजन, कार्बन एवं आक्सीजन-हाइड्रोजन संयोजन बने हों, आदिम महासागर में बन सकती थी। ऐसी व्यवस्थाओं को नाइट्रोजन आधार कहते हैं और वे अकेले पंचभुज के बने हो सकते हैं अथवा इस तरह कि एक ही भुजा की साझेदारी में दो पंचभुज एक साथ लगे हों। जब नाइट्रोजन-आधार कुछ विशिष्ट शर्कराओं के साथ और फॉस्फेटों नामक

यागिका के साथ सयाजित हाते ह ता उनस "यूक्लिक अम्ल" बनाने वाली इकाइया का निर्माण होता है—ये "यूक्लिइक अम्ल जीवित वस्तुआ का एक अय मूलभूत पदाथ हात ह ।

"यूक्लिइक अम्ल प्रकृति के सवाधिक मूलभूत यागिका म से है क्याकि य ही ऐसे सूक्ष्मतम एव सरलतम अणु ह जिनम अपने ही समान अणुआ का पुनरुत्पादन करने की क्षमता पाई जाती ह । यदि आदिम महासागर म एक बार भी इस प्रकार के एक या कद अणुआ का अस्तित्व हा गया हागा तो आदश परिस्थितिया मे व अपक्षाकृत थाडे ही समय म प्रतिकृतिया द्वारा अरबा की सख्या मे समान अणुआ का जन्म दे सके हागे । रासायनिक परिवतना और विकिरण द्वारा प्रेरित परिवतना से कुछ अणु अय अणुआ से कुछ भिन्न बन गए हागे । इन परिवतना को उत्परिवतन (म्यूटेशन) कहते ह ।

अनेक जीव विज्ञानिया का विश्वास है कि पुनरुत्पादन की क्षमता और उत्परिवतन की क्षमता ही जीवन की मूलभूत विशेषताए ह । दूसरे शब्दा मे, किसी भी वस्तु मे यदि पुनरुत्पादन और उत्परिवतन हा सकता है ता वह जीवित है और जिसमे य चीजे नही हा सकती वह मृत है । मान लिया एक ऐसा अणु कभी था जिसम ये दोना चीजें हो सकती थी । तो फिर हम आज पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीवन की तमाम विविधता और जटिलता पर डार्विन के सिद्धात और विवरण का लागू कर सकते ह ।

विकास, प्राकृतिक वरण और योग्यतम की उत्तरजीविता

डार्विन के सिद्धात मे कहा गया है कि कोई भी परिवतन, अथवा उत्परिवतन एक पीढी म दूसरी पीढी मे जनन के प्रक्रम द्वारा पहुचता है। काई भी परिवतन—चाहे वह कितना ही छोटा क्या न हा—यदि किसी जन्तु का अथवा किसी अणु का उन्ही परिस्थितिया म अय जन्तुआ या अणुआ मे अधिक कारगर बना देता है तो उसके द्वारा वह जन्तु या वह अणु अपने अय साथिया को क्षति पहुचाते हुए प्रगणित हाता जाता ह। यही प्राकृतिक वरण की क्रिया है ।

उत्परिवतना से विविध प्रकार के "यूक्लिइक अम्ल अणुआ का निमाण हुआ हागा जा कुछ-कुछ स्वच्छन्द जीवी जीनो† के रूप म रहे होंगे। ये अणु प्रतिकृतिया

---

† ये उप-सूक्ष्मदर्शीय कण ह जा आज जीवित कोशिका के केन्द्र मे पाए जाते हैं। ये पुनरुत्पादन कर सकने वाली सूक्ष्मतम इकाइया मे से ह, और इन्ही के द्वारा माता पिता के गुण उनकी सन्तान म पहुचते है ।

वनने की क्रिया के वाद एक दूसरे से चिपक गए होगे अथवा सतत गतिमान महासागरो द्वारा एक-दूसरे के साथ आ गए हागे जिससे व्यक्तिगत जीना के वने हुए धागा के ममान सरचनाए वनी हागी। य अधिक वडे और अधिक सक्र अणु, जा कि आदिम क्रामामोमा† के तुल्य रह हागे स्वय भी उत्परिवतना मे से गुजरे होगे। प्राकृतिक वरण द्वारा केवल व ही अणु उत्तरजीवी रह गए हागे जिनमे महासागर के लिए सब से अधिक अनुकूल रासायनिक सयाजन एव सरचना पाई जाती होगी और उनके व साथी जा अपन परिवश के लिए उतनी अच्छी तरह अनुकूलित नही थे क्षतिग्रस्त हुए हागे। यह भी हा सकता है कि कुछ वर्गो के अणु विकास मे आगे बढ़न के याग्य न रहे हो और वे अपने रचक भागा मे खडित हा गए हागे। इन भागा का उन अणुओ ने ग्रहण कर लिया हागा जा परिस्थितिया के लिए अधिक अनुकूल थ, और इस तरह वे अणु और भी अधिक जटिल बन गए हागे।

गठन प्रवत्तिया के अतिरिक्त, आज क जान हुए अनेक वर्गो के अणुआ म जल के लिए प्रवल आकषण पाया जाता है और व अपन चारा ओर जल क अणुआ की बनी एक घेरने वाली झिल्ली अथवा त्वचा का निर्माण कर लेते है। प्रारम्भिक महासागर के अणु-वग भी ऐसी ही त्वचाआ का निर्माण कर सके हागे। ये वग अय वर्गो की अपेक्षा अधिक सुरक्षित एव अधिक स्थिर थे और उनमे अपन जल-आवरणा म आहार की सप्लाई का सचय करने की क्षमता थी। ऐसे ही वर्गो से प्रथम कोशिकाए बनी। निश्चय ही, नग्न' अणुआ की अपक्षा य कोशिकाए अधिक लाभपूण स्थिति म थी और शीघ्र ही महासागर म इनका प्राबल्य स्थापित हो गया होगा।

इन कोशिकाआ म अपनी झिल्लिया के द्वारा शकरा, ऐमीना अम्ला आदि के सूक्ष्म अणुआ के रूप म कावनिक पदाथ सोखन की क्षमता रही होगी। वे इन पदार्थों के साथ रासायनिक प्रतिक्रिया करती हागी जिसमे से मुक्त हान वाली ऊर्जा का वे अपने को बनाए रखने मे प्रयोग करती हागी और बाहरी कावनिक पदाथ को अपने पिंडा म जाडती जाती हागी। इस प्रकार कोशिका का साइज और भार बढ़ता गया होगा—दूसर शब्दा मे उसमे वद्धि हाती गइ हागी।

†क्रोमोसोम किमी जीवित कोशिका की सरचना की एक इकाई हात है जा कि जीना की बनी होती है और क्रोड अथवा केन्द्रक मे स्थित रहती है। शिशु मे माता पिता दाना से आधे-आधे क्रोमासाम प्राप्त हाते हैं।

किसी कोशिका की वृद्धि की दर क्या रही होगी यह उस कोशिका के भीतर पाए जाने वाले अणुओं और उनकी व्यवस्था पर निर्भर रहा होगा। इसके द्वारा यह निर्धारित हुआ कि समुद्र से पदार्थों को निकाल कर ग्रहण करने के लिए वह कोशिका कितनी अच्छी तरह अनुकूल हो सकी थी। रासायनिक दृष्टि से सर्वोत्तम व्यवस्था वाली कोशिकाओं में वृद्धि का होना और पुनर्संघटन आगे जारी रहा। जिन कोशिकाओं में इतना उत्तम अनुकूलन नहीं था उनके हिस्से का कार्बनिक पदार्थ अन्य कोशिकाओं ने छीन लिया। इस प्रकार कोशिकाओं में एक प्रकार की वृद्धि प्रतियोगिता शुरू हो गई।

कोशिकाओं में अनिश्चित सीमा तक वृद्धि नहीं होती रह सकती थी। अततः वे इतने बड़े साइज पर पहुच जाती जो न स्थिर रह सकता था और न ही लाभकारी। कोशिका की बाहरी त्वचा के क्षेत्रफल के अनुपात में कोशिका के भीतर इतना अधिक पदार्थ भर जाता कि यह त्वचा कोशिका को पूरी खुराक पहुचाने के लिए थोड़ी पड़ जाती। परिणामतः बड़ी कोशिकाएं दो छोटी छोटी कोशिकाओं में टूट जाती होगी।

जनन की यह विधि आज भी समुद्र में रहने वाले एककोशिक जन्तुओं में देखी जा सकती है। जैसा कि आज होता है, उसी तरह प्रारम्भिक महासागर में भी सन्तति कोशिकाओं में जनक कोशिका के कागगर रसायन एव सरचना विरासत के रूप में पहुच जाते रहे होगे। इसी विरासत और अधिक सुविधाजनक साइज के कारण ये नई कोशिकाएं विशिष्ट अधिक अनुकूल थी और वे तेजी से बढ़ती गई। अपनी बारी में वे भी बड़े आकार की बनी और उनमें भी विभाजन हुआ।

इस तरीके से महासागर में संघटित पदार्थ की मात्रा और गुणता दोनों ही बढ़ते गए किन्तु इसके कारण उपलब्ध कार्बनिक आहार की मात्रा में कमी होती गई होगी। हम सहज ही यह कल्पना कर सकते हैं कि एक स्थिति ऐसी आ गई होगी जब आहार की तुलना में कोशिकाएं कहीं अधिक संख्या में रही होगी। परिणामतः एक जीवन संघर्ष प्रारम्भ हो गया होगा जिसके कारण केवल योग्यतम ही उत्तरजीवी रह सकता था।

उत्तरजीवी कोशिकाओं को आहार के प्राप्त करने एव प्रयोग करने में अधिकाधिक कुशल होना पड़ा। साथ ही उनमें से कोई भी इतना स्थिर नहीं थी कि उसका विघटन न हो सकता हो। किसी भी ऐसे म्यूटेशन अथवा परिवर्तन का होना, जो कि रासायनिक सरचना की दृष्टि से सबसे हानिकर हो—जिसका अर्थ होगा वृद्धि की गति एव लय में किसी भी प्रकार की कमी का आना—अन्ततः उस कोशिका के घुलकर नष्ट हो जाने का कारण बन जाता। उसके टूटे हुए भाग

तब किसी एक अधिक सुचारु रूप में संघटित एवं अनुकूलित कोशिका में शामिल कर लिए जाते ।

योग्यतम कोशिकाओं के विभिन्न भागों में भी अपघटन की प्रक्रिया हो सकती थी । तथापि यह एक अनिवार्य दोष था क्योंकि नए पदार्थ को बनाने और जीवन को चलाते रहने के लिए विभिन्न भागों के विघटन द्वारा मुक्त होने वाली ऊर्जा नितान्त आवश्यक थी । उत्तरजीवी कोशिकाओं अर्थात आदिम एककोशिक जीवों में अवश्य ही ऐसी संघटना बन गई होगी जिससे वृद्धि एवं अपघटन में एक उचित संतुलन बना रह सकता था । तनु महासागरीय शोरबे में से कार्बनिक पदार्थ का लगातार अवशोषण होता रहा । यह अवशोषित पदार्थ अपघटित भागों के प्रतिस्थापन में तुरंत प्रयुक्त होता गया । वृद्धि एवं निर्माण का विनाश के ऊपर प्राबल्य बना रहा । यही वह गतिमान स्थिरता है जिसे जीवन की संज्ञा दी जाती है ।

आदितम पौधे और जंतु

मुक्त ऑक्सीजन के अभाव में अपने ही भीतर संचित रासायनिक ऊर्जा को प्राप्त करने के लिए अणुओं के विघटन का केवल एक ही तरीका है । इसे किण्वन कहते हैं । इस प्रक्रम में एंजाइम[१] नामक रासायनिक कारकों द्वारा शर्करा के अणु की ऊर्जा कार्बन-डाइऑक्साइड और ऐल्कोहॉल के विविध अम्ल अपशिष्ट उत्पादों में विघटित कर दिया जाता है । इन प्रक्रमों में सबसे ज्यादा जाना-पहचाना वह है जिसमें ऐल्कोहॉल बनाने के लिए यीस्ट-कोशिकाओं के द्वारा शर्करा का किण्वन होता है । प्रक्रम के दौरान उत्पन्न होने वाली वस्तुओं में से केवल ऊर्जा ही एक ऐसी चीज है जो कोशिका के काम आ सकती है । कोशिका को जीवित बने रहने के लिए यह जरूरी है कि वह कार्बन-डाइऑक्साइड, विभिन्न अम्ल और ऐल्कोहॉल को अपने में से बाहर निकाल फेंके ।

इन अपशिष्ट पदार्थों में अब भी ऐसी काफी स्थितिज ऊर्जा रहती है जिसे वह जीव उपयोग में नहीं ला सकता । इस प्रकार किण्वन न केवल क्षयकारी ही था बल्कि इसने शीघ्रता से महासागर के कार्बनिक पदार्थ का उपभोग कर लिया । अब भी यह पदार्थ पराबैंगनी विकिरण, रेडियोऐक्टिविटी और कदाचित

---

[१] ये पदार्थ उत्प्रेरकों के समान कार्य करते हैं अर्थात वे रासायनिक प्रतिक्रियाओं में तीव्रता लाते हैं किंतु स्वयं प्रतिक्रियाओं में भाग नहीं लेते और प्रतिक्रियाओं के पूरा होने पर ये अपरिवर्तित रूप में प्राप्त होते हैं ।

ज्वालामुखी उद्‌भव की सरलतर तत्त्वा पर त्रिया हाने से अपक्षाकृत धीमी गति से बनता जा रहा था। अत सजीव प्राणिया की सख्या उपलब्ध आहार के द्वारा सीमित हो गई। चूकि यह पदाथ निर्माण होन की गति की अपेक्षा अधिक तीव्र गति से प्रयुक्त हो रहा था अत यदि आदिम जीवो ने सूय के प्रकाश की सहायता मे स्वय अपना आहार बनाना न सीख लिया होता तो पृथ्वी पर बने जीवन का अत हो गया हाता।

आज पृथ्वी पर कुछ ऐसे विशिष्ट हरे एव बगनी बैक्टीरिया पाए जात ह (जिन्हे कभी कभी माइक्रोब अथवा जम्‌स' भी कहते ह) जिनम सूय की ऊर्जा की सहायता से काबनिक पदाथ को विखडित करन की क्षमता होती है। कदाचित्‌ ये बैक्टीरिया ही उन आदितम जीवो के वशज है जिन्हाने इसी विधि से अपने को अधिक कारगर बना लिया था। किन्तु इस प्रकार के जीवो न तो पूव निर्मित काबनिक पदाथ की मात्रा का और भी कम कर दिया, जब कि दूसरी आर एक अपशिष्ट पदाथ के रूप म निकली हुइ काबन डाइआक्साइड की मात्रा तेजी से बढती गई। *तथापि काबनिक पदाथ के पूरी तरह से प्रयुक्त हो चुकने* से पहले हरे रग की कुछ विशिष्ट काशिकाआ न एक ऐसी विधि विकसित कर ली जिसमे वे काबन डाइआक्साइड, जल और महासागरीय शारवे मे पाए जान वाले कुछ अकाबनिक खनिजा से स्वय अपना आहार बना सकती थी। ऐसा उन्हाने सूय की ऊजा और साथ ही साथ हर वणक की रासायनिक त्रिया का प्रयोग करते हुए किया। यह वणक **क्लोरोफिल** ('हरी पत्ती') कहलाता है, और काबनिक पदाथ के निमाण के प्रक्रम को '**फोटोसिन्थेसिस**' अथवा **प्रकाश-सश्लेषण** ('प्रकाश की सहायता से साथ-साथ जोडना') कहत है।

यह एक बहुत बडा कदम था। पहली बार जीवा को अब और आगे महासागर से आहार-सप्लाई पर निभर नही रहना पडा। अब वे स्वय अपना आहार बना सकत थ। यही प्रथम हरी कोशिकाए उन तमाम बहुप्रज जगला एव घास के मैदानो की पूवज थी जिनका चाल्स डार्विन ने अपनी पथ्वी की परिक्रमा वाली यात्रा म अचरजभरी आखा से देखा था। वास्तव म, वे समस्त वनस्पति-जगत की पूवज थी।

क्लोराफिल और सूय के प्रकाश की सहायता से काबन डाइआक्साइड, जल और खनिजा के काबनिक पदाथ मे बदलने पर आक्सीजन एक अपशिष्ट उत्पाद के रूप म बाहर निकलती है। जैसा कि हम पहले कह चुके है हमारे ग्रह के आदिम वायुमण्डल म मुक्त ऑक्सीजन नही थी। यह उसमे तब आती गई जब धीरे-धीरे काबन डाइऑक्साइड प्रयुक्त हाती गई और उसका स्थान ऑक्सीजन ने ले

लिया। वायुमण्डल की तमाम ऑक्सीजन पौधों के द्वारा आई है, इस बात की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि आज हवा की तमाम ऑक्सीजन का, जिसमें हम सांस लेते है, प्रकाश संश्लेषण के द्वारा हर २००० वर्षों में पूरी तरह नवीकरण हो जाता है।
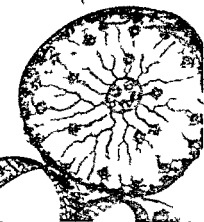
चित्र ६ एक एककोशिक पौधे का इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी द्वारा लिया गया फोटोग्राफ। आज इस प्रकार के पौधे समुद्र में सतह के समीप भारी संख्या में पाए जाते हैं। हो सकता है कि ये पौधे उन आदितम पौधों से बहुत मिलते जुलते हों जो कि लगभग एक अरब वर्ष पहले नए-नए महासागर में बने थे।

फोटो वुडज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीट्यूशन

जैसे जैसे वायुमण्डल में आक्सीजन की मात्रा बढ़ती गई इस गैस में वायुमण्डल में प्रविष्ट होने वाले परा-बगनी विकिरण से प्रतिक्रिया हुई जिससे एक प्रकार की उग्र आक्सीजन बन गई जिसे **ओज़ोन** कहते हैं। परा-बगनी विकिरण की तमाम ऊर्जा ओजोन में पहुंच गई और अब वह पृथ्वी की सतह तक नहीं पहुंच पाती थी जिससे और अधिक कार्बनिक पदार्थ का निर्माण नहीं हुआ। साथ ही अब रेडियोऐक्टिविटी भी घटकर उसमें बहुत ही थोड़े अंश में रह गई थी जितनी कि वह प्रारम्भ में थी और अनेक ज्वालामुखी शांत हो गए थे। कार्बनिक पदार्थ के निर्माण के लिए इन सशक्त प्रभावों की अब और आगे आवश्यकता नहीं थी तथा इनमें कमी हो जाने से महासागर और भी अधिक शांत और कोमल स्थान बन गया था। इससे और अधिक नाजुक एवं सम्मिश्र प्रकार के जीवन के विकास का मार्ग खुल गया।

आदिम वनस्पति कोशिकाओं ने न केवल ऑक्सीजन का ही निर्माण किया अपितु उन्होंने कदाचित उसके प्रयोग की विधि भी विकसित की। कार्बनिक पदार्थ से ऊर्जा प्राप्त करने का सबसे कारगर तरीका यह है कि उसे आक्सीजन की सहायता से जला दिया जाए। इसी ठंडे ज्वलन अथवा अपघटन के प्रक्रम

का श्वमन अथवा सास लेना कहते है । आधुनिक जन्तु जीवन स्टार्चो, वसाओ और प्राटीना के साथ आक्सीजन का सयोजित कर ऊर्जा प्राप्त करता है। इसस इन पदार्थों मे से प्राप्त की जा सकने वाली समूची ऊर्जा निकल आती है। किण्वन और प्रकाश-सश्लेषण के सयाग से जीवन को आत्म-पोषण की क्षमता मिली श्वसन और प्रकाश-सश्लेषण से जीवो को वह अतिरिक्त ऊर्जा उपलब्ध हुई जिसे आहार प्राप्त करने मात्र के अतिरिक्त अन्य कामो मे लगाया जा सकता था।

जैसे जस जीवा की जटिलता एव उनका वैविध्य बढता गया नए-नए प्रकार की कोशिकाए विकसित होती गई। य कोशिकाए अपना आहार सीधे पौधा से प्राप्त कर सकती थी और उन्ह कावन डाइआक्साइड तथा जल स राराक वनाने के वास्ते परिश्रम करने की आवश्यकता नही थी। अप्रयोग के द्वारा इन जीवा मे से प्रकाश सश्लेषण की क्षमता का लोप हो गया और वे पूणत वनस्पति-पदाथ पर जीवित रहने लगे। इस घटना से जन्तु जगत का समारम्भ हुआ।

म्यूटेशना से जन्तु कोशिकाआ म बहुत ज्यादा किस्मे वन गइ—उसी तरह जैसे कि उनसे पहले पौधा और अणआ मे बनी थी। कुछ काशिकाए विशेपित हाकर कुछ विशेप कार्यो के करने के लिए अनुकूलित हो गईं जैसे आहार पकडने के लिए, उसे सरलतर भागा मे तोडन के लिए तथा अपशिष्ट पदार्थों को वाहर

चित्र ७ आज केन्द्रीय प्रशात महासागर के सतही जल में रहने वाले एक एककोशिक जन्तु का काच का माडल। महासागर में विकसित होने वाले प्रथम जन्तु कदाचित इसी प्रकार के उत्कृष्ट जीव से कुछ-कुछ मिलते जुलते थे, किन्तु बारीकियो में कहीं अधिक सरल थे।

[फोटो अमेरिकन म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री के सौजन्य से।

निकाल फेंकने के लिए। ये विभिन्न कोशिकाएं एकल बहुकोशिक जन्तुओं में सयोजित हो गईं—ठीक उसी तरह जैसे विभिन्न अम्लों ने सयोजित होकर क्रोमोसोमों का निर्माण किया था तथा क्रोमोसोमों ने अन्य अणुओं के साथ मिलकर कोशिकाओं का जन्म लिया था।

कोशिकाओं के सयोजित होने से उनके अगों और अग-तन्त्रों का निर्माण हुआ। जन्तुओं ने बिना समुद्री धाराओं की सहायता के एक पौधे से दूसरे पौधे पर पहुंचने के साधन विकसित कर लिए और जैसा कि स्वाभाविक ही था उन्होंने एक दूसरे का आहार करना प्रारम्भ कर दिया। पंखियों का और गति के अधिक तीव्र साधनों का विकास करना पड़ा क्योंकि यह आवश्यक हो गया था कि आहार पकड़ा जाए और शत्रुओं से जान बचाई जाए। जब कठोर कवचों और सधियुक्त पादों का अस्तित्व आया तो वे फॉसिलों के रूप में परिरक्षित हो सके। इन्हीं फासिलों से हमें पता चला कि ६० करोड़ वर्ष पहले सागर में मोटे कवच वाले केकड़ा सदृश ट्राइलोबाइटों का साम्राज्य था।

तदुपरान्त हड्डियों, पंखों और दांतों से भरे जबड़ों वाले जन्तुओं का विकास हुआ। लगभग ३५ करोड़ वर्ष पहले पेट वाली सतह पर बने दो जोड़ी मजबूत पंखों वाली मछलियां जल से निकल कर थल पर पहुंचीं। इन्हीं ने ऐम्फिबियन प्राणियों का रूप लिया जो अपना कुछ जीवन थल पर बिताते थे और कुछ जल में। उनमें से कुछ ने अपने अंडे थल पर देने शुरू कर दिए और वे सरीसृपों के रूप में विकसित हुए। इन सरीसृपों के फासिल अवशेष ३० करोड़ वर्ष पुराने शैलों में मिलते हैं। सरीसृपों से पक्षियों का विकास हुआ जिन्होंने सर्वप्रथम लगभग १५ करोड़ वर्ष पहले हवा में उड़ना शुरू किया। सरीसृपों से ही स्तनधारियों का जन्म हुआ अर्थात जन्तु जगत के उस वर्ग का जन्म जिसमें तर्क शक्ति से सम्पन्न प्रथम स्पीशीज अर्थात मानव भी शामिल है।

क्या आज भी महासागर में 'नये जीवन' की उत्पत्ति हो रही है?

चूंकि जीवन की उत्पत्ति में अधिकतर उचित अणुओं का सयोगवश एक-साथ आना शामिल होता है इसलिए प्रश्न उठता है कि आज भी महासागर में ऐसा क्यों नहीं होता? निश्चित रूप से हम नहीं कह सकते कि ऐसा नहीं हो रहा किन्तु परिस्थितियां इतनी अधिक बदल चुकी हैं कि ऐसा होना सकना अत्यन्त सन्देहप्रद है। पराबैंगनी विकिरण ओजोन की परत से रुक जाता है और रेडियोऐक्टिविटी तथा ज्वालामुखी उद्भव के प्रभाव में उग्र रूप में कमी आ गई है। यदि सयोगवश नया कार्बनिक पदार्थ किसी तरह बन भी जाए तो उसमें

सयोजना द्वारा सम्मिश्र अणुओ के बनने म इतना अत्यधिक लम्बा समय चाहिए कि जीवन की सीढी पर अनेक कदम बढान से बहुत पहले ही महासागर के लाखो करोडो बैक्टीरिया उसे खा डालेगे या घुली हुई आक्सीजन द्वारा वह विच्छिन्न हो जाएगा। यह सही रूप मे कहा जा सकता है कि आज केवल जीवन से ही जीवन उत्पन्न होता है।

विलक्षण रूप म कल्पनाशील चार्ल्स डार्विन ने बहुत पहले १८७१ मे इसी चीज के विषय म सोचा और लिखा था। 'लेकिन अगर (और गजब! यह अगर कितना बडा है) हम इस बात की कल्पना कर सकते कि किसी छोटे गुनगुने तालाब मे, जिसमे सभी प्रकार के ऐमानिया एव फास्फोरिक लवण हल्की गर्मी बिजली इत्यादि मौजूद हो आज रासायनिक विधि से कोई प्रोटीन यौगिक बन भी जाए जो और अधिक जटिल परिवर्तनो म से गुजरने के लिए तैयार हो, तो ऐसे पदार्थ को तुरन्त ही खा लिया जाएगा या उसे अवशोषित कर लिया जाएगा, किन्तु जीव-सृष्टि के निर्माण के पहले ऐसी स्थिति नही रही होगी।'

और, फिर भविष्य म क्या होगा? क्या डार्विन का 'छोटा गुनगुना तालाब' प्रयोगशाला म दुबारा तैयार किया जा सकेगा? शायद अपने तमाम अदभुत उत्प्रेरको के बल पर कार्बनिक रसायन विज्ञान उचित परिस्थितियो मे सही पदार्थों के एक साथ मिलन को तीव्र कर सकेगा और उन घटनाओ को, जो अरबो वर्ष मे पूरी हुई थी, कुछ ही समय म पूरा कर सकेगा। सन १९२४ तक मे ओपैरिन की यह धारणा थी कि जीवन का कृत्रिम निर्माण अत्यन्त दूरवर्ती है किन्तु अप्राप्य नही है ।'

३
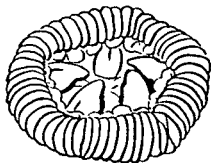
जगत्-महासागर

"समस्त सरिताए सागर में गिरती हैं, फिर भी सागर अधूरा ही है।"
—बाइबिल

१८५४ म बागल के लौट आने के ९ वष बाद, प्रधान जल राशियो के लिए अटलाटिक प्रशान्त और हिंद महासागर नाम अतत निश्चित कर दिए गए और पुराने नामो को इस प्रकार बदल दिया गया—विशाल महासागर (अटलाटिक), पश्चिमी महासागर (प्रशान्त) उत्तर महासागर (उत्तर अटलाटिक) और दक्षिण महासागर (दक्षिण अटलाटिक)। नामो की स्थापना तो हो गई थी किन्तु गहरी द्रोणियो और उनमे भरे जल की अभी भी लगभग कोई खोज नही हुई थी। केवल समुद्र-तट के किनारे किनारे की तग पट्टियो और सीमाबद्ध समुद्रो का ही किसी कदर पूरा अध्ययन हो पाया था और वह भी अधिकतर व्यापार और नौ-सचालन के उद्देश्यो से ही हुआ था। विज्ञान उथले जल के कुछ फैदम के नीचे नही बढ पाया था।

किसी को यह मालूम नही था कि महासागर वास्तव मे कितने गहरे हैं। सामान्यत ऐसा विश्वास था कि वे उतने ही गहरे हैं जितने कि पर्वत ऊचे है। १८४० की ३ जनवरी को कप्तान जेम्स क्लार्क रास ने पहली बार गहरे समुद्र की गहराई नापी। उसने दक्षिण अटलाटिक के तल तक पहुचने के लिए १४,५५० फुट (लगभग पौने पाच मील) लम्बी भार बाधी हुई सन की डोरी छोडी। १८५० के बाद के दशक म सयुक्त राज्य अमरीका की नौ-सेना के एक लेफ्टीनेंट वाल्श ने

टैनी नामक स्कूनर से ३४,००० फुट (छह मील के ऊपर) तार छोडा जो फिर भी तल तक नही पहुचा । एक अन्य अमरीकी लेफ्टीनेट जे० पी० पाकर ने एक तोप के गोले को भार रूप म प्रयोग करके गश्ती जहाज काग्रेस के ऊपर से जल म छोडा जो अपने साथ ५०,००० फुट लम्बे 'साधारण टवाइन धागे' का नीचे ले गया। यह ट्वाइन और भारविधि सरल थी, वह तुरत उपलब्ध हो सकती थी और उसमे केवल एक ताप-गोले का ही नुक्सान था किन्तु एक बार डार नीचे खिचनी शुरू हा जाने पर उसका कभी अत नही होता था। अधिक गहराइया के कारण तल के छू लेने का धक्का महसूस नही किया जा सकता था आर ताप गाले के द्वारा डार खिचनी वद हा जाने के बाद से बहुत समय तक जलधाराए ही डारी को खीचती रहती थी। महासागर मे ५० ००० फुट जैसी कोई गहराई नही है, और न ही जहा वाल्श ने गहराई मापन किया था वहा जल की गहराई ३४,००० फुट थी।

एक और बिना हल की हुई तथा विवादास्पद समस्या यह थी कि गहरे महासागर के तल मे जीवन विद्यमान ह या नही। पिछली शताब्दी के पूर्वाध म अधिकाश लोगा का ख्याल था कि अधिक गहराइया म जन्तु नही पाए जा सकते क्याकि वहा पर अत्यधिक दाब का पाया जाना प्रकाश एव आक्सीजन का अभाव होना आर अत्यन्त शीत की परिस्थितिया पाई जाती है। कप्तान जेम्म रास के एक चाचा जॉन राम ने १८१७-१८ म ६,००० फुट गहरे समुद्र मे से कुछ कृमिया और एक स्टार फिश का ड्रेज द्वारा निकाला—यह इतनी गहराई थी जिसमे जन्तु की प्रति वग इच सतह पर २,६५० पौण्ड की जल-दाब होगी। इतनी सी ही खाज से समस्या का हल हा जाना चाहिए था किन्तु रास की खाज पर किसी न ध्यान नही दिया।

उसके चालीस वप बाद भी अनक विज्ञानी ऐसा मानते थे कि १,८०० फुट से अधिक गहराई पर जीव सष्टि नही पाई जा सकती। स्काटलण्ड स्थित विश्व-विद्यालय के प्रकृति विज्ञान का प्रोफेसर एडवड फोब्स एक प्रतिभाशाली व्यक्ति था जिसने उन्नीसवी शताब्दी के दारान विज्ञान म महत्त्वपूण याग दिया। तथापि, उसका मत था कि सतह से शुरू करके गहराई म जात हुए आठ क्रमिक क्षेत्र आते है जिनम से प्रत्येक क्षेत्र मे एक विशिष्ट मिला जुला जन्तु समूह पाया जाता है और ३०० फैदम[1] पर जीव-सष्टि समाप्त हा जाती है। किन्तु, १८६० मे एक अमरीकी भू विज्ञानी जी०सी० वालिच ने यह निष्कष निकाला कि गहरे स गहरे वितल

---

१ एक फैदम म छह फुट होते है।

(abyss) मे भी जन्तु पाए जाते है और व उथले जल के जतुओ के वशज होते है जो कि धीरे धीरे गहराई के लिए अनुकूलित हो जाते है। उसी वप, वालिच के सिद्धात के सही होन का प्रमाण भूमध्यसागर के तल से प्राप्त हुआ।

इटली स्थित सार्डीनिया और अफ्रीका के वान नामक स्थाना के बीच ४० मील लम्बा तार का केबिल ७,२०० फुट गहराई से मरम्मत के लिए निकाला गया। केबिल पर १५ विभिन्न प्रकार के जन्तु चिपके और जकडे हुए पाए गए जिनमे प्रवाल एक स्क्विड के अण्डे, विभिन्न सीपिया घोघे, स्कैलप और कुछ ऐसे प्राणी शामिल थे जो तब तक केवल फॉसिला के रूप म ज्ञात थे। प्रवालो क आधार ठीक-ठीक केबिल की अनियमित सतह के अनुसार ढल गए थे। यह इस बात का निर्विवाद प्रमाण था कि तल पर भी जन्तु पाए जाते है और वे केवल जल में ऊपर आते समय ड्रेजा द्वारा पकडे ही नही जात।

सन् १८४० और १८७० के बीच केबिल डालने वाला सर्वेक्षण एव नौ सचालन अभियाना द्वारा इसी प्रकार की आशाए बधान वाली और भी सूचनाए मिली। किन्तु ये सूचनाए इतनी थोडी और इतनी अधिक टूटी फूटी और बिखरी हुई थी कि उनसे महासागरा की वास्तविक स्थिति का सही चित्र नही मिल पाता था। विज्ञान के व्यक्तिया न अधिक जानकारी हासिल करने के लिए आवाज़ उठाई— जहाज़ा के लिए गभीरता मापी डोरिया के लिए और जालो के लिए ताकि व थल स दूर जाकर समुद्री दुनिया का अध्ययन कर सके। आज के विज्ञानिया का तरह उन्होने भी अनुभव किया था कि महासागरा का केवल इसलिए ही अध्ययन करना जरूरी था क्योकि व इतन प्रकट रूप मे मौजूद है और इस बारे मे कि उनके भीतर तथा उनके तल म क्या है ससार को इतनी कम जानकारी है।

इगलैड के विद्वाना की सस्था रायल सोसाइटी ने एक ऐसे महान वैज्ञानिक अभियान की कल्पना की जो ससार के सभी गहरे महासागरा की सतह से लेकर अगाध वितल तक की खोज कर। १८७२ मे य विद्वान ब्रिटिश सरकार को समझा सकन म सफल हुए कि इस प्रकार का अभियान उपयोगी सिद्ध होगा। इस काय के लिए वहा के नौकाधिकरण (ऐडमिरैल्टी) न तीन मस्तूल वाला रण पोत एच०एम०एस० चलेंजर उपलब्ध किया और अपन ही निर्देश म उसे आवश्यक वस्तुओ से युक्त कराया। यह जहाज काफी बडा और अधिक स्थान वाला था। इसका वजन २ ३०० टन था और इसमे हज़ारा वग गज पाल के अतिरिक्त एक सहायक वाष्प इजन भी लगा हुआ था। छह विज्ञानिया को इस पर सवार होकर पूरी दुनिया की परिक्रमा लगाने वाली प्रथम समुद्र-वैज्ञानिक यात्रा करन का वाछनीय अवसर मिला। रायल सोसाइटी की एक कमेटी द्वारा नियुक्त किए गए

ये छह व्यक्ति थे एडिंबरा विश्वविद्यालय के प्रकृति विज्ञान के प्रोफेसर सी० वीविले थामसेन, एक रसायनज्ञ जे०वी० बुखानेन, तीन प्रकृति विज्ञानी एच० एन० मोज़ले, जॉन मर तथा रुडाल्फ फॉन विलेमोज सूह्म, तथा मत्री एव चित्रकार के रूप मे काम करने वाले जे०जे० वाइल्ड। वैज्ञानिक कर्मचारी दल के अध्यक्ष प्रोफेसर थामसेन थे और जहाज का सचालन कप्तान जाज एम० नेयस के सुपुर्द था।

सन १८७२ की ७ दिसम्बर को, सुहावने मौसम म, चलेंजर ने अपने पाल खडे किए और शीयरनेस के बन्दरगाह से रवाना हुआ। थेम्स नदी के मुहान से बाहर आकर उसे तुरन्त ही तूफानी समुद्र का सामना करना पडा और जहाज के अगल भाग न एक गाता भी खाया। ऊची ऊची लहरा न जहाज को थपडे लगाए और लहरा की तेज फुहार न डेका को भिगो दिया। विज्ञानी गण अपना अपना सामान मुश्किल से खाल पाए थे कि मतलिया लान वाली जहाज की गति ने उन्हे उनके केबिना म इधर से उधर लुढ़का दिया और अत म मजबूर होकर व अपनी बथ पर लेट गए। अभियान का समुद्री पानी के छीटा से माना धार्मिक सस्कार हो गया, और चलेंजर का उस तूफान मे अपनी एक क्वाटर नौका से हाथ धाना पडा।

दक्षिण फ्रास के तट तक पहुचते पहुचते पूरे रास्त चलेंजर को कठार मौसम न घेरे रखा। कितु इस कठिन यात्रा के 'तमाचो' से उस पर सवार व्यक्तिया के हौसले म कोई कमी नही आई। उल्टे, विक्षुब्ध सागर म जहाज का आचरण देखकर हर किसी के मन मे इस जहाज़ के और इस अभियान के प्रति और भी अधिक विश्वास बन गया। जब २९ दिसम्बर को मौसम कुछ सुधरा, तब पहली बार विभिन्न गहराइयो पर टो नेट छोडे गए और जल मे से खीचे गए। अगले दिन जहाज पर लादी हुई १४४ मील लम्बी गभीरतामापी डोर चरखी के द्वारा जल म छोडी गई और अनेक विशाल समुद्री गहराइया मे से पहली गहराई नापी गई।

जब कभी किसी स्थान पर अध्ययन काय के लिए जहाज़ का राक कर खडा करना होता था तो उसे हवा के झोका मे मुक्त कर दिया जाता था और उसके पाला को लपट दिया जाता था। बायलरा म अग्नि चालू कर दी जाती थी और वाष्प इजन की सहायता से चलेंजर महासागरीय तल के ऊपर शात खडा हो जाता था। बायलरा से एक छाटे 'डकी' इजन को शक्ति सप्लाई हाती थी जिसके द्वारा चरखी (विच) चलती थी। सबसे गहरे पानी म गभीरतामापी भार और तल के नमून लेने वाले यत्र के साथ तल तक पहुचने म डेढ घटे का समय लगा। सतह स लेकर महासागर के फश तक विभिन्न गहराइया पर जल का तापमान

और साथ ही साथ जल एव जतुओ के नमूने प्राप्त किए। सतह की धाराओ का दिशा एव गति का मापा गया और इसी तरह गहरी जलधाराओ की दिशा एव चाल भी मापी गई। हर चार घण्टे बाद मौसम-सबधी प्रेक्षण किए जाते थे और हर पडाव पर पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र का मान निर्धारित किया जाता था। कभी कभी कोई पडाव दो-दो दिन लम्बा रहता था।

चैलेंजर न बराबर-बराबर दूरी पर पूरी दुनिया के गिद ऐसे ३६२ अध्ययन पडाव बनाए थे। दिसम्बर, १८७२ से मई १८७६ तक उसने साढे तीन वष तक यात्रा की जिसमे लगभग ९६ ००० मील का सफर तय किया। विभिन्न गहराइयो से जालो द्वारा और तल पर जालो को खीचते हुए इतने अधिक नए-नए पौधे और जन्तु प्राप्त किए गए कि उनके लिए विज्ञानियो की प्रयोगशालाओ म स्थान नही रहा। विभिन्न बदरगाहो से बडे-बडे सग्रह स्वदश भेजे गए और वे एडिनबरा विश्वविद्यालय म अभियान के लौट कर आने तक जमा किए जाते रहे।

'दक्षिणी ध्रुव की ओर मार्ग बनाते हुए'

सन १८७३ के दौरान चलेंजर ने अटलाटिक की खोज की ओर अर्जेंटिना तथा दक्षिण अफ्रीका के बीच इनैक्सेसिबल आइलैण्ड' नामक एक छोटे-से टापू पर दो साल से भटक गए हुए दो भाइयो को बचाया। तब केप ऑफ गुड होप नामक अन्तरीप का चक्कर लेत हुए विज्ञानियो एव नाविको न अपने जहाज़ को दक्षिण-पूव दिशा म तूफानी दक्षिण ध्रुव महासागर की ओर मोड दिया। उनके मागदशन के लिए केवल अधूरे और त्रुटिपूण चाट ही थे, जिनकी मदद से वे केवल भूला और ऐल्बैटास के जाने-पहचाने समुद्रो म भटकते रहे। सन १८७४ के प्रारम्भ म खोजयात्री केरगुयलेन और हड द्वीपो पर रुकी—य दो निजन और भूली बिसरी चट्टान है जो रोरिंग फार्टीज़ तथा 'हाऊलिंग फिफ्टीज़' नामक *लगभग ४५ और ५५ डिग्री अक्षाशो के बीच स्थित है।*

सन १८७४ की ७ फरवरी को चैलेंजर ने 'बिल्कुल ठीक-ठाक यात्रा की और दक्षिण ध्रुव की ओर मुडते हुए वह आगे बढा । हवा तुरन्त तूफान म बदल गई और हिम-वर्षा शुरू हो गई। ऊची पटार उठ रही थी जिन्होने जहाज़ के दो रोशनदानो म प्रविष्ट होकर जहाज के रोगी-कक्ष को जल से भर दिया। चार दिन के बाद प्रथम हिम शैल दिखाई दिया जो कि २ १०० फुट लम्बा और १८०० फुट गहरा ऊपर से चपटी सतह वाला बफ का एक विशाल टापू था। १६ फरवरी को चलेंजर अपने अधिक से अधिक दक्षिणी बिन्दु पर पहुचा अथात ६६° ४३ पर जो कि दक्षिण ध्रुव स १ ४०० मील दूर रह गया था।
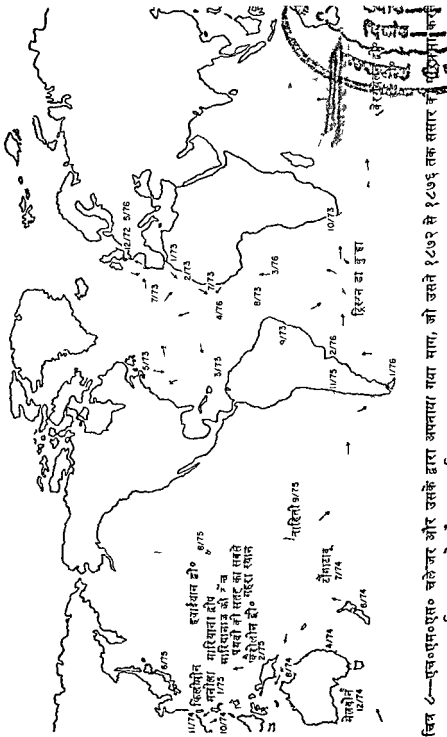
चित्र ८—एच०एम०एस० चेलेंजर और उसके द्वारा अपनाया गया मार्ग, जो उसने १८७२ से १८७६ तक संसार की परिक्रमा करते हुए प्रथम समुद्र वैज्ञानिक यात्रा के दौरान तय किया था।

विशोनिया न ग भीरतामापन तथा ड्रेज द्वारा भीतरी नमूना का ऊपर निकालन का काय जारी रखा, भले ही वहा का मौसम बफ जमने के निशान स भी नाचे की ठण्डक वाला था और एक के बाद एक भीषण हिम झझावाता का ताता लगा था। एक बार जाल मे तब तक के अज्ञात ४३ समुद्री जन्तु फसे। एक अय स्थान पर ८००० फुट गहर बर्फीले जल मे स ७८ विभिन स्पीशीजा के अन्तगत आने वाले २०० ज तु प्राप्त हुए। ध्रुवी मागरो मे जन्तुआ के नमूना की जो सख्या, विविधता साइज और सौदय मिला उतना ज्यादा इससे पहले और कही नही मिला था। जान मर ने लिखा था 'इन ठण्डे ध्रुव प्रदेशा मे समुद्र का तल ज तु-जगत् से भरा हुआ जान पडता है।'

२३ फरवरी का इतनी ज्यादा बफ पड रही थी कि ठीक से दिखाई देना मुश्किल हो गया था। तज हवा हिम शैला को जहाज की ओर उससे कही ज्यादा तेजी स धक्का देकर ला रही थी जितनी कि वाष्प इजन उनके बीच म से जहाज का रास्ता निकालता जाता था। एक हिमशैल से चलैंजर की ठीक सामने की टक्कर हो गई और उसके सामन वाले मस्तूल आदि का कुछ भाग टूट कर समुद्र म बह गया। बायलरा म भाप इतनी बढा दी गई कि उसका दबाव लगभग फटने के निशान पर पहुच गया और १ २०० हास पावर की अपनी पूरी शक्ति लगाकर इजन न जहाज का पीछे हटाना शुरू किया। जहाज मुश्किल से बचकर निकल पाया था कि उसी ममय दो हिमशैल तजी से उसकी ओर बढकर पहुचे। उन दोनो हिमशैला के बीच की जगह साफ सी दिखाई पडती थी और कप्तान नेयस न बाजी लगाकर चलैंजर का उन दोना हिमशैला के बीच के स्थान म डाल दिया। अगल-बगल ऊचे पवता जैसी बफ की चट्टाना ने हवा के वेग को रोक लिया और तूफान से बचने का एक आश्रय-स्थल बना दिया हालाकि यह साहस कुछ कम खतरनाक नही था।

ठीक ऐसी ही स्थिति म मौसम से टक्कर झेलते हुए दक्षिण ध्रुव की ओर जाने वाले एक अय समुद्र-यात्री ने लिखा था मेरी समझ मे नही आता कि और अधिक दक्षिण मे जान से क्या लाभ है जब कि इसकी इतनी ज्यादा सभावना है कि घर लौट कर कहानी सुनाने के लिए कोई भी जीवित नही बचेगा।" चलैंजर के व्यक्ति इस कथन से पूरी तरह सहमत थ और जब मौसम कुछ ठीक हुआ तो उन्हान आस्ट्रेलिया स्थित मेल्बोन की दिशा म उत्तर की ओर चलना शुरू किया।

समार के आबाद भागा मे इस जहाज के पथक रहने का सबसे बडा काल उन तीन महीना का था जिनमे यह दक्षिण ध्रुव प्रदश के रास्ते होकर अफ्रीका स ऑस्ट्रेलिया पहुचा था। इसीलिए और साथ-साथ जो सारी जोखिम व झेलकर बिताए थ, उन आस्ट्रेलिया के जिन जिन बन्दरगाहा म व पहुच उनके आकषण",

इन तीना कारणा से नाविक दल के कुछ सदस्या ने जहाज से नाता तोड दिया।

आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड मे चलकर यह जहाज फिजी द्वीप समूह मे पहुचा। वहा से फिर वह हागकाग, फिलिपीन और ऐडमिरल्टी एव मारियानाज द्वीपा से होता हुआ उत्तर की ओर बढा। ऐडमिरैल्टी एव मारियानाज़ प्रवाल द्वीपो के समूह हैं जो कि पश्चिमी प्रशान्त मे स्थित हैं। इन दोना द्वीप समूहा के बीच मे चैलेंजर को इस प्रश्न का, कि महासागर कितना गहरा है, एक नया उत्तर मिला। विज्ञानिया ने ४,४७५ फैदम (अर्थात २६,८५० फट) लम्बी गभीरतामापी डोरी छाडी तब कही वह एक गहरी द्राणी के तल तक पहुची जिसे मारियानाज खाई कहते हैं। इस क्षेत्र को आज भी महासागर का सबसे गहरा भाग माना जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय भू भौतिकी वष मे रूसी अनुसधान पोत **'वित्याज'** ने इमी खाई मे अब तक रिकाड की गई सबसे अधिक गहराई नापी जा कि ३६,०५६ फुट अथवा करीब-करीब ७ मील थी।

वापसी

चैलेंजर १८७६ की २४ मई का इगलैण्ड पहुच गया। खाज-यात्रा का आशातीत मफलता मिली थी। इस जहाज के यात्रा पर निकलने से पहले गहरे समुद्र केवल रहस्य थे जिनका काई लेखा जोखा न था। खाज यात्रा के समाप्त होते-होते केवल दक्षिण ध्रुव प्रदेश को छाडकर हर क्षेत्र मे योजनाबद्ध गभीरता-मापन किया जा चुका था और १४ कराड वग मील मे फैले समुद्री फश का लेखा चित्र तैयार कर लिया गया था। जहाज के विज्ञानिया ने अन्तिम रूप मे यह सिद्ध कर दिया था कि हर गहराई म और हर महासागर के तल पर जीव-सृष्टि फैली हुई है। विभिन्न स्थाना म जाला के द्वारा बहुत ज्यादा सख्या मे यहा तक कि ४,७१७ नई स्पीशीज़ प्राप्त की गइ थी।

मूल नाविक दल की सख्या २४० थी जिसम सभी पुरुष थे। इनम से यात्रा के दौरान ७ व्यक्ति मर गए, ११ रागी हाकर अशक्त हो गए और १५ का विभिन्न बन्दरगाहो मे ले जाकर अस्पताला मे छाड दिया गया था। डाक्टर फान विलेमोज-स्हूम को हवाई और ताहिती के बीच एरिसिपलास (सुख माद्दा) का रोग हो गया और वह उसके लगभग तुरन्त बाद ही मर गया। एक साधारण नाविक को ब्राजील मे पीत ज्वर हा गया था जिसके कारण वह चल बसा और दो अन्य नाविका की खाद्य विष से मत्यु हो गई। दो व्यक्ति डूब कर मर गए। डेक पर काम करन वाला एक व्यक्ति उस समय एक ड्रेजिंग रस्सी की लपट मे आ गया था जबकि वह उसकी ओर बढा था और वह टूट गई थी। रस्सी का टूटा सिरा इस व्यक्ति म

टकराया और उसकी खोपडी की हड्डी टूट गई तथा अन्य चोटें आइ जिनके कारण वह कुछ ही घण्टा मे चल बसा।

अब जो एक बहुत बडा काय शेष रह गया था, वह था जानकारी के इस महान सकलन का व्यवस्थित रूप देना। एक अस्थायी सरकारी विभाग खोला गया जिसका यह काम था कि वह जतुओं[1] के सकलन का परीक्षण करे, आकडा का अध्ययन करे और निष्कर्षों का प्रकाशन करे। इस सब काम का उत्तरदायित्व-पूण अधिकार सर सी० वीविले थॉमसन को सौपा गया और वह १८८२ मे अपना मत्यु तक इस विभाग के अध्यक्ष की हैसियत से काय करते रहे। तदुपरान्त निर्देश का काय उनके प्रथम सहायक जान मर को सौंपा गया जो कि स्वय उस खोज-यात्रा के एक प्रकृति विज्ञानी थे। १८९५ मे, चलेंजर की यात्रा प्रारम्भ करने के २४ वष बाद इस खोज यात्रा के सम्पूण वैज्ञानिक निष्कर्षों से युक्त ५० बडे ग्रथ-खण्डा मे से अतिम खण्ड प्रकाशित हुआ। इन खण्डा मे २९,५०० पष्ठ थे और इनके लेखन मे ७६ लेखका ने योगदान किया था जो कि महासागरा के अध्ययन म लगे हुए ससार के ममी देशा स थ।

इस प्रकार समुद्र विज्ञान की एक मजबूत नीव पडी।

महासागर विभिन्न महाद्वीप एव विभिन्न सागर

वास्तव मे महासागर केवल एक ह। सभी गहरी द्रोणिया एक-दूसरे से जुडी है जिससे कि उनम मे जल एक दूसरे मे स्वतन्त्रतापूर्वक आता-जाता रहता है। यह जल पथ्वी की ७१ प्रतिशत सतह पर फैला हुआ है और केवल २९ प्रतिशत सतह सूखी जमीन के रूप मे खुली हुइ है। विभिन्न महाद्वीपो का एक **जगत महासागर** स ऊपर उठते हुए विभिन्न द्वीप' माना जा सकता है जो कि उस महासागर को मोटे तौर पर चार या पाच भागा मे विभाजित करते है।

पथ्वी पर बस एक ही ऐसा स्थान है जहा बिना किसी महाद्वीपीय द्वीप की बाधा के महासागर का पूरे ग्लोब के चारा ओर घूमने की स्वतत्रता है। यह ससार के दक्षिणी छोर पर है जो कि हिमाच्छादित दक्षिण ध्रुव प्रदेश को घेरे है। ४० और ५० डिग्री दक्षिण अक्षाश के बीच पथ्वी की सतह का ९८ प्रतिशत भाग जल से ढका है और उसमे केवल दक्षिण अमरीका की पतली-सी नाक ही बाधा है। इस क्षेत्र के अधिकाश भाग को दक्षिण ध्रुव महासागर अथवा महान् दक्षिणी या

---

१ इनमे से बहुत से जन्तु आज भी ब्रिटिश म्यूजियम म परिरक्षित है और अभी तक समस्त ससार से आने वाले जीव विज्ञानी इनका अध्ययन करते हैं।

ऑस्ट्रल महासागर कहा जाता है। जगत महासागर इस अविच्छिन्न पटटी से उत्तर की ओर तीन लम्बी खाडिया के रूप मे बढता जाता है। ये खाडिया अटलाटिक, प्रशान्त एव हिन्द महासागरो की खाडिया के रूप मे है और यही तीन प्रधान जलराशिया है। अटलाटिक तथा प्रशान्त महासागर पुन पथ्वी के उत्तरी छोर पर उत्तर ध्रुव महासागर मे एक दूसरे से मिल जाते हैं।

चूकि जगत् महासागर अविच्छिन्न है इसलिए जिन्हे हम सामान्यत प्रधान महासागर पुकारते है उनकी सीमाए निधारित करना सम्भव नही है। फिर भी स्पष्टता एव सुविधा की दृष्टि से उत्तर ध्रुव महासागर को अटलाटिक महासागर मे शामिल होने के रूप मे लिया जाता है। अटलाटिक और प्रशान्त महासागर उत्तर मे उथले बेरिंग जलडमरूमध्य द्वारा विभाजित होते है तथा दक्षिण मे केप हार्न और दक्षिण ध्रुव प्रदेश के पामर प्रायद्वीप को मिलाने वाली एक काल्पनिक रेखा द्वारा। अटलाटिक और हिन्द महासागर को विभाजित करने वाली सीमा के रूप मे उस देशान्तर रेखा को लिया जाता है जो कि केप आफ गुड होप से गुजरती हुई दक्षिण ध्रुव प्रदेश तक जाती है। हिन्द महासागर इस स्थान मे पूर्व की ओर बढता जाता है और उस काल्पनिक रेखा तक पहुचता है जो मलाया को पश्चिमी आस्ट्रेलिया के अधिकतम उत्तरी बिन्दु—केप लण्डनडेरी—से मिलाती है तथा १४७वें पूर्वी याम्योत्तर का अनुसरण करते हुए दक्षिण ध्रुव प्रदेश तक पहुचती है। जल की शेष राशि प्रशान्त महासागर मे आती है जो सबसे बडा और सबसे गहरा महासागर है, और जो पथ्वी की एक चौथाई से ज्यादा सतह को घेर है।

चलेंजर अभियान की सबसे बडी ससाधना यह थी कि उसने गहरी महासागरीय द्रोणियो के रेखा चित्र तैयार किए और उनको महाद्वीपो को घेरने वाले उथले जल से पृथक् विभेद किया। **चैलेंजर** के बाद से आज तक आधुनिक प्रतिध्वनित तकनीको द्वारा सैकडा हजारो गभीरतामापन किए जा चुके है किन्तु जो रेखा चित्र **चलेंजर रिपोर्ट** स के सुन्दर चार्टा मे दर्शाए गए है उनमे अभी तक कोई भी महत्वपूर्ण परिवतन नही हो सका है। **चलेंजर** के गभीरतामापन म उस समय का बडी सावधानीपूर्वक नोट किया जाता था जो कि गभीरतामापी डोरी के हर १०० फैदम के निशान को जहाज के जगले से पार होते लगता था। २०० पौण्ड का भार रस्सी को गहराई के अनुसार एक खास दर पर नीचे को खीचता जाता था। जब यह दर अचानक बहुत धीमी हो जाती थी तो उससे तल तक पहुच जाने का सकेत मिल जाता था।

महासागर की द्रोणिया वहा से शुरू नही होती जहा थल समाप्त होता है। सभी महाद्वीपो को घेरते हुए उथले प्लैटफाम बने होते है जो कि वास्तव मे समुद्र

स ढके हुए थल के ही प्रकार हात है। ये प्लेटफाम ज्वार रखा मे प्रारम्भ हाकर जन मे ८०० मील दूर तथा २०० फैदम गहराई तक चलत जात है। इन प्लटफार्मो की यही अधिकतम चौडाई आर गहराई है, औसतन चौडाई ४२ मील तथा गहराई ७८ फैदम है।

उन दिना जब गभीरनामापन दूर-दूर किया जाता था और बहुत सही पता नही होता था तब ऐसा माचा जाना था कि इन स्थाना की सतह किसी शेल्फ के समान चपटी और समतल हानी हागी। इसीलिए उन्हे महाद्वीपीय शेल्फ कहते थे। आज हम यह जानते है कि इन शेल्फा की सतह मे उथली द्राणिया बनी हा सकनी है नीची-नीची लहराती हुई पहाडिया एव डूबी हुई बालू भित्तिया के उभार बन हो सकते है, अथवा उसम सीडिया जैसी बेंचें और खडे ढलवा गभीरखड्ड (कैन्यान) बने हा सकते है। तथापि केवल गभीरखड्डो को छोडकर यह पूण उभार प्राय १० फैदम की गहराई से कम ही हाता है इसलिए शेल्फ का नाम देना अमा भी गलत नही है। शेल्फा की चाटिया १२ फुट प्रति मील की दर से धीरे धीरे समद्र की ओर ढालू होती जाती है। सयुक्तराज्य अमरीका के तट के पार इन शेल्फा म बहुत अन्तर मिलता है—मियामी के पास ये शेल्फ लगभग शून्य अर्थात् एक मील से भी कम चौडाई से लेकर प्रशान्त महासागर के तट के समीप औसतन २० मील तक, हैटेरास अन्तरीप और काड अन्तरीप के बीच औसतन ५० स १०० मील तक आर मेन राज्य के पार बहुत ज्यादा यहा तक कि ३०० मील तक, चौडे हाते है।

इन्हें शेल्फ कहने का एक अन्य कारण यह भी है कि अपन समुद्री दिशा वाले सीमान्त पर य अचानक समाप्त हाते है। जब य ६० से ८० फदम (३६०-४८०फुट) की गहराई पर पहुचत है ता धीमे ढाल म एकदम गिरावट आकर य तेजी से गहराई मे जाती हुई सीधी चट्टाना के रूप मे आ जाते हैं जा १०,००० फुट या उससे भी अधिक गहराई मे पहुचती है और उनके गहरे होते जाने की दर प्रति मील १०० से ५०० फुट तक होती है। इस भृगु (चट्टान) को महाद्वीपीय ढाल कहते है और इसी का अधिकाशत समुद्र विज्ञानी महासागरीय द्रोणिया और महाद्वीपा के बीच की वास्तविक सीमा मानते है। इसका अथ यह हुआ कि महाद्वीपा का अन्त पुलिना (beaches) तथा तटरेखाओ पर नही हाता वल्कि वहा से समुद्र म दसियो मील दूर सैकडा फुट जल के नीचे हाता है।

खडे ढाल वाले समुद्र-तट पर महाद्वीपीय ढाल यथार्थत थल से अविच्छिन्न बना हो सकता है और उसमे शेल्फ की कोई विशेष मध्यस्थता नही दिखाई देती। दक्षिण अमरीका के पश्चिमी तट के पार समुद्री फश २५ ००० फुट गहराई से उठता

हुआ सीधे ऐंडीज पर्वतों के ढाल में अविच्छिन्न हो जाता है—ये पर्वत २३००० फुट ऊंचाई तक पहुचते हैं। कुल मिलाकर यह नौ मील से भी अधिक ऊंचाई का सीधा खडा उभार है और पृथ्वी पर पाई जाने वाली ऊंचाइयों के अंतर में सबसे अधिक है। अन्य स्थानों में महाद्वीपीय ढाल की अविच्छिन्नता चौडे, मीडिया जैसे पठारों द्वारा भंग हो जाती है जैसे ब्लेक पठार द्वारा जो कि हैटराम अन्तरीप के तुरन्त दक्षिण से मियामी के तुरन्त उत्तर तक फैला हुआ है। अत, इस स्थिति में एक अन्य शेल्फ जैसा दिखाई पडता है जो कि कुछ स्थानों पर (कनवराल अंतरीप के पार) १७० मील तक चौडा होता है और ३००–४०० फैदम गहरा होता है और उसके बाद ही महाद्वीप का सीमान्त एकदम नीचे गहरा जाता हुआ महासागरीय द्रोणी के तल की १५ ६०० फुट की गहराई तक पहुच जाता है।

लगभग हर जगह ढालों के अन्त में एक धीमा सा आगे पशवाद आता है जो अवसाद (तलछट) का बना होता है—इस चौडे पशवाद का **महाद्वीपीय उभार** कहते है। ये उभार २४०० से १७,००० फुट तक गहरे होते है और उनके आधार सीधे महासागरीय तल पर स्थित होते है। ये उन्ही पशवादों के समान होते है जैसे कि पर्वतों के गिरिपादों में मलबे के बने होते है। इन महाद्वीपीय उभारों में पाया जाने वाला झुकाव शेल्फों तथा ढालों के बीच के दर्जे का होता है।

शेल्फों और ढालों के उद्भव के विषय में कोई जानकारी नहीं है। कुछ भू-विज्ञानियों का ख्याल है कि हिम युगों में जबकि समुद्र की सतह आज की सतह से सैकडों फुट नीची थी तब लहरों और फेनिल-तरंगों की चोट ने काट काट कर शेल्फ बना दिए। कुछ अन्य लोगों की धारणा है कि ये शेल्फ शैलों के विशाल खण्ड है जो भ्रंशों के स्थान पर ऊपर उठ गए थे, अथवा वे भू-पपटी में आने वाली बडी बडी दरारें है।

महासागरों का पूर्ण क्षेत्रफल १४ करोड वर्गमील से ऊपर है लेकिन एक करोड वर्गमील का भाग महाद्वीपीय शेल्फों के ऊपर है इसलिए गहरे महासागर का वास्तविक क्षेत्रफल लगभग १३ करोड वर्गमील है। चूंकि शेल्फ महाद्वीपों के ही अंश है, इसलिए अनेक देशों ने तल के साधनों, खनिज अधिकारों और मछली पकडने के क्षेत्रों के लिए इन पर अपने अधिकार का दावा किया है। आजकल तमाम मछली पकडने का कार्य शेल्फ गहराइयों में ही किया जाता है क्योंकि गहरे महासागर में मछली पकडने के लिए डोरियों जालों और अन्य उपकरणों को जुटाने में इतना अधिक खर्च आएगा कि वह कम का नहीं है। सन् १९४६ में राष्ट्रपति के आदेश के द्वारा संयुक्त राज्य अमरीका ने अपने महाद्वीपीय शेल्फों पर खनिज (जिनमें तेल भी शामिल था) निकालने के अधिकार अपने हाथ में ले लिए, और

बताया कि ये लगभग १०० फ़ैदम (६०० फुट) गहराई तक जाने वाले उथले क्षेत्र होते हैं। यह एक लामकर कानूनी परिभाषा है और यहां तक कि कुछ भू विज्ञानी भी इसे प्रयोग करते हैं, किन्तु प्रकृति इसका बहुत कम पालन करती है, और महा
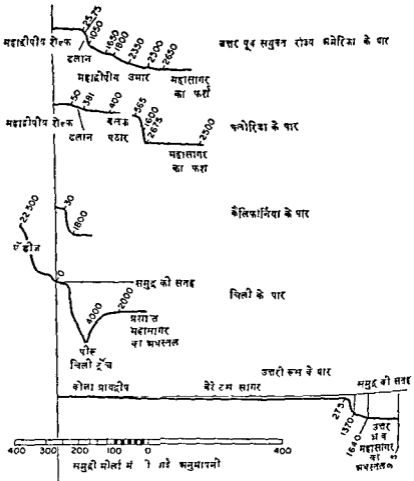
चित्र ९—परिच्छेदिकाएं, जिनमें यह दिखाया गया है कि संसार के विभिन्न भागों में महाद्वीपों के सीमान्तों में किस प्रकार विभेद पाए जाते हैं।

द्वीप ठीक उस स्थान पर अथवा उसके समीप शायद ही कभी समाप्त होते हों जहां कि वे कानूनी दृष्टि से समाप्त हुए माने जाते हैं।

महासागरों में लगभग ३० करोड़ घन मील जल भरा है। यदि तमाम थल

को हमवार करके पूरी पृथ्वी पर समान रूप मे वितरित किया जा सकता तो वह ८००० फुट से अधिक गहरे जल से ढक जाता। इस जल का अधिकतर भाग प्रशान्त महासागर म है जो कि अटलांटिक महासागर म भरे जल की मात्रा से दुगुन से काफी अधिक है। हिन्द महासागर म लगभग उतना ही जल भरा है जितना कि अटलांटिक मे—वास्तव मे उसका भी ९० प्रतिशत। महासागरीय तल सतह मे औसतन १३,००० फुट (लगभग २½ मील) की गहराई पर स्थित है। यह गहराई पर्वतो को शामिल करके समस्त महाद्वीपो की औसत ऊचाई से पाच गुना अधिक है। यदि सर्वोच्च पर्वत—२९,००० फुट ऊचा माऊट ऐवरेस्ट—महासागर के सबसे गहरे भाग मारियानाज ट्रेंच मे रखा जा सकता तो उसके ऊपर ७,००० फुट गहरा और पानी बचा रह जाएगा।

इस औसत गहराई म ससार के अधिकाश सागर शामिल नही ह जैसे कि भू मध्यसागर, वाल्टिक सागर कैरिबियन सागर चीन सागर आदि। यदि इनको भी शामिल कर लिया जाए तो महासागरो की औसत गहराई १२ ५०० फुट रह जाएगी जो कि इन्हे छोडकर निकाले गए औसत से बहुत ज्यादा कम नही है। महासागर को समुद्रो म उपविभाजित करने के सम्बन्ध मे काफी गडबड है एक ही नाम सागर का विभिन्न स्थितियो म प्रयोग किया जाता है जैसे कैस्पियन सागर के समान थल द्वारा पूर्णत घिरे हुए जल के लिए भूमध्यसागर के समान अशत सीमाबद्ध जल राशियो के लिए और अटलांटिक के मध्य मे सारगसो सागर के समान खुल समुद्र के लिए। यह स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय समझौतो द्वारा बदली जा सकती है लेकिन य नाम इतने ज्यादा स्थापित हो चुके है और विभिन्न राष्ट्रो का किसी भी बात पर सहमति होने मे इतनी ज्यादा कठिनाई आती है कि इस सम्बन्ध म प्रयत्न करने से शायद कोई लाभ न होगा।

हर अलग-अलग महासागर कितना गहरा है? अटलांटिक महासागर की औसत गहराई १२,००० फुट है। इसका सबसे अधिक गहरा स्थान २८ ७०७ फुट गहरा है जो कि पोर्टो रीको द्वीप के ठीक उत्तर म स्थित पोर्टो रीकन ट्रेंच मे है। हिन्द महासागर की औसत गहराई १३ ००० फुट ह और इसका सबसे अधिक गहरा भाग २४४४० फुट है जो जावा के दक्षिण म स्थित सुडा ट्रेंच म है। अटलांटिक महासागर म हिन्द महासागर की अपेक्षा अधिक जल है किन्तु गहराई कम है। ऐसा इसलिए है क्योकि अटलांटिक महासागर हिन्द महासागर की अपेक्षा १० प्रतिशत अधिक क्षेत्र मे फैला है। प्रशान्त महासागर की गहराई, उसके समुद्रो को शामिल करके १३ २०० फुट है तथा उनको निकाल कर १४,००० फुट। इस तथ्य से कि महासागरो की औसत गहराइया म १०००

फुट से अधिक का अन्तर नही है यह सकेत मिलता है कि सभी प्राणिया एक ही प्रकार स बनी है (अध्याय १ देखिए)।

खारी सागर

समुद्र का जल न तो वर्षा के जल की तरह है और न ही नल के पानी की तरह। सबस स्पष्ट अन्तर तो यही है कि समुद्र का जल कडवा अथवा खारा होता है। खारापन उन मिलावटो अथवा खनिजो के कारण होता है जो उसमें घुले होते है। जल का महत्त्वपूर्ण लक्षण है कि वह अन्य किसी भी द्रव की अपेक्षा कही अधिक मात्रा म पदार्थो को अपने म घुला सकता है। महासागर मे पाए जाने वाले अधिकतर खनिज-लवण थल स वर्षा के जल म अथवा नदियो के जल म घुलते जाते है। तब वे नदियो के द्वारा समुद्र म पहुच जाते है। आप कह सकते है कि समुद्र का लवण थल म से धोकर निकाला हुआ होता है।

हर वर्ष नदिया लगभग ४० करोड टन घुले और निलबित पदार्थ को समुद्र म मिलाती जाती है। वर्षा आसमान म से गैसो और रसायनो को धोती हुई नीचे समुद्र म लाती है हवाए धूल और कूडे करकट को उडा कर लाती है समुद्र के नीचे के ज्वालामुखी अपने भीतर स पदार्थ उगलते रहते है और बाहरी अंतरिक्ष से आने वाले सूक्ष्म उल्कापिण्ड भी महासागर म खनिजो की वृद्धि करते जाते हैं। फिर भी इन तमाम स्रोतो से प्राप्त होने वाली कुल मात्रा जगत् महासागर के आकार की दृष्टि से थोडी ही है और मिश्रण तथा परिसचार के द्वारा यह शीघ्र ही वितरित हो जाती है। आज सागर म लगभग ५० ०००,०००,०००,०००,००० (पाच करोड अरब) टन नमक घुला हुआ है। यदि इस सब नमक को जल स निकाल कर सूखे थल पर फैलाया जा सकता तो इसकी ५०२ फुट ऊची परत पूरे थल को ढक देती।

सन १८८४ म डिटमार ने **चलेंजर** द्वारा स्वदेश लाए गए जल के नमूनो का परीक्षण किया और उसने यह जानने का प्रयत्न किया कि महासागर में कौन कौन स रसायन है तथा उनम स हरएक की कितनी मात्रा है। उसके विश्लेषणो स पता चला कि प्रत्येक नमूने म ५५ प्रतिशत क्लोरीन थी और ३१ प्रतिशत सोडियम। ये समुद्र म दोनो पदार्थ सदा सयोजित रहते है और सोडियम क्लोराइड अर्थात् सामान्य खान वाला नमक बनाते है। डिटमार ने महासागरीय जल के अन्य तत्त्वो की प्रतिशतता भी मालूम की। उसके द्वारा प्राप्त मात्रा तथा आधुनिक रासायनिक निरूपणो द्वारा प्राप्त किए जाने वाले मात्रा मे जो समानता दिखाई पडती है वह बहुत ही प्रशसनीय है और वह भी खासतौर से यह देखते हुए कि उस
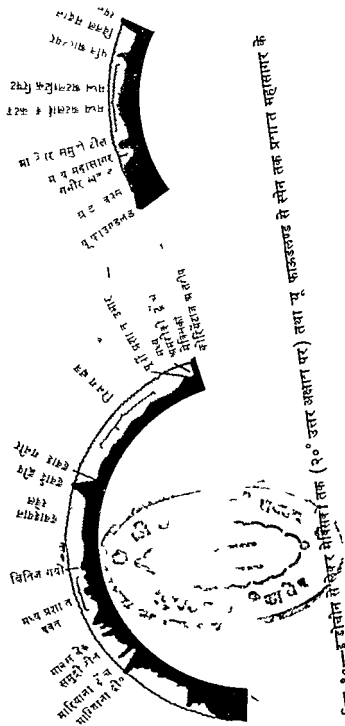
चित्र १०—इण्डोचीन से लेकर मेक्सिको तक (२०° उत्तर अक्षांश पर) तथा न्यू फाऊंडलण्ड से स्पेन तक प्रशान्त महासागर के तल की अनुप्रस्थ काट।

किस प्रकार के उपकरण से काय करना पड़ा था तथा लवण जल की जटिलता कितनी अधिक होती है।

लवण जल की जटिलता के बारे में आखिर क्या खास बात है? यह खास बात है उस १४ प्रतिशत लवणता की जो साडियम क्लाराइड के कारण नहीं है। सारणी १ में ४६ तत्वा अथवा 'लवणा' की सूची दी गई है जो समुद्री जल म अभी तक पाए जा चुके है। आज से दस वष बाद यह सूची कदाचित कहीं ज्यादा लम्बी हो जाएगी। ऐसा सोचना काफी हद तक तकपूर्ण हागा कि आगे चलकर अधिक उनत रासायनिक विधिया द्वारा महासागर के जल में उन सभी तत्वा का पाया जाना सिद्ध किया जा सकेगा जो प्रकृति म पाए जात है।

इस अत्यत सावधानीपूवक किए गए काय के द्वारा डिटमार ने यह नतीजा निकाला कि जगत् महासागर के हर स्थान के जल में एक ही आपेक्षिक सघटन पाया जाता है। जल में घुले हुए लवणा की पूरी मात्रा चाहे जो कुछ भी हो लेकिन उस पूरी मात्रा को बनाने वाले अलग अलग प्रकार के लवणा तथा उनके एक-दूसरे के प्रति अनुपात एक ही रहते हैं। यह बात तब सहज ही स्पष्ट हो जाती है जब कि हम यह सोचें कि सभी महासागर एक ही जगत महासागर है जिसमे सब कुछ पूण त मिला घुला रहता है। यदि आप केवल एक ही जल अणु की कल्पना कर तो वह अणु अतत हर महासागर में, और हर गहराई पर पहुच चुका होगा। न्यू जर्सी के पुलिन पर जब आप खड़े हो तो आपके पैरा को छने वाला जल किसी समय दक्षिण ध्रुव प्रदेश की पेंगुइना के पैरा की झिल्ली को धो चुका हागा और भविष्य म किसी दिन वह प्रशान्त महासागर के किसी द्वीप वासी के चरण छू रहा हागा।

लवणा के अनुपात म कभी अतर नहीं होता इस तथ्य से बहुत सुविधा मिलती है। यदि किसी एक नमूने म किसी एक तत्त्व की मात्रा पता चल जाए तो अय सभी तत्त्वा की मात्रा निर्धारित की जा सकती है और उसी तरह सम्पूण मात्रा भी जानी जा सकती है। इसके ठीक विपरीत यदि सम्पूण लवण मात्रा पता चल जाए तो हर अलग-अलग तत्त्व की मात्रा जानी जा सकती है। सम्पूण लवण मात्रा अथवा लवणा की सा द्रता को लवणता कहते है। यह प्रति हजार भागा म पाए जाने वाले भाग के रूप मे व्यक्त की जाती है अथवा हजार ग्राम जल म पाए जाने वाले लवणा की ग्राम सख्या के रूप में। (एक ग्राम एक औंस के तीसवें भाग से तनिक ज्यादा होता है अथवा एक गुस्तान म आने वाले जल के करीब-करीब आधे वजन के बराबर होता है।)

खुले समुद्र की लवणता जल के प्रति हजार भागा म ३३ से लेकर ३७

लवण माग तक अदलती-बदलती पाई जाती है। किन्तु इसमे भी कुछ अपवाद हैं। स्वीडन और फिनलैण्ड को पृथक् करने वाली बौथनिया की खाड़ी, जो पूरी तरह से घिरी हुई नही है नदियो द्वारा लाए जाने वाले जल से तथा पिघलते हुए बर्फ से इतनी ज्यादा तनु होती जाती है कि उसकी लवणता शून्य के नजदीक है अर्थात वहा का जल लगभग मीठे या अलवण जल के समान है। इसके विपरीत लाल-सागर मे वहा की अधिक गर्मी से तीव्र वाष्पन होता जाता है और लवणता बहुत ज्यादा—यहा तक कि ४० अथवा ४१ भाग प्रति हजार तक—हो जाती है।[†] (इस प्रकार के जल में नीचे की ओर गोता लगाते जाना कठिन होता है।) न्यू इगलैण्ड के पुलिनो के पार के जल म फ्लोरिडा के पूर्वी तट के पार के जल की लवणता से तीन भाग प्रति हजार कम लवणता पाई जाती है। इस लवणता का तट पर नहाने वाले व्यक्ति सहज ही अनुभव कर सकते है।

सारिणी I

समुद्री जल के 'नमक' को रचने वाले तत्त्व

(पर्याप्तता के क्रम मे)

क्लोरीन	लिथियम	सीरियम
सोडियम	फास्फारस	चादी
मैग्नीशियम	बेरियम	वैनेडियम
गधक	आयोडीन	लथैनम
कैल्सियम	आर्सेनिक	यिट्रियम
पोटशियम	लोहा	निकेल
ब्रोमीन	मैगनीज	स्कैंडियम
कार्बन	ताबा	पारा
स्ट्राशियम	जस्ता	सोना
बोरॉन	सीसा	रेडियम
सिलिकन	सेलेनियम	कैडमियम
फ्लोरीन	सेसियम	क्रामियम
नाइट्रोजन	यूरेनियम	कोबाल्ट
ऐल्मिनम	मॉलिबडेनम	टिन
रुबिडियम	थोरियम	

(यह सूची स्वेर्ड्रुप, जानसन और फ्लेमिंग, १९५९ द्वारा लिखित पुस्तक दी ओशन्स न्यूयार्क प्रेंटिस हाल ईन०, मे ली गई है)

[†] वाष्पन की क्रिया मे जल भाप के रूप म हवा मे उडता जाता है किन्तु लवण पीछे ही बचे रह जाते है।

ताप और ऊष्मा

चलेंजर खोज-यात्रा पर किए गए मापन-कार्य से पता चला कि खुले समुद्र की सतह के ताप में ध्रुव सागरों में पाए जाने वाले २८° फा० से नेकर (वहां पर घुले लवणों के कारण पानी ३२° के बजाए २८° पर जमता है) उष्णकटिबंधीय समुद्रों में ८६° फा० तक का ताप पाया जाता है। घिरे हुए अथवा अलग अलग समुद्र—जैसे कि अरब और अफ्रीका के बीच के लाल सागर—अथवा अरब और ईरान के बीच की फारस की खाडी के सतही जल का ताप ९६° फा० तक पहुंच सकता है जिससे कि वह दुनिया का सबसे ज्यादा गर्म "समुद्र" बन जाता है।

हालांकि सतह के ताप का इस परास के बीच ही भिन्न होना पाया जाता है तथापि चलेंजर व विज्ञानियों ने अधिकतम गहराइयों पर केवल लगभग बर्फ जमने के निशान पर पानी पाया। उष्ण कटिबंधीय भागों में भी गुनगुने जल की पर्याप्त मोटी परत के नीचे बर्फ जमने के निशान के कुछ ही डिग्री ऊपर ताप का जल पाया जाता है। चलेंजर पर सवार अफसर अपनी शैम्पेन को ठण्डी रखने के लिए महासागरीय तल के इसी जल और कीचड का प्रयोग करते थे। यह जल इतना ठण्डा होता है कि वह केवल ध्रुव प्रदेशों में ही आ सकता है जहां पर वह नीचे बैठाया जाता और दोनों दिशाओं में विषुवत वृत्त की ओर बहता जाता है।

अधिकांश लोग ऊष्मा और ताप को एक ही चीज समझते हैं।

चित्र ११—यह युवा समुद्र विज्ञानी उस तार-केबिल पर से जल का प्रतिदर्श (नमूना) एकत्रित करने वाले यन्त्र (प्रतिदर्शी) को हटा रहा है जिस पर उसे लगाकर जल में नीचे उतारा गया था। प्रतिदर्श पर लगे थर्मामीटर ताप पता चलाते हैं और उसके भीतर भरे पानी की लवणता निर्धारित करने के लिए उसका जहाज पर विश्लेषण किया जा सकता है। (चित्र १, ७० और ७१ भी देखिए)।

फोटो जान हान, वुड्स होल ओशनो ग्राफिक इन्स्टिट्यूशन।

परन्तु ऐसा नही है। ऊष्मा एक प्रकार की ऊजा है—इस ऊजा की उस मात्रा को जो किसी पिण्ड मे सचित हो सकती है विशिष्ट ऊष्मा (specific heat) कहते है। इसके विपरीत, ताप ऊष्मा की तीव्रता का माप है। इस अन्तर का स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण ले सकते है यदि आप एक ही ज्वाला के ऊपर लोह और जल के समान भार को इस प्रकार गरम कर कि दोना को बराबर मात्रा मे ऊष्मा प्राप्त हो तो जल की अपेक्षा लोहा अधिक गरम होता जाएगा (उसका ताप अधिक ऊचा पहुच जाएगा)। जल की विशिष्ट ऊष्मा ऊची होती है—वह लोहे, अथवा केवल ऐमोनिया को छोडकर अन्य किसी भी पदाथ, की अपेक्षा ताप मे कम वद्धि होते हुए अधिक ऊष्मा सोख सकता और उसे जमा किए रख सकता है। इसके विपरीत, यह अपने ताप म अधिक कमी न आने देते हुए अधिक मात्रा मे ऊष्मा छोड सकता है (अध्याय १३ देखिए)

इस गुणधम के कारण महासागर ऊष्मा की अत्यधिक मात्रा अपने भीतर सचित कर सकता है और उसे किसी अन्य को दे सकता है। वास्तव मे यह एक बहुत बडा उपकार है जो जगत महासागर हमे प्रदान करता है।

पथ्वी के गोले का ताप नियन्त्रक

पथ्वी पर पाई जाने वाली कुल ऊष्मा का ९९ प्रतिशत म अधिक भाग सूय से प्राप्त होता है। पथ्वी के अक्ष के झुकाव के कारण ध्रुव प्रदेशो की अपेक्षा—जहा पर वष मे चार से छह महीने तक अधेरा रहता है—विषुवत वत्त के पास के प्रदेशो मे सूय की ऊर्जा का कही अधिक अनुपात प्राप्त होता है। साधारणत, यह असतुलन उष्ण कटिबधीय प्रदेशो का बर्दाश्त न किए जा सकने वाली सीमा तक गम कर देता और ध्रुव प्रदेशो को सहन न किए जा सकने वाली सीमा तक ठण्डा कर देता। तथापि, यह ताप अन्तर ही महासागर के जल और वायुमण्डल की हवा दोनो को ध्रुवो की ओर चलने के लिए प्रेरित करता है। इस गति के द्वारा ही पथ्वी की ऊष्मा के जमा-खच का सतुलन होता है।

ताप और लवणता के (और उसके कही अधिक कम हद तक दाब के) द्वारा समुद्र के जल का एक अन्य महत्त्वपूर्ण गुणधम निर्धारित होता है—वह है उसका घनत्व (density)। घनत्व जल की किसी एक विशिष्ट मात्रा अथवा आयतन के भार का माप है। किसी आयतन के जल म जितने ही अधिक लवण घुले होंगे वह उतना ही अधिक सघन होगा। जल जितना ज्यादा गरम होगा वह उतना ही अधिक फैलेगा और उतना ही अधिक हल्का भी होगा।

उष्ण-कटिबधीय क्षेत्र मे जल अधिक ऊष्मा ग्रहण करता है और फैलता

जाता है। इस फैलाव के कारण विषुवत-वृत्तीय प्रदेशों में महासागर के समतल में ऊपर उठने जाने की प्रवृत्ति होती है। ध्रुवों के समीप ठण्डी हवा के कारण जल सतत ठण्डा होता रहता है और वह फैलने की बजाय 'सिकुड़ता' अथवा संकुचित होता जाता है। इन दोनों के परिणामस्वरूप जल में एक ऐसी प्रवृत्ति आ जाती है कि वह गुरुत्व के प्रभाव से ठीक उसी तरह जैसे कि ढलवां पहाड़ी पर पानी ढाल की ओर बहता जाता है विषुवत-वृत्त से ध्रुवों की ओर चलने लगता है।

ताप-परिवर्तनों द्वारा समुद्र के समतलों में ऋतुपरक परिवर्तन भी होते हैं। वसन्त में समुद्र-समतल का शरद के समुद्र-तल से आठ इंच नीचे जाता पाया गया है। चूंकि जब उत्तरी गोलार्ध में वसन्त होता है तब दक्षिणी गोलार्ध में शरद ऋतु होती है और जब उत्तरी गोलार्ध में शरद होती है तो दक्षिणी गोलार्ध में वसन्त होता है इसलिए शुरू में ऐसा सोचा जाता था कि लगभग ३० हजार अरब टन जल के हर वर्ष विषुवत् रेखा के इधर-उधर दो बार अदला-बदली के कारण ऐसा होता है। लेकिन हाल के मापनों से पता चला है कि इस स्थिति का कारण जल में होने वाला एक प्रसार और संकुचन है जो ऋतुपरक ताप परिवर्तनों के कारण होता है।

गहराई के साथ-साथ समुद्र के जल का घनत्व भी बढ़ता जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि जल के हर कण को उसके ऊपर के तमाम कणों का भार संभालना पड़ता है ठीक यही बात वायु के महासागर पर भी लागू होती है जिसे हम वायुमण्डल कहते हैं। किसी भी ऊंचाई पर हवा का दबाव इतना पर्याप्त होना चाहिए कि वह अपने से ऊपर के भार को सहन कर सके इसलिए बढ़ती जाती ऊंचाई के साथ-साथ दबाव घटता जाता है। ऊंचाई के साथ-साथ होती जाती यह कमी तब और भी तीव्रतर होती जाती है जब कि हवा गरम न होकर ठण्डी हो। इससे आपको स्पष्ट हो जाएगा कि किसी भी ऊंचाई पर विषुवत् वृत्त के ऊपर पाया जाने वाला दबाव ध्रुवों पर पाए जाने वाले दबाव से अधिक होगा। चूंकि गुरुत्व हवा को बलपूर्वक ऊंचे दबाव से हल्के दबाव की ओर बहाता है इसलिए यह विषुवत् रेखा से पृथ्वी के सिरों की ओर लगातार बहती रहेगी।

महासागर के ऊपर दबाव डालने वाली हवा के परिवर्तनशील भार से भी उसकी सतह के समतल में कुछ स्थानीय अन्तर पैदा हो जाते हैं। उच्च वायुमण्डलीय दाब वाले क्षेत्रों के नीचे महासागर की सतह दब जाती है और उसकी सम्पूर्ति के रूप में निम्न दाब वाले क्षेत्रों के नीचे उभर जाती है।

जल और वायु दा पथक पृथक् सत्वा के रूप मे ऊष्मा को ध्रुवों की ओर नही ले जात। घषण और वाष्पन के द्वारा वे एक-दूसर से जुडे रहते हैं। हवा की गति से—अर्थात पवन वग स—उसके माथ साथ जल खिचता जाता है। साथ ही पथ्वी तक पहुचन वाली सूय की ऊर्जा का लगभग एक तिहाई भाग समुद्र की सतह से जल को भाप मे बदल देने मे खच हो जाता है। जल के अणु पयाप्त ऊष्मा-ऊर्जा ग्रहण कर जल का छाडकर वाष्प अथवा गस के रूप मे वायुमण्डल मे प्रविष्ट हा जाते हैं। इस प्रकार हर अणु को ऊष्मा-ऊर्जा का एक पुज माना जा सकना है और यही वह प्राथमिक साधन है जिसके द्वारा ऊष्मा महासागर मे स वायुमण्डल मे पहुचती है।

जल-वाष्प (आद्रता) हजारा मील की दूरी तक ले जाई जा सकती है किन्तु अतत वह द्रवित हाकर नन्हे बुदको म बदल जाती है। विभिन्न बुदकें साथ-साथ मिलकर तब तक बढती जाती है जब तक वे वषा के रूप मे नीचे गिरन वाली भारी बूदें नही बन जाती। तथापि, ऊष्मा पीछे वायमण्डल मे ही रह जाती है और हवाओं की गति की ऊजा मे बदल जाती है।

अभी तक यह निश्चित रूप मे मालूम नही है कि हवाओ के द्वारा ही अधिकाश ऊष्मा ध्रुव प्रदेशा की आर पहुचाई जाती है किन्तु ऐसी सभावना अवश्य है। महासागर भी इस काय मे सहायता करता है—वह उत्तर और दक्षिण की ओर गति करते हुए तटवर्तीय प्रदेशा मे ताप को साधारण बनाता जाता है किन्तु इससे अधिक महत्त्वपूण ता महासागर की धाराए है जो ऊष्मा के ऐसे चलते फिरत भण्डार है जो वायुमण्डल को जहा और जब भी जरूरत हो, ऊष्मा सप्लाई करते है। महासागर मे किसी एक स्थान पर एक ऋतु म साखी गई ऊष्मा किसी अन्य ऋतु मे अन्यत्र स्थान पर वायुमण्डल मे छोडी जा सकती है जिसके द्वारा वहा की बहती हवाओ को चाल मिलती है तथा वहा का मौसम और जलवायु बनते है।

जब ठण्डी हवा के स्पश से अथवा वाष्पन से (जिसके द्वारा ऊष्मा निकलती है) सतह का जल ठण्डा होता है, अथवा वाष्पन या बफ जमने† से जब इसकी लवणता बढ जाती है तब यह सघनतर होता जाता है। जब ये अवस्थाए काफी अधिक तीव्र हा तो सतह के समीप का जल अपने नीचे के जल से अधिक भारी हो जाना है जिसके कारण वह नीचे बढता जाएगा। तदनतर उसके नीचे का

---

†जब पानी जमकर बफ बनता है तब लवण बाकी बचे रह जाते है जो शेष जल की लवणता का बढाते जाते है।

अपेक्षाकृत हल्का जल उसका स्थान भरने के लिए ऊपर की ओर उठता जाएगा और इस तरह एक ऊर्ध्वाधर परिसचार होने लगता है।

ताप और लवणता के थोड़े से अंतर से भी जल के घनत्व में विभेद पैदा हो जाते है जो कि समस्त महासागरों को क्षैतिज रूप में अथवा ऊर्ध्वाधर रूप में चला फिरा सकते है। इन्हीं विभेदों के कारण, और साथ ही हवा एवं गुरुत्व के उन बलों से, जो समुद्र के लवणों को समान रूप में वितरित करते हैं, हमारे भू-ग्रह के ताप सामान्य बनते हैं और जगत् महासागर के समस्त जल का परस्पर मिश्रण होता रहता है।

पवन, जल और बर्फ

"स्वच्छ हिम चादर ओढे, न देख किसी के, न परो तले रुधे किसी के,
ये दृढ दृढ़, ध्रुव प्रदेश, सोये अनादि काल से,
गहरी-गहरी निद्रा में—निष्प्राण, मृत्यु की निद्रा में।"

—नासन

चलेंजर न जगत महासागर की सभी गहरी द्राणिया का गहराई मापन आर उनका अध्ययन किया—कम उत्तर ध्रुव महासागर ही बचा रह गया था। जिस समय यह प्रसिद्ध जहाज प्रशान्त महासागर का अध्ययन कर रहा था उस समय कप्तान जाज नयम न जहाज छाड दिया और १८७५-७६ म उसन इस अतिम जल-सीमान्त क्षेत्र की खाज क लिए एक खाज-यात्रा का नतत्व किया। बारह महीने लगातार जमी रहन वाली वफ न नयम के जहाज ऐलर्ट का वहा के समुद्र तट के समीप न पहुचन दिया। किन्तु उसक सहायक एल्बर्ट मार्खम न जा कि जहाज क अधिकारी-वग म दूसर नम्बर पर थ, एक टाली का नतत्व कर पैदल-यात्रा आरम्भ की। यह टाली १८७६ के मई मास मे उत्तर ध्रुव स लगभग ४०० मील दूर तक के स्थान तक पहुच गई (चित्र १२)। सारी सारी स्लेजा पर नाव और खाने पीन आदि का सामान लादा गया और तेंतीस आदमी इन स्लेजा का अपन कधा से खीचन लग। व इन स्लेजा को उत्तर ध्रुव प्रदेश के टूटे-फूट और ऊबड-खाबड बफ के ऊपर स खीचते हुए उस सबस अधिक उत्तरी स्थान पर पहुच गए जहा पर "उत्तर ध्रुव प्रदेश क इतिहास मे इतन अधिक परिश्रमा के बाद शायद ही काई पहुचा हो।'

सन् १८७९ म लैफ्टीनेंट जाज वाशिंगटन डलॉग के नतत्व म एक खोज-

यात्रा प्रारम्भ हुई। उनका प्रयत्न था कि अपने जहाज जौनेटे को बेरिंग जलडमरू मध्य में से खेते हुए, रजेल द्वीप में पहुच जाए और फिर वहा से 'सुश्की व रास्त' स्लेज द्वारा ध्रुव तक जा सकें। सन् १८६६ से १८९२ तक इस प्रकार की व्यापक धारणा थी कि ग्रीनलैण्ड और रजेल 'स्थल' तब तक के न खोजे गए उत्तर ध्रुव महाद्वीप से बाहर को निकले हुए उसके प्रायद्वीप थे। सन १८७९ के सितम्बर मास की ६ तारीख को जौनेटे बर्फ में बुरी तरह फंस गया और उसमें फंसे फंसे वह उस भाग पर तिरता हुआ खिसकता रहा जिसे तब तक स्थल माना जाता था। डेलॉंग और उसके साथियो ने रजेल को अपने मे दक्षिण की ओर देखा और यह भी अनुभव किया कि वह लगभग पोर्टो रिको के आकार का द्वीप मात्र था।

सन् १८९२ मे रॉबर्ट ई० पीएरी ने (अर्थात् उस अमरीकन ने जो कि तब से १७ वर्ष बाद उत्तर ध्रुव पर पहुचने वाला पहला व्यक्ति था) अपने आपको ग्रीनलैण्ड की उत्तरी नोक पर खड़े हुए पाया और यह खोज निकाला कि यह ससार का सबसे बडा द्वीप था न कि किसी महाद्वीप का एक अश। उसी वर्ष, नार्वेवासी एक युवा विनानी ने लन्दन मे रायल जिआग्रफिकल सोसाइटी के सम्मुख एक योजना रखी। इस योजना के विषय मे जानने के लिए उत्तरी ध्रुव खोजकर्त्ताओ का एक विशिष्ट श्रोता वर्ग उपस्थित था। इन्ही श्रोताओ मे से एक था—नेएस जो अब ऐडमिरल सर जॉर्ज नेयस हो गया था। इसी व्यक्ति ने चार वर्ष पहले, जब वह २७ वर्ष की वायु का था, पैदल चल कर बर्फ से ढके ग्रीनलैण्ड को पार करने का असम्भव कार्य पूरा करके दिखाया था। खोजकर्त्ता गण जब उस नार्वेवासी विनानी की योजना के बारे मे ध्यानपूर्वक सुन रहे थे, तभी फ्रिट्जॉफ नान्सन ने उत्तर ध्रुव महासागर पार करने की एक और भी अधिक असम्भव योजना प्रस्तुत की।

हालांकि पीएरी की खोज की सूचना डा० नान्सेन तक नही पहुची थी फिर भी नान्सेन का यह पूरा विश्वास था कि परिकल्पित उत्तर ध्रुव महाद्वीप वास्तव मे नही है। उसका ख्याल था कि ध्रुव तक जहाज का ले जाना इसलिए असम्भव नही था कि वहा पर स्थल है वरन् इसलिए कि वहा की बर्फ एक अभेद्य बाधा के रूप मे है। नान्सेन इस निष्कर्ष पर पहुचा कि उत्तर ध्रुव पर विजय प्राप्त करने की कुंजी इसमे नही है कि प्रकृति के बलो का विरोध करते हुए बढा जाए वल्कि इसमे है कि उनके सहारे-सहारे बढा जाए। पहले की तमाम खोज-यात्राएं बर्फ और जलधाराओ के विपरीत बढ़ते जाते हुए की गई थी और इसी कारण वे ध्रुव सागर मे प्रविष्ट नही हो सके थे।

उसने सोचा कि दुर्भाग्य-ग्रस्त जौनेटे खोज-यात्रा ही एक ऐसी यात्रा थी

जिसने सही मार्ग पर चलना आरम्भ किया था। बर्फ में जम जाने के बाद यह अमरीकी जहाज दो वर्ष तक साइबेरिया के तट के सहारे सहारे बहता हुआ खिसकता गया और अन्तत १८८१ में वह पिच कर टूट गया और जल में समा गया। डेलाग और अन्य बहुत से व्यक्तियों की जान, पूर्वी साइबेरिया के इस निर्जन डेल्टा में उस समय चली गई थी जब वे लगभग सहायता पहुंच सकने वाले स्थान तक पहुच ही चुके थे। तीन वर्ष बाद **जीनेट** की बहुत सी वस्तुए ग्रीनलैण्ड के तट के पार बहते हुए बर्फ में जमी हुई पाई गई।

नानसेन ने कल्पना के आधार पर ऐसा मान लिया था कि बहते हुए बर्फ की वे चादरें, जिनमें वे वस्तुएं गड़ी थीं उत्तर ध्रुव के पार साइबेरिया के समुद्र तट से बहकर ग्रीनलैण्ड और स्पिटसबर्गेन के बीच के समुद्र में पहुची थीं। अत "इसी प्रकार बहकर खिसकते हुए बर्फ पर और इसी मार्ग के द्वारा अज्ञात ध्रुव सागर के पार एक खोज यात्रा ले जा सकना कम सम्भव नहीं है।'

इससे पहले ही कि सभा के सदस्य नानसेन की योजना का अभिप्राय समझ पाते, उसने तुरत अपनी साहसिक योजना की पूरी रूप रेखा भी प्रस्तुत कर दी। उसने एक ऐसे जहाज के निर्माण का प्रस्ताव रखा जो जितना भी मुमकिन हो ज्यादा से ज्यादा छोटा और मजबूत हो, उसमें कम इतना भर स्थान हो कि १२ व्यक्तियों के वास्ते पाच वर्ष के लिए पर्याप्त कोयला एव खाने पीने आदि की अन्य आवश्यक वस्तुएं भरी जा सकें। इस नौका के बारे में सबसे खास बात यह है कि यह ऐसे सिद्धान्तों पर बनायी जाए कि यह बर्फ के दबाव को सह सके। इसके बाजू पर्याप्त रूप में ढलवा हों ताकि जब बर्फ जम कर कड़ी होने लगे तो वह जहाज के ढाचे पर चिपक न सके—जैसा कि अन्यथा **जीनेट** के साथ घटा था।' जहाज के पिचने के बजाए ऐसा होना चाहिए कि बर्फ उसे भींच कर ऊपर की ओर जल के बाहर उभार लाए।

नानसेन का ख्याल था कि यह जहाज खुले जल में न्यू साइबेरियन द्वीपों तक चल कर पहुच सकेगा और फिर यह खोज यात्रा जहा तक भी सम्भव हो सकेगा, बर्फ को चीरती हुई आगे बढ़ती जा सकेगी और इतना सम्पन्न हो सकने के बाद हम ठीक उस धारा में पहुंच सकेंगे जो **जीनेट** को अपने साथ बहाती ले गई थी। इस प्रकार यह खोज यात्रा कदाचित खिसक कर बहते हुए ध्रुव के ऊपर से पार हो सकेगी और आगे ग्रीनलैण्ड तथा स्पिटसबर्गेन के बीच के समुद्र में पहुंच सकेगी।

क्या यह सब पागलपन नहीं था!

सर लियोपॉल्ड मैक्लिन्टॉक ने, जो उत्तर ध्रुव के २० साल के पुराने

तजर्बेकार थे, यह सोचा कि पहले जाड़े में ही यह जहाज पिच कर नष्ट हो जाएगा। उन्हें पक्का विश्वास था कि यदि नानसेन ने ऐसी समुद्रयात्रा की तो उसे कभी भी कोई व्यक्ति द्वारा जीवित नहीं देखा जा सकेगा।

ऐडमिरल नयस ने कहा कि जहाज के ढांचे की शक्ल से कोई अंतर नहीं पड़ेगा। एक बार यदि जहाज बर्फ में जम गया तो वह एक पृथक पिण्ड के रूप में ऊपर नहीं उठेगा बल्कि उस बहती हुई मिट्टी के साथ साथ, जिसका कि वह अंग बन चुका होगा, उस समय चूर चूर हो जाएगा जब दोनों पर एक-साथ दबाव पड़ेगा। नयस ने इस बात पर भी जोर दिया कि बर्फ के बहकर खिसकने पर पवन का नियन्त्रण होता है न कि धाराओं का। उसने हिसाब लगाया कि नानसेन ध्रुव से ७३० मील की दूरी पर होगा और वहां से वह पश्चिम की ओर बहकर खिसकता जाएगा न कि उत्तर की ओर।

एक ऐसा ओजस्वी युवा पुरुष जिसने एक इतनी साहसी योजना की संकल्पना की हो निश्चय ही केवल सैद्धान्तिक आपत्तियों को अपने मार्ग का रोड़ा नहीं बनने दे सकता था। नार्वे सरकार से तथा निजी व्यक्तियों एवं वैज्ञानिक सोसाइटियों से सहायता प्राप्त कर नानसेन ने अन्त में फ्राम (जिसका अर्थ है अग्रगामी) नामक नौका को इस उद्देश्य से निर्माण करा ही लिया कि 'यह पूरा जलयान बर्फ की लपटों में से एक ईल मछली की तरह फिसलता हुआ निकल जा सकेगा।' उसने अपने १२ तगड़े साथी चुन लिए और अपने समुद्री डाकू पूर्वजों के समान जोशो-खरोश के साथ वह सन् ओस्लो से २४ जून, १८९३ को चल पड़े।

छोटा टब-जैसा फ्राम नार्वे के उत्तरी सिरे पर पहुंचा और फिर धीरे धीरे खाबारोवा की तरफ बढ़ा—खाबारोवा साइबेरियन तट पर एक निर्जन चौकी जमा स्थान है। यहां से जहाज पर ३५ स्लेज कुत्ते सवार कराए गए। ४ अगस्त को गाजे-बाजे के साथ जहाज यहां से आगे बढ़ा। अगले डेढ़ महीना कारा सागर के बर्फ और तूफान में टक्कर लेने में तथा अपने अपूर्ण एवं गलत चार्टों की मदद से न्यू साइबेरिया की ओर का रास्ता ढूंढने में बीता।

न्यू साइबेरिया अभी तक दिखाई नहीं पड़ा था कि बर्फ ने जहाज को घेरना शुरू कर दिया। नानसेन ने फ्राम का उल्टे मुंह घुमा दिया और उसी दिशा में चलना शुरू किया जिधर से वे आए थे—इस आशा में कि बर्फ में जम जाने से पहले ही वे और अधिक उत्तर की ओर जा सकें। तथापि २१ सितम्बर को जहाज एक बड़ी खाड़ी के मुंह में बर्फ में घुस गया और ७८°३० उत्तर अक्षांश पर—उत्तर ध्रुव से ७०० मील—उसका चलना बन्द हो गया।

कोहरा भरता गया। जब तक कोहरा हटा, तब तक फ्राम मोटी-मोटी बर्फ
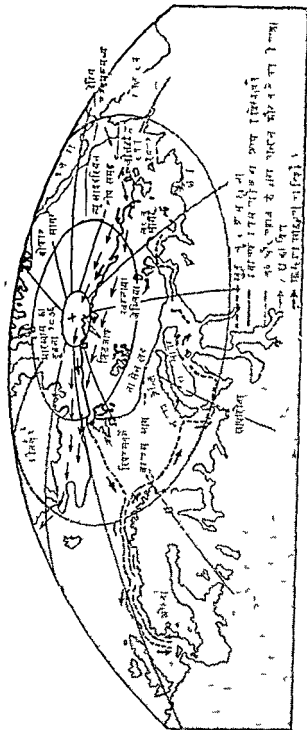
चित्र १२—दुनिया की चोटी जिसमें नानसेन और फ्राम द्वारा अपनाए गए मार्गों को, मारखाम के सुदूरतम उत्तर को और जीनेट के डूबने की स्थिति को दर्शाया गया है।

की सिल्लिया द्वारा हर तरफ से घिर चुका था। ये सिल्लिया धीरे धीरे पास आती गई और जहाज को भींचने लगी। यह सब देखकर 'समुद्री डाकुओं' की जान सूख रही थी लेकिन तभी उन्होंने अनुभव किया कि जहाज खिंचकर ऊपर उठा और बाहर बर्फ की चोटी पर जा टिका। १८९३ की २५ सितम्बर को जब सूर्यास्त हुआ तो उत्तर ध्रुव सागर में उनका जहाज बर्फ में कस कर जम चुका था।

ताप तीव्रता से गिरता गया। हर रोज अंधेरा बढ़ता गया और अन्त में सूर्य आंखों से ओझल हो गया और फ्राम उत्तर ध्रुव की लम्बी रात्रि के शांत तिमिर में प्रविष्ट हो गया। अकेले तेरह व्यक्तियों ने जो कि पृथ्वी की चोटी पर बर्फ में जमे हुए थे—उन ठोस समुद्रों के ऊपर अपनी बहने वाली यात्रा प्रारम्भ कर दी जिन पर से पहले कभी कोई नहीं गुजरा था और जिन्हें न ही कभी किसी ने अपनी आंखों से देखा था। उन्हें कहीं कोई प्राणि मात्र नजर नहीं आता था और न ही खतरे की चिन्ता तथा अज्ञात के भय से उन्हें मुक्ति मिलती थी। इसी तरह तीन वर्ष बीत गए और तब उन्होंने अपने आपको दुनिया की दूसरी ओर पहुंचा हुआ पाया।

मछली की पुडिंग, भुना रेण्डियर और जंगली झाड़ी की काजी

खोज यात्रा के प्रारम्भ से ही नानसेन का विश्वास था कि महासागरों को गति प्रदान करने में ताप और लवणता भेदों का ही प्रमुख हाथ है। उसने यह कल्पना की कि उत्तर ध्रुव महासागर का ठंडा भारी जल उत्तर ध्रुव पर एकत्रित होता जाता है। उसका विचार था कि पृथ्वी की चोटी एक विशाल जल-कुंड के रूप में थी और उसमें से बर्फ और सागर उबल कर बाहर आता है जहां से वह बहता हुआ ग्रीनलैण्ड तथा स्पिटसबर्गेन के बीच के सकरे मार्ग में से निकलता हुआ आगे बढ़ जाता है। उसका विश्वास था कि यही वह धारा थी जिसने जीनेट के मलबे को साइबेरिया से बहा कर ग्रीनलैण्ड तक पहुंचा दिया था।

जल और बर्फ की स्थिर गति की इस ध्रुवी विज्ञानी ने अपने यन्त्रों से पड़ताल करने की कोशिश की लेकिन ऐसा करने में उसे सफलता नहीं मिली। उसने यह अवश्य अनुभव किया कि हवा के रुख में किसी भी परिवर्तन का बर्फ के बहने की दिशा के परिवर्तन के साथ जबरदस्त तालमेल था। हिम-खण्डों के ऊपरी लम्बे खड़े उभारों और उनकी गिरिकाओं ने हवाओं के वास्ते आन्ध्र पालों का कार्य किया ताकि हवा में उन्हें धक्का देकर बर्फ को आगे बढ़ा सकें। सर जाज नेयर्स की बात सच निकली—तैरते हुए हिम-खण्ड बर्फ की बहती हुई अनियमित सिल्लियां

के टूटे हुए खण्ड समूह होते हैं जो हवा की मर्जी से खिसकते, मुड़ते और चलते जाते हैं।

सूर्य और तारों की स्थिति ही वह मात्र साधन था जिसके द्वारा दिन प्रतिदिन की फ्राम की स्थिति निर्धारित की जा सकती थी एवं उसके प्रवाह मार्ग का रेखा-

चित्र १३—बहते हुए हिमखण्डों में जम गया हुआ पोत फ्राम, जिसे १३ व्यक्तियों के नाविक दल समेत खिसकते हुए उत्तर ध्रुव महासागर को पार करने में ३ वर्ष लगे
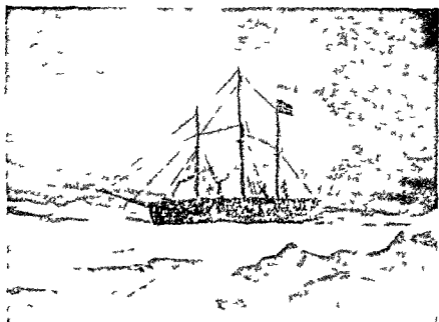
चित्र बनाया जा सकता था। यह काम नार्वे की नौसेना के एक अफसर लेफ्टीनेंट सिगर्ड स्काट हेनसन को सुपुर्द किया गया था—यह ओस्लो का रहने वाला था। १८९३ की क्रिसमस की पूर्व संध्या को उसने लिखा था कि वे लोग उत्तर में केवल ४० मील तक गए थे और अब वे ग्रीनलैण्ड की बजाय एलास्का की ओर बहते जा रहे थे। नानसेन को इस बात का आसरा था कि जहाज उत्तर और पश्चिम की ओर बहेगा। पहले तीन महीनों तक बर्फ जहाज को हर दिशा में घुमाती रही—बस उसी दिशा में नहीं ले गयी जिसकी आशा थी—पहले वह दक्षिण पूर्व की ओर बहा फिर दक्षिण की ओर और फिर उत्तर पूर्व की ओर।

किन्तु साइबेरिया में चलने वाली व्यापी हवाएं पश्चिम और उत्तर-पश्चिम की ओर चलती हैं अतः अन्त में फ्राम को इसी दिशा में जाना था। १८९४ की

जनवरी में, पूर्व की ओर तथा दक्षिण की ओर जाने वाला अनियमित वहन रुक गया और जहाज ग्रीनलैण्ड तथा स्पिटसबर्गेन की ओर बढ़ने लगा। बर्फ के समाप्त होते होते बर्फ लगातार फ्राम पर वार करती और उसे भींचती जा रही थी किन्तु उसका ओक का बना ढाँचा—जो कि ग्रीन हार्ट (एक विशेष लकड़ी) और लोहे के द्वारा और भी अधिक मजबूत बना दिया गया था—हमेशा बिना नुकसान हुए फिसल कर बच निकलता था।

सन् १८९८ के क्रिसमस दिवस पर फ्राम पर सवार व्यक्ति बुरी तरह थके मांद और चिथड़ों से ढके थे किन्तु उनका जोश बुलन्द था और हँसी में जान थी। उन्होंने खाने के लिए मछली की पुडिंग और भूना हुआ रेण्डियर तैयार किये तथा पीने के लिए क्लाउडबेरी की कार्जी। आइवार मॉग्स्टाड ने, जो कि फ्राम पर आने के पहले एक पागलखाने की देखभाल करने वाला व्यक्ति था, वायलिन बजाया और इतना बजाया कि बजाते-बजाते वह थक कर चूर हो गया। नान्सेन और लार्स पटरसन मिल कर नाचे—नान्सेन एक ऐसा व्यक्ति था जिसमें इन्जीनियर, लोहार, बल्टगर, बावर्ची, नाट्य समारोहों का विशेषज्ञ, हास्य अभिनेता और नर्तक, इन सभी का सम्मिश्रण था। जहाज के बाहर शांति और शीत का वही साम्राज्य बना था जो उन्हें सदा पहले मिला था और सदा आगे मिलने वाला था, किन्तु फ्राम अब अपने लक्ष्य-स्थान के समीप आ पहुँचा था।

सुदूरतम उत्तर

नान्सन ने देखा कि बर्फ सीधी हवा के रुख में नहीं चल रही थी बल्कि हवा के दाहिनी ओर २० से ४० डिग्री का कोण बनाते हुए चल रही थी। इसका कारण उसने पृथ्वी का घूर्णन बताया जो कि ठीक ही था। पृथ्वी के अपने अक्ष पर घड़ी की सुइयों के विपरीत रूप में घूमने के कारण उसकी सतह पर हर गतिशील वस्तु पर एक 'बल'[2] पड़ता है। यदि गति की ही दिशा में मुँह किया जाए तो क्षैतिज रूप में गतिशील कोई भी वस्तु या द्रव उत्तरी गोलार्द्ध में दाहिनी ओर विक्षेपित हो जाएगा और दक्षिणी गोलार्द्ध में बाईं ओर। यह विक्षेप, जो विषुवत वृत्त पर समाप्त हो जाता है और ध्रुवों की ओर बढ़ता जाता है हवाओं, जल तथा बर्फ का, चाहे वे किसी भी दिशा में बह रहे हों, प्रभावित करता है।

---

१ यह एक किस्म की रैस्पबरी है जो उत्तर उपोष्ण प्रदेशों में पाई जाती है।

२ यह कोई वास्तविक बल नहीं है वरन् सतह पर स्वच्छन्द तैरती हुई वस्तुओं के नीचे से पृथ्वी के घूम जाने का प्रभाव है।

अत फ्राम को दाहिनी, अथात पूर्वी ओर खिसकना चाहिए था और ऐसा करते हुए ध्रुव से अलास्का वाली दिशा में उत्तर ध्रुव महासागर को पार कर कनाडा के तट पर पहुचना चाहिए था। किन्तु जहाज ने १८९४ में पश्चिम की ओर ३५० मील का रास्ता तय किया। अत नानसेन ने यह नतीजा निकाला कि निश्चय ही उत्तर ध्रुव सागर में एक धारा बहती है जो उत्तर ध्रुव और अटलांटिक महासागरों के घनत्व में पाए जाने वाले विभेदों के कारण है। पूर्व की ओर का हाने वाले कोरियोलिस (Coriolis) प्रभाव को संतुलन करते हुए यही धारा जहाज को बजाए सीधे ध्रुव के ऊपर से ले जाने के उसे ध्रुव से पश्चिम और दक्षिण की ओर को खिसकाती गई।

नानसेन का मूल उद्देश्य उस भौगोलिक बिन्दु पर पहुचना नहीं था जो ससार की चोटी है बल्कि उसे घेरने वाले अज्ञात प्रदेशों का वैज्ञानिक अध्ययन करना था। तथापि, १८९५ के मार्च के महीने के अन्त तक फ्राम उससे अधिक उत्तर की ओर पहुच गया था जितना कि मारखाम अधिक से अधिक जा पाया था और वह ध्रुव से ३६० मील के भीतर पहुच गया था। नानसेन ने हिसाब लगाया कि इस स्थान से वह कुत्तों की स्लेज के द्वारा ५० दिन में ९०° उत्तर तक पहुच सकेगा। स्लेज से यात्रा करने के साथी के रूप में उसने लेफ्टीनेन्ट फ्रेडरिक जाहेंसन को चुना था जो एक नौ सेना अफसर था और खोज-यात्रा पर जाने को इतना अधिक इच्छुक था कि उसने जहाज पर कायला झोकने का काम स्वीकार कर लिया था। उन दोनों ने दो बार जहाज छोडकर स्लेज यात्रा करनी चाही किन्तु उन्हे मजबूर होकर वापस जहाज पर लौटना पड़ा। तीसरी बार १८९५ की १४ मार्च को उन्होंने अन्तिम रूप से जहाज को छोड ही दिया।

ऊचे ऊचे खडे सरन टीलों और अनियमित ऊबड खाबड बर्फ ने इनके स्लेज की गति को अत्यन्त धीमा बनाए रखा। यदि वे कभी बहुत तेजी से बढना चाहते तो बर्फ में दरार खुल जाती और वे समुद्र में गिर पडते। एक बार तो उन दोनों ने अपने आप को एक ऐसी दरार के ओर छोर खडे अनुभव किया जो तेजी से चौडी होती जा रही थी। जाहेंसन जल में भीगा जा रहा था और नानसेन को अपने अध जमे साथी तक पहुचने के लिए एक लम्बा चक्कर लगा कर जाना पडा। वे इस सब को झेलते हुए किसी तरह उत्तर ध्रुव के २२६ मील के भीतर पहुच सके किन्तु अव्यवस्थित बर्फ की दलदल और खुले पानी ने अन्त में उन्हें हरा दिया। ८ अप्रैल को उन्होंने अपना मार्ग दक्षिण की ओर मोडा—उस समय वे उससे १७० मील और अधिक उत्तर में जा सके थे जितना कि उनसे पहले कोई भी अन्य व्यक्ति पहुच पाया था।

इन दानो व्यक्तियो की योजना लौटकर पुन फ्राम तक जाने की नही थी वरन वे चाहते थे कि बर्फ और जल के ऊपर से पदयात्रा करते हुए फ्राज जोसेफलैण्ड पहुचा जाए। फ्राज जोसेफलैण्ड एक द्वीप समूह था—साइबेरिया से २०० मील उत्तर मे और जो उस समय तक आबाद नही था। एक बार तो उस समय वे लगभग काल के मुह मे पहुच ही गए थे जब पीछे से उन पर एक ध्रुव भालू ने हमला किया। उसके बाद ही नान्सेन और जोहैसन एक बहते हुए हिम-खण्ड के छोर पर पहुच गए—फ्राम को छोडे हुए १२२ दिन के बाद। उन्होने अपने स्लेजो से कायक (जो एस्किमो जाति के लोगो की सील की खाल की बनी डोगियो का नाम है—अनु०) छाड दिए और उनमे बैठ कर वे खुले सागर को पार करने लगे। इन खोज-यात्रियो को २४ जुलाई को स्थल दिखाई दिया किन्तु वहा पर वे केवल १४ अगस्त को ही पहुच सके जिसके बीच मे उन्हें कभी तो कायको को खेना पडता और कभी बीच-बीच मे आ जाने वाली बर्फ के ऊपर से उन्हे घसीटना पडता।

नान्सेन की योजना थी कि वह फ्राज जोजेफलैण्ड से स्पिटसबर्गेन तक की यात्रा करे जहा पर उसे आशा थी कि "वहा कुछ अपने देशवासियो या कुछ अग्रेज लोगो से भेंट हो सकेगी।' उसका विचार था कि वह और उसका साथी पक्षियो सीलो और मछलियो का आहार कर जीवित रह सकेंगे और १८९५ के शरद तक स्पिट्स्बर्गेन पहुच सकगे। किन्तु बर्फ और तूफान ने उन्हें आगे बढने से रोक दिया और २८ अगस्त को उन्होने निर्णय किया कि उन्हे सारे जाडे अकेले उसी फ्राज जोजेफलैण्ड पर ही काटने पडेंगे। फ्राज जोजेफलैण्ड को आजकल कभी कभी फ्रिटजाफ नान्सेनलैण्ड भी कहा जाता है।

इस प्रकार इन दो व्यक्तियो ने एक अत्य लम्बी, तिमिरावृत्त शीत ऋतु से टक्कर ली और ससार के एक छोर पर अलग-अलग जीवन बिताया। निश्चय ही नान्सेन और जोहैसन मे अपने समुद्री डाकू पूर्वजो जैसी गजब की शक्ति, स्फूर्ति और साहस कूट-कूट कर भरे थे। उन्होने स्थल से अलग रहते हुए और एक दूसरे से बिना कभी लडे झगडे तीसरी शीत ऋतु भी गुजार दी।

सन १८९६ की १७ जून को इन दानो लोगो ने फिर से अपनी यात्रा शुरू की। उससे एक दिन पहले ही एक खूखार वालरस ने उन पर हमला करके उनके कायको को उलट दिया था। यात्रा के दौरान एक दिन जब कि उन्होने बर्फ पर पडाव डाला हुआ था तो नाश्ता पकाते समय नान्सेन को लगा कि पास ही कही से कुत्ते के भौंकने की आवाज आ रही है। वह दौड पडा कि देखे क्या है और तभी उसने एक व्यक्ति खडा पाया 'जो इगलिश चेक सूट और पानी मे चलने वाले रबड के बने

ऊचे ऊचे बूट पहने था चिक्नी दाढी और बना ठना था और उसके पास से खुशबूदार साबुन की महक निकल रही थी।"

वह "जगली आदमी, फटे चिथडा से लदा हुआ तेल और कालिख से जिमका रग काला हो चुका था, आर जो लम्बे, बिना कघी किए, बाला आर बिखरी दाढी वाला था" इस भद्र पुरुप की ओर बढा। भद्र-पुरुष ने मिलाने के लिए हाथ बढा दिया और बोला 'जैक्सन, मै तुम्हे देखकर बेहद खुश हू।'

"धन्यवाद! में भी बेहद खुश हू।"

"क्या तुम्हारा जहाज यहीं है?

नहीं, मेरा जहाज यहा नहीं है'।

"तुम कितने लोग हो?"

'बस एक साथी है जो इस बर्फ के छोर पर है।'

"तुम नान्सेन ही हो न।'

"हा-हा, नान्सेन ही हू।

"सचमुच! तुमसे मिलकर वहुत खुशी हुई।"

नान्सेन और जाहॅसेन इग्लिश जहाज़ **विडवड** पर सवार होकर १३ अगस्त १८९६ को वापस नार्वे पहुच गए—पूरे तीन साल और दो महीने बाहर रहने के बाद।

नान्सेन ने **फ्राम** को कप्तान ऑटो स्वेड्रुप के नेतत्व मे उस समय छोड दिया था जब वह जहाज ध्रुव से ३५६ मील दूर और फ्राज जोजेफलैण्ड स करीब ३२५ मील उत्तर पूर्व मे था। यहा से जहाज़ का उत्तर और पश्चिम की ओर खिसक कर बहना जारी रहा। २२ सितम्बर, १८९५ को इसके यात्रिया न बर्फ मे चलते रहने की दूसरी वर्षगाठ मनाई। दूसर वर्ष के दौरान वे पहले वर्ष की अपक्षा लगभग दूने फासले तक बह सके थे और जैसे-जैसे व घर की ओर बढते जा रहे थे उनकी चाल भी तीव्र होती जा रही थी।

१५ नवम्बर, १८९५ का **फ्राम** अपने अधिक से अधिक उत्तर की ओर के बिन्दु ध्रुव मे २४४ मील दूर—तक पहुच पाया जो कि नान्सन की दूरी से केवल १८ मील दक्षिण की ओर रह गया था। इसके बाद जहाज़ दक्षिण दिशा मे स्पिटस्बर्गेन की ओर बढा। १३ अगस्त, १८९६ को ठीक उसी दिन जब कि नान्सेन और जोहॅसेन नार्वे पहुचे थे, यह जहाज खुले जल म प्रविष्ट हुआ। पहले तो सभी न सोचा कि यह केवल एक बडा तालाब है। किन्तु नहीं, यह सचमुच सागर था! हमारे हर तरफ खुला हुआ सीमारहित समुद्र था और वह हर्पोल्लास की घडी

थी जब हमने महसूस किया कि फ्राम ने जल के प्रथम धीमे उभार में एक मामूली सी उछाल (पिचिंग) ली।

गल्फ स्ट्रीम तंत्र

अपने तीन साल तक बर्फ में फंसे रहने के काल में छोटे बीहड़ फ्राम ने खिसकते हुए कुल १०२ मील की यात्रा की। इसका मतलब यह हुआ कि वह उत्तर ध्रुव महासागर पर प्रतिदिन एक मील से कुछ कम की रफ्तार से चलता रहा। किसी भी समय कहीं कोई स्थल, द्वीप या चट्टानें देखने को नहीं मिलीं। इस प्रकार अन्तिम रूप से यह सिद्ध हो गया कि किसी विशाल उत्तर ध्रुव महाद्वीप का सिद्धांत सर्वथा गलत है।

जिस समय यह समुद्र-यात्रा प्रारम्भ की गई थी तब ऐसा विश्वास किया जाता था कि ध्रुव सागर एक उथली द्रोणी में भरा हुआ है। स्वयं नान्सेन भी उस समय ऐसा ही विश्वास करता था। किंतु गंभीरतामापी डोरी को बार-बार छोड़कर देखने पर भी उसे तल तक पहुंचने में सफलता नहीं मिली। पर्याप्त लम्बी डोरी बनाने के लिए जहाज के एक स्टील केबिल को उधेड़ा गया और उसकी दो-दो डोरियों को परस्पर बटा गया—और यह काम हुआ शून्य डिग्री की ठण्ड से ४० डिग्री नीचे के ताप पर। इससे उन्हें १५,००० फुट लम्बा पतला तार प्राप्त हुआ और उसकी सहायता से उन्होंने उत्तर ध्रुव द्रोणी की गहराई को नापा और देखा कि वह १०,००० और १२,६०० फुट के बीच में थी। अतः इस प्रकार ज्ञात हुआ कि पृथ्वी की चोटी किसी उथले सागर से नहीं ढकी है बल्कि वह भी एक इतना गहरी द्रोणी के रूप में भीतर को पिचकी हुई है जितनी कि अटलांटिक महासागर की गहराई है।

नान्सेन ने थर्मामीटरों को जल में नीचे पहुंचाकर यह पाया कि बर्फ के नीचे से लेकर लगभग ६०० फुट गहराई तक जल का ताप लगभग बर्फ जमने के निशान पर होता है। किन्तु यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ८०० और २,२०० फुट की गहराइयों के बीच जल का ताप बढ़ते-बढ़ते ३५° फा० तक पहुंच गया था। उसने इस गरम जल के एक नमूने की परीक्षा की और लगा कि वह सतह के पानी की अपेक्षा अधिक खारी था—वास्तव में इतना खारी जितना कि अटलांटिक महासागर का जल होता है। नान्सेन ने यह तर्कपूर्ण निष्कर्ष निकाला कि निश्चय ही यह अटलांटिक का जल था जो अधिक खारा और अधिक भारी होने के कारण नार्वे और स्पिटस्बर्गेन के बीच ठण्डे उत्तर ध्रुव जल के नीचे बहता जा रहा था और एक शक्तिशाली अंतः समुद्री धारा के रूप में यूरेशिया के महाद्वीपीय ढलान के

सहारे सहारे बह रहा था। यह धारा उस जल की स्थानपूर्ति करती जाती है जो कि ठण्डी सतही धाराओं के द्वारा द्रोणी में से बाहर निकलता जाता है।

हल्का-सा गुनगुना अटलांटिक जल उत्तर ध्रुव द्रोणी में घड़ी की सुइयों की उल्टी दिशा के रूप में चलता जाता है और उत्तर की ओर फैलता जाता है तथा आगे बढ़ते बढ़ते अपनी गर्मी छोड़ता जाता है। जब वह अलास्का के उत्तर में स्थित बोफॉर्ट सागर तक पहुंचता है तो उसकी अधिकांश गर्मी निकल चुकी होती है और उसके बाद से उसे अटलांटिक जल के रूप में पृथक् नहीं पहचाना जा सकता। इस जल को स्पिट्स्बर्गेन से लेकर बोफार्ट सागर तक पहुंचने में लगभग छह वर्ष लग जाते हैं।

इस धारा का दक्षिण की ओर देखते चले जाने पर पता चलता है कि यह जगत्-महासागर के एक सबसे शक्तिशाली एवं सबसे अधिक विस्तृत धारा तन्त्र—गल्फ-स्ट्रीम तन्त्र—की एक छोटी शाखा है। इस तन्त्र की एक प्रधान शाखा में—जिसे उत्तर अटलांटिक धारा कहते हैं—वह सब जल शामिल होता है जो ग्रैण्ड बैंक्स के समुद्री ओर वाले सीमान्त से पूर्व और उत्तर की ओर बढ़ता जाता है। *ग्रैण्डबैंक्स न्यूफाऊण्डलैण्ड के दक्षिण और पूर्व में महाद्वीपीय शैल्फ का विस्तृत प्रसार है।* उत्तर ध्रुव उपशाखा उत्तर अटलांटिक धारा में से निकलती है और आइसलैण्ड तथा ब्रिटिश द्वीप समूह के बीच से गुजर कर नार्वे के तट के सहारे सहारे बहती जाती है और अन्त में उत्तर ध्रुव महासागर के सतही जल के नीचे बैठती हुई चलती जाती है **(चित्र १५)**।

इस तन्त्र की अन्य दो धाराएं गल्फ स्ट्रीम और फ्लोरिडा धारा हैं। गल्फ स्ट्रीम नाम कभी कभी शिथिल रूप में तीनों भागों को दिया जाता है किन्तु वास्तव में गल्फ-स्ट्रीम वह धारा है जो उत्तर कैरोलिना स्थित हैटेरास अन्तरीप के आस-पास से निकलती हुई ग्रैंडबैंक्स तक पहुंचती है। यह न्यूजर्सी स्थित मे-अन्तरीप से पार १२० और २०० मील के बीच से गुजरती है। न्यू इंगलैण्ड के दक्षिण में यह लगभग ४० मील चौड़ी है और आधे नॉट से लेकर पांच नॉट[1] तक की रफ्तार से चलती है।

---

१ नॉट का अर्थ है एक समुद्री मील प्रति घण्टा। समुद्री मील ६,०८० फुट अर्थात् १.१५ 'स्थल' (land) मील के बराबर होता है। यदि कहा जाए कि कोई जहाज 'पन्द्रह नॉट कर रहा है" तो इसका अर्थ होगा कि वह १५ समुद्री मील प्रति घण्टा की रफ्तार से चल रहा है। 'नॉट प्रतिघण्टा' कहना गलत है क्योंकि उसका मतलब होगा समुद्री मील प्रति घण्टा प्रति घण्टा।

गल्फ स्ट्रीम के संबंध में पुरानी विचारधारा कि "यह महासागर में बहने वाली एक विशाल लम्बी चौड़ी नदी है" आधुनिक खोज के आधार पर केवल बीते जमाने की बात रह गई है। आजकल इसे संकीर्ण तीव्र प्रवाह पट्टियों के क्रम के रूप में समझा जाता है जो एक दूसरे को कुछ कुछ इस तरह से ढके रहती है जैसे किसी छत की खपरैलें।' संयुक्त राज्य अमरीका के पूर्वी तट के सहारे ऊपर की ओर बढ़ती जाती गर्म जल की धाराएं उत्तर में नीचे को लैब्रेडोर धारा में आने वाले ठण्डे जल की धाराओं के साथ परस्पर मिल जाती हैं—लैब्रेडोर धारा उत्तर ध्रुव के उस जल के एक बर्फीले पच्चर के समान है जो कैनेडियन द्वीपों के बीच में से निकलता हुआ ग्रीनलैण्ड तथा कनाडा के बीच से आता है। हैटेरास अन्तरीप के पार गल्फ-स्ट्रीम के तटवर्ती दिशा के सीमान्त के सहारे-सहारे एक ठण्डी जलधारा बहती है और वह प्रधान गल्फ-स्ट्रीम के गरम जल को अपने में खींच ले जाती जान पड़ती है और उस धीमी कर देती है। यह जल और सवेग किसी प्रकार से एक परवर्ती धारा में पहुंच जाता है जो कि प्रधान तन्त्र के ठीक उत्तर और तटवर्ती दिशा में उत्पन्न होती है। यह परवर्ती धारा दक्षिण न्यू इंगलैण्ड से ग्रैंडबैंक्स से पूर्व की ओर जाती हुई पाई गई है। जैसे ही यह ग्रैंडबैंक्स को पार करती है तटवर्ती दिशा में एक तीसरी धारा बनती है। यह क्रम बीच महासागर तक चलता रह सकता है और कदाचित् उससे भी आगे तक।

गल्फ-स्ट्रीम की पांच तक शाखाएं बन गई हो सकती है जो कि एक-दूसरे के समान्तर बहती जाती है और साथ ही साथ उनके बीच-बीच में दक्षिण को बहने वाली ठण्डे जल की धाराएं होती हैं। ये शाखाएं ३,००० फुट तक गहरी होती है

यह नाम पाल से चलने वाले जहाजों के समय से चला आ रहा है। उन दिनों जहाज की रफ्तार नापने के लिए एक चपटी लकड़ी (जैसे कि चीरा हुआ लट्ठा) कुछ रस्सी (लाग लाइन) और एक सण्ड ग्लास प्रयोग किए जाते थे। लॉग लाइन पर ४७⅓ फुट की दूरियां पर छोटी छोटी डोरियां बांध कर शून्य से प्रारम्भ करते हुए निशान लगाए जाते थे। पहली डोरी पर एक गांठ बांधी जाती थी दूसरी पर दो, और इसी तरह क्रम जारी रखा जाता था। लकड़ी के सिरे लट्ठे को जहाज के जंगले के ऊपर से समुद्र में फेंक दिया जाता था और जब शून्य का चिह्न जंगले के ऊपर से गुजरता तो सैण्ड ग्लास को उल्टा कर दिया जाता था। जब सण्ड ग्लास का सारा रेत ऊपर से नीचे पहुंच जाता तो लाग-लाइन को रोक कर निकटतम डोरी की गांठों को गिन लिया जाता था। इस प्रकार जहाज की गति सीधे समुद्री मील प्रति घण्टा अथवा 'नॉट' में निकल आती थी।
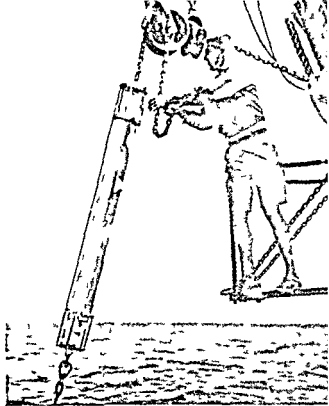
फोटो वुडज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीटयूशन
चित्र १४—इस युक्ति के द्वारा, जिसे नीचे से खींच कर अनुसंधान पोत ब्लोकेड पर ऊपर लाया जा रहा है, महासागरीय धाराओं की गति और दिशा मापी जाती है।

और सब मिलकर वे प्रति दिन इतना अधिक जल बहाती हैं जितना कि हजार मिसिसिपी नदियां बहाएंगी। हैटेरास अन्तरीप के उत्तर पूर्व में इन तंग धाराओं से कभी-कभी विसर्प पैदा हो जाते हैं जो धारा के साथ साथ बढ़ते जाते और अन्त में भंवरों के रूप में पृथक हो जाते हैं। ये भंवर तीन से लेकर दस मील तक चौड़े होते हैं और उनमें जल का चक्करदार बहाव बहुत ज्यादा तेज—यहां तक कि पांच नॉट—हो सकता है।

बहुत पुराने जमाने से यह धारणा रही है कि गल्फ-स्ट्रीम उत्तर यूरोप के जलवायु को हल्का करती है किन्तु इसके विपरीत वह निश्चय ही ऐसा नहीं करती। वास्तव में वह एक गतिशील सीमा है जो कि सार्गैसो सागर के गर्म जल को बहकर उत्तर और पश्चिम के ठण्डे पानी में जा गिरने से रोकती है। व्यापी पश्चिमी हवाएं जो कि विशाल सार्गैसो सागर और उसके पश्चिम के गर्म जल के ऊपर से बहती हैं, गर्मी को सोखती जाती हैं और उसे अपने साथ यूरोप के ऊपर ले जाती

है। अतः यही गरम हवा वह वास्तविक साधन है जिसके द्वारा यूरोप का जलवायु सामान्य बनता है। वुडज हाल आशेनाग्राफिक इन्स्टीट्यूशन के भूतपूर्व निदेशक एव हावर्ड विश्वविद्यालय के समुद्र विज्ञान के प्रोफेसर डा० कोलम्बस ओ' डानेल आइजेलिन ने तो यहा तक कहा है कि यूरोप के जलवायु को गरम करने की क्रिया वास्तव मे उस समय सबसे कम होनी चाहिए जब कि गल्फ-स्ट्रीम का बहाव सबसे ज्यादा हो।

गल्फ-स्ट्रीम तन्त्र का तीसरा भाग फ्लोरिडा धारा कहलाता है जो फ्लोरिडा और क्यूबा को पृथक करने वाले जलडमरूमध्य से प्रारम्भ होकर हैटेरास अन्तरीप तक चलता जाती है। फ्लोरिडा जलडमरूमध्य मे पहुचने वाले अधिकांश जल सीधे यूकटन चैनल से आता है जो मैक्सिको के यूकटैन प्रायद्वीप और क्यूबा के पश्चिमी सीमान्त को पृथक करती है। इस जल का केवल बहुत ही थोड़ा सा भाग घडी की सुइयो की उल्टी दिशा मे घूमता हुआ मेक्सिको की खाडी का चक्कर लेता और अन्त मे वह भी मुख्य प्रवाह मे शामिल हो जाता है। यूकटैन चैनल मे आने वाला जल अटलांटिक मे आता है जो स्मर ऐटिलीस द्वीपो के बीच मे होता हुआ और दक्षिणी अमरीका के उत्तरी तट के सहारे-सहारे चलता हुआ आता है। यह जल पूर्व से पश्चिम की ओर बहने वाली दो विशाल धाराओ से प्राप्त होता है—उत्तर और दक्षिण विषुवत वृत्तीय धाराओ से (चित्र १५)। अधिकतर जल उत्तर विषुवत वृत्तीय धारा से प्राप्त होता है और स्वय इस धारा मे कैनरीज धारा का जल आता है। कैनरीज धारा एक ठण्डी जलधारा है जो गल्फ-स्ट्रीम से कही अधिक दुर्बल है और दक्षिण पूर्वी यूरोप तथा उत्तर पश्चिम अफ्रीका के तटो के सहारे-सहारे दक्षिण दिशा मे चलती जाती है। कैनरीज धारा मे उत्तर अटलांटिक धारा की अनेक शाखाओ द्वारा जल पहुचता है।

इस प्रकार गल्फ-स्ट्रीम तन्त्र एक भवर का भाग है जो घडी की सुइयो की गति की दिशा मे घूमता है और सम्पूर्ण उत्तर अटलांटिक महासागर को घेरे है। इस भवर को गति प्रदान करने वाली ऊर्जा हवाओ से प्राप्त होती है। ये हवाए अपने नीचे के जल को पीछे पीछे 'घसीटती' चलती जाती है और तमाम सूक्ष्म तरगो एव बडी लहरो पर दबाव डालते हुए उन्हे आगे को धक्का देती जाती है। इन दोनो विधियो मे से जल को चलाती है। धक्का देने की क्रिया उन ऊंची लहरो पर जो जहाजो के लिए खतरा होती है सबसे ज्यादा प्रभावशील नही होती बल्कि उन असख्य सूक्ष्म तरगो पर होती है जो पवन के हाथ जमाने के लिए 'हैन्डल' का सा काम करती है। सबसे शक्तिशाली हवाए महासागर के कुछ भागो की अगणित

बुदकों (फुहार) के रूप में उठाकर सामने की ओर फेंक देती हुई महासागर को गति प्रदान करती है।

जैसा कि हमने देखा समुद्री धाराएं ऊष्मा के विशाल गतिशील भण्डार है। यह ऊष्मा वाष्पन के द्वारा वायुमण्डल को पहुंचा दी जाती है और हवाओं की गति की ऊर्जा में बदल जाती है। अत, जल के महासागर और हवा के महासागर के बीच एक सम्मिश्र अशन साधन (feed back system) का होना पाया जाता है। इन दोनों महासागरों को एक साथ लेकर उन पर विचार करना होगा और यह निर्णय करना आसान नहीं है कि किस हद तक हवाओं द्वारा जलधाराएं बनती है और किस हद तक जलधाराओं द्वारा हवाएं।

व्यापारिक हवाएं

यदि पृथ्वी अपने अक्ष पर नहीं घूम रही होती और घर्षण जैसी किसी चीज का अस्तित्व नहीं होता तो हवा के असमान रूप से गरम होते जाने के कारण वह विषुवत वृत्त पर ऊपर की ओर उठती और वहां से ऊपरी वायुमण्डल में बहती हुई उत्तर एवं दक्षिण की ओर चलती, ध्रुवों पर पहुंच कर नीचे को बैठती और फिर धरातल से मिले मिले बहते हुए पुन विषुवत वृत्त तक पहुंच जाती। इस प्रकार हवा ऊष्मा को पृथ्वी के दोनों सिरों तक पहुंचाती रहती और उसे वहीं छोड़ कर वापस विषुवत-वृत्त पर आकर पुन गरम होने लगती। यह सारी क्रिया बहुत कुछ उसी प्रकार है जैसे किसी ठण्डे कमरे को रेडिएटर द्वारा गरम करना। रेडिएटर से गरम होने पर हवा छत की ओर उठती जाती है और वहां पहुंच कर छत के सहारे-सहारे कमरे के दूसरे सिरे पर पहुंच जाती है जो गरम नहीं किया जा रहा है। जैसे जैसे कमरे में हवा चलती जाती है वह अपनी गरमी छोड़ती जाती है और ठण्डी होकर फर्श की ओर आ जाती है जहां से वह पुन रेडिएटर के पास पहुंच जाती है।

कमरा चक्कर नहीं खा रहा है परन्तु पृथ्वी में तो ऐसा हो ही रहा है। पृथ्वी के इस घूमने तथा हवा के और थल एवं समुद्र की सतहों के बीच होने वाले घर्षण—इन दोनों से उत्तर दक्षिण दिशाओं में होने वाली गति बड़े बड़े-बड़े परि-संचारी कोष्ठों एवं छोटे छोटे भंवरों में टूट जाती है। विषुवत-वृत्त पर ऊपर उठने जाने वाली हवा पूरा मार्ग पार कर ध्रुवों तक नहीं पहुंच पाती बल्कि ३०° उत्तर (उत्तर फ्लोरिडा और दक्षिण मोरक्को के अक्षांश) तथा ३०° दक्षिण (दक्षिण ब्राजील तथा दक्षिण अफ्रीका के अक्षांश) पर नीचे आ जाती है। इस नीचे आते जाने वाली हवा के कारण उच्च दबाव वाला क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। इसके

ठीक विपरीत ५° उत्तर तथा ५ दक्षिण के बीच के विषुवत् वत्तीय प्रदेश हवाओं के ऊपर उठने जाने के कारण निम्न दाब वाले क्षेत्र बन जाते हैं। परिणामत हवा उच्च दाब वाले प्रदेश से निम्न दाब वाले प्रदेश की ओर विषुवत-वत्त की ओर धरातल के सहारे-सहारे चलती है।

उत्तर गोलार्द्ध में कॉरियोलिस प्रभाव के कारण हवा दाहिनी ओर मुड जाती है जिससे कि हवाए उत्तर पूर्व से आती हैं। (ये हवाए दक्षिण पश्चिम की ओर चलती जाती है।) दक्षिण गोलार्द्ध में ये हवाए दक्षिण पूर्व से आती है। चूकि हवा की दिशा उस दिशा के नाम पर दी जाती है जिधर से हवा आती है, इसलिए इन हवाओ को क्रमश **उत्तर-पूर्वी और दक्षिण पूर्वी व्यापारिक हवाए** कहते हैं।

व्यापारिक हवाए विषुवत वृत्त की ओर एक-दूसरे के समीप आती जाती हैं ।१८ अपने सामने जिस जल को वे धक्का देकर चलाती जाती है वह क्रमश दाहिनी १ बाइ ओर हटता जाता है और इस प्रकार दो समान्तर जलधाराए बन जाती है—उत्तर तथा दक्षिण विषुवतीय जल धाराए। चूकि व्यापारिक हवाए समस्त महासागरो (और महाद्वीपो) पर चलती है इसलिए यदि इन धाराओ के मार्ग में महाद्वीप न आते तो वे पूरी पथ्वी की परिक्रमा करतीं।

चूकि ये महाद्वीप निश्चय ही इन जलधाराओ के मार्ग में बाधा-स्वरूप आते हैं इसलिए अटलाटिक का जल निरतर कैरिबियन के पश्चिमी सिरे की ओर जाता रहता है और मध्य-अमरीका के तट के सहारे एकत्रित होकर ऊचा चढता जाता है। पनामा के स्थल-सयोजी पर समुद्र तल मेक्सिको की खाडी में पाए जाने वाले समुद्र तल से ऊचा होता है। अत ऊचे जल की एक 'टीप' जैसी अवस्था बन जाती है जिसका यह नतीजा होता है कि इस ऊचे स्थान से जल तेजी से बह कर यकॅटन चैनल से पहुचता है और फ्लोरिडा जलडमरूमध्य तक बहता है जहा पर इसकी रफ्तार पाच नाट तक पहुच जाती है। ज्वार-गेजो की मदद से मापने पर पता चलता है कि फ्लोरिडा स्थित टम्पा के उत्तर में मेक्सिको की खाडी के तट पर पाया जाने वाला समुद्र-तल उसी अक्षाश पर अटलाटिक तट पर स्थित सेंट अगस्टीन पर पाये जाने वाले समुद्र-तल से ७½ इच ज्यादा है।

जल की सतह में न केवल फ्लोरिडा की ओर को ही ढालान है बल्कि यह सतह फ्लोरिडा से क्यूबा की ओर भी उभरती जाती है। पथ्वी के घूर्णन से जल दाहिनी ओर को खिसकता है इसलिए की-वेस्ट नामक द्वीप की अपेक्षा क्यूबा के सहारे जल १८ इच अधिक ऊचा होता है। यह धारा उत्तर की ओर बढते हुए भी अपने दाहिनी ओर के *उभरते ढलान को बनाए रखती है।*

पश्चिमी हवाएं और महासागरीय परिसचार

३०° उत्तर और दक्षिण पर पथ्वी को घेरने वाली उच्च दाब की एक अविच्छिन्न पेटी बनने के बजाए नीचे आती जाने वाली हवा कुछ स्पष्ट केन्द्रों अथवा काष्ठा मे केंद्रित होती जाती है जो महासागरो पर स्थित होते ह। पथ्वी का घूर्णन इन कोष्ठो को घडी की सुइयो के घूमने की दिशा म अर्थात प्रतिचक्रवाती दिशा मे चक्कर खिलाने लगता है। विषुवतीय दिशा मे हवा व्यापारिक हवाओ के रूप मे दक्षिण पश्चिम की ओर अथवा उत्तर पश्चिम की ओर चलती है जबकि ध्रुवाभिमुख दिशा म हवा ध्रुवो की ओर चलती है।

इस प्रकार हवा के चलने का कारण यह ह कि लगभग ६०° उत्तर और दक्षिण पर निम्न दाब वाला एक और क्षेत्र होता है। ये निम्न दाब वाले क्षेत्र घडी की सुइयो की गति की विपरीत दिशा मे चक्कर खाते है और यह उस हवा के कारण बनते है जो ३०° पर बने उच्च दाबकोष्ठो मे उत्तर की ओर बहती जाती है और अपनी गति-ऊर्जा का प्रयोग करते हुए गुरुत्व के नीचे के खिचाव के विपरीत ऊपर उठती जाती है। तब यह हवा ऊपरी वायुमण्डल मे ध्रुवाभिमुख दिशा मे चलती जाती है और पथ्वी के अंतिम सिरो पर नीचे उतर आती है जहा मे वापस ६०° की ओर बह जाती है। चूंकि यह वही स्थिति है जो उपोष्ण कटिबधीय उच्च दाब वाले क्षेत्र स विषुवतवत्त की ओर चलने वाली हवाओ की होती है इसलिए व्यापारिक हवाओ की तरह ये भी प्रधानत पूर्वी हवाए ही होती ह। तथापि इस प्रकार की पूर्वी हवाओ का पहचानना कठिन होता है और कुछ मौसम विज्ञानियो का विश्वास है कि ध्रुवी प्रदेशो की हवा केवल विशाल क्षैतिज भवरो म ही परिसचरित होती है।

उत्तर की ओर बहने वाली अपेक्षाकृत अधिक गरम उपोष्ण कटिबधीय हवा उस ध्रुवीय ठण्डी हवा के साथ **ध्रुवीय वाताग्र** (polar front) नामक एक विक्षुब्ध क्षेत्र के सहारे-सहारे आकर मिलती है। ३०° और ६० के बीच के क्षेत्र म आती हुइ ये विभिन्न वायु सहतिया इस प्रकार से ऊर्जा का योग देती ह कि उनस पश्चिम से पूर्व को चलने वाली व्यापी हवाए—**पश्चिमी हवाए**—बन जाती ह जो उत्तर गोलार्द्ध मे उत्तर फ्लोरिडा से दक्षिण अलास्का की ओर तथा दक्षिण गोलार्द्ध म दक्षिण ब्राजील से उप दक्षिण ध्रुव द्वीपो की ओर चलती ह। इन मध्य अक्षाशो के बीच ये हवाए पश्चिम से इतनी सतत गति से नही चलती जितनी पूर्व म व्यापारिक हवाए चलती है। वास्तव मे वे हर दिशा मे चलती हैं किन्तु उनका पश्चिमी दिशा मे चलने वाला अश अधिक प्रधान होता है।

यदि कोई विशाल जल राशि—जैसे कि दक्षिण अटलाटिक—महाद्वीपो

में पूर्णतः घिरा हो और हवाएं न चलती हों तो ताप विभेदों के कारण वह जल धीरे धीरे दक्षिण ध्रुव की ओर चलता जाएगा। यदि इस जल पर दो ऐसे पवन तन्त्रों की क्रिया हो जो एक ही समय में विपरीत दिशाओं में चल रहे हों (पूर्व से चलने वाली व्यापारिक हवाएं और पश्चिम से चलने वाली पश्चिमी हवाएं) तो वह घड़ी की सुइयों की गति की विपरीत दिशा में परिभ्रमण करने लगेगा। यदि इसमें पृथ्वी के पूर्व की ओर होने वाले घूर्णन को भी शामिल कर लिया जाए तो इसके प्रभाव से जल महासागर के पश्चिमी दिशा के तट की ओर 'छलक' जाएगा। उसी ओर जल का ढेर बनता जाएगा और धाराएं भी तीव्र हो जाएंगी।

व्यापारिक हवाएं तथा पश्चिमी हवाएं और साथ ही साथ विभिन्न महाद्वीप मिलकर जगत महासागर के सतही परिसंचार को छह बन्द कोष्ठों अथवा चक्करों में विभाजित कर देते हैं—इनमें से दक्षिण गोलार्द्ध में पाए जाने वाले चार वामावर्ती चक्कर हैं और उत्तर गोलार्द्ध में पाए जाने वाले दो दक्षिणावर्ती चक्कर हैं।

उत्तर गोलार्द्ध के कोष्ठों और दक्षिण गोलार्द्ध के कोष्ठों के बीच का विभाजन विषुवतीय प्रतिधारा द्वारा होता है। यह प्रतिधारा उत्तर विषुवतीय धारा तथा दक्षिण विषुवतीय धारा के बीच में बहती है और दोनों के बीच में विपरीत दिशा में चलती है ताकि उनका जल एक दूसरे में न मिल सके। लगभग ५° उत्तर और ५° दक्षिण में दोनों ओर की व्यापारिक हवाओं के बीच एक ऐसा प्रदेश है जिसमें हल्की बदलती रहने वाली और शान्त हवाएं चलती हैं जिन्हें **डालड्रम** (doldrum) कहते हैं। व्यापारिक हवाएं जल को धकेलती हुई महासागरों के पश्चिमी तटों के सहारे-सहारे उसका ढेर बनाती जाती हैं। किन्तु डॉलड्रम इतनी पर्याप्त शक्ति नहीं लगा सकती कि इस जल को वहीं रोके रख सकें। परिणामतः विषुवतीय धाराओं में से जल बीच की ओर मुड़ जाता है और 'ढाल' के सहारे-सहारे (पूर्वाभिमुख) उन दोनों के बीच एक प्रतिधारा के रूप में बहता जाता है।

जगत महासागर में एक ऐसा स्थान है जहां पर जल की गति के मार्ग में कोई स्थल-बाधा नहीं आती। दक्षिण गोलार्द्ध में जिसे कभी-कभी जल गोलार्द्ध भी कहा जाता है ४०° और ६५° के बीच पश्चिमी हवाएं जल को एक सबसे प्रबल धारा—दक्षिण ध्रुवी परिध्रुव धारा के रूप में समस्त पृथ्वी के चारों ओर घुमाती है। इन तेज़ तूफ़ानी हवाओं और विक्षुब्ध उमरते समुद्रों के अक्षांशों को उन नाविकों ने जो चालीस पचास और साठ डिग्री अक्षांशों में से यात्रा करते थे 'रोरिंग फॉर्टीज (चिंघाड़ते चालीस)', 'हाऊलिंग फिफ्टीज (गुर्राते पचास)' और 'स्क्रीमिंग सिक्सटीज़ (चीखते साठ)" नाम दे रखे हैं।

परिध्रुव धारा पर समुद्र के नीचे के तली के उभारों और दक्षिण ध्रुव

महासागर को घेरते हुए स्थल के वितरण का प्रभाव पड़ता है। पूरे ग्लोब को पेटी की तरह घेरने वाली यह धारा साधारणतः कम-से कम ८ करोड़ ८० लाख घनफुट जल प्रति सेकण्ड बहाती है। यह जल मात्रा उतनी है जितनी कि एक फुट लम्बी एक फुट चौड़ी और एक फुट गहरी ८ करोड ८० लाख टंकी को भरने में चाहिए। किन्तु जहां वह दक्षिण अमरीका तथा दक्षिण ध्रुव प्रदेश के बीच ६०० मील चौड़े ड्रेक मार्ग नामक तंग मार्ग से निकलती है वहां पर इसकी रफ्तार बढ़ कर ३६ अरब घन फुट प्रति सेकण्ड हो जाती है। स्वयं परिध्रुव धारा दक्षिण गोलार्द्ध का एक वामावर्ती भंवर है।

अन्य तीन कोष्ठक दक्षिण प्रशान्त दक्षिण अटलांटिक तथा हिन्द महासागर में हैं। इन तीनों में कोष्ठक के ऊपर से जल पश्चिम की ओर जाता हुआ दक्षिण विषुवतीय धारा में मिल जाता है और फिर महासागरों के पश्चिमी भागों में दक्षिण की ओर घूमता हुआ अन्त में परिध्रुव धारा में जा मिलता है। इस धारा का उत्तरी भाग जल को पूर्व की ओर ले जाता है। वहां से यह उत्तरी दिशा में चलता है और पुनः विषुवतीय धारा में जा मिलता है (चित्र १५)।

एल निनो

प्रशान्त महासागर में दक्षिण विषुवतीय धारा को अनेकों द्वीपों के बीच से तथा अडचनों (प्रवाल द्वीप वलयों) के समूहों के बीच से होकर गुजरना पड़ता है। इन बाधाओं से धारा का प्रवाह कुछ विचलित हो जाता है जिससे वह दक्षिण प्रशान्त के तमाम पश्चिमी भाग में फैल जाती है। नतीजा यह होता है कि इस धारा का दक्षिणाभिमुख प्रवाह धीमा पड जाता है और उसका स्पष्ट सामोकन नहीं हो सकता।

पीरू धारा—जिसे हम्बोल्ट धारा भी कहते हैं—दक्षिण ध्रुव महासागर से दक्षिण अमरीका के पश्चिमी तट के सहारे-सहारे ठण्डे जल को ऊपर विषुवतीय प्रदेशों में लाती है। इस क्षैतिज धारा की तट अभिमुख दिशा में उस समय और भी अधिक जल आ जाता है जब नीचे से ऊपर उबल कर आते हुए अर्थात उदग्र धाराओं के द्वारा गहराइयों में से और अधिक मात्रा में ठण्डा पानी ऊपर आकर मिलता है। दक्षिण-पूर्वी व्यापारिक हवाएं जो दक्षिण अमरीका की दिशा में सतत चलती रहती है जल को धक्का देती हुई तट से दूर ले जाती रहती हैं। इस जल की स्थानपूर्ति के लिए साधारण गहराइयों में से ठण्डा पानी ऊपर आ जाता है और अपने साथ उन भरपूर रसायनों और आहार-पदार्थों को ऊपर लाता है जिनसे समुद्री जीव सृष्टि की एक विशाल आबादी को पोषण प्राप्त होता है।

पीरू धारा सामान्यतः चलते चलते विषुवत् वृत्त को पार कर जाती है और

प्रतिसागर के साथ-साथ मुल्नी जाती ह जा कि २ आर १०° उत्तर क बीच स्थित होती है। तथापि, फरवरी और मार्च के बीच म न धाराओ के बीच की सीमा खिसक कर दक्षिण म आ जाती है और उष्ण कटिबन्धीय भागा स आया हुआ गम और कम लवणता वाला जल काफी दूर ग्वैकार क तट तक आ जाता है। इस गम धारा का एल निना कहते है।

कभी-कभी उन वर्षों म जब कि वायु पश्चिमचरण असाधारणत कमजोर रहता है, तटवर्ती हवाए इतनी प्रबल नही होती कि व तटवर्ती जल का धक्का देकर खुले सागर तक पहुचा सक। नतीजा यह होता है कि सागर के निचले भागा का ठण्डा और पोषणयुक्त जल सतह तक नहीं पहुच पाता। साथ ही साथ यह भी हो सकता है कि यह एल निना जलधारा एव गम स्थिर आवरण के रूप म और भी अधिक दक्षिण म पीरू स्थित कालाओ तक पहुच जाए और उसके बाद ही वह पीरू जलधारा के साथ मिलती है। पोषण तत्त्वो क अभाव एव गम जल के कारण ठण्डे जल के जन्तु बीमार पडने लगत है और एक प्रलय जैसे रूप म भारी सख्या म मरने लगते हैं। पुलिना पर मरी हुई मछलियो का ढेर लग जाना ह मरी मछलियो की सडाध स हवा म बहद बदबू भर जाती है और तटवर्ती जल विषैली हाइड्रोजन सल्फाइड गस म दूषित हो जाता ह। इस गैस से धातु की बनी चीज काली पड जाती है आर नाविक अपने जहाजो की बाजुओ को देखत ह कि कही 'कालाओ रगरेज़' न अपना काम तो नही कर दिया।

अटलाटिक म ब्राज़ील धारा दक्षिण अमरीका के पूर्वी तट के सहारे-सहारे दक्षिण की दिशा मे चलती जाती है। यह उत्तर अटलाटिक की गल्फ स्ट्रीम से कही अधिक धीमी होती है आर सदैव एक नॉट स कम की रफ्तार स चलती ह। दक्षिण विषुवतीय धारा का [तमाम जल ब्राजील धारा मे नही पहुच जाता। इस महाद्वीप का बाहर का निकला हुआ किनारा ब्राजील स्थित सेंट राक अन्तरीप पर जल का इस तरह दो भागो मे काट देता है कि लगभग उसका आधा भाग (लगभग २० करोड घन फुट प्रति सेकण्ड) उत्तर की ओर बहता जाता है जहा पर उत्तर विषुवतीय धारा के साथ मिलकर गल्फ स्ट्रीम तन्त्र म शामिल हो जाता है। अफ्रीका के तट के सहार उत्तर की ओर बहती हुइ बेन्गेला धारा दक्षिण अटलाटिक भवर की पूर्ति करती है।

हिंद महासागर का गम विषुवतीय जल ऐगल्हास धारा के रूप मे अफ्रीका के पूर्वी समुद्र-तट क सहार सहार दक्षिण की ओर चलता है। ठण्डे जल का उत्तराभिमुख वापसी प्रवाह पश्चिम आस्ट्रेलियाई धारा म होता है। हिन्द महा-सागर के उत्तरी भाग मे उस प्रकार का कोइ दक्षिणावर्ती भवर ... ।

जैसा कि अटलांटिक और प्रशान्त में पाया जाता है। यहां परिसंचरण का नियन्त्रण मानसूनों के द्वारा होता है—मानसून व मौसमी हवाएं हैं जो एशिया के समुद्र-तट की ओर और उससे विमुख दिशाओं में चला करती हैं। अक्तूबर तथा अप्रैल के महीनों के बीच अपनी संचित ऊष्मा को स्थल उससे कहीं अधिक तेजी से बाहर की ओर छोड़ता जाता है जितना कि महासागर। स्थल के ऊपर की हवा अधिक ठण्डी और सघनतर हो जाती है तथा एक उच्च दाब कोष्ठक बन जाता है। इसके विपरीत महासागर के ऊपर की अधिक गर्म हवा फैलती है और एक निम्न दाब प्रदेश बन जाता है। इसके परिणामस्वरूप 'तट विमुखी समीर' के रूप में हवाएं बड़ी तेजी के साथ स्थल से समुद्र की ओर चलती हैं—ये हवाएं अत्यन्त विशाल होती हैं जिन्हें **उत्तर-पूर्वी मानसून** कहा जाता है। यह ठण्डी, शुष्क हवा पानी को धक्का देती हुई स्थल से दूर हटती जाती है और पृथ्वी के घूर्णन के कारण स्वयं दाहिनी अथवा पश्चिमी दिशा में मुड़ जाती है। इसी समय पश्चिम की ओर बहती हुई उत्तर विषुवतीय धारा सुविकसित रहती है जो कि अदन की खाड़ी और ज़ंजीबार के अक्षांश के बीच दक्षिण की ओर उन्मुख रहती है। यहीं जल एगल्हास धारा में और विषुवतीय प्रतिधारा में जिसका अक्ष लगभग ७° दक्षिण में रहता है पहुंचता है।

अप्रैल से अक्तूबर तक के काल में ग्रीष्म की तपती धूप से स्थल के ऊपर एक 'गर्म निम्न दाब' बन जाता है क्योंकि महासागर की अपेक्षा स्थल कहीं अधिक तेजी से ऊष्मा जज्ब करता है। महासागर के ऊपर दबाव अधिक ऊंचा हो जाता है और हवाएं दक्षिण-पश्चिम से चलती हुई एशियाई तट पर पहुंचती हैं। इस समय उत्तर विषुवतीय धारा और प्रतिधारा दोनों ही नहीं रहतीं और उनके स्थान पर पश्चिम से पूर्व की ओर चलने वाली मानसून धारा बन जाती है।

उत्तर गोलार्द्ध के दोनों दक्षिणावर्त भंवर विषुवत-वृत्त के नीचे पाए जाने वाले भंवरों के दर्पण प्रतिबिम्ब होते हैं। अटलांटिक में परिसंचरण पर गल्फस्ट्रीम तन्त्र की प्रबलता रहती है। प्रशान्त महासागर में उत्तर विषुवतीय धारा पनामा से पश्चिम की ओर चलता हुआ ९ ००० मील की दूरी तय करती है जिसके दौरान वह अपने इर्द गिर्द के जल के साथ बिना मिले हुए अपना पृथक अस्तित्व बनाए रखती है। अन्तत फिलिपीन द्वीपसमूह के द्वारा उसकी दो शाखाएं फट जाती हैं। कुछ जल प्रतिधारा के साथ-साथ बहता हुआ वापस पूर्व की ओर लौट जाता है किन्तु अधिकांश भाग उत्तर की ओर घूम कर जापान धारा का रूप ले लेता है—इस धारा को कुरोशियो धारा अथवा गहरे नील वर्ण के कारण काली धारा भी

कहा जाता है। कुराशिया धारा, कुराशियो विस्तार तथा उत्तर प्रशान्त धारा—ये तीनों मिल कर कुरोशियो तन्त्र बनाते हैं।

कुरोशियो धारा उत्तर की ओर फिलिपीन फारमूसा और जापान के तटों से होती हुई चलती जाती है और उसके बाद जापान के सबसे बड़े द्वीप हान्शू के पार पूर्व की ओर मुड़ जाती है। कुराशियो विस्तार गर्म जल का आगे जारी रहता हुआ भाग है जो कुछ दूरी तक पूर्व की दिशा में बहता जाता हुआ अन्ततः उत्तर प्रशान्त धारा में समा जाता है। इस धारा में वह प्रवाह भी शामिल है जो हवाई द्वीपसमूह के रेखांश के पूर्व की ओर सामान्यतः पाया जाता है। कुरोशिया तन्त्र को गल्फस्ट्रीम की प्रशान्त महासागरीय प्रतिमूर्ति माना जाता है, हालांकि अटलांटिक महासागर में पाई जाने वाली धाराओं की अपेक्षा ये धाराएं कमजोर होती हैं। ऐसा प्रमाण मिलता है कि कुरोशियो धारा में वैसी ही मर्कीण अनिव्यापी धारा-संरचना पाई जाती है जैसी कि गल्फस्ट्रीम में।

उत्तर प्रशान्त धारा का प्रमुख भाग पूरे महासागर को पार करता हुआ नहीं फैला हुआ है बल्कि हवाई द्वीपसमूह के रेखांश पहुंचने से पहले-पहले दक्षिण की ओर मुड़ जाता है। केवल थोड़ा-सा ही भाग इन द्वीपों और उत्तर अमरीका के पश्चिमी तट के बीच में से दक्षिण की दिशा में बहता है।

कुराशियो जल का कुछ भाग बेरिंग सागर से आने वाले ठण्डे जल के साथ मिलकर एल्यूशियन धारा बनाता है। अमरीकी तट पर पहुंचने से पहले यह धारा दो शाखाओं में विभाजित हो जाती है। एक शाखा अलास्का की खाड़ी में वामावर्ती चक्र बना लेती है और दूसरी शाखा दक्षिण की ओर मुड़कर संयुक्तराज्य अमरीका के पश्चिमी तट के सहारे-सहारे बहती हुई ठण्डी कैलिफोर्निया धारा का रूप ले लेती है। इस धारा में नीचे से उबल कर ऊपर आने वाले जल से और अधिक बल आ जाता है—संयुक्तराज्य अमरीका के पश्चिमी तट के मनोरंजक ठण्डे ग्रीष्म का कारण यही जलधारा है। दक्षिण कैलिफोर्निया के पार के समुद्र में यह धारा उत्तर विषुवतीय धारा में जा मिलती है और परिसंचरण पूरा हो जाता है।

महासागर की सतही परतों को हवा द्वारा गति प्राप्त होती है। हर सतही परत अपने से नीचे की अगली परत पर प्रतिबल डालती है और वह स्वयं भी साथ साथ चलने लगती है। गति अथवा रफ्तार की मात्रा में गहराई के साथ-साथ कमी होती जाती है किन्तु बहती वायु से घनत्व में भी अन्तर उत्पन्न होते हैं जो कि १०,००० फुट तक की गहराई तक अनुभव किए जा सकते हैं जैसे कि परिध्रुव धारा में। चूंकि महासागर की औसत गहराई १३,००० फुट होती है और कहीं-

वहीं ३० ००० फुट से भी ज्यादा होती है इसलिए ऐसा समझा जाता ह कि उन गहराइयो पर होने वाली गति, जहा पवन नहा पहुच सकता, ताप और लवणता मे पाए जाने वाले विभेदो के कारण होती है। फिर भी, ऐसी कोई स्पष्ट सीमा रेखा नहीं है जहा हवाओ का प्रभाव समाप्त होकर पूणत ताप लवणता विभद काय करने लग जाते है। जैसा कि हम अगले अध्याय मे देखेंगे जगत-महासागर का गभीर परिसचार इन दोनो ही बलो के सम्मिलित प्रभाव से सम्पन्न होता है।

५

विक्षुब्ध गहराइयाँ
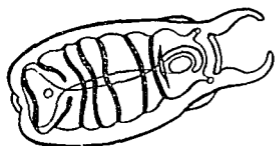
"ह कोई जरूर, समुद्र का अनजाना-अनजाना समधुर रहस्य,
जिसकी धीमी धीमी भयकारी हलचल लगती संकेत करती
कि ह अवश्य आत्मा कोई भीतर भीतर छिपी छिपी सी" —मेलविले

सागर का एक गतिशील सम्पूर्णता के रूप म कल्पना करन वाला सबसे पहला व्यक्ति मैथ्यू फाटेन मारी था जो अमरीकी नौसेना का एक अफसर था। उसन कहा कि इस गतिशील सम्पूर्ण मे 'महासागरीय परिसचरण एक ऐसा सम्पूर्ण ऐसा समग्र और ऐसा ही सामजस्यपूर्ण तन्त्र ह जसा कि वायमण्डल अथवा रक्त म पाया जाता ह। मारे का प्राय अमरीकी 'समुद्र विज्ञान का जन्मदाता' और सागर का मार्ग-खोजी की उपाधियाँ दी जाती ह। उसन समुद्र विज्ञान पर अंग्रेजी भाषा मे सबसे पहली पुस्तक 'फिजिकल जियाग्रफी ऑफ दी सी' (समुद्र का प्राकृतिक भूगोल)' सन १८५५ म प्रकाशित की। उससे सोलह वर्ष पूर्व उसन जहाजो की कार्य दैनिकियो (लॉग-बुको) के आधार पर हवाओ और धाराओ के विषय म जानकारी का सकलन आरम्भ किया और १८६१ तक सभी राष्ट्रो के लगभग एक हजार जहाजो स प्राप्त आकडो के आधार पर महासागरो क भीतर और उनके ऊपर क्या कुछ होता ह उस सबका एक सामान्य चित्र तैयार कर लिया था।

चार्ट्स एण्ड इस्ट्रुमेंट्स डिपो—जिसन बाद मे यू०एस० नवी हाइड्रोग्राफिक आफिस का रूप ले लिया—के कार्यभार अधिकारी होन के दौरान उसन उस समय तक के उपलब्ध गभीरतामापनो क आधार पर उत्तर अटलांटिक क फर्श का सबसे

चित्र १६—मैथ्यू फान्टेन मौरी—जो समुद्र विज्ञान का एक नींवधारी जन्मदाता था—महासागर, सागरों और हवाओं को एक साथ मिलाकर एकल गतिशील तंत्र के रूप में सोचता था। उसने यह जानने की कोशिश की कि यह तंत्र किस प्रकार कार्य करता है और उसे पुस्तकों, मानचित्रों और चार्टों में व्यक्त करना चाहा ताकि अन्य व्यक्ति सागरों के रास्ते से गुजरते हुए इस जानकारी के द्वारा अपना मार्ग-दर्शन कर सकें।

पहला मानचित्र तैयार किया। मौरी खुले समुद्रों पर चलने वाली हवाओं और वहां की धाराओं के चार्ट जारी किया करता था। इन चार्टों में नवीनतम बातें शामिल करते हुए आज भी हाइड्रोग्राफिक आफिस इन्हें पाइलट चार्टों के रूप में प्रकाशित करता है। उसने व्हेल के शिकार के प्रमुख क्षेत्रों के विषय में एक निर्देशिका तैयार की और उसने सबसे पहली 'सेलिंग डायरेक्शन्स' (नौ चालन निर्देश) लिखी जो नाविकों के लिए ऐसी पुस्तकें थीं जिनके द्वारा हर महासागर और समुद्र के आर-पार आने जाने, हर खतरनाक चट्टान और उथले स्थान के

आस-पास से गुजर सकने और दुनिया के हर बन्दरगाह में दाखिल हो सकने को मार्गदर्शन होता था। ये पुस्तकें भी संयुक्त राज्य अमरीका द्वारा और साथ ही कई अन्य समुद्रीय देशों द्वारा आज तक प्रकाशित होती चली आ रही हैं। जब मौरी ने अपना कार्य आरम्भ किया उस समय तक धाराओं, हवाओं और तूफानों की व्यवस्थाओं आदि की जानकारी कुछ इने गिने अनुभवी नाविकों की 'व्यापारिक राज' थी। अपने मृत्युकाल तक वह समुद्री रास्तों का खुल्लमखुल्ला स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर सका था जिन्हें नाविकगण वर्ष की किसी भी ऋतु में सुरक्षापूर्वक अपना सकते थे।

मौरी एक व्यावसायिक नाविक था और अनेक दृष्टियों से वह प्रथम व्यावसायिक समुद्र विज्ञानी भी था। उसने समुद्र विज्ञान के क्षेत्र में संयुक्त राज्य अमरीका को सबसे आगे का स्थान दिलाया। किन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अमरीका का वही स्थान बनाए रखने में सबसे अधिक योगदान करने वाला व्यक्ति एक नाविक कार्यकर्ता था। एलैक्जैंडर ऐगैसिज ने—जो कि विख्यात प्राणि-विज्ञानी एवं भू विज्ञानी लुई ऐगैसिज का पुत्र था—**चलेंजर रिपोर्ट्स** के लिए दो जिल्दें लिखीं। यह पहला व्यक्ति था जिसने गंभीर-सागर तलमार्जन के लिए सन की बनी रस्सियों के स्थान पर इस्पात के केबिलों के प्रयोग का प्रारम्भ किया और जिसने विभिन्न जन्तुओं और आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए अनेक नए साधन निकाले। उसका दोहर-सीमान्त वाला ऐगैसिज टाल चाहे जिस दिशा से भी तली पर गिरे, समान रूप में ठीक काम करता था और इस प्रकार पुराने तरीके के ड्रैजों के उल्टे गिरने पर जो असफल कर्षण होते थे उनसे बचा जा सकता था। उसने समुद्र के सूक्ष्मदर्शीय जन्तुओं को पकड़ने के लिए एक ऐसा जाल भी बनाया जो बन्द स्थिति में किसी भी मनचाही गहराई पर पहुंचाया जा सकता था, खोला जा सकता था और पीछे पीछे घसीटा जा सकता था और फिर पुनः बन्द करके वापस जहाज के ऊपर खींच लाया जा सकता था। इस साधन के द्वारा जन्तुओं के पकड़े जाने की गहराई के सम्बन्ध में कोई भी अनिश्चितता बाकी नहीं रह सकती थी।

सन १८८२ में संयुक्त राज्य अमरीका ने विशेषतः समुद्र विज्ञान सम्बन्धी खोज के लिए उस देश में पहले पहल आकल्पित एवं निर्मित जहाज समुद्र में छोड़ा। यह जहाज यू०एस० कमीशन आफ फिश एण्ड फिशरीज़ (अमरीकी मत्स्य एवं मत्स्य-उद्योग आयोग) जो आजकल मत्स्य और वन्य जीवन सेवा कहलाता है के तत्त्वावधान में तैयार किया गया और इसे **ऐल्बेट्रास** का नाम दिया गया। ऐगैसिज के संरक्षण में २०० फुट के १,००० टन वाले इस जहाज़ ने इतने अधिक गंभीरता-

मापन किए आर समुद्र की तली क ग्तन अधिक क्षेत्र का मानचित्र बनाया जितना कि उससे पहल अय किसी भी जहाज़ न नहीं किया था। उनके द्वारा किए गए एक तल्कपण म १ ७६० फैदम की गहराई पर से गहर समुद्र की उससे कहीं अधिक सम्या मे मछलिया प्राप्त हुइ जितनी कि चलेंजर द्वारा कुल मिलाकर डाले गए जात्रा मे प्राप्त हुई थी। १८७७ और १९०५ के बीच इस तथा अय जहाज़ो मे की गई खाज यात्राआ म ऐगसिज ने उष्ण कटिबंधीय प्रशान्त महासागर हिन्द महासागर और कैरिबियन सागर म १०० ००० मील का सफर तय किया। उसन प्रशान्त की तली म निक्षेपा का करिबियन सागर म समुद्री फश के सम्पण एव उसके समुद्री जीवो का विस्तत अध्ययन किया और जगत महासागर की हर महत्त्वपूण प्रवाल भित्ति (Cor l reef), अडल और द्वीप का अन्वेषण किया। अपने जीवनकाल म उसन अपनी निजी सम्पत्ति मे से समुद्र विज्ञान आर प्राणि विज्ञान के लिए १५ लाख डालर से भी अधिक की धनराशि दी।

मौनको का युवराज ऐलबट प्रथम भी स्वतन्त्र रूप से एक ऐसा ही अय धनाढ्य शौकीन था जिसन समुद्र विज्ञान के लिए बडी सम्पत्ति लगा दी थी। ऐगसिज की ही भाति युवराज ऐलबट ने भी न केवल धन ही लगाया बल्कि समय, आर एक नौसेना अफसर रह चुकन के नाते अपनी जानकारी भी लगायी। भू-मध्यसागर और उत्तर अटलांटिक मे सतही धाराओ समुद्र की तली आर स्पमन्द्रा तथा विशालकाय स्क्विडो की जदिकी का अध्ययन करन के लिए जिन चार याटो का उसन चालन किया उनका वह कप्तान भी था और मुख्य विज्ञानी भी। उसन पश्चिम म सारबौन पर समुद्र विज्ञान सस्थान की स्थापना की और उसे समय बनाया और १९१० म मानको म प्रसिद्ध समुद्र विज्ञान सग्रहालय की स्थापना की।

चलेंजर द्वारा प्राप्त सफलता से प्रेरणा पाकर अनक राष्ट्रा न सरकारी खर्चे पर समुद्र की ओर खोज यात्राए भेजी। इनम से प्रमुख राष्ट्र थे—फ्रास रूस बेल्जियम, इटली आर जमनी। जमन खोज नौका गज़ेले (Gazelle) न चलेंजर के एक वष बाद यात्रा प्रारम्भ की आर अटलांटिक, प्रशान्त आर हिंद महासागरो म खाज की। फ्रास के बापस नार्वे लौट आन के दो वष बाद एक अय जमन नौका वाल्दीविया (Valdivia) अटलांटिक आर हिन्द महासागरो म जीवविज्ञान सम्बन्धी काय करन के लिए निकली। १९०१ और १९०७ के बीच जमन नौका गौस (Geus) आर उसके बाद प्लनेट (Planet) ने सभी महासागरो मे खोजकाय किया। प्रथम विश्व-युद्ध के तुरत पहले डायशलाण्ड (D utschland') ने अटलांटिक और दक्षिण ध्रुव महासागरो म मापन-काय करन मे एक वष का समय लगाया।

नार्वे-वासी माइकेल सास (Micha el Sar)आर आरमोएर हेसेन(Armauer Hansen) म मवार होकर ममुद्र म निकले । माइकेल सास न १९०४ से १९३१ तक नार्वेजियन मागर म नार्वे तथा ग्रीनलण्ड व बीच काय किया। १९१० म यह जहाज रावर्ट जाह्न जाट व नतत्व म आर चलेंजर की ख्याति वाले मर जान मर द्वारा धन-महायता प्राप्त कर उत्तर अटलांटिक की एक प्रसिद्ध खाज-यात्रा पर निकला। ५२ टन भारी छोटी आरमोएर हेमेन नौका न यह सिद्ध कर दिया कि समुद्र विज्ञान सम्बन्धी अन्वेषणा म छाटे जहाज भी उतना ही अच्छा काम दे सकत हैं जितना कि बडे। इस जहाज न १९१३ म नार्वेजियन सागर मे काम करना शुरू किया आर माइकेल सार्स के माथ-साथ समुद्र विज्ञान म एक नई दिशा का समारम्भ किया।

इनके पूव सभी जहाज अधिक स अधिक सम्भव क्षेत्र पूरा करन का प्रयत्न करते थे। परिणामत प्रेक्षण बिखरे बिखरे आर काफी काफी दूरी पर होत थे जिनम केवल एक अत्यन्त सामान्य और औसत चित्र ही प्राप्त होता था। तथापि, १९०० तक सभी महासागरो की माटी माटी सामान्य रूपरेखाए प्राप्त हो चुकी थी। समुद्र के भीतर क्या कुछ हो रहा है इसकी विस्तत जानकारी के लिए अब निकटतर दूरियो पर किए जान वाल प्रेक्षणो की आवश्यकता थी। साथ ही, यह भी जरूरी था कि इन प्रेक्षणो को विभिन्न ऋतुओ और वर्षो म दोहराया जाए ताकि काल के दौरान समुद्र आर उसकी जीव-सृष्टि म होने वाले परिवतनो का अनुसरण किया जा सके। माइकेल सास तथा आरमोएर हेसन इस बात म अद्वितीय थे कि उन्होंने एक सीमित क्षेत्र मे एक क्रमबद्ध काय किया जिसके दौरान इन्होंने अपने स्वदेशीय तट के पार के महासागर में अल्पकालिक एव छोटे पैमाने पर होन वाले प्रक्रमो का अध्ययन किया। निमित सर्वेक्षण न केवल तफसीलवार ही किए गए बल्कि उन्हे सब ऋतुओ म दोहराया गया। इस प्रविधि को पूरे महासागर पर प्रयोग करन का काय मीटियोर(Meteor) द्वारा की जान वाली जमनी की दक्षिण अटलांटिक खोज यात्रा द्वारा ही सम्पन्न हो सका और समुद्र विज्ञान के क्षेत्र मे एक नए युग का आरम्भ हुआ।

एक स्वण खोजी अभियान

अन्वेषण जलपोत मीटियोर—जो कि २०० फुट लम्बा परिवर्तित जंगी जहाज था—अप्रैल, १९२५ मे जमनी से एक ऐसी यात्रा पर निकला जिसे लोगो न स्वण खोज के अभियान के नाम से पुकारा। इस समुद्र-यात्रा का आर्थिक खच १९१८ के रसायन के नोबल पुरस्कार विजेता डा० फ्रिट्ज़ हैबर के प्रयत्नो द्वारा उपलब्ध
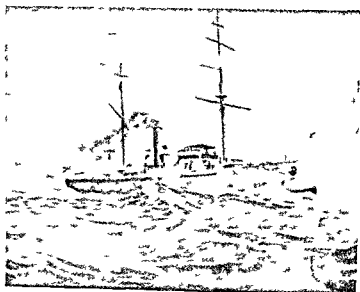
चित्र १७—मोटियोर—एक परिवर्तित तोप-नौका जिसे जमनी की दक्षिण अटलाटिक खोजयात्रा ने १९२५–२७ में एक समूचे महासागर का सबसे पहला क्रमबद्ध सर्वेक्षण करने में प्रयोग किया था।

हुआ। इस व्यक्ति का प्रन कल्पना थी कि समुद्र म स्वण एक अविश्वसनीय माता म घुला हुआ ह।

हैबर का यह विचार स्वान ऐरनहियम स प्राप्त हुआ जा स्वीडन का रहन वाला एक अय नावल पुरस्कार विजेता था। ऐरेनहियम ने स्वीडन की एक समुद्र वैज्ञानिक खोज यात्रा द्वारा लाए गए जल क अनक नमूनो का विश्लेपण किया था और इन नमूना म स्वण की उच्च माता अनुभव की थी। इस आकडे क आधार पर हैबर ने निष्कप निकाला कि जगत महासागर के प्रति टन जल म एक औस का छह-मावा भाग स्वण घुला हुआ है। एक औस का छह-मौवा भाग तो अधिक स्वण नहा है किन्तु महासागर म लगभग २ करोड खरब टन जल मौजूद है। हैबर न नतीजा निकाला कि जब जल काफी है तो स्वण भी काफी है, और इस स्वण से प्रथम महायुद्ध म जमनी पर लदे कर्ज को चुका दिया जा सकता है तथा देश का हर व्यक्ति लखपति बन सकता है।

उसे बस इतना करना था कि किसी तरह इस स्वण के खनन की विधि मालूम की जा सके। ऐसा करने के लिए उसे जल के बहुत से नमूनो और महासागरा

के विषय म अनेक आकडा की आवश्यकता थी। **मीटियोर** खोज यात्रा के मुख्य विज्ञानी डा० आल्फ्रेड मज का भी उन्ही चीज़ो की आवश्यकता थी लेकिन एक भिन्न उद्देश्य के लिए। मेज और उनके साले डा० जाज वस्ट न **चलेंजर** के पुराने रिकार्डो का अध्ययन किया और यह निणय किया कि महासागर की अधिक गहराई पर होन वाला परिभ्रमण उनस कही अधिक जटिल है जितना कि ध्रुवो से विषुवत वृत्त की ओर तली के सहारे सहारे होन वाला ठण्डे जल का साधारण प्रवाह होता है। इन्ही तीन व्यक्तियो के परिश्रमो के फलस्वरूप जमनी की अटलाटिक खोज-यात्रा सम्भव हो सकी।

यात्रा प्रारम्भ होन के कुछ ही समय बाद डा० मेज़ बहुत सख्त बीमार हो गए। खोज-यात्रा की कडी तैयारिया करने के समय से ही उनका स्वास्थ्य गिर रहा था किन्तु जिस कठोर रफ्तार से वह इस खोज यात्रा को सफल बनाने के लिए काय कर रहे थ उसम जरा भी शिथिलता न आने दी। यात्रा की परिस्थितियो से उनके स्वास्थ्य पर और भी बुरा असर पडा। इनम से एक तो उष्ण कटिबधीय गर्मी और उमस का कष्ट था और दूसरा **मीटियोर** की ठसाठसी—एक ऐसी स्थिति जिसमे आदश रूप रह सकने वाले ३५ कमचारियो के स्थान पर ११८ व्यक्ति रह रहे थे। किसी तरह मज चलाते रहे किन्तु अन्त मे उन्हे रुग्ण शय्या पर जाना ही पडा। उनकी दशा तेजी से बिगडती गई और **मीटियोर** ब्यूनास एयर्स की ओर बढा। उन्हे जल्दी-जल्दी एक हस्पताल मे पहुचाया गया किन्तु बहुत देर हो चुकी थी। विज्ञान समुद्र-विज्ञान और **मीटियोर** ने एक निष्ठावान सेवक खो दिया।

मीटियोर न पुन समुद्र-यात्रा आरम्भ की और रियो द जेनीरो की ओर बढा। जाज वस्ट पर समुद्र विज्ञान के काय का दायित्व था और वह जमन नो सेना के कप्तान एफ० स्पाइज का—जो इस खोज यात्रा का सवसाधारण नेता था—वैज्ञानिक सलाहकार भी था। अगले ७७७ दिन जहाज न दक्षिण ध्रुव प्रदेशो से लेकर क्यूबा के अक्षाशो तक अटलाटिक को पार करन और फिर से पलट पलट कर बार-बार पार करने म बिताए। ४० से अधिक समुद्री तूफानो म उसन थपेडे खाए—इनमे स कुछ तूफान तो तीन तीन हफ्ते तक चलते रहे किन्तु कटकटाने वाली शीत, अशान्त समुद्र और भीषण गर्मी के बावजूद समुद्रविज्ञान सम्बन्धी मापन काय रात और दिन जारी रहा। जहाज न दाएँ बाए आगे-पीछे जबरदस्त हिचकोले खाए कभी कभी चक्कर भी खाए और पथभ्रष्ट भी हुआ जब कि उसन दक्षिण अटलाटिक को १४ बार पार किया था। जब तक उसन यात्रा पूरी की तब तक **मीटियोर** सम्पूण दक्षिण अटलाटिक की सतह के आर ऊपर

से लेकर तली तक के पास-पास किए गए प्रेक्षणों का एक जाल प्राप्त कर चुका था (चित्र २८)।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान संयुक्तराज्य अमरीका द्वारा विकसित की गई एक प्रविधि का प्रयोग करके ध्वनि द्वारा महासागरों की गहराइयां नापी गई।
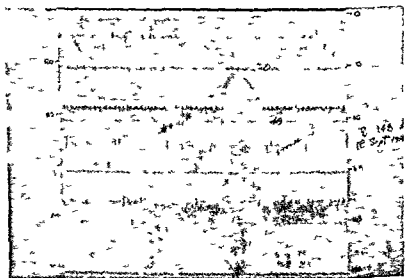
फोटो वुड्ज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीट्यूशन

चित्र १८—एक प्रतिध्वनि गभीरतामापन रिकार्ड जिसमें न्यूयार्क बन्दरगाह के पार अटलांटिक की तली में दुर्घटनाग्रस्त पोत आण्ड्रिया डोरिया का मलबा दिखाई दे रहा है। गहराइयां फदमों में अंकित हैं, और दो छाया, अथवा चिह्न, गभीरता मापों पर दो विभिन्न आवृत्ति व्यवस्थापनों के कारण प्रकट हो रही हैं।

समुद्र में ध्वनि-स्पन्दन गुजारे गये जो तली से प्रतिध्वनित होकर जहाज की ओर लौटते थे जहां पर उन्हें जल में डूबे हुए माइक्रोफोनों द्वारा पकड़ लिया जाता था। ध्वनि को विद्युत-स्पन्दनों में बदल कर उन्हें तली तक जाकर लौट आने के एक फेर में लगने वाले समय को सही सही नापा जाता था। चूंकि ध्वनि जल में लगभग ४८०० फुट प्रति सेकण्ड की रफ्तार से चलती है इसलिए ४८०० को सेकण्डों में लिए प्रतिध्वनित काल से भाग करके ध्वनि द्वारा तय की गई सम्पूर्ण दूरी का हिसाब लग जाता है। यह गहराई की दुगुनी होती है क्योंकि ध्वनि का एक बार नीचे जाना और एक बार ऊपर आना होता है। दो से एक अन्य सरल विभाजन

करने पर—जो गभीरमापी पर बने स्वचालित यन्त्रों द्वारा किया जाता है—गहराई मालूम हो जाती है (चित्र १८, ५८)।

इस विधि से समय और परिश्रम दोनों की बहुत ज्यादा बचत होती है। इससे पहले **फ्राम** एव **चलेंजर** पर प्रयोग की जाने वाली विधियो द्वारा बहुत अधिक समय और परिश्रम लगता था। इन खोज-यात्राओं मे गभीरतामापन डोरी के सिर पर २०० पाउण्ड वजन को जल मे उतार कर तली तक पहुचाने और फिर वापस ऊपर जहाज पर लाने मे घण्टो घण्टो का समय लग जाता था। इतनी ज्यादा मेहनत पडने के कारण, जर्मनी की दक्षिण अटलाटिक खोजयात्रा के पहले गहरे महासागर के केवल लगभग २००० गभीरतामापन किए जा सके थे। **मीटियोर** जहाज़ पर मे एक गभीरतामापन सेकण्डो मे हो जाता था—बस एक स्विच दबाने की जरूरत थी। इस जहाज ने दो वर्षो मे अटलाटिक के ७०,००० गभीरतामापन किए। विभिन्न स्थितियो तथा गहराइयो के आलेखन द्वारा एक ऐसा मानचित्र या परिच्छेदिका तैयार की जा सकती है जिससे जहाज़ के मार्ग के नीचे की स्थलाकृति का स्वरूप पता चल जाता है। यह सब पूरा करने के बाद **मीटियोर** के विज्ञानियो को पता चला कि महासागर की सतह भी उतनी ही ऊबड खावड है, जितनी कि महाद्वीपो की सतह।

दो वर्ष से अधिक बाहर रहने के बाद मीटियोर १९२७ की जुलाई मे वापस जर्मनी लौट आया। हैबर ने—जो समुद्र यात्रा पर नही गया था—अपने नमूने प्राप्त किए और उन्हें तुरत प्रयोगशाला मे पहुचवाया। उसने जल मे सोना पाया और सावधानीपूर्वक रासायनिक कार्य के बाद वह इस स्वर्ण को समुद्री जल मे से निकाल सकने मे सफल भी हुआ। किन्तु जैसी जैसी उसे आशा थी वैसी वैसी सब बातें नही हुई।

ऐरेनहियस के नतीजो की जाच से उसे पता चला कि स्वीडनवासियो ने अपने जल नमूने धातु की बोतलो मे इकट्ठे किए थे। विश्लेषण से पता चला कि यह धातु अशुद्ध थी और वास्तव मे जितना सोना बोतल मे भरे जल मे घुला था उससे अधिक वह बोतल की धातु मे था। समुद्री जल की धातु पर प्रतिक्रिया हुई और इससे वह सोने द्वारा 'दूषित' हो गया था। काच और रबड के नमूना लेने वाले पात्रो का प्रयोग करके हैबर ने इस त्रुटि की सम्भावना को दूर कर दिया और देखा कि जल मे प्रत्याशित मात्रा की मात्रा का केवल एक हजारवा भाग ही मौजूद था। अब भी समुद्री जल के प्रति घन मील मे ९ करोड ३० लाख डॉलर के मूल्य का सोना था लेकिन इस सोने को निकालने के लिए जल की इतनी अधिक मात्रा को ठीक-ठीक रसायन प्रविधियो द्वारा प्रभावित करने मे जितनी लागत आएगी वह प्राप्त होने

वाल मान क मूल्य से अधिक होगी। स्वय वस्ट क शब्दो मे सागर म सान का ढूढना घास क ढर मे सुई ढूढन क बराबर है।

बीच महासागर के झरने

गहर विन्यास म धाराओ का अध्ययन करन के लिए **मौटियोर** के विज्ञानियो को अपन स नीच विभिन्न गहराइयो पर जल की रफ्तार नापन म पहले कोई ऐसी तरकीब निकालनी थी जिमम कि व जहाज को मतह पर काफी स्थिर बना कर राक रह सक। यदि जहाज स्थिर नही बन पाता तो वह हवाओ लहरो और सतही धाराओ द्वारा खिसकता जाता था। जो धाराए इस खिसकन की रफ्तार से धीमी चलती थी उनका मापन नही किया जा सकता था और जिनका मापन किया मा जा सकता था व केवल सतह की गति क आपक्षिक ही थी। उस समय तक जहाज को तली क ऊपर काफी हद तक ठीक ठाक स्थिर रोके रखन का मात्र साधन लगर डालना ही था। किन्तु बीच महासागर म जहाज का लगर डालना एक असम्भव सा तो चाहन वरतव जान पडता था।

वस्ट और वुस्ट स्पाइस न नतीजा निकाला कि यह केवल इमीलिए "असम्भव था क्योकि तब तक किमी न भी ऐसा करन का प्रयत्न नही किया था। उन्होन मीलो लम्बे आग स पतले होते जाते हुए इस्पातकेबिल का प्रयोग किया—वस ही केबिल का जैसा कि स्की लिफ्ट और केबिल-कारो का साधन म प्रयोग किया जाता है—और उसके द्वारा दो अतिभारी लगर तली म उतार। जहाज के नीच इन लगरो का उतारन की तली तक की गहराई १८,७०० फुट अथवा साढे तीन मील क ऊपर थी। लगर बहुत मजबूती म गड गए और बडी सावधानी से केबिलो को हाथो से चलाते सम्भालते हुए **मौटियोर** की गतियो का कम स कम कर दिया गया। अधिक तीव्र बहन वाली धाराओ की चाल और दिशा को मीटरो की मदद स नापा गया। सबस मन्द धाराओ का निष्कर्ष घनत्व म पाए जाने वाले सूक्ष्म विभेदो के सन्दर्भ मे ताप-लवणता क उन आकडो का विश्लेषण करके प्राप्त किया गया जिनके द्वारा विभेद उत्पन्न हुए। गभीर जल की गति के अग्रगामी अध्ययन के दौरान जहाज एक बार नही बल्कि ग्यारह बार लगर द्वारा रोका गया (चित्र २४)। कभी कभी लगरो का तली तक पहुचाने मापन-कार्य करन और पुन लगरो को ऊपर खीच लान मे चार चार दिन का लम्बा समय लग जाता था।

डा० वस्ट न **मौटियोर** क नीचे के जल को दो परतो अथवा जल-सहतियो म विभाजित हुआ पाया। इन दोनो परतो म अपनी-अपनी विशिष्ट ताप, लवणता और घुली ऑक्सीजन की मात्रा पाई गई। महासागर ऑक्सीजन को केवल सतह

पर अथवा उसके समीप ही ग्रहण करता ह। पानी नीचे डूबने जाने पर उसमे घुली गैस धीरे धीरे विभिन्न जन्तुआ द्वारा प्रयुक्त हो जाती है। अत गहरे जल के किसी एक नमूने मे पाई जाने वाली आक्सीजन की मात्रा उस जल की आयु का अर्थात सतह से नीचे डूबते जाते हुए गुजरे काल का एक माटे से मापदण्ड के स्वरूप है। ऑक्सीजन की मात्रा ताप और लवणता किसी जल सहति का लेबल बन जाते ह और उनके मापन द्वारा इस जल सहति का पहचाना जा सकता है तथा उसका एक स्थान से दूसरे स्थान पर बह कर जाते हुए अनुसरण किया जा सकता है।

ब्यनॉम एयम के सामन दक्षिण अटलाटिक के मध्य मे **मीटियोर** ने पाच परत पहचानी। इन्हे सतही, उपरिक मध्य गभीर और तल जल की सज्ञा दी गई (चित्र १९)। सतही जल केवल २०० स ३०० फुट गहरा है और वह कम गरम तथा सघनतर ऊपरी जल पर टिका हुआ ह जो कि दक्षिण अटलाटिक मे १५०० फुट तक फैला होता है। यह ऊपरी जल प्राय केन्द्रीय क्षेत्रा म होता है जो कि सभी महासागरा म सतही धाराओ के घेरे म घिरे रहते ह। इसी कारण से जल के इन रेखा का केन्द्रीय जल सहतिया कहते है। ऐसी ही एक एक सहति दक्षिण अटलाटिक, दक्षिण हिंद महासागर और उत्तर अटलाटिक महासागरो म पाई जाती ह। दो ऐसी सहतिया उत्तर और दक्षिण प्रशान्त महासागरा में पाई जाती ह।

सतही जल उत्तर और दक्षिण दिशा म बहता हुआ ३५ स ४० अक्षाशा म पहुचकर केन्द्रीय जल सहतिया म पहुचता ह। यहा पर यह विपरीत दिशा स आने वाले जल से मिलता ह और वहा पर जल का 'ढेर लगता जाता है' अथवा **अभिसरण** होता है। सतही जल अभिसरण केन्द्रा मे सदा नीचे को बैठता जाता है (**चित्र १९**)। तथापि यह पूरा रास्ता तय करके तली तक नही पहुचता बल्कि कम गहराइयो पर फैलता जाता हुआ ऊपरी जल बन जाता ह।

दक्षिण अटलाटिक का जल, जो केन्द्रीय सहति मे नीचे नही बैठता जाता दक्षिण की ओर बहता जाता ह और अपने साथ गुनगुना सा खारी जल दक्षिण ध्रुव प्रदेशा म ले जाता ह। केप हॉर्न के सामने यह जल परिध्रुव धारा मे जो कि पृथ्वी के घूर्णन से जनित उत्तर की ओर झुक जाती है जा मिलता है। दक्षिण ध्रुव का जल दक्षिण दिशा म बहने वाले जल की अपेक्षा कम खारी होता ह क्योकि वह वर्षा और पिघली हुई बरफ के मिल जाने से पतला होता जाता ह किन्तु निम्नतर ताप के कारण वह अधिक सघन होता ह। अत वह उष्णतर जल के नीचे बैठ जाता ह। जिस क्षेत्र म यह नीचे बैठने जाने की क्रिया होती ह उस

दक्षिण ध्रुव अभिसरण का नाम दिया जाता है। इस क्षेत्र का सम्पूर्ण दक्षिण ध्रुव महाद्वीप के इर्द गिर्द अनुभव किया जा सकता है जिसके फलस्वरूप स्वयं नीचे बैठता जाता हुआ ठण्डा जल न केवल अटलांटिक में ही बल्कि सभी महासागरों में पाया जाता है और अधिक उत्तर में अभिसरणों के स्थान पर नीचे बैठे हुए जल से भी अधिक सघन होने के कारण यह और भी अधिक गहराई पर—२ ०० और ८, ०० फुट के बीच में—बैठता जाता है तथा उपरिक जल के नीचे मध्य जल अथवा दक्षिण ध्रुव मध्य जल के रूप में उत्तर की ओर प्रवाहित होता रहता है।

महासागर का सबसे मीठा जल यही है। इसकी कम लवणता के द्वारा मीटियोर के नाविक वस्ट ने इसकी स्थिति सुगमता से जान ली थी। उसने देखा कि इस परत के नीचे ताप घटता गया किन्तु आक्सीजन और लवणता की मात्रा तब तक बढ़ती गई जब तक यह प्रकट नहीं हो गया कि दक्षिण ध्रुव जल एक अधिक गहरा लवणयुक्त सहति के ऊपर आधारित था।

अटलांटिक के उत्तरी छोर पर लब्रेडोर तथा आइसलैण्ड के बीच में, उत्तर अटलांटिक धारा के गर्म लवण जल में उत्तर ध्रुव से ग्रीनलैण्ड के पूर्वी तट के सहारे सहारे आने वाला कम लवण युक्त बर्फीला जल आकर मिलता है। जाड़ों में यह मिश्रण तेज़ी से ठण्डा होता जाता है। घुले लवण के कारण भारी बन जाने वाले जल कण निम्न ताप के कारण अधिक घनत्व प्राप्त कर लेते हैं और एक विशाल

चित्र १९—उत्तर से दक्षिण दिशा में अटलांटिक महासागर की खड़ी काट, जिसमें पांच परतों, अथवा जल सहतियों, में से चार परतें दिखाई गई हैं और करीब करीब वे स्थान, जहां सतह का जल नीचे बैठता जाता है (अभिसरण) और जहां गंभीर जल ऊपर उठता आता है (अपसरण), दिखाए गए हैं।
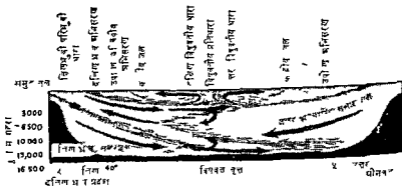
मन्द गति वाले झरने के रूप में नीचे बैठते जाते हैं—ऐसे झरने के रूप में जो हर सेकण्ड करोड़ो टन जल अधिक गहराई में पहुचाता जाता है। बीच महासागर का झरना सचमुच एक दर्शनीय वस्तु होती किन्तु यह पूर्णत अदृश्य है। धाराए मिलती घुलती और नीचे बैठती जाती है और इन सबके द्वारा सतह पर कोई गोचर हलचल नही दिखाई देती। यह निस्तेज झरना कुछ जल तली तक पहुचा देता है किन्तु अधिकाश भाग ६,००० और १३,००० फुट की गहराई के बीच भरता जाता है जहा से वह इन गहराइयो पर दक्षिण की ओर बहता जाता है। इस जल महति को उत्तर अटलाटिक गभीर जल या केवल गभीर जल की सज्ञा दी जाती है।

दक्षिण ध्रुव मध्य जल उत्तर की ओर बहकर दक्षिण क्यूबा के अक्षाश तक पहुच जाता है जहा पर वह दक्षिण की ओर बहकर आते हुए उत्तर अटलाटिक गभीर जल से मिलता है। मध्य जल का कुछ भाग गभीर जल के—जो विषवत वृत्त को पार करता है—साथ-साथ पुन दक्षिण में खिचता चला जाता है। यह गभीर जल प्रति सेकण्ड ३० करोड टन जल दक्षिण गोलार्द्ध म पहुचता जाता है। इसी जल से, सतह पर दक्षिण विषुवतीय धारा से उत्तर गोलार्द्ध म पहुचने वाले जल की क्षतिपूर्ति होती है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है इस धारा का लगभग आधा भाग ब्राजील के 'कूब' द्वारा ऊपर की ओर फटकर उत्तर की ओर बहता हुआ विषुवत वृत्त को पार करता है। गभीर जल का आगे बहना जारी रहता है और दक्षिण ध्रुव अभिसरण के नीचे म गुजरता है। ग्रीनलैण्ड के दक्षिण में नीचे डूब जाने के सैकडो वर्ष बीत जाने के बाद यह जल परिध्रुवी धारा के नीचे के प्रदेश मे पहुच पाता है (चित्र १९)।

जिस तरह महासागर म अभिसरण के केन्द्र होते हैं जहा पर विभिन्न जल महतिया मिलती और नीचे बैठती जाती है ठीक उसी तरह अपसरण के क्षेत्र भी पाए जाते हैं जहा पर जल महतिया एक दूसरे म दूर हटती जाती है और इस खाई को पाटने के लिए जल नीचे म ऊपर की ओर उठता जाता है (चित्र १९)। इस प्रकार की एक खाई दक्षिण ध्रुव महासागर म बनती है जहा पर एक ओर महाद्वीप के समीप जल नीचे बैठता जाता है और दूसरी ओर परिध्रुव धारा का वह भाग, जो उत्तर दिशा म दक्षिण ध्रुव अभिसरण की ओर बहता जाता है दूर हटता जाता है। इस प्रक्रिया म अनिवार्यत परिध्रुव धारा की दोनो दिशाओ में जल खिचता हुआ दूर हटता जाता है और एक टफ जैसी स्थिति बन जाती है। उत्तर अटलाटिक गभीर जल दक्षिण ध्रुव प्रदेश के महाद्वीपीय ढलान से और आगे दक्षिण म नही जा सकता क्योकि वहा पर एक अन्य झरना पाया जाता है और न ही वह

नीचे डूब सकता है क्योंकि उसके नीचे अधिक भारी जल होता है। अतः इस पानी का ढाल पर ऊपर की ओर चढ़ते जाना होता है—अर्थात एक उल्टा झरना बन जाता है—जो कि टप का भरता जाता है। यह जल सतह को चीरता हुआ ऊपर नहीं जाता बल्कि परिध्रुव धारा के निचले भाग में जुड़ता जाता है।

अपसरण अथवा ऊपर उठकर आने के अन्य क्षेत्र अफ्रीका तथा दक्षिण अमरीका के पश्चिमी तटों के सहारे सहारे तथा कैलिफोर्निया के तट के पास पाए जाते हैं। बीच महासागर में, अपसरण विषुवतीय प्रदेशों में पाया जाता है (चित्र १९)। प्रतिधारा और उत्तर विषुवतीय धारा के बीच घर्षण एवं विक्षोभ के फलस्वरूप उत्तर विषुवतीय धारा दक्षिणी सीमान्त प्रतिधारा के उत्तरी सीमान्त से दूर हटती जाती है। इसी प्रकार से दक्षिण विषुवतीय धारा का दक्षिणी सीमान्त केन्द्रीय जल सहनियों से दूर हट कर बहता जाता है। दोनों मामलों में खाड़ियों का पाटन के १८५ से २०० और १००० फुट की गहराइयों से ऊपर आता है।

जगत महासागर का सबसे ठण्डा और सबसे भारी जल—जो कि सभी महासागरों की आधारीय परत बनाने वाला तली का जल होता है—वेडेल सागर में बनता है। वेडेल सागर दक्षिण ध्रुव प्रदेश में एक बर्फीली खाड़ी है जो अटलांटिक के दक्षिणी सिरे की ओर खुलती है। दक्षिण ध्रुव से आने वाली तीव्र चक्करदार हवाओं से तथा सालों में लगभग चार महीनों तक सूर्य के दबे रहने के कारण इस ठण्डे महाद्वीप के चारों ओर का जल इस हद तक ठण्डा हो जाता है कि उसकी सतह पर बर्फ का आवरण जम जाता है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं बर्फ जमने के समय जल अपना अधिकांश लवण बाहर छोड़ देता है। वास्तव में समुद्री बर्फ मीठे पानी का एक उत्तम साधन है। लवण के अतिरिक्त भार और शीत के कारण महाद्वीपीय ढलान के सहारे सहारे एवं अन्य बादल परन के रूप में यह जल नीचे की ओर खिसकता जाता है। महासागर की तली में पहुँच कर यह जल फैल जाता और उत्तर की ओर बहता जाता है।

दक्षिण ध्रुव महासागर का यह तल जल दक्षिण अटलांटिक के १२ ००० फुट और तली के बीच के गहरे भागों को भर देता है और उसके बाद उत्तरी दिशा में बहता हुआ विषुवत्-वृत्त को पार कर दक्षिणाभिमुख बहते हुए गंभीर जल को ठण्डे दक्षिण ध्रुव महासागरीय जल को उत्तर की ओर बहती हुई दो शाखाओं के बीच में सींच लेता है। यही वह जल था जो मीटियोर के लगरों के ऊपर से बहता हुआ गया था और वस्ट ने इसके लगभग बर्फ जमने के ताप—अर्थात लगभग ३३° फारेनहाइट—के द्वारा पहचान सकने में सफल हुआ था। तल जल इतना

अधिक लवणयुक्त नही होता जितना कि गभीर जल, किन्तु इतना अधिक ठण्डा होने के कारण वह अधिक सघन होता है।

एक नया सिद्धान्त

चूकि गभीर और तल जल अन्य महासागरो म वनत नही पाए गए ह इसलिए जिस सरलतम परिसचार व्यवस्था की कल्पना की जा सकती है वह अटलाटिक मे हिद और प्रशात महासागरो म को गभीर तथा तल जल के एक चाडे और धीमे फैलते जाने के रूप म हो सकती ह। अटलाटिक म नीचे की ओर बहकर आते जाने वाला गभीर जल दक्षिण ध्रुव के तल जल म मिलता ह और तब वे दोनो पूव की दिशा मे हिद महासागर म से होते हुए प्रशात महासागर तक वहते जाते ह। अनक वर्षो तक गहरे परिसचरण की यही तस्वीर स्वीकार की जाती रही। किंतु वस्ट द्वारा किए गए सावधानीपूर्ण काय से यह सिद्ध हुआ कि गभीर जल दक्षिण की ओर ब्राज़ील के महाद्वीपीय ढलान के सहारे सहारे तीव्र एव अपक्षाकृत सकीर्ण धाराओ के रूप मे चलता ह न कि चौडे और मन्द प्रवाह के रूप मे। वास्तव म ये गहरी धाराए सतह पर चलने वाली ब्राज़ील धारा की अपेक्षा अधिक तीव्रता से चलती है।

सन १९३८ म वस्ट न जर्मनी के अनुसधान पोत आल्टेयर का अटलाटिक म एक जल समुद्री ज्वालामुखी के ऊपर खडा किया और गल्फ स्ट्रीम क नीचे के जल का अध्ययन किया। ताप और लवणता सम्बधी लिए गए मापनो के आधार पर अन्त मे उसने यह सिद्धात रखा कि ५,००० स ६,००० फट की गहराइ पर पाए जाने वाले जल की गति बहुत थोडी अथवा बिल्कुल नही थी। इस समतल के ऊपर उत्तर की ओर बहने वाली शक्तिशाली गल्फ स्टीम थी और इसके नीचे दक्षिण की ओर बहने वाली एक विशाल धारा थी।

इस बीच सतही परिसचरण से सम्बधित एक और जटिल प्रश्न का उत्तर देना शेष रह गया था। दक्षिण अटलाटिक के ऊपर पाया जाने वाला पवन तन्त्र वही है जो उत्तर अटलाटिक के ऊपर पाया जाता है—अर्थात व्यापारिक और पश्चिमी हवाए समान अक्षाशो म होती ह और दोनो गोलार्द्धों म वे समान तीव्रता से चलती ह। तब प्रश्न उठता है कि हवा ब्राज़ील के समुद्र तट पर जल का ढेर क्यो नही लगा देती तथा गल्फ स्टीम की बराबर शक्ति वाली दक्षिणाभिमुख धारा क्यो नही बनाती जिसके स्थान पर केवल एक मन्द धारा ही दिखाइ पडती है?

वस्ट का सिद्धान्त भुला दिया गया और यह प्रश्न तब तक हल नही किया जा

चित्र २०—प्रोफेसर जाज वस्ट, जो मीटियोर खोज-यात्रा पर समुद्र विज्ञान सम्बन्धी काय के मुख्य अधिकारी थे। महासागरीय धाराओ और जल सहतियों के बारे में उनके अध्ययनों और सिद्धान्तो ने उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्रदान कराई ह।

फोटो, सेमूर ल्यइस, १९६१

मका जब तक १९५५ म वुडजहाल आशेनाग्राफिक इन्स्टीटयूशन तथा हावड विश्वविद्यालय क डा० हनरी स्टौमेल न महासागरीय परिसचरण क सम्बन्ध म एक बिल्कुल ही नए सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया। उसन सुझाव दिया कि गभीर जल दक्षिण की ओर तीव्र सकीण धाराओ क रूप मे वहता है जो पथ्वी की वक्रता एव घणन क कारण महासागर की पश्चिमी दिशाओ मे सकेन्द्रित होता जाता है। ताप लवणता विभेदो क कारण उत्पन्न होने वाले इस दक्षिणाभिमुख प्रवाह की क्षतिपूर्ति क लिए सतही जल की उत्तर की ओर अनुरूप गति होनी अनिवाय है। यह गति जो पुन ताप-लवणता विभेदो क कारण उत्पन्न होती है परिध्रुवी धारा स लेकर उत्तर ध्रुव वरन तक क सम्पूण पश्चिमी उत्तर अटला टिक के सहार सहारे होनी चाहिए तथा हवाओ द्वारा प्रेरित धाराओ पर अध्या रोपित होगी (चित्र २१)।

सतह पर यह गति ब्राजील धारा का विरोध करती हुई उस धीमी कर देगा किन्तु गल्फ-स्ट्रीम को तीव्रतर एव अधिक बलशाली बना देगी। निचली परतो म इसका ठीक उल्टा होगा। गल्फ-स्ट्रीम क नीचे प्रवाह धीमा हो जाएगा जब कि ब्राजील धारा क नीचे यह तीव्रतर हो जाएगा—वस्ट द्वारा अनुभव की गई तीव्र दक्षिणाभिमुख धाराओ का कारण यही था। चूकि वायु द्वारा चालित धाराए गहराई क साथ साथ मन्द पडती जाती हैं इसलिए एक ऐसा स्तर जरूर आना चाहिए जहा पर कोई गति नही होगी और उसके नीचे दक्षिण की ओर जाने वाला एक तीव्र प्रवाह होगा—ठीक यही बात वस्ट न अपन प्रेक्षणो के आधार पर सिद्धान्तत कही थी।

स्टौमेल न महासागर को दो परतो वाली रचना क रूप म चित्रित किया—

एक तो उस सतही एवं उपरिक जल की शीर्ष परत जो सूर्य द्वारा गर्म होता तथा हवाओं द्वारा अच्छी तरह मिश्रित होता रहता है, और दूसरी एक ठण्डी, गहरी परत जिसमें मध्यस्थ, गंभीर और तल-जल शामिल है। शीर्ष परत नीचे लगभग १,५०० फुट तक की गहराई तक जाती है और अपने से नीचे के ठण्डे जल से मिश्रित नहीं होती। यही तो वह कारण है जिससे उत्तराभिमुख तथा दक्षिणाभिमुख प्रवाह पृथक् बने रहते हैं और बहकर एक-दूसरे में नहीं पहुंच जाते। इन दोनों को एक अदृश्य सीमा पृथक् करती है जिसे थर्मोक्लाइन (Thermocline) (ताप प्रवणता) कहते हैं। इस सीमा के ऊपर सतह की दिशा में ताप तीव्रता से बढ़ता जाता है और घनत्व तीव्रता से गिरता जाता है, और इस सीमा के नीचे गहराई के साथ-साथ ताप धीरे धीरे घटता और घनत्व धीरे धीरे बढ़ता जाता है।

स्टोमल के सम्पूर्ण सिद्धान्त से न केवल गल्फ-स्ट्रीम और ब्राज़ील धाराओं के नीचे दक्षिण दिशा में बहने वाली तीव्र धारा की भविष्यवाणी होती है बल्कि दक्षिण ध्रुव के तल जल की धारा की भी भविष्यवाणी होती है जो दक्षिण अमरीका के तट के सहारे सहारे उत्तर में ब्यूनास एयर्स के पार महाद्वीपीय ढलान तक जाती है। ये दो धाराएं इस बिन्दु पर एक-दूसरे से मिलकर पूर्व की ओर मुड़ जाती हैं (चित्र २१)। ये केप आफ गुड होप के दक्षिण में होकर गुजरती हैं और स्टोमल की धारणा है कि अफ्रीका के पूर्वी तट पर दक्षिण की ओर बहने वाली ऐगलहास धारा के नीचे उत्तर की ओर बहने वाली एक तीव्र धारा पाई जानी चाहिए।

पूर्वाभिमुख प्रवाह परिध्रुव धारा के नीचे जारी रहता है और न्यूज़ीलैण्ड के पास उत्तर की ओर मुड़ जाता है। एक अन्य सशक्त गभीर समुद्री धारा न्यूज़ीलैण्ड तथा टर्मैडक एवं टोंगा द्वीपों के पार में उत्तर की ओर बहती जानी चाहिए। तब यह पश्चिम की ओर मुड़ती हुई जापान के तट के पास में गुजरती है। स्टोमल ने ऐसा पूर्वानुमान लगाया है कि कुरोशियो धारा के नीचे केवल मन्द प्रवाह ही मिलना चाहिए जो निस्सन्देह उसी दिशा में चलता है जिसमें सतही जल।

महासागरों की पश्चिमी दिशा में पाई जाने वाली इन तीन सशक्त धाराओं में ठण्डा जल उत्तरी गोलार्द्ध में पूर्व और उत्तर की ओर फैलता जाता है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में पूर्व और दक्षिण की ओर फैलता जाता है। तब इस नए सिद्धान्त के अनुसार ठण्डा तल-जल ध्रुवों की दिशा की ओर बहता जाता है न कि विषुवत वृत्त की ओर, जैसा कि चैलेंजर के बाद से माना जाता आ रहा था। पुराने सिद्धान्तों के अनुसार ऐसा कहा जाता था कि यह जल विषुवतीय अक्षांशों पर ऊपर उठता है और सतह पर ध्रुवों की दिशा में बहता हुआ पुनः उच्च अक्षांशों पर नीचे बैठ जाता है और इस तरह चक्र पूरा होता है। स्टोमल के अनुसार यह जल

सारे जगत् महासागर में फैल जाता है और तब धीरे धीरे कुछ इंच प्रतिदिन की रफ्तार से ताप प्रवणता में कम होकर ऊपर उठता जाता है। यह ऊपर उबलना और परिध्रुव धारा के तीव्र विपरीत घरना बहना दोनों मिलकर जल की उस विशाल राशि की क्षतिपूर्ति करते हैं जो जब उत्तरध्रुवी और दक्षिण ध्रुवी घरना में नीचे को बैठती जाती है।
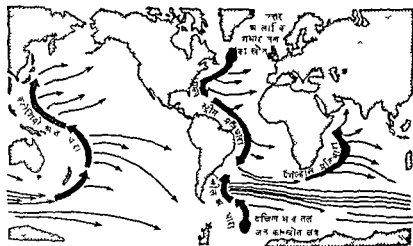
चित्र २१––डा० हेनरी स्टौमेल के विचार के अनुसार जगत् महासागर के गभीर जल में होने वाले परिसचरण की व्यवस्था। ठण्डा जल ग्रीनलण्ड और दक्षिण ध्रुव प्रदेश के पार नीचे बैठता जाता है और महासागरों की पश्चिमी दिशाओं में बहने वाली अपेक्षाकृत तीव्र एव सकीण धाराओं के द्वारा वितरित होता जाता है। यहा से वह एक चौडे विस्तत प्रवाह के रूप में पूव एव ध्रुवों की ओर बढता है और तब धीरे धीरे कुछ इच प्रतिदिन की रफ्तार से ऊपर आता जाता है।

बाम्हन जोमे तब पतियाये

चूंकि स्टामेल द्वारा की गई भविष्यवाणी में गल्फ-स्ट्रीम के नीचे पाई जानी चाहिए वाली गहरी प्रतिधारा मुख्य बात है इसलिए यह निर्धारित करना कि यह प्रतिधारा वास्तव में मौजूद है अथवा नहीं उसके सिद्धान्त का निर्णायक परीक्षण होगा। निस्सन्देह वस्ट के कार्य में इस प्रतिधारा के पाए जाने का संकेत मिला था, किन्तु ताप-लवणता मापनों की गति एवं दिशा में बदलने में निहित गणितीय प्रक्रमों में अनिश्चितताएं भरी पड़ी हैं और बड़ी आसानी से गलतियां हो जाती हैं। १९५६ में वडज़्होल के विज्ञानी इस सिद्धान्त की परख के लिए जिस चीज़ के

इच्छुक थे, वह वास्तव में मौजूद नहीं थी—अर्थात् बहुत ज्यादा गहराइयों पर जल की गति को सीधे नापने का सही सही तरीका। उस समय तक प्रयोग में आने वाले सभी यन्त्र जहाज से लटकने वाले एक केबिल द्वारा प्रयोग किए जाते थे। इन यन्त्रों द्वारा प्रवाह जहाज के सापेक्ष नापा जाता था, किन्तु जहाज की गति नहीं जानी जा पाती थी क्योंकि खुले समुद्र में इसे जानने के लिए कोई सन्दर्भ चिह्न नहीं पाए जाते। (सूर्य और तारा द्वारा नौ-चालन पर्याप्त परिशुद्ध नहीं होता।)
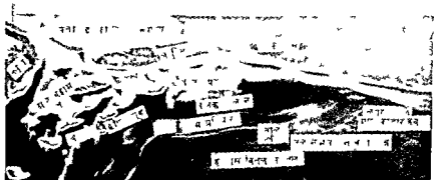
चित्र २२—गल्फ स्ट्रीम प्रतिधारा की खोज जिस समय अटलांटिस पोत जल के ताप और उसकी लवणता का मापन कर रहा था, उस समय डिस्क्वरी II नामक पोत स्वालो प्लवों को देख रहा था जिन्हें एक पूर्व निर्धारित गहराई पर तिराने के लिए समजित कर लिया गया था। लंगर द्वारा स्थिर किए गए राडार-ब्वायों को सन्दर्भ चिह्न के रूप में एवं नौचालन के लिए प्रयोग किया जाता था। यह पाया गया कि ६,००० और १०,००० फुट की गहराई के बीच बहने वाली प्रतिधारा प्लवों को ५ से ८ मील प्रतिघण्टा की रफ्तार से दक्षिण की ओर ले गई थी।

लंगर पर घूमता हुआ जहाज उस रफ्तार से चलता रह सकता है जो कि गभीर-समुद्र धाराओं की रफ्तार के तुल्य होती है और इन्हीं गभीर-समुद्र धाराओं की रफ्तार का विभिन्न समुद्र विज्ञानी मापन का प्रयत्न कर रहे हैं।

प्रतिधारा का सीधा माप सकना तब तक असम्भव अथवा कम-से-कम अत्यन्त कठिन जान पड़ता था जब तक कि ग्रेट ब्रिटेन के नेशनल इन्स्टीट्यूट आफ ओशेनोग्राफी का समुद्र विज्ञानी आविष्कार कुशल डा० जॉन सी० स्वालो सामने नहीं आया। डा० स्वालो ने एक ध्वनि-ट्रांसमीटर को लगभग एक बड़ी 'मेलिंग ट्यूब' के साइज और आकृति की एक ऐलुमिनम नलिका में रखा और उसके दोनों

सिर बन्द कर लिए। एल्मिनियम समुद्री जल की अपेक्षा कुछ कम सपीडनशील होता है और वह तब तक डूबता जाएगा जब तक कि उसका घनत्व बाहरी जल के घनत्व के बराबर नहीं हो जाता। भार के द्वारा घनत्व को और इसी से उसके डूबने की गहराई तक को ठीक ठीक नियन्त्रित किया जा सकता है। उतनी गहराई
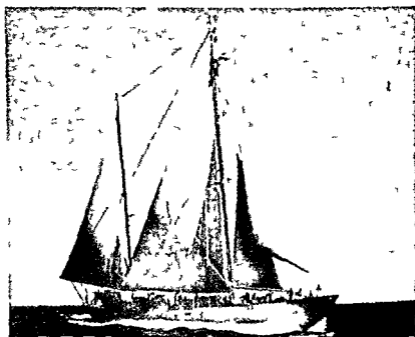
फोटो वुडज होल ओशनोग्राफिक इन्स्टीट्यूशन

चित्र २३--ऐटलांटिस। इस्पात के ढांचे वाला यह १४२ फुट लम्बा केच १९३१ में ३,००,००० डालर के खर्चे पर कोपेनहेगेन में बनाया गया था। पिछले ३१ वर्षों से अमरीकी अनुसंधान जहाजी बेड़े में, विशिष्टतः समुद्र विज्ञान सम्बन्धी काय के लिए सोचा और बनाया गया यही अकेला जहाज था। (चित्र ८० भी देखिए)।

पर पाई जाने वाली किसी भी धारा के साथ बहते जाते हुए यह ध्वनि स्पन्दन अथवा सीटियां भेजता है जिनके द्वारा इनकी स्थिति तथा गति का अनुमान लगा लिया जाता है।

नेशनल इन्स्टीट्यूट आफ ओशनोग्राफी तथा वुडज होल के विज्ञानियों ने

अतराष्ट्रीय भू भौतिकी वष (१९५७–५८) क प्रारम्भ मे मिलकर स्वाला के सिद्धात का 'युटल ब्राएमी पर्गेटस (उदासीन उत्प्लावकता प्लवा) की मदद से स्वाग के सिद्धात के परीक्षण के लिए एक सयक्त खाजयात्रा की याजना तयार थी। इस काय के लिए दक्षिण कैरालिना के चार्ल्सटन क अक्षाश पर स्थित अटलाटिक का परीक्षण-स्थान के रूप म चुना गया क्याकि यहा पर गहरा जल अब समुद्री ब्लेक पठार के द्वारा उथली फ्लारिडा धारा के काफी पूव म पहुचा दिया जाता है। अत यहा जहाज मदिग्ध प्रतिधारा के ऊपर स्थित होगा किन्तु उस प्लवा का अनुसरण करते जाने मे किसी तज़ सतही धारा का सामना नही करना होगा (चित्र २२)।

वुडज हाल के पूरी तरह स रैम १४२ फुट लम्बे केच[1]—ऐटलाटिस—न माच, १९५७ मे यात्रा आरम्भ की। ऐटलाटिस एन० आई० ओ० (नेशनल इन्स्टीट्यट ऑफ ओशेनाग्राफी) क डिस्कवरी II से पहले चलकर परीक्षण स्थान पर पहुचा और प्लवा का छाडने क वास्ते सर्वोत्तम स्थान निर्धारित करन के लिए ताप और लवणता पर आकडे एकत्रित किए। डिस्कवरी वाद मे पहुच गया और सात प्लवा का जहाज के ऊपर से जल म उछाल दिया गया। उस पर सवार विज्ञानिया न हाइड्राफोना (जल के नीचे के माइक्रोफाना) की मदद मे सीटिया का सुना और लोरन, राडार तथा लगर डाले गए व्वाया की मदद से अपनी स्थिति को देखते रहे।

जा प्लव ८५०० आर ६ ००० फुट की गहराइ तक भीतर चल गए व लगभग पूणत स्थिर थे जिससे वस्ट द्वारा की गइ एक गतिहीन परत की भविष्यवाणी का सत्यापन हा गया। ८,२०० आर ९,२०० फुट पर तीन प्लव दक्षिण की आर बढे जिनम से एक ता आठ मील प्रतिदिन तक की रफ्तार स चला। यह दक्षिणाभिमुखी प्रवाह १०,५०० फुट गहरी तली तक के तमाम रास्ते मे जारी रहता पाया गया, आर तली मे भी जल पाच मील प्रतिदिन की रफ्तार मे चल रहा था। वस्ट और स्टौमेल द्वारा प्रस्तावित प्रतिधारा के सम्बध म कोई भी तकनील सदेह बाकी न रहा आर वह एक वास्तविकता के रूप मे स्थापित हा गइ।

इसका यह अथ नही हुआ कि स्टामेल का पूरा सिद्धान्त सिद्ध हा गया—सभी महासागरा म और भी बहुत से प्रेक्षण किए जाने जरूरी है। तथापि सयुक्त राज्य अमरीका क नेशनल ऐकेडमी आफ साइन्सेज न, जिसम उस देश के सबसे विख्यात विज्ञानिया का वग शामिल ह अत्यन्त प्रभावित हाकर डा स्टौमेल को

---

[1] यह दा मस्तूल वाला आग स पीछे लम्बाई म लगे हुए पाला वाला जलपोत हाता है।

१९६१ म अपना सन्स्यता प्नान का। यह विज्ञानिया का प्रना बिए जा मनन वा सर्वाच्च सम्माना म स एक है आर यह केवल प्रामनीय मौलिक अनसन्धान काय क आधार पर ही प्रनान किया जाना है।

एक महासागरीय ऐटलस

म भातिकी बप क दारान वुन्ज हाल क जहाजा का एक दस्ता अटलाटिक म गया हआ था। **ऐटलाटिस चैन** जा २१३ फुट लम्बा आर मम पहल नौ-सना म रहा चका हुआ जहाज डवन आनि की स्थिति म सुरक्षा जल पात था आर **डिस्कवरी II** क साथ काम करने वाला **क्रौफोड** जा १२५ फुट लम्बा तट के पार का सुरक्षा कटर पात था इन सबन मिलकर अटलाटिक आर कैरिबियन क विधिपूवक सर्वेक्षण क नाराम १३ सम्पूण आर-पार यात्राए आर १२ छाटी-छाटी यात्राए की। य यात्राए याराम एयम स ग्रीनलण्ड क अन्टाका तक की गई और हर ४८० मील पर अथवा हर आठ डिग्री अक्षान क बाद पूव पश्चिम निशाआ म आर पार की गइ (**चित्र २८**)।

मीटियोर की खाज-यात्रा क बाद यह पहला अवसर था कि एक सम्पूण महासागर का सम्पूण आर सही-सही सर्वेक्षण किया गया। दक्षिण अटलाटिक म **मीटियोर** के अनक सर्वेक्षण केन्द्रा पर पुन पहुचा गया। यह जानन क लिए कि क्या पिछल ३० वर्षा म किसी प्रकार का परिवतन हुआ ह पुरान सर्वेक्षण अत्यन्त सुदर सन्दभ सिद्ध हुए। यह पाया गया कि ताप और लवणता वैसी ही बनी हुई ह आर पाच परता की सरचना म काई परिवतन नही हुआ ह जिसस प्रतीत हाता है कि महासागर म एक विलक्षण गतिशील स्थिरता पाई जाती है। तथापि, उत्तर अटलाटिक गभीर जल और दक्षिण ध्रुव तल जल म आक्सीजन की माना म कमी पाई गई। यह इस बात का एक सशक्त प्रमाण है कि अधिक गहराई के जल का पिछले ३० वर्षों मे नवीकरण नही हुआ है, क्याकि सुदर उत्तर आर दक्षिण म सतही जल का पयाप्त घनत्व नही बन सका ह। ध्रुवी यरने अस्थायी तौर पर रुक गए जान पडते है और ऐसा क्या है इसकी जानकारी शायद अनक वर्षो तक न ही सकेगी।

सितम्बर १९५४ और जुलाई १९५० के बीच म किए गए तमाम काय के निष्कष अटलाटिक महासागर की प्रथम सम्पूण एटलस मे एक साथ शामिल कर दिए गए है। इस वुडज हाल म फ्रेडरिक सी० फुग्लिस्टर और उसक सहयागिया न तैयार किया। **मीटियोर** के निष्कर्षो क प्रकाशन क बाद से समुद्र-वैज्ञानिक आकडा का यह सबस अधिक सम्पूण सकलन ह। इस ऐटलस का पुस्तकालया की

चित्र २४—१९२५-२७ में मीटियोर खोज-यात्रा द्वारा की गई कई आर पार यात्राएं तथा उसके कुछ अध्ययन स्टेशन, जिन्हें भूभौतिकी वर्ष के दौरान दोहराया गया और कई अन्य नए अध्ययन स्टेशन बनाए गए। इस सब कार्य के निष्कर्ष अटलांटिक महासागर की प्रथम एटलस के रूप में मिला लिए गए हैं।

अलमारिया की शोभा बढ़ाने के लिए नहीं बनाया गया बल्कि इस एक खास पायदार कागज पर छापा गया है जो समुद्र में समुद्र विज्ञानियों, मत्स्य विज्ञानियों, पनडुब्बी चालकों और विद्यार्थियों के हाथों बेदर्दी से इस्तेमाल किए जाने और पानी में भीग जाने को भी सहन कर सके।

प्रशान्त महासागर में एक सुविधा

भू भौतिकी वर्ष के दौरान जिस एक अन्य क्षेत्र पर काफी ध्यान दिया गया था वह था विषुवतीय प्रशान्त महासागर। १९५१ में संयुक्त राज्य अमरीका का मत्स्य और वन्य जीवन सेवा का जहाज वहां पर दक्षिणी विषुवतीय धारा में गहरे जल से टयूना मछली पकड़ रहा था। उसके जाल सतह के नीचे १०० से ३०० फुट पर टिकाए गए थे और ऐसी आशा थी कि जल में डूबी डोरियां आदि धारा के द्वारा पश्चिम की ओर खिसकते जाते हुए जहाज के पीछे पीछे खिंचती चली जाएंगी। किन्तु ऐसा होने की बजाए ये डोरियां तेजी से पूर्व की ओर मुड़ गई। टाऊनसेंड क्रामवेल ने—जो उस समय मत्स्य एवं वन्य जीवन सेवा के साथ था—इस सुपरिचित पश्चिमाभिमुख प्रवाह के नीचे एक तीव्र पूर्वाभिमुख धारा के रूप में पहचाना। १९५२ और १९५५ के बीच किए गए अन्य सर्वेक्षणों से यह सिद्ध हो गया कि १५० से ३०० फुट की गहराई पर ठीक विषुवत वृत्त के नीचे और मैक्सिको तथा हवाई के दक्षिण में धारा निश्चय ही उल्ट जाती है। (दक्षिण विषुवतीय धारा विषुवत वृत्त पर स्थित होती है प्रतिधारा और उत्तर विषुवतीय धारा इस क्षेत्र में इसके उत्तर में बहती है।)—भू भौतिकी वर्ष के दौरान इस असाधारण धारा के अध्ययन के लिए एक सम्पूर्ण खोज यात्रा अर्पित की गयी।

डाल्फिन खोज-यात्रा के दो जहाज—होराइजन, जो स्क्रिप्स इन्स्टीट्यूशन आफ आशेनाग्राफी का १४३ फुट लम्बा, महासागरों में जाने वाला कर्षण जहाज था और मत्स्य एवं वन्य जीवन सेवा का ह्यु एम० स्मिथ—१९५८ के बसन्त में वेस्ट कोस्ट से रवाना हुए। उन्होंने हवाई के दक्षिण से ईक्वेडार के तट के पार विषुवत-वृत्त पर पर पसारे गलपगास द्वीपों तक ३,५०० मील की दूरी में एक अधःसमुद्री धारा देखी। तीन मील के जल में टिकाए हुए ब्वायों को सन्दर्भ चिह्नों के रूप में प्रयोग करके और इनके प्रति राडार द्वारा अपनी स्थितियां जांचते हुए इस खोज-यात्रा के विज्ञानियों ने प्रवाह का मापन के लिए धारा-मीटरों को नीचे उतारा तथा ड्रोगों को गिराया। तब पता चला कि यह धारा केवल ७०० फुट मोटी थी किन्तु चौडाई में बहुत ज्यादा—यहां तक कि २५० मील चौड़ी थी। इसका शीर्ष सतह से ६५ फुट नीचे है और क्रोड अथवा मध्य ३२५ फुट नीचे है।

जल की यह पतली उथली पट्टी २½ और ३ नाट के बीच की रफ्तार म रहती है—अर्थात अपने से ऊपर की दक्षिण विपुवतीय धारा से तिगुनी तेज रफ्तार से। इस प्रकार विपुवतीय प्रशान्त म यह सबसे अधिक तीव्र धारा बन जाती है और इस तथ्य के आधार पर कि यह चार करोड टन जल प्रति सेकण्ड चलाती है, यह आकार में केवल फ्लोरिडा धारा के बाद दूसरे नम्बर पर आती है।

नीचे की धारा अपनी पूरी रफ्तार पर हवाई द्वीप के दक्षिण पश्चिम म किसी स्थान से चलनी शुरू होती है और गैलापेगोस द्वीपों म सबसे बडे द्वीप इसाबेला के लगभग २०० मील दूर रह जाने तक चलती जाती है। जब भी यह इसाबेला के लगभग २० मील के भीतर एक नाट स अधिक गति से चल रही है किन्तु इस द्वीप समूह की पार दिशा म इसका अभाव है। हालांकि यह जगत महासागर की सबसे बडी धाराओं म से एक है तथापि इसका उद्गम ज्ञात नहीं है। यह सीधे सीधे केवल हवाई द्वीपों के रास्ते पर ही देखी गई है। फिर भी ऐसा प्रबल परोक्ष प्रमाण मिलता है कि यह सागरमन द्वारा के आस पास तक पहुच जाती है और यहा तक कि पूरे प्रशान्त को भी पार कर जाती है जिससे कि इसकी सम्भावित लम्बाई ८,००० मील हो जाती है।

सर्वेक्षण समाप्त होने ही वाला था कि एक वायुयान टाऊनसेण्ड क्रामवेल को एक अन्य जहाज-यात्रा म पहुचाने के लिए उडान करते समय दुर्घटनाग्रस्त हो गया और उसकी मृत्यु हो गई। उनके सम्मान म इस धारा को क्रामवेल धारा का नाम दिया गया और ऐसा करना वास्तव म ठीक ही था क्योंकि इसे पहचानने और इसका अध्ययन करने वाला पहला व्यक्ति वही था।

गैलपैगास द्वीपों म क्रामवेल धारा का अचानक लोप हो जाना अत्यन्त रहस्य की बात है। वह धारा जो गल्फ-स्ट्रीम से आधा जल बहाती हो, अचानक एकदम नहीं रुक सकती। डाल्फिन जहाज-यात्रा के दौरान होराइजन पर काम करने वाले स्क्रिप्स के ए० नौस (A Knauss) की धारणा है कि इस धारा म से उसके पूर्वाभिमुख प्रवाह के अंतिम हजार मीलों म लगातार उसके पार्श्वों से जल की हानि होती रह सकती है। साथ ही जब यह गैलापेगास द्वीपों से टकराती है तो इसमें उग्र विक्षोभ होता है जिससे इर्द गिर्द का बहुत सा जल इसमें खिंच जाता और इसे मन्द कर देता है।

प्रशान्त महासागर म परिसचरण के सम्बन्ध म क्रामवेल धारा एक दुविधा पैदा करती है। भू भौतिकी वर्ष के दौरान यह पाया गया कि प्रशान्त विपुवतीय प्रतिधारा पूर्व की ओर, जितना कि पहले सोचा गया था उससे डेढ गुना अधिक जल बहाकर ले जाती है। इस खोज ने तो समस्या की विशिष्टता और भी अधिक

जटिल बना दिया क्योंकि इसके होने से पहले विषुवतीय प्रशान्त में आने जाने वाले तमाम जल का हिसाब किताब सद्धान्तिक परिकल्पना के द्वारा लगा लिया जाता था। अब जल के जमा-खर्च के हिसाब में गड़बड़ आ गई। प्रतिधारा और क्रामवेल धारा के एक साथ मिलकर आने वाले जल की मात्रा पूर्व दिशा में बहने वाले जल के सम्बन्ध में लगाए गए पुराने तखमीनों से तिगुनी हो जाती है। अब प्रश्न उठता है कि क्षतिपूर्ति करने वाला पश्चिमाभिमुख प्रवाह कहाँ है? पूर्व की ओर बहकर जाने वाला यह तमाम जल कहाँ समा जाता है? क्या यह पश्चिम को मुड़ता है या दक्षिण को? यदि ऐसा है तो किस स्थान पर मुड़ता है? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए और क्रामवेल धारा के स्पष्टीकरण के लिए अभी तक कोई सन्तोषजनक सिद्धान्त प्रस्तुत नहीं किए जा सके हैं।

क्या अटलांटिक और हिन्द महासागरों में विषुवतीय अन्तःधाराएँ हैं? हिन्द महासागर में अभी पर्याप्त मापन नहीं किए जा सके हैं किन्तु १८८६ में चलेंजर के रसायनज्ञ जॉन बुखानन ने विषुवतीय अटलांटिक के भीतर एक उल्टा प्रवाह होते देखा था। १९६१ के बसन्त में चेन नामक जहाज ने—जो वुड्सहोल जहाजी बेड़े का सबसे बड़ा जहाज था—दो नाट की रफ्तार वाली धीमी दक्षिण विषुवतीय धारा के नीचे पूर्व को ओर बहने वाली शक्तिशाली अन्तःधारा के मापन किए। इसमें क्रामवेल धारा के समान विशिष्टताएँ पाई जाती हैं तथा यह १०० और लगभग १,५०० फुट की गहराई के बीच बहती है और इसका सबसे तेज प्रवाह २०० से ३०० फुट पर होता है और इस तरह जो प्रश्न प्रशान्त के सम्बन्ध में पूछे जाते रहे हैं वे ही पुनः अटलांटिक के बारे में भी पूछे जा सकते हैं।

इस अध्याय में हमने जितने प्रश्नों का उत्तर दिया उतने ही और नए प्रश्न खड़े हो गए। देखा जाए तो यही विधि ठीक भी है क्योंकि समुद्र विज्ञान (और वास्तव में हर विज्ञान) प्रश्न से उत्तर और उत्तर से प्रश्न की दिशा में बढ़ता हुआ विकसित होता है। जब तक जाज वस्ट के समान पुराने लोग और हेनरी स्टोमल के समान युवा पुरुष मौजूद हैं तब तक पुरानी समस्याओं का हल निकाला जाता रहेगा और जो नई समस्याएँ रखी जाएँगी वे उत्तेजनाकारी, महत्त्वपूर्ण और फलदायक सिद्ध होंगी। स्वयं ये समस्याएँ भी और आगे वे उन युवकों द्वारा सुलझाई जा सकेंगी जो आज पहली बार महासागरों की समस्याओं के बारे में पढ़ रहे हैं और जिनके मन में उनके बारे में उत्सुकता और उत्तेजना अभी अभी जाग्रत हो रही है।

६
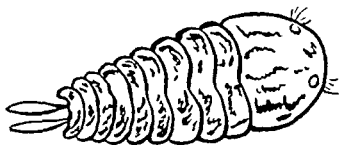
समुद्र के भीतर का जीवन

"विशाल व्हेलें तैरती दौडती आती जहा,
बस खेते जाओ नौका खोले चौडी आख वहा ।" —आर्नोल्ड

२८ अप्रल १९४७ । पूर्वी दक्षिण प्रशात महासागर पर बहने वाली धीमी शान्त दक्षिण-पूर्वी व्यापारिक हवाए पीरू स्थित कैलाओ से ५० मील दूर एक अजीब पाल को चलाए लिए जा रही थी । युगो से चलती आ रही इन हवाओ ने पिछले १,४०० वर्षों मे ऐसे किसी भी पाल को नही छुआ था । वर्गाकार कनवस को धीमे से धक्का देते हुए हवा उसमे भर रही थी और पौलीनीशिया के सूर्य-देवता कान टिकी के नाम पर पुकारे जाने वाले इस वाहन के दाढीयुक्त एव लाल रग के बाल वाले नेता का हृदय गर्व और 'अविचलित होने वाली शक्ति' से फूला हुआ था ।

लगे हुए शीष वाले पाल के नीचे खडे छह व्यक्ति—जिनके बाल बिखरे हुए थे और धूप से जिनका रग काला पड गया था—उस समय हर्षोल्लास करने लगे जब उनका बेडा, जिस पर वे खडे हुए थे आगे बढ़ना शुरू हुआ । ये व्यक्ति नाविक नही थे । थोर हेयरडाह्ल जो खोज यात्रा के नेता थे एक मानव विज्ञानी थे, हमान वार्टजिजर एक रेफ्रिजरेशन इजीनियर थे, नट हौगलैण्ड और टासटाइन रैबी दो रेडियो इजीनियर थे तथा बगट डनियलसन एक मानव जाति विज्ञानी थे। पाच नार्वे वासियो के बीच बगट अकेला स्वीडनवासी था । वह स्वय कॉन टिकी जैसा दिखाई पडता था । उसकी ज्वाला की तरह
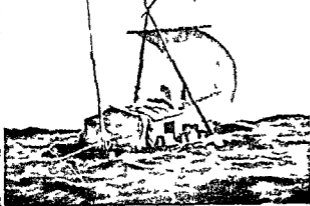
चित्र २५ कान टिकी

लहराता हुआ और दाढ़ी ऐसी लगती थी मानो उसने 'उसके चेहरे को जला दिया हो और उसके सिर के बालों को बल्लम कर कम कर लिया हो।' केवल एरिक ह्सेलबर्ग जो एक चित्रकार था उसने पहले भी समुद्र-यात्रा कर चुका था किन्तु एक इण्डियन बेड़े पर नहीं निकला था।

पानी चारों ओर का टूटा हरा जल बेड़े के चारों ओर उछल कर टकरा रहा था किन्तु न तो वह कभी बेड़े के ऊपर ही आया और न ही बेड़े की शान्ति भंग हुई। किसी जानवर का इस बेड़े में किसी भी प्रकार की आवाज न थी और उसका तल तथा समुद्र का तल दोनों लगभग बराबर-बराबर थे। इस तरह तैरते हुए कान टिकी ने अन्यथा उत्पन्न होने वाले शोर, भाप अथवा इस्पात के द्वारा प्रकृति के शान्त वातावरण में कोई गड़बड़ न की। बेड़ा लहरों और धाराओं का अंग स्वरूप बना हुआ था और समुद्र के जीव जन्तुओं की सामान्य गतिविधियों पर उसका कोई असर नहीं पड़ा।

एक दिन जब ये छहों व्यक्ति शाम की डलिया और सरकण्डों के बने अपने केबिन के बाहर बैठे खाना खा रहे थे अचानक जल और आकाश की शान्ति को भंग करती हुई एक तीक्ष्ण आवाज सुनाई दी। किसी चीज ने 'बड़ी जोर से साँस छोड़ा जैसे कि जल में तैरता हुआ घोड़ा छोड़ता है और हमारे सामने एक बड़ी ह्वेल आ खड़ी हुई और हम घूरने लगी, वह हमारे इतने करीब थी कि हम उसके नथुने के भीतर जैसे जैसी चमकदार सतह को देख सके।' साँस छोड़ने और साँस लेने की यह आवाज काफी परिचित हो जाने के बाद एक बार पुनः सुनाई दी किन्तु इस बार वह भारी और निश्चित जैसी थी मानो कोई ह्वेल बहुत ज्यादा जोर लगा रही हो। बाहर आकर उन्होंने देखा कि एक बड़ी कचलाट (स्पम-ह्वेल) एक उनके बेड़े की ओर बढ़ी आ रही थी।

हर बार जब यह ह्वेल अपने नथुने में से भाप की फुहार जैसी साँस छोड़ती तो वह अपने सिर को जल से उभार लाती और अपना बड़ा चमचमाता, काला ललाट चमकाती। ये व्यक्ति बेड़े के छोर पर आकर इस अद्भुत दृश्य को

निहारने लगे। घबराहट का कोई कारण न था और न डर था। कुछ भी किया नहीं जा सकता था यदि यह विशाल स्तनधारी बेड़े में टक्कर मार देता तो सब कुछ समाप्त था।

बेड़े के किनारे से मुश्किल से छह फुट की दूरी होगी कि व्हेल ने पानी में सिर नीचे किया और चुपचाप डुबकी लगा कर बेड़े के नीचे को निकली। किन्तु यह विशाल जन्तु ठीक उसी के नीचे रुक गया और शान्त गतिहीन अवस्था में पड़ा रहा। उन व्यक्तियों का मास ऊपर का ऊपर और नीचे का नीचे रह गया किसी ने चूँ भी न की। पारदर्शी जल में वे आँखें गड़ाए वे उस काली ४५ फुट लम्बे बेड़े से भी लम्बी राक्षसी आकृति को एकटक देखते रहे। शक्तिशाली पूँछ बिल्कुल शान्त थी। पूँछ के अगल-बगल फैले हुए विशाल चपटे भागों का बस एक झटका काफी था कि बेड़े का काम तमाम होकर एक एक छोटी अलग हो जाती—ठीक उसी तरह जैसे कि उससे पहले व्हेल पकड़ने वाली अनेक नौकाओं के साथ हुआ था। किन्तु जो व्हेलों को नुकसान नहीं पहुँचाते व्हेल भी उन्हें कुछ नहीं कहती। कैशलॉट धीरे धीरे नीचे की ओर बैठती गयी और कॉन टिकी को कोई क्षति पहुँचाए बिना गहराई में आँखों से ओझल हो गयी।

हमारी तरह व्हेल भी समतापी वायु में साँस लेने वाले जन्तु हैं जो अपने भ्रूणों को अपने शरीर के भीतर पोषित करते हैं (चित्र २७) उनके दूर के

चित्र २६ श्वेत अथवा बेलुगा व्हेल का जल के भीतर का दृश्य। यह पूरी बढ़ चुकी है, किन्तु ५ या ६ वर्ष की आयु की यह व्हेल केवल १० फुट लम्बी है (लगभग उतनी ही लम्बी जितनी कि पूरा बढ़ा हुआ सूस)। इसके कुछ सम्बन्धी, जैसे कि नीली व्हेल, १०३ फुट लम्बाई तक पहुँच जाते हैं।
फोटो कालटन रे।

पूर्वज समुद्र में स जाए थ किन्तु अधिक तुरन्त के पूर्वज लाखों वर्षों तक स्थल पर रहे और विकसित हुए। य जन्तु वापस समुद्र में क्यों चले गए कोई नहीं जानता। हो सकता है कि कुछ प्राचीन स्तनधारी समुद्र के समीप रहते थे और आहार की तलाश में यदा कदा समुद्र में चले जाते थे। जैसे जैसे उनका आहार समुद्र में पीछे हटता गया वैसे-वैसे य परम्भी भी आगे बढ़ते गए। धीरे धीरे उनके अगले पैर परिवर्तित होकर पडल-जैसे पक्ष बन गए। इस वर्ग के स्तनधारियों के शरीर से बालों का लोप हो गया और उनके नथने खिसक कर शीर्ष के ऊपर पहुंच गए। उनकी पूंछ में रूपान्तरण होकर क्षैतिजतः फैले हुए चौड़े 'फ्लूक' बन गए। समुद्र में पिछली टांगों का कोई उपयोग न था और वे शीघ्र ही लुप्त हो गई जिससे उन्हें तैरने में और भी अधिक सुविधा हो गई। पिछली टांगों के अवशेष मात्र आज भी आधुनिक व्हेलों की तिमिवसा के नीचे पाए जाते हैं।

यह परिवर्तन विपरीत दिशा में विकास का होना नहीं है अर्थात किसी जन्तु का अधिक आदिम रूप में पहुंच जाने का मामला नहीं है। इसके ठीक उल्टा, यह वर्ग तमाम स्तनधारियों में सबसे अधिक विशेषित हो गया। उनके अग्रपाद दिशा-मोड़ और सन्तुलन के लिए रूपान्तरित हो गए और उनका शरीर तब तक धारा रेखित होता गया जब तक वे महासागरीय जीव-सृष्टि के सबसे तेज तैराक नहीं बन गए। उनमें से अनेक व्हेलें बनी। कुछ सम्पूर्ण दांतों से युक्त जबड़ों वाली व्हेल बनी, और कुछ ऐसी व्हेलें बनी जिनमें उनके मुख के भीतर छत से लटकती हुई हड्डी की सीकचों वाली प्लेट (बैलीन प्लेट अथवा व्हेल बान) बनी थी। कुछ सदस्य सूंस और डाल्फिनों में विकसित हुए जो छोटे दांतों वाली व्हेलें होती हैं।

कशलाट और उसके सम्बन्धी सबसे अधिक कुशल गोताखोर बन गए। समुद्र के अथवा स्थल के अन्य किसी भी जन्तु की अपेक्षा वे दाब में होने वाले कहीं अधिक परिवर्तनों को सहन कर सकते हैं। अन्य सदस्य सबसे अच्छे तैराक बन गए। एक-सी रफ्तार बनाए हुए डाल्फिनें २० मील प्रति घंटा तक चल सकती हैं। व्हेल फिन २५ मील प्रतिघंटा की रफ्तार बनाए रख सकती है, और किलर-व्हेलों की रफ्तार ३४ मील प्रतिघंटा तक होती देखी गई है। सूंसों और डाल्फिनों में यह गुण पाया जाता है कि वे विभिन्न प्रकार की आवाज़ पैदा करके दूरी पता करती नौ-सचालन करती और एक दूसरे से सचार करती है। यह कितनी विचित्र बात है कि स्थल पर इतना अधिक लम्बा इतिहास बिता चुकने वाले हवा में सांस लेने वाले जन्तु अन्त में समुद्री जीवन के लिए सबसे अधिक सफल अनुकूलन प्राप्त कर।

फोटो अमेरिकन म्यूजियम आफ नेचुरल हिस्ट्री के सौजन्य से

चित्र २७ छह-सात सप्ताह के परिवधन की, जन्म से पूर्व की, एक फिन बक व्हेल (बलीनाप्टेरा फाइसलस)। व्हेलो में स्पीशीज के अनुसार ९ और १६ महीनो के बीच की गर्भावस्था होती है। अधिक बडी व्हेलो के शिशु जन्म के समय १५ और २३ फुट के बीच लम्बे और ६,००० पौंड तक भारी होते है। नवजात नीली व्हेलें एक फुट प्रति सप्ताह की रफ्तार से बढती हैं और हर रोज २०० पौंड तक वजन में वृद्धि होती जाती है।

आर्किटयूथिस प्रिंसेप्स—भीमकाय स्क्विड

भीमकाय स्क्विडो के शिकार के लिए पीरू धारा का जल बहुत ही लोकप्रिय स्थान है। कान टिकी के ८ फुट लम्बे १४ फुट चौडे केबिन की स्टार बोर्ड (दाहिनी तरफ वाली) दीवार पुरानी पीरूवियन इडियन बेडो के चलन के अनुसार थोडी-सी खुली रखी गई थी। आर्किटयूथिस प्रिंसेप्स की भुजाए इतनी लम्बी होती हैं कि वे उस केबिन के किसी भी भाग में सरलता से पहुच सकती थी और उसमें रहने वाले किसी भी व्यक्ति को पकड कर खीच ला सकती थी। यह अप्रिय विचार हरएक के मन में आया था और वे सब एक लम्बा सा चाकू इसलिए रखते थे कि कही रात में टटोलते हुए स्पर्शकों के लपेट में आकर आख खुली तो क्या करेंगे। एक बार तो रात के समय जब वे अपने बडे के बाज पर गये थे तो उन्हे एक बडा स्क्विड नजर आया जिसके सिर से रोशनी निकल रही थी और उसकी आखें उन लोगो को घूर रही थी।

साथ ही हर रोज सवेरे डेक पर ही छोटे छोटे स्क्विडो का पाना तो आम बात हो गई थी। राक्षसी आकृति के ये छोटे पशु लगभग बिल्ली के कद के बराबर थे। उनकी आठ भुजाए थी जिन पर चूपण डिस्क बनी थी और दो अधिक लम्बी भुजाए थी जिनके अंतिम सिरो पर काटे जैसे हुक बने थे। सबके मन में यह प्रश्न था कि यदि ये छोटे प्रकार के प्राणी बडे के ऊपर आकर रेंग रहे थे तो क्या बडे आकार वाले प्राणी भी शीघ्र ही उनके पीछे-पीछे नही आएगे ?

बडे प्राणी कभी नही आए। वे क्यो नही आए, जब कि छोटे स्क्विड मौजूद थे और अनुमानत केबिन की छत तक रेंगते हुए पहुच गए थे —इस बात को सोचकर बेडे के सभी लोग चकित थे। तब एक दिन सवेरे, जब धूप खिली हुई
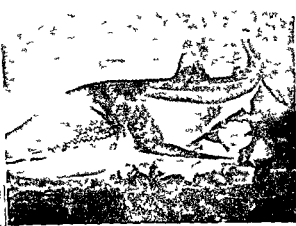
चित्र २९ एक व्हेल शार्क—जगत महासागर की सबसे बडी मछली। ये शार्क प्राय ३० फुट तक लम्बी होती हैं किन्तु कुछ विरल अवसरो पर ६० फुट अथवा उससे अधिक लम्बाई तक पहुचे हुए नमूने देखे गए हैं।

फोटो अमेरिकन म्यूजियम
फाफ नचुरल हिस्टी के सौजन्य से

जमक द्वारा न्मस पन्ने कि शाक यह जान सके कि क्या हुआ, उसक अधिक म अधिग भाग का व` पर खीच लाया जा सके ।

यह सघर्ष न्तना भीषण नन्नी था जितना कि प्राय आशा की जाएगी, क्योकि शक्तिशाली दुम का सहायता क बिना शार्क लाचार सी हो जाती है। न्सकी देह का अगला भाग कवन दिशा-परिवतन आर सतुलन के काम आता है जब कि पर्नीय दुम की न्हरदार गतिया ही वह चीज ह जिसके द्वारा यह जन्तु जल म आगे बढ़ता ह । न्न मुकाबला के बारे म हयरडाह्ल न अपनी पुस्तक कान टिकी म न्स प्रकार लिखा है शार्क कुछ थोडे-स निराश झटके लगाती उस दारान हम उसकी पूछ का कस कर पकडे रहना होता था, आर उसके बाद माचक्की बनी शार्क हताश एव लाचार हा जाती, आर जैस जैसे उसका अन्न आमाशय नीच खिसकता हुआ सिर की आर पहुचता ता अत म शार्क पूरी तरह अशक्त हा जाती ।

वास्तविक मछलिया शार्कों म अथवा एलास्मात्रका म—जो कि शार्क, स्केट आर र का वग ह—न कई बाता म भिन्न होती ह हड्डिया के बन ककाल का होना, गल्का का पाया जाना आर सिरा क दाना बाजुआ म गिल छिद्रा का बनना । य जन्तु अपन मुख क द्वारा जल का भीतर खीचत ह आर जल म घुली आक्सीजन रक्त क द्वारा माख ली जाती है । साथ ही जल गिला पर रक्त म म अपशिष्ट पदार्थो का भी ल लेता ह और उन गिल स्लिटा के जरिए बाहर निकाल देता ह। मछली म हर पाश्व म आवरण म ढका एक गिल छिद्र होता है जब कि शार्क म पाच या अधिक खुले छिद्र होते ह जो कि पुरान जमाने की मोटर-कार क हुड क बाजुओ म बने छिद्रा के समान होत है। एलास्मात्रका म उपास्थि आर चूने का बना नम ककाल बना होता ह (चित्र २९ आर ३०)

आधुनिक शार्क बहुत कुछ वैसी ही बनी हुइ ह जैस कि उनक प्राचीन पूवज

हुआ करते थ। ऐसी वग क जन्तुओ म सष्टि म पहली बार जबडा और पक्तिबद्ध दान्तो का विकास हुआ। इन लक्षणो क साथ उनम अधिक शक्तिशाली पशिया, धारारखित शरीर और माटी खाल के बन जान म व समद्र म अपन परभक्षी जीवन क लिए इतनी उपयुक्त हो गइ कि उनम और आग परिवतन हान की आवश्यकता नही रही। कुछ आदिम शार्को म बहुत ज्यादा यहा तक कि सात जोडी पख तक पाए जात थ जब कि अय म कवल दो जोडी होत थ। अत म दो जोडी पखो वाली व्यवस्था अधिक प्रभावी होती गइ और य ही पख मछलियो मे स गजरत हुए अतत स्थल जन्तुओ के दो जोडी—हाथ-पैर बन। इन जोडी पखो वाली कुछ प्राचीन मछलियो म एक थैली-जैसी वद्धि उत्पन्न हुई जिसन एक प्रकार के फेफडे जसा काम किया। आजकल की फुपफुस-मछलिया इसी वग के सीधे वशजो क प्रतिनिधि रूप मे है—ये है नियमत जल की सतह पर आना होता है ताकि हवा म सास ले सक अयथा व जल के भीतर दम घुट कर मर जाती ह (अध्याय २ के प्रारम्भ म दिया गया चित्र दखिए)। इस प्रकार की कुछ फुपफुस मछलियो क पखो म परिवतन होकर पालि-पख (lobe-fin) बन गए—यह इस प्रकार क पख थ जिनके भीतर कुछ-कुछ उसी प्रकार का अस्थि-ढाचा आलम्ब प्रदान करता था जैसा कि टागो क भीतर की हड्डियो का पाया जाता है। अब इसम तनिक भी सन्देह नही रह गया है

चित्र ३० शार्कों में २ से २॥ फुट लम्बी स्वेल शार्कों और डॉग फिशों से लेकर ३० फुट बास्किग शार्क और व्हेल-शार्क तक साइज में बहुत अतर पाया जाता है। इस फोटो में दिखाई गई शार्क एक सड शार्क (करकेरियस टोरस) है—एक ऐसा प्राणीरूप जो लगभग नौ फुट तक लम्बा होता ह और मेन से लेकर ब्राजील तक उष्ण जल में पाया जाता है।

कि तटवर्तीय कीचड़ म २ करोड़ वर्ष पहले प्रथम एम्फिबियना के जो पद चिह्न मिलते हैं व एक पाषाण पन्न में निर्मित हुए आदिम पैर के ही चिह्न थे।

ये घुमक्कड़

कान टिकी का नाविक दल सूरज और सितारों को देखकर अपना दिशा स्थापना करता आसमान से बरसने वाला पानी पीता और नीला क्षितिज का घेरा ही उसकी सारी दुनिया थी। इस दुनिया की अनन्त विविधता वाली जीव सृष्टि ने उनका मन बहलाव किया और उन्हें आश्चर्यचकित भी किया।

जब कभी बेला तिरती हुई समुद्री घास, किसी पक्षी के पर अथवा किसी छिपटा के पास से गुजरता तो इन साहसी व्यक्तियों ने उन वस्तुओं पर ऐसे अनेक छोटे-छोटे यात्रियों को सवार हुए देखा जो हवा के द्वारा उसी की दिशा में बड़े आराम के साथ यात्रा कर रहे थे। ये सूक्ष्म यात्री लगभग हाथ के अंगूठे के नाखून के बराबर आकार के थे, जिनमें तैरने की शक्ति बहुत ही कम थी और जो धाराओं तथा हवाओं के सहारे तिरते जाते थे तथा सतह के सूक्ष्मतर पौधों और जन्तुओं का आहार करते जाते थे। बड़े को अधिक उपलब्ध स्थान वाले तथा अधिक तीव्र वाहन पाकर और शायद ऐसा स्थान पाकर जहाँ पर

चित्र ३१ यह मालूम नहीं है कि मछलियां इस प्रकार चुम्बन क्यों करती हैं। कदाचित्, इस आचरण में प्यार न होकर कोई लड़ाई छिपी है। उसके बाद वे एक दूसरे की तरफ अपनी पूंछों को पीटती हैं जिससे पानी की धारा उनके एक दूसरे के शरीर के बाजुओं पर टकराती है। यदि इससे कोई नतीजा नहीं निकलता तो वे एक-दूसरे के मुंह में मुंह फंसा कर अत्यन्त बलपूर्वक एक-दूसरे को तब तक धक्का देती या खींचती जाती हैं जब तक कि उनमें से कोई-सी एक अपनी हार मानकर भाग नहीं जाती।

फोटो कालटन रे

जल्दी जल्दी खाना मिलने की सम्भावना अधिक थी, बहुत से केकड़े सतह पर फुर्ती से लपक-लपक कर कान टिकी पर पहुंच गए ।

पकड़े जाने पर वे शान्त बेजान से हो जाते लेकिन उनमें से अधिकतर रास के बन टेक के नीचे की ओर छिप कर आंखों से ओझल हो जाते । इन स्थानों में छिप छिप के इस तरह अचानक धावा बोल दिया करते थे जैसे कि 'काकरोच अचानक चोरी छिपे खाने की चीजों में मुंह मार कर भाग जाते हैं । सब केकड़ों की यही दशा थी लेकिन उनमें से एक ऐसा था जो दिशा-परिवर्तन करने वाली पतवार में बने सूराख में घुस गया । पतवार चलाने वाले व्यक्तियों ने इस 'जाइनेम' कहना शुरू कर दिया जिनके साथ वह हर रोज उन चार चार घंटों तक रहता जिनमें वे केबिन की तरफ पीठ किए हुए लम्बे चौड़े एकान्त सागर को निहारते रहते थे । प्रत्येक व्यक्ति जब भी वह चारसी के लिए आता, अपने साथ कुछ-न-कुछ खाने की चीज—बिस्कुट का टुकड़ा या मछली की कतरन—लाता । जाइनेम अपनी दहली पर आंखें मोंड़े बैठा रहता और अपने नगरों के द्वारा देने वाले व्यक्ति की उंगलियों में से खाना पकड़ लेता । नाविक दल का कम्पिया कहना है कि वे उसके चेहरे पर उस समय एक मुस्कान देख सकते थे जब वह एक स्कूली बच्चे की तरह अपने मुख में खाना ठूंसता जाता था ।"

महासागर की सतह पर अथवा सतह के समीप ये सब जन्तु पाए जाते हैं : स्क्विड्स और आक्टोपसों के शिशु, घोंघा, क्लैमा, स्टारफिश, ब्रिटल-स्टारों, समुद्री-अर्चिनों एवं समुद्री कुकुम्बरों (अध्याय ३ और ४ के शुरू में दिए गए चित्र देखिए) की लार्वा अवस्थाएं[1], टयूनिकेटा प्राणी (अध्याय ५), जाइनेस जैसे छोटे छोटे केकड़े, श्रिम्प्स, नस कापीपोड, ऐम्फिपौड तथा यूफाजिड प्राणी, आस्ट्रैकाड, बार्नेकल, टेरोपाड, विभिन्न कृमि, कूम्ब जेलिया, दगीले प्रवाल, जेली फिश, समुद्री एनीमोन (अध्याय १२) एक कोशिकीय जन्तु और पौधे, मछलियों के अंडे और लार्वा—संक्षेप में केवल स्पंजों और पादप सदृश मॉस जन्तुओं को छोड़कर वहां सभी समुद्री जीवों के प्रतिनिधि पाए जाते हैं । इस विशाल जन्तु संग्रह में सूक्ष्म धीमे तैरने वाले जन्तु और केवल निष्क्रिय रूप में उतराने वाले जन्तु एवं पौधे शामिल हैं । ये सब जल की गति का बहुत ही कम विरोध करते हैं अथवा बिल्कुल नहीं करते । सामूहिक

---

१ लार्वा किसी जन्तु की वह अपरिपक्व अवस्था है जो उस जन्तु के वयस्क रूप के लक्षणों एवं स्वरूप को ग्रहण करने के पूर्व पाई जाती है, और यहां तो यह एक तैरने वाली अवस्था होती है ।

रूप म इन जतुओ का प्लवक (planl ton) कहा जाता ह, अर्थात 'वह जिसे घुमाया जाता रहता है।

इन घुमक्कडो की सख्यता वहुत वडी है। इनम १५,००० विभिन्न पादप और जतु शामिल ह जिनका समय एक-दूसरे का खान अथवा एक-दूसर के द्वारा खाए जान म वीतता है। इस समुद्री समुदाय के कुछ सदस्यो का सारा जीवन धाराओ के साथ बहते जान म बीत जाता है। कुछ अन्य मत्स्य—जस अडे और लावा—केवल अस्थायी तौर ही पाए जाते है और उनमे स स्फाटन होन के बाद अथवा वयस्क रूप म परिवर्तित हो जान के बाद व परिचित स्वच्छन्द तरन वाले जतु अथवा तली म रहन वाले जन्तु वन जात है। कम-से-कम अपन प्रारम्भिक जीवन काल म तो समुद्र के लगभग सभी जन्तु प्लवक जीवन विताते है।

प्लवक सृष्टि म पटू ही पटू भरे पडे ह। अनक जन्तुओ को अपनी जाति आगे चलान के लिए कम-से कम दो उत्तरजीवी प्राणियो को छोड सकना पक्का करन के लिए लाखो वच्चे पदा करन पडत है। सजिटा नामक अपहारी वाण कृमि (अध्याय ८ के प्रारम्भ का चित्र देखिए) अपन मुडे हुए जवडो और उस्तर जस तेज दाँतो का प्रयाग करत हुए और बिना देखे कि बीच म कौन है कान नही वडी तेजी से अपन समदाय मे दौडता जाता ह। प्लवक प्राय छोटे ही होत है किंतु उनमे स कुछ जेली फिश बहुत बडी ३ फुट तक के व्याम वाली होती हैं और उनकी भुजाए ८० फुट तक लम्बी होती है। य जली फिश अपन से छोटे और दुवल जतुओ को लगातार अशक्त करती, उनम अपना विष पहुचाती और उन्ह खाता रहती ह।

नीले रंग के सुंदर हवा द्वारा पाल से चलन वाले प्राणी के नम शरीर की चोटी पर एक काफी बडा किरीट बना होता ह जो पाल जसा दिखाई पडता है। जब हवा इस पाल पर टकराती है तो यह जैली फिश जल पर उसी तरह तरती हुइ चलन लगती है जस कि हवा के आगे-आगे चलन वाला कोई पाल वाला जहाज। इसके नीतल के नीचे स्पर्शको का एक गच्छा पानी म लटका रहता है जैसे ही कोई अभागा प्लवक इसके मार्ग मे आया कि य स्पर्शक उस अपन जाल म उलझा कर पकड लेते है। ऐसा ही एक भुक्कड प्ल्यूरोब्रॅकिया नामक जन्तु ह जो लसलसी चिपचिपी कोशिकाओ स युक्त अपनी भुजाओ के द्वारा जल म एसी झाड़ू सी लगाता चलता ह कि बीच म आन वाली सारी जीव सृष्टि साफ होती जाती है। प्रसिद्ध समुद्र विज्ञानी हेनरी ब्रियात बीगलो ने इस कूम्ब-जेली का इस प्रकार कहा कि वह एक ऐसा समुद्री डाकू है जिसकी

पक” और जिसके मुह स एमा कोई भी जीवित प्राणी जा कि इमके आकार के हिसाव मे छाटा हा वच कर नहा जा सकता ।

बहुत्तर श्रिम्प जैसे कापीपौड भी (अध्याय ६ क आरम्भ में दिया चित्र देखिए) मासमक्षी होत ह । अपने दुबल प्रतिपक्षिया के मुकावले मे वे अच्छ तैराक हात हैं और उनमे अपन शिकार को पकडने और उस जकडे रखने के लिए मुख के समीप शक्तिशाली उपाग बने हात ह । माका मिले ता व अपन शाकाहारी सम्बन्धी कोपीपौडा को भी नही छाडत । य सूक्ष्मतर जन्तु भरपूर सख्या मे होते हैं आर, वास्तव म, समुद्र मे पाए जाने वाले कापीपाडा की ७५० विभिन्न किस्मा मे से अधिकतर पादप मक्षी ही होते हैं । इन विभिन्न कापीपाडा मे से एक भी ऐसा नही है जा ममुद्र म इतना स्थान घेरता हा जितना कि इस पष्ठ पर दिया हुआ उसका नाम जगह घेरता है आर बहुत से ता ऐस हे जा एक अक्षर से भी छोटे आकार के हाते है । तथापि इस आकार के बावजूद इन जन्तुओ की इतनी पयाप्त सख्या ह कि उससे प्लवक जन्तु ममष्टि की अधिकतर मात्रा (लगभग ७० प्रतिशत) इन्ही के कारण ह ।

प्लवक जन्तुआ मे ऐसे काफी अधिक उदाहरण है जो इतने बडे है कि घ्यान से दखने पर दखे जा सकते है । कान टिकी का नाविक दल अपना बहुत मा समय 'प्लवक जाल मे नाक गडाए बिताता रहता था । थार हेयरडाल ने जा कुछ दखा वह इस प्रकार लिखा था सूक्ष्म जन्तुआ की एक ऐसी असीम विविधता जो वाल्ट डिज्नी के फैंटैसिया से लिए गए हागे, कुछ ऐसे लगते थे माना मेलाफेन-कागज मे से काटे गए झालरदार कम्पनशील मत हा जब कि अन्य ऐसे लाल चाच वाले पक्षिया जस दिखाइ पडत ह जिनके शरीर पर परा की बजाए कवच मढे हा। प्लवक समष्टि मे प्रकृति के बेहिसाब आविष्कारा की काइ सीमा न थी ।

'आदितम जन्तु'

उससे पहले जब जमन जीव विज्ञानी जाहनेम मुलेर न (जिसके सम्मान मे उस केकडे का नाम रखा गया था) १८८६ मे पहला बार एक महीन रेशमी जाल डालकर इस सुदर आर खूखार समष्टि को दखा तब तक इसे कवल एक अवपकी रगीन जल के रूप मे ही दखा जाता था । मुलेर न सूक्ष्मदर्शी के द्वारा जाल मे आए पदाथ का देखा ता उस उसम प्लवक समुदाय के ऐस बहुत-से निवासी दिखाई दिए जो इतन छोटे थ कि कारी आखा स नही दिखाई पडत थ । उनम

न केवल जंतु ही शामिल थे बल्कि वे एककोशिक पौधे भी शामिल थे जिन पर शाकाहारी जंतु आश्रित रहते हैं।

किंतु इनसे भी और अधिक छोटे जंतु पाए जाते हैं जो बारीक से बारीक कपड़े में से भी निकल जाते हैं। एक अन्य जर्मन जीवविज्ञानी हैंस लाहमैन ने अपकेन्द्रण यंत्र (सेंट्रीफ्यूज) के प्रयोग के द्वारा जल में से एक इंच के दस हजार में से पच्चीसवें भाग से भी अधिक छोटे जंतुओं को पृथक करके प्लवक सृष्टि के इस अंश की खोज की। अपकेन्द्रण यंत्र अनिवार्यतः उसी तरह काम करता है जैसे क्रीम सैपरेटर। तीव्र घूर्णन से मथनतर दूध, अथवा जल समूह, बलपूर्वक पात्र की बाहरी दिशा में पहुंच जाता है जहां से वह केन्द्र में बच रहे जाने वाले हल्के पदार्थों—क्रीम या जल—से पृथक किया जा सकता है और अलग कर लिया जाता है। इस अपकेन्द्रण प्लवक का सूक्ष्मदर्शी से परीक्षण करने पर लाहमैन ने एककोशिक पौधों, बैक्टीरिया और प्रोटोज़ोआ (प्रथम जन्तु) नामक जन्तुओं को पाया (चित्र २२)।

प्रोटोज़ोअन प्राणी उन प्रथम एककोशिक जीवों के सीधे वंशज हैं जो सागर में विकसित हुए थे और वे तमाम जन्तुओं में सबसे सरल और सबसे आदिम हैं। हालांकि वे केवल एककोशिक शरीर वाले होते हैं फिर भी वे खाते पीते, चलते फिरते, सोते और संतानोत्पादन करते हैं। सांस लेने की विधि में वे अपनी कोशिका भित्तियां अथवा देह की सतह के द्वारा घुली हुई आक्सीजन को ग्रहण करते हैं। उनमें से कुछ प्राणी अपने शरीर का कुछ भाग एक दिशा में बहाकर और फिर उसके पीछे-पीछे अपने शेष शरीर को बहाकर चलते हैं, और संतानोत्पादन की विधि में वे स्वयं को दो भागों में विभाजित करते हैं। इन सर्वप्रथम जन्तुओं में अत्यन्त विविधता पाई जाती है। वे अमीबा के समान जेली की आकृति विहीन संततियों से लेकर उन प्राणियों तक के रूप में पाए जाते हैं जो कठोर भागों का स्राव करके अपनी देह के चारों ओर एक कवच बना लेते हैं जैसे कि फोरैमिनिफेरा और रेडियोलैरिया।

फोरैम प्राणी कम से कम पिछले ५० करोड़ वर्षों से चलते आ रहे हैं और उनके फासिलीकृत कवच समुद्र के तल पर जमते गए हैं जिनसे जलवायु के एवं जीवित वस्तुओं के विकास के अध्ययन में महत्त्वपूर्ण सहायता मिलती है। वे अपने कवचों का निर्माण सागर से प्राप्त किए हुए कैल्सियम कार्बोनेट (चूना) से करते हैं और अपने नम शरीर की बाहरी सतह पर इस पदार्थ का स्राव करके एक कड़ा आवरण बना लेते हैं। ग्लोबिजेराइना को नाम फारमिनिफेरा प्राणियों के उस वर्ग को दिया जाता है जिनमें गोल-कोष्ठ-युक्त कवच होते हैं जिनमें

मे प्रत्यक कवच इस पष्ठ क अन्तर 'व' के पट को भी मुश्किल म पूरी तरह भर पाएगा । इनके एक सिर पर छिद्र होता ह जिसमे से फोरम प्राणी अपने शरीर का कुछ भाग बाहर को प्रवाहित करके किसी पादप कोशिका को समेट कर भीतर बन्द कर लेता है । पाध का नम जीवद्रव्य माख लिया' जाता अथवा
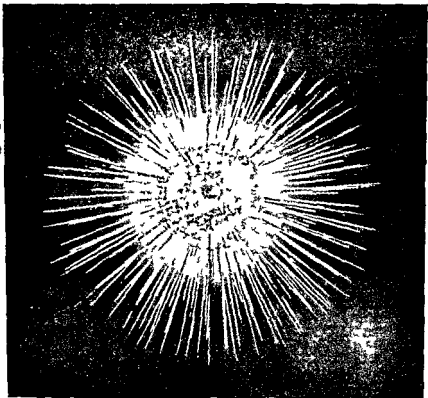
फोटो अमेरिकन म्यूजियम आफ नेचुरल हिस्ट्री के सौजन्य से

चित्र ३२ एक उत्कृष्ट रेडियोलरियन ओलेनिया हक्सेगोनिया का काच का माडल । यह जीव, जो लगभग $\frac{1}{2}$ इच मोटा होता है, उष्णकटिबन्धी अटलाटिक की सतह पर पर्याप्त मात्रा में पाया जाता ह ।

देह की सतह मे से भीतर ले जाया जाता है तथा सख्त अपाचनशील खोल बाहर छोड दिया जाता है । पाधा को खा खाकर ग्लाबिजेराइना आकार मे बढते जाते ह और अन्तत उनके कवच बहुत छोटे महसूस होने लग जाते ह । तब वे और अधिक चूना स्रावित करके एक नया अधिक बडा कोष्ठ बना लेते ह । नए

काष्ठ बनाते जाने का क्रम तब तक जारी रहता है तब तक कि वयस्क कवच एक अनियमित गद अथवा सर्पिल के रूप में व्यवस्थित सूक्ष्म गर्दों के आकार का समूह-जैसा नहीं दिखाई पड़ने लगता। जन्तु का कुछ भाग प्रवाहित होकर हर काष्ठ में पहुंच जाता है।

रेन्थियोलेरियन प्राणी सिलिका का सावन और उसका स्रवण करते हैं।

चित्र ३३ प्रोटोजोअन कभी कभी मंडल बनाकर रहते हैं, जैसा कि एक 'वन वृक्ष' (पोटेरियोडेंडान पेरियोलटम) के इस माडल में दिखाया गया है। प्रत्येक व्यष्टिगत प्राणी अन्य प्राणियों से स्वतन्त्र जीवन बिताता है और उसमें कोड़े सदृश धागा अथवा कशाभिका बनी होती है जिसके द्वारा यह जल में तैर सकता है। सबसे ऊपर बाईं ओर वाले प्राणी में अनेक ऐसे छोटे छोटे जन्तुओं में विभाजन होकर जनन हो रहा है जो अपने जनक प्राणी की ठीक सूक्ष्म प्रतिकृति होता है।
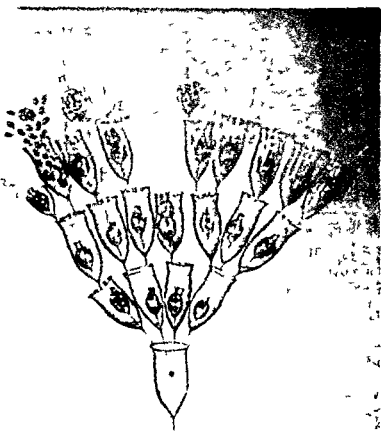
उनके काच सदृश कवचा की अत्यन्त जटिल और विविध आकृतियां बन जाती है। समस्त सागर मे सबसे अधिक सुंदर वस्तुएं रेडियालेरियन ही हैं। वे लगभग ४८०० अलग-अलग डिजाइनो में मिलते हैं जिनमें से सुन्दरता की दृष्टि से हर एक नमूना एक दूसरे से बढ़कर है (चित्र ३२ और ३४)। इनमें से अनेक में सभी दिशाओं में किरणों के समान निकले हुए लम्बे, पतले कांटे पाए जाते हैं और इस प्रकार ये प्राणी काल्पनिक सूर्यो तथा तारों के नाजुक क्रिस्टल माडेल जैसे दिखाई पड़ते हैं। इन कांटों का जंतु के लिए एक महत्त्वपूर्ण उपयोग होता है जल के घनत्व के अनुसार वह इन कांटों को छोटा या लम्बा कर लेता है ताकि वह अपने को सतह पर उतराता रह सके।

समुद्र की विभिन्न "घासें"

सूक्ष्मतम प्लवक जीव विभिन्न बैक्टीरिया का, महासागर में घुले हुए कार्बनिक पदार्थ का और एककोशिक पौधों का आहार करते हैं। इन पौधों में
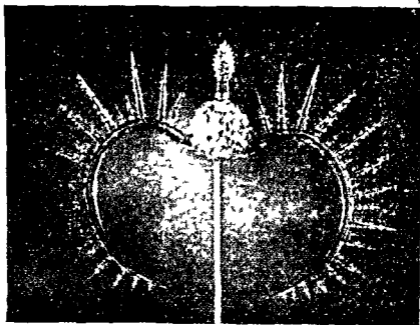
फोटो अमेरिकन म्यूजियम आफ नैचुरल हिस्ट्री के सौजन्य से।

चित्र ३४ एक अन्य अत्यंत उत्कृष्ट रेडियोलेरियन (डॉरकैडोस्पाइरिस डाइनोसेरस) जो सबसे पहली बार चैलेंजर खोज यात्रा पर देखा गया था।
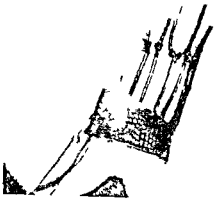
फोटो वुडज होल ओशनोग्राफिक इस्टीटयूशन

चित्र ३५ तथा ३६ एक इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी की सहायता से लिए गए डायटमों के फोटोग्राफ। डायटम समुद्र की पादप सृष्टि का एक वृहत्तर भाग बनाते हैं और इसीलिए वे जन्तुओं द्वारा उपयोग किए जाने वाले सबसे मुख्य प्राथमिक आहार होते हैं।
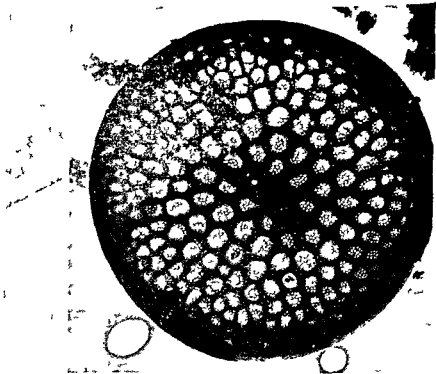
अधिकतर संख्या उन पौधे भूरे शैवालों की होती है जिन्हें डायटम (diatom) कहते हैं। डायटमों का आकार एक इंच के दस हजार में से पच्चीसवें भाग (अपकेन्द्रण आकार) से लेकर एक इंच के लगभग दसवें भाग (इस पृष्ठ पर छपे विराम चिह्न। की ऊंचाई के बराबर) तक पाया जाता है। इनका शरीर जीवित जेली की एक बूंद मात्र होता है जो विविध आकृतियों वाले और कभी कभी अत्यंत सजावट वाले कवचों में बन्द होता है (चित्र ३५ और ३६)। कवच के डिजाइन उस समय बनते हैं जब पौधे जल से सिलिका सोखते हैं और उसे अपने शरीर पर एक आवरण के रूप में स्रावित करते जाते हैं। सिलिका पारभासी कांच की तरह होता है जिससे कि प्रकाश संश्लेषण के लिए प्रकाश के मार्ग में कोई बाधा नहीं पड़ती। क्लोरोफिल डायटमों में पाया जाता है किन्तु पीले से लेकर जैतूनी हरे और भूरे तक के अन्य वर्णकों द्वारा छिपा रहता है।

जीवन्त जीवद्रव्य जल की अपेक्षा भारी होता है और कवच तो जीवित पदार्थ से भी अधिक भारी होता है। चूंकि डायटम तैर नहीं सकते इसलिए उनमें सतह के समीप निरंतर रह सकने के लिए, जहां पर प्रकाश-संश्लेषण के लिए पर्याप्त रोशनी पहुंच सके, कोई न कोई विधि अवश्य पाई जानी चाहिए। यह मुख्यतः उनके सूक्ष्म आकार द्वारा सम्पन्न होता है जो कि भीतर स्थित छोटे आयतन के जीव के लिए अपेक्षाकृत अधिक बड़े क्षेत्रफल का कवच प्रदान करता है। अधिक सतही क्षेत्र से उनका भार जल में समान रूप से फैल जाता है जिससे कि डूबते जाने में जल अधिक प्रतिरोध करता है। इसके द्वारा उस सतह में भी अधिक वृद्धि हो जाती है जिसमें से होकर उस अत्यंत आवश्यक अकार्बनिक पोषण को भीतर सोखा जा सकता है जो कि सागर में केवल बहुत ही हल्के सान्द्रण में पाया जाता है।

जीवद्रव्य कवच की दीवार की भीतरी सतह के सहारे-सहारे एक पतली पर्त के रूप में बना होता है और उसके शेष भाग में एक ऐसा द्रव या रस भरा होता है जिसका घनत्व लगभग समुद्र के पानी के घनत्व के बराबर होता है। कवच में से बाहर की ओर लम्बे पतले रोम सुइयां और कांटे निकले हो सकते हैं और बाहर फैली हुई इनकी सजावटों के रूप में वे सब उन्हें सतह के समीप टिकाए रहते हैं। कभी-कभी बहुत से चौड़े चपटे डायटम एक साथ चिपक कर एक रिबन के रूप में सतह पर उतराते रहते हैं। उतराने में सहायक ये सब तथा अन्य साधन सूक्ष्मदर्शीय पौधों (और जन्तुओं) को उन विशाल खुले महासागरों को आबाद करने के लिए सक्षम बनाते हैं जो अन्यथा वीरान रह जाते।

आप आधे दो भागों में विभाजित हो जाने की विधि से डायटम सन्तानोत्पत्ति करते हैं। प्रत्येक सन्तति-कोशिका मूल कवच का आधा भाग प्राप्त करती है और उसके बाद शेष आधे भाग का तब तक स्रवण करती जाती है जब तक अपने जनक प्राणी जैसी नहीं दीखने लगती। यदि जल का ताप ठीक है यदि पर्याप्त प्रकाश और प्रचुर पोषण मौजूद है तो इस प्रकार के जनन द्वारा थोड़े ही काल में इनकी आबादी में अपार वृद्धि हो जाती है। उत्तर प्रशान्त महासागर के एक क्वार्ट जल में दो लाख तक की बड़ी संख्या में डायटम पाए गए हैं। वसन्त ऋतु में जब कि समुद्र में पादप-उत्पादन सबसे अधिक होता है जल में डायटमों की संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि वह जल जवाकी और भूरे रंग का दिखने लगता है। उत्तर सागर के मछुए इसे 'अततणयवन-जल' अथवा 'सड़ता हुआ जल' कहते हैं।

डायटम तथा अन्य एककोशिक पादप समुद्र की 'घास' हैं। समुद्र में इनका वही स्थान है जो स्थल पर प्रेअरियों तथा भरपूर चरागाहों का है और यहां पर समस्त समुद्री शाकाहारी अपनी चराई करते हैं। दूसरी सबसे महत्त्वपूर्ण घास डाइनोफ्लैजेल्टा की है जिनमें से कुछ मत्स्य सेल्युलोस की प्लेटों के बने आवरणों में बन्द रहते हैं जब कि अन्य मत्स्य जल में नग्न कोशिकाओं के रूप में रहते पाए जाते हैं। वे डायटमों से इस बात में भिन्न हैं कि उनके जीवद्रव्य का कुछ अंश एक बाल-जैसे सूत्र अथवा कशाभिका (flagellum) के रूप में बना होता है। कशाभिकाओं की हरकत के द्वारा इन जन्तुओं को जल में धामी गति का साधन प्राप्त हो जाता है। इनमें से अनेक में उनके कवचों में बाहर को निकले हुए लम्बे कांटे अथवा सींग निकले होते हैं जिनकी लम्बाई घटाई-बढ़ाई जा सकती है ताकि ये जल में नीचे डूबने से बचाए रखे जा सकते हैं। कशाभिका युक्त प्राणी की सराशियम नामक एक किस्म जहां ठंडा सघन जल पर्याप्त आलम्ब प्रदान करता है वहां छोटी छोटी भुजाओं के सहारे तिरती रहती है किन्तु अधिक गर्म मौसम में अथवा गर्म धाराओं में कांटे तेजी से बढ़कर लम्बे हो जाते हैं ताकि हल्के जल में यह पौधा तिरता रह सके। (अध्याय ९ के प्रारम्भ में दिया गया चित्र देखिए)। डायटमों में जाड़ों में अथवा ठंडे अक्षांशों में अधिक मोटे कवच होते हैं तथा उष्णकटिबन्धों अथवा ग्रीष्म में अधिक पतले कवच होते हैं—इसका भी यही कारण है जो अभी-अभी बताया है।

समुद्री-अपतृण और सारगसम

समुद्र में और भी अन्य सूक्ष्मदर्शीय पौधे हैं जो डायटमों अथवा डाइनोफ्लैज

प्लेटो से भी छोटे होते है और कुछ विशाल शैवाल होते है जो ११५ फुट तक लम्बे हो सकते है। समुद्री अपतणों की सभी बहुत सी किस्म शैवाल होती है। तथापि ये बडे पौधे समुद्रों के सीमान्त के सहारे सहारे एक सकीर्ण पट्टी तक ही सीमित होते है जहा पर इन्हें चिपकने के लिए स्थान मिल जाता है और जल इतना उथला होता है कि उन तक पर्याप्त रोशनी पहुचती रहती है। इस सीमित वितरण के कारण समुद्र के जीवन की उपापचय व्यवस्था में उतराने वाले पौधों की सख्या कही अधिक है तथा उनका कही ज्यादा महत्त्व है। एकमात्र बडा पौधा, जो कि उतराते हुए खानाबदोश जीवन के लिए अनुकूलित हो गया है, सारगसम अथवा 'गल्फ अपतण' है। इसी के आधार पर सारगैसो सागर का यह नाम पडा है। स्वय इस अपतण का नाम क्रिस्टोफर कोलम्बस के नाविकों ने रखा था। इसकी हवा से भरी थैलियो ने जो कि इस सतह पर उतराती रहती है उन्हें छोटे छोटे उन अगूरों की याद दिलाई जिन्हें वे अपने देश पुर्तगाल में 'साल्गैजो' कहा करते थे।

पुराना विश्वास कि सारगैसो सागर मे पाई जाने वाली अपतण सहतिया इतनी मोटी होती है कि वे जहाज को रोक देती है और उसे एक ऐसे जाल मे फास लेती है जो अटूट होता है प्रतिदिन उन जहाजो द्वारा गलत सिद्ध होता जा रहा है जो न्यूयार्क से बरमुडा तथा दक्षिण अमरीका जाते है। इस सागर के लगभग २,००० मील लम्बे और १,००० मील चौडे क्षेत्र मे ७० लाख टन अपतण इतनी दूर दूर छितराया रहता है कि वह एक मामूली से बेडे को भी नही रोक सकता।

कोलम्बस का ख्याल था कि ये सब अपतण तूफानो द्वारा टूट कर अलग हो गए थे और लहरो द्वारा विसरित हुए इस विचित्र जटाकार सागर मे पहुच गए जो कि अटलाटिक के मध्य मे एक दक्षिणावर्ती भवर के रूप मे धीरे धीरे चक्कर खाता रहता है। आज भी यह विचार अनेक पुस्तको मे देखने को मिलेगा किन्तु वुडजहोल के डा० जान एच० राइदर ने अपने अध्ययनो के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि उतराते हुए सारगैसम मे 'वृद्धि होने, जनन होने और एक स्वच्छन्द जीवन बिताने का हर प्रमाण दृष्टिगोचर होता है . . . . । हो सकता है कि इसके पूर्वज किसी समय समुद्र की तली से चिपके हुए पाए जाते रहे हो किन्तु आजकल का अपतण स्वय इस सागर का निवासी जान पडता है— ऐसा निवासी जिसमे उतराते हुए जीवन की क्षमता विकसित हो चुकी है।

चकि सारगैसो सागर की सतह पर नई पत्तियो और नए नए प्ररोहो से युक्त स्वस्थ दीर्घ पर्ण वाले इतनी अधिक सख्या मे पौधे छितराए हुए होते है कि उनके देखने से ऐसा लगता है मानो यह एक उपजाऊ समुद्री मैदान है।

वास्तव में यहां के अपतण का हर टुकड़ा निश्चय ही अपने आप में एक भरपूर सूक्ष्म दुनिया है जिसमें उनकी शाखाओं में सूक्ष्म कापीपाड, केकड़े, घोंघे विभिन्न कृमि और मछलियां के शिशु आदि शामिल हैं। इनमें जल पर चलने वाली हलोबेटस नामक एक समुद्री मक्खी भी है जो अपनी छह मजबूत टांगों द्वारा एक अपतण से दूसरे अपतण पर दौड़ी-दौड़ी फिरती थी। तथापि, यदि हैलोबेटस अथवा अन्य कोई भी जन्तु एक बार सारगैसम से अलग हो जाए तो वह अपने आप को एक विशाल समुद्री रेगिस्तान में पाएगा जहां पर उन कच्चे पदार्थों का लगभग पूर्ण अभाव है जिनके द्वारा जीवद्रव्य बनता है। — —

आहार शृंखला

पृथ्वी पर हर पौधे और जन्तु का जीवन उसी अवस्था में प्रारम्भ होता है जिसमें कि करोड़ों वर्ष पहले बनी हुई प्रथम जीवित वस्तुएं प्रारम्भ हुई थीं— अर्थात जीवद्रव्य की एक सूक्ष्म बूंद के रूप में। जीवद्रव्य जल, कार्बन, आक्सीजन, नाइट्रोजन और हाइड्रोजन का संयोजन है जिसमें साथ-साथ फास्फोरस, गंधक, लोहा, सोडियम, क्लोरीन और मैग्नीशियम की सूक्ष्म मात्राएं भी मिली होती हैं। ये सारे तत्त्व महासागर के जल में घुले हुए हैं। प्रकाश-संश्लेषण के द्वारा पौधे सूर्य की ऊर्जा का प्रयोग करके कार्बन डाइआक्साइड और अकार्बनिक पदार्थों को शर्कराओं, वसाओं और प्रोटीनों के समान कार्बनिक पदार्थों में परिवर्तित करते हैं। इस प्रकार सूर्य की ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में बदल जाती है जो इन पदार्थों के अणुओं को एक-दूसरे से बांधे रखती है। किण्वन (fermentation) के द्वारा इस रासायनिक ऊर्जा का अधिकतर भाग विमुक्त हो जाता है और पौधे को जीवित रखने में काम आता है किन्तु उसकी कुछ मात्रा उस कार्बनिक पदार्थ में संचित रहती है जो जीवद्रव्य के प्रतिस्थापन एवं निर्माण में काम आती है।

डायटमों, डाइनोफ्लैजेलेटों तथा अन्य सूक्ष्मतर पौधों का कार्बनिक पदार्थ जगत् महासागर के तमाम जन्तुओं का प्राथमिक आहार है। किन्तु अदृश्य छितराई हुई कोशिकाओं की पादप-समष्टि उसका आहार करने वाले जन्तुओं के लिए, विशिष्ट समस्याएं उपस्थित करती है जैसा कि थल के पौधों में नहीं होता। यही तो वह कारण है जिससे अधिकांश प्लवक जन्तु स्वयं भी सूक्ष्मदर्शीय आकार के होते हैं और उनकी संख्या बहुत ज्यादा होती है।

इन एककोशिक जन्तुओं में से कुछ तो ऐसे हैं जो पौधों से मुश्किल से ही पर्याप्ततः भिन्न होते हैं और उन्हें जन्तु कहना भी कठिन है। वास्तव में कशाभिका युक्त जन्तु नॉक्टीलूका (Noctiluca) को कभी-कभी जन्तुओं के साथ वर्गी

करण किया जाता है। प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपना भोजन अपने आप बनाने की बजाए यह डायटमों और अन्य सूक्ष्मतर जीवों को बड़ी आतुरता से खाता है। इस दावत में प्रवाहित समुदायों के प्रोटोजोअन, कॉपीपाड आदि अन्य शाकाहारी भी नॉक्टील्यूका के साथ साथ शामिल हो जाते हैं। वे अपने लिए स्वयं कार्बनिक पदार्थ का निर्माण नहीं कर सकते इसलिए जीवित रहने के लिए उन्हें पौधों को ढूंढ़कर खाना जरूरी हो जाता है। अधिक बड़े आकार वाले कॉपीपाड जैसे फिश कृमि, केकड़े आदि इन पौधों को देख नहीं पाते इसलिए वे शाकाहारियों को खाकर जिन्दा रहते हैं।

जब कोई जन्तु किसी पौधे को खाता है तब उस पौधे के जीवद्रव्य के अणुओं में संचित रासायनिक ऊर्जा निकल कर जन्तु में पहुंच जाती है। इस ऊर्जा का कुछ भाग ऊष्मा के रूप में जल अथवा हवा में पहुंच जाता है कुछ अंश जन्तु को चलाते रहने में काम आता है कुछ उसकी वृद्धि में और लगभग १० प्रतिशत जीवद्रव्य में संचित रहता है। यही वह १० प्रतिशत ऊर्जा है जिसके लिए मांसभक्षी पीछे-पीछे दौड़ा फिरता है और स्वयं वह भी जो कुछ प्राप्त करता है उसका भी १ प्रतिशत भाग ही संचित कर पाता है। आहार शृंखला के हर पग पर कार्बनिक पदार्थ का लगभग ९० प्रतिशत भाग खो जाता है जिससे कि १० पौंड शाकाहारियों के निर्वाह के लिए १००० पौंड पौधों की आवश्यकता होगी। स्वयं ये शाकाहारी केवल एक पौंड एकक मांसभक्षियों अथवा मछलियों का निर्वाह करा सकेंगे।

अनेक प्रकार की मछलियां जिनमें हेरिंग मैकरल सार्डीन एन्कोवियां, उड़न मछलियां तथा एक टन वाली विशाल सन फिश आदि मारा शामिल हैं प्लवक पर निर्वाह करती हैं। वे समुद्र में से सूक्ष्म जन्तुओं को अपनी गिल्कर्षणियों के द्वारा छान लेती हैं। ये गिल्कर्षणियां पास-पास बनी हुई दानेदार छड़ें अथवा छड़ें होती हैं जो कि प्लवक को बहुत कुछ उसी तरह से इकट्ठा करती हैं जैसे कि घास के लॉन पर घसीटा जाता रेक दानेदार बिखरी हुई चीजों को इकट्ठा कर लेती है। जिस समय जल गिल में से होकर गुजरता है तो उसमें से जन्तु छान लिए जाते गले में इकट्ठे कर लिए जाते और निगल लिए जाते हैं। चूंकि १० पौंड मछलियों के भोजन के लिए १ पौंड प्लवक की जरूरत होती है इसलिए यह जरूरी है कि अत्यन्त विशाल संख्या में जन्तु खाए जाने चाहिए। अकेली एक हेरिंग के आमाशय में ६०,० ० से भी अधिक कॉपीपाड पाए गए हैं।

प्लवक भक्षी मछलियां तेज तैराक होती हैं। वे इस क्षमता का प्रयोग

भोजन पकड़ने में इतना ज्यादा नहीं करती जितना कि अपने से अधिक बड़े परभक्षियों से आत्मरक्षा में करती है। ये बड़ी मछलियाँ भी तीव्र तैराक होती हैं किन्तु उनमें गिल्कपणियों के बजाए दाँतों से भरपूर जबड़े बने होते हैं। इनमें ये मछलियाँ शामिल हैं : सामन, ट्यूना, सी बास, बाराकुडा, स्नैपर, मोडफिश, मार्लिन तथा और भी बहुत सी किस्में। इन परभक्षियों के लिए पर्याप्त मात्रा में छोटी मछलियाँ उपलब्ध हैं, इसकी इस तथ्य से पुष्टि हो जाती है कि हर वर्ष कैलिफोर्निया के पार में ५,०० ००० टन सार्डीन मछलियाँ और अमरीका के पूर्वी तट के पार से ८०० ०० टन मनहैडेन मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। पकड़ी जाने वाली मछलियों की विपुल संख्या भी समुद्र में पाई जाने वाली कुछ मछलियों की केवल लगभग एक प्रतिशत मात्र ही है।

छोटी मछलियों को उनसे बड़ी मछलियाँ खाती हैं और यह क्रम उन सबसे बड़े परभक्षियों तक चलता जाता है जिनमें ये सब शामिल हैं : शार्क, मैस डालफिन, किलर-ह्वेल और बड़े आकार वाली दाँत-युक्त ह्वेल। यह बड़े अचरज की बात है कि जो जन्तु सबसे ज्यादा बड़ा आकार प्राप्त करते हैं—जैसे कि बास्किंग शार्क, ह्वेल शार्क, जो कि समुद्र की सबसे बड़ी मछली है और नीली ह्वेल, जो कि पृथ्वी का सबसे बड़ा जन्तु है—ये सब प्लवक भोजी हैं। इनमें दाँत नहीं होते और वे अपनी गिल्कपणियों तथा बैलीन प्लेटों के द्वारा जल में से जन्तुओं को छान लेते हैं। प्लवक समुद्र के विशालतम जन्तुओं को आहार प्रदान करता है—यह इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि इन सूक्ष्म जन्तुओं का पोषण महत्त्व कितना अधिक है।

आहार के 'फुव्वारे'

समुद्र के ये तमाम जन्तु मिलकर इतनी अनाप शनाप तरह खाते रहते हैं कि यदि पुनः पूर्ति का कोई साधन न होता तो सागर का खाद्य भण्डार शीघ्र ही खाली हो जाता। पौधों द्वारा कार्बनिक आहार में बदल जाने वाले अधिकांश अकार्बनिक कच्चे पदार्थ शीघ्र ही जन्तु-पदार्थ के अंश के रूप में बदल जाते हैं। जब तक जन्तु जीवित रहते हैं तब तक यह पदार्थ और आगे पौधों को पोषण प्रदान करने के लिए उपलब्ध नहीं होता। कुछ जन्तु अन्य जन्तुओं की अपेक्षा अधिक लम्बी आयु वाले होते हैं किन्तु अधिक विस्तृत काल को लें तो देखा जाता है कि जन्तु उसी दर से मरते जाते हैं जिससे कि वे जन्म लेते हैं। आहार शृंखला केवल तभी कायम बनी रह सकती है जब कि जीवन रहित कार्बनिक

पदार्थ का विघटन होकर वहां सरलतर कार्बनिक तत्त्व एवं अकार्बनिक खनिज बनते रहते हैं जिनके द्वारा वह पहले बना था।

इस विनाश कार्य का भार समुद्र के सूक्ष्मतम जन्तुओं पर आकर पड़ता है। हजार गुना आवर्धित करने पर वे इस पृष्ठ पर दिए गए मामा चिह्नों और बिंदुओं के आकार के हो पाएंगे और वास्तव में कुछ कि ना आकृति भी वही होगी। कुछ अन्य छोटी छोटी शलाकाओं जैसे निराकार दंग अथवा जटिल कुण्डलियों के रूप में स्थित हुए होंगे। ये जीव बैक्टीरिया हैं (जिन्हें कभी-कभी गलती से जंग कहा जाता है)—अर्थात एककोशिक जीव जिन्हें निश्चित रूप से न पौधे कहा जा सकता है न जन्तु। वे समुद्र में हर जगह पाए जाते हैं — जन्तुओं के भीतर और बाहर एक तट से दूसरे तट तक तथा सतह से लेकर छह मील से अधिक की गहराई तक। प्रमुप्त प्राणी जिनमें पुनः जीवन दशा में लौट जाने की क्षमता होती है समुद्र के पेंदे के नीचे की १८० फुट गहराई तक की कीचड़ में पाए गए हैं। अपने आकार के बावजूद बैक्टीरिया इतनी ज्यादा संख्या में होते हैं कि वे समुद्र में पाए जाने वाली समस्त जीव-सृष्टि का एक पर्याप्त अंश भाग बनाते हैं।

महासागर में बहुत-सा कार्बनिक पदार्थ घुली हुई अवस्था में रहता है, किन्तु अधिकतर जन्तु उस पदार्थ को इसी रूप में आहार नहीं कर सकते। तथापि बैक्टीरिया इसी पतले महासागरीय शोरबे पर निर्वाह करते हैं जिससे कि सागर में आहार के रूप में प्रयोग की जा सकने वाली कोई भी वस्तु कभी बेकार नहीं जाती। वे मृत जन्तुओं पर भी इसी तरह कार्य करते हैं और घुली हुई आक्सीजन को कार्बनिक पदार्थ के साथ मिलाकर—अर्थात आक्सीकरण या धीरे धीरे जलाने के द्वारा—उनकी ऊर्जा को प्राप्त करते हैं। इस ज्वलन में मुक्त होने वाला कुछ पदार्थ बैक्टीरिया को जीवित रखने में काम आ जाता है। किन्तु, इसका अधिकतर भाग कार्बन डाइआक्साइड फासफारस नाइट्रेट, सल्फर तथा अन्य खनिजों में अपघटित हो जाता है जिन्हें पौधे तुरंत प्रयोग में ला सकते हैं।

मृत जन्तुओं पर फौरन ही बैक्टीरिया के दल के दल धावा बोल देते हैं और इससे पहले कि मृत जन्तु डूबते हुए बहुत गहरे भागों में पहुंच जाएं उनका अपघटन कर देते हैं। (इनकी कुछ स्पीशीज़ें तो जन्तुओं और पौधों को उनके मरने के पहले से ही पचाना शुरू कर देती हैं।) साथ ही अधिक शक्तिशाली जन्तु कमजोर और मरने वाले शिकार को हड़पने के लिए सदा तैयार रहते हैं, जिससे यह होता है कि सतह के नजदीक मरने वाले जन्तुओं का प्रति दस में से नौ भाग लगभग ६०० फुट से ज्यादा गहरा कभी नहीं पहुंच पाता। ये जन्तु

गहराई में रहने वाले जीवित प्राणियों के लिए आहार का स्रोत बन जाते हैं और स्वयं इन प्राणियों को भी कार्बनिक अपशिष्टों का उत्सर्जन करना तथा मर जाना होता है और इस प्रकार फलस्वरूप तली की ओर पदार्थ की एक धीमी वर्षा जारी रहती है। अन्ततः जो कुछ महासागरीय फर्श में पहुंचता है वह इतनी ज्यादा मृत शरीरों की वृष्टि नहीं होती जितनी कि अपशिष्ट पदार्थों जन्तुओं और पौधों के कठोर भागों और निर्मोचन के दौरान उतार कर फेंकी हुई खालों तथा त्वचा के रूप में होती है।

अपघटन हर गहराई पर होता हुआ सागर के फर्श तक पर होता है जहां पर आधे ग्राम तक मिट्टी में बहुत ज्यादा—यहां तक कि ८० करोड़ तक—बैक्टीरिया पाए जाते हैं। यह ठीक है कि पौधे सतह से कुछ सौ फुट नीचे तक ही सीमित हैं जहां पर प्रकाश-संश्लेषण के लिए पर्याप्त प्रकाश होता है। मध्यवर्ती तथा अधिक गहरी परतों के जल के लिए यह आवश्यक है कि वह किसी न किसी प्रकार ऊपर उठकर प्रखर प्रकाश वाले क्षेत्र में पहुंच सके ताकि वहां से जीवनदायी पोषण तत्त्वों की काफी मात्रा प्राप्त की जा सके। यह क्रिया जल के ऊपर उबलने वाले स्थानों पर तथा अपसरण क्षेत्र में होती है जैसे कि उत्तर विषुवतीय धारा तथा प्रतिधारा के बीच के अपसरण क्षेत्र में और कैलिफोर्निया के तट के सहारे बसन्त तथा शुरू ग्रीष्म में होती पाई जाती है। कान टिकी के नाविक दल ने पीरू धारा को ऐसे जन्तुओं से भरा हुआ पाया जो कि उन पौधों पर निर्वाह करते थे जो दक्षिण अमरीका के पश्चिमी तट के पार आहार के ऊपर उबलकर आने वाले फुव्वारे का उपयोग करते हैं। समस्त जगत महासागर में जहां पर भी गंभीर जल सतह की ओर आता है वहां भरपूर जीव सृष्टि पाई जाती है।

सतह की ओर ऊपर उठकर आने वाले हर गैलन जल के लिए एक गैलन जल का नीचे बैठते जाना जरूरी होता है। यह डूबना अभिसरण क्षेत्रों में होता है—अर्थात् विषुवतीय प्रतिधारा की दक्षिणी सीमा पर केन्द्रीय जल महतियों के अधिक उत्तरी एवं दक्षिणी सिरों पर, और उन स्थानों पर जहां कि दक्षिण ध्रुव और उत्तर ध्रुव से आने वाला भारी जल अधिक हल्के उपोष्णकटिबंधीय जल के नीचे बैठता जाता है। सागर की जीव सृष्टि के चय उपचय में अभिसरणों का भी उतना ही अधिक महत्त्व है जितना कि अपसरणों तथा ऊपर की ओर उबलते जाने वाले क्षेत्रों का है। वे महासागरों के 'फेफड़ों' के समान हैं जहां आक्सीजन की भारी सप्लाई नीचे ले जाई जाकर गहरे भागों में रहने वाले जीवों तक पहुंचाई जाती है।

७
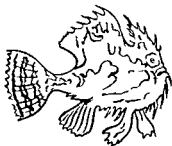
'भीतरी' अन्तरिक्ष के जीव

"ऐ खुदा, हरान हू कि ये मछलिया समन्दर में रहती कैसे है ।"—शेक्सपीयर

सतह स लेकर समुद्र की तली तक जीवन एक अनवरत क्रम है और नीचे क्या होता है वह इस पर निभर है कि ऊपर क्या होता है। अत समुद्र के भीतर होने वाली घटनाओ का अधिक से अधिक स्पष्ट चित्र प्राप्त करने के लिए यह जरूरी है कि समुद्र विज्ञानी ऊपर स लेकर नीचे तक पूरे महासागर का अध्ययन कर। १९५० तक पूरी पृथ्वी की परिक्रमा करने वाली खोज यात्राओ की सख्या केवल तीन ही थी और उन्होने अपन प्रयत्न अधिकतर अथवा एकातत समुद्री जतुओ के अध्ययन मे ही लगाए। य खोज-यात्राए इस प्रकार थी **चलेंजर** खोज यात्रा, १९२८ ३० म **डाना** नामक पोत पर की गई डनिश खोज यात्रा, तथा १९४७ ४८ म **ऐल्बट्रास** नामक जहाज पर की गई स्वेडनी गभीर सागर खोज यात्रा। ब्रिटिश अनुसधान पोत **डिस्कवरी** द्वितीय न भी दक्षिण ध्रुव महासागर म पृथ्वी का चक्कर लगात हुए अनक खोज यात्राए की और उस क्षेत्र क विषय मे हमारी जानकारी म बहुत वृद्धि की। हालाकि **ऐल्बट्रास** ने पोर्टो रिका ट्रच म २५,९१९ फुट की गहराइ तक स मछलिया पकडी और २०००० फुट स अधिक गहराई से जतुओ को पहली बार पकड कर ऊपर लाया गया, फिर भी किसी भी खोज यात्रा ने नियमित रूप मे इतनी गहराइया पर से मछलिया नही पकडी थी और जब कभी ऐसा किया भी तो उसके लिए उन्होने केवल छोटे जाल

आर टालों का ही प्रयोग किया था।

अत डेनमार्कवासियों ने पुन १९ ० की १५ जनवरी को साढे सात मील लम्बे केबिल की मदद से अब तक के सब से बड़े और सबसे भारी ट्रालिंग उपकरण को समुद्र में उतारा। यह कार्य २६६ फुट लम्बे डेनमार्क पोत गलेथिया पर सवार होकर सम्पन्न किया गया। उनका मुख्य उद्देश्य यह मालूम करना था कि २०,००० फुट के नीचे की गहराई पर किस प्रकार के जन्तु रहते है। उनकी रुचि मुख्यत ट्रेचों में थी—अर्थात जगत महासागर के गंभीरतम भागों में। वे यह जानना चाहते थे कि बहुत ज्यादा दाब सतत अंधकार अत्यधिक शीत और आहार के निरन्तर अभाव की परिस्थितियों में जीवन किस प्रकार से विद्यमान रहता पाया जाता है।

सागर की उर्वरता

चूंकि सागर की हर गहराई पर मिलने वाले जीवन की मात्रा इस बात पर निर्भर होती है कि सतह के समीप कितना कार्बनिक पदार्थ अथवा आहार उपलब्ध है इसलिए गलथिया खोजयात्रा की एक यह भी परियोजना थी कि जगत् महासागर के विभिन्न भागों में आहार के उत्पादन की मात्रा मापी जाए। इस कार्य के लिए एक गाइगर काउन्टर की सहायता ली गई जिससे उस रेडियोएक्टिव कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा नापी जाती थी जो कि प्लवक समुदायों के पादप प्रकाश संश्लेषण के दौरान ग्रहण करते थे। प्रशान्त महासागर को न्यूजीलैन्ड से कैलिफोर्निया तक पार करने में जैसी कि आशा की जाती थी सबसे अधिक मात्रा विषुवतीय अपसरण में हवाई से दक्षिण में तथा कैलिफोर्निया के तट के पार पाई गई। सबसे अधिक मात्रा वाला क्षेत्र अटलांटिक में पाया गया—यह अफ्रीका के दक्षिण पश्चिमी तट के पार १२० मील चौड़ा क्षेत्र था जहां ठंडा दक्षिण ध्रुव प्रदेशीय मध्य जल तट से दूर बहा ले जाए जाने वाले उष्ण धारा के जल का स्थान लेने के लिए ऊपर उबरता हुआ आता है।

सारगैसो सागर में किए गए मापनों से पता चला कि वह एक सबसे कम उर्वरता वाला क्षेत्र था। वहां जल धीरे धीरे नीचे बैठता जाता है और 'अपतण भष्टि' तक पोषण पदार्थों के पहुंचने का मात्र साधन इर्द गिर्द बहने वाली धाराएं हैं। आपको सारगैसो सागर के कम स्वच्छ नीले जल दखने भर की जरूरत है कि आप कह उठेंगे कि वह बंजर है—सागर का नीला रंग उसके सृष्टि विहीन होने का द्योतक है। केवल उन स्थानों पर जहां जल घुले हुए और निलम्बित पदार्थ से लदा होता है जल का रंग या तो गहरा हरा होता है

जैसा कि तटवर्ती जल में पाया जाता है या गहरा भूरा, जैसा कि बसन्त म ध्रुववर्ती जल मे देखा जाता है।

जगत महासागर मे हर वर्ष कुल कितना आहार उत्पन्न होता है ? गलथिया के अध्ययनों मे लगाए गए अनुमानों से ऐसा सकेत मिलता है कि यह मात्रा लगभग ८० अरब टन होगी--अर्थात लगभग उतनी जितनी कि स्थल पर पौधों का वार्षिक उत्पादन होता है। स्टीमैन नील्सेन ने--जिन्होंने मापन कार्य किया था--यह निष्कर्ष निकाला कि इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि सागर के सबसे अधिक उत्पादनशील क्षेत्रों मे उतनी ही उपज हो सकती है जितनी कि हमारे बढ़िया से बढ़िया मक्‍के के खेतों म हो सकती है।" डा० जान राइदर ने अपने हिसाब मे इससे भी अधिक संख्या प्राप्त की। उसके परिकल्पना का आधार वर्ष पर्यन्त किया गया मापन क्रम था, न कि एक ऋतु म लिया जाने वाला केवल एक मापन, और इन परिकल्पना से पता चलता है कि कुल मिलाकर विभिन्न समुद्रों म थल से दुगने से भी ज्यादा उत्पादनशीलता पाई जाती है।

यदि समुद्र का एक एकड़ उतना ही उर्वर है जितना कि थल का एक एकड़ तो इसका यह अर्थ होगा कि थल की अपेक्षा समुद्र ढाई गुना ज्यादा उत्पादनशील होगा क्योंकि थल की अपेक्षा इसमे ढाई गुना अधिक एकड़ पाए जाते है। साथ ही, महाद्वीपों का बहुत सा भाग वस्तुत बंजर रेगिस्तानों तथा पूर्णत उत्पादन विहीन बर्फीले आवरणों से ढका रहता है। महासागरों म भी रेगिस्तान मौजूद है--जैसे, सारगैसो सागर, किन्तु कही पर भी वे इतने अनुपजाऊ नही है जितने कि स्थल पर पाए जाने वाले लम्बे चौड़े रेगिस्तान होते है। स्थल पर जीवन केवल वृक्षों की चोटियों से ले कर मिट्टी म कुछ ही फुट गहराई तक फैला रहता है। किन्तु महासागर मे जीवन के पाए जा सकने वाला स्थान आमतन १२,५०० फुट की गहराई तक उपलब्ध होता है--अर्थात स्थल और अलवण जल प्रदेशों, दोनों को मिलाकर जितनी जगह मिलती है उसके लगभग ३०० गुना अधिक।

ऋतुएं

पौधों और जन्तुओं के जीवन म होने वाले ऋतुपरक परिवर्तन जो कि स्थल पर इतने अधिक स्पष्ट होते है समुद्र मे भी होते देखे जाते है। जाड़े के महीनों मे हवाओं और तूफानों के द्वारा ऊपरी जल अच्छी तरह घुलता मिलता रहता है। जल के नीचे से ऊपर उबल कर आने तथा अपसरण से खनिजों का विशाल भण्डार सतह पर आता है, और उन्हे ऊपरी ५०० फुट के भाग मे लगभग समान रूप मे वितरित कर देता है। जैसे-जैसे साल आगे बढ़ता जाता

ह ता लम्बे हात जात दिना के साथ साथ ताप और प्रकाश दाना बढन जात हैं, इस तरह पौधा की वद्धि क लिए उपयुक्त परिस्थितिया उपलब्ध होती जाती हैं। यदि जल म इन अच्छी परिस्थितियो का लाभ उठाने के लिए पिछले वप की बची हुई कुछ कोशिकाए अथवा सुप्त बीजाणु[1] होत हैं ता पादप-वद्धि मे लगभग उसी प्रकार का विस्फाट हाता है जैसे कि स्थल पर बसन्त मे कलिया के फटन के रूप मे हाता है। उत्तर तथा दक्षिण ध्रु व प्रदेशा मे जब वसन्त के समय वफ पिघलने के द्वारा शीत मे वर्फ मे बन्द हो गए इन बीजाणुआ की विमुक्ति होती है उस समय डायटमा की एक विलक्षण बहार आ जाती है।

बसन्त के बीतते जान के बाद ऊपरी सतहें गर्म हाने लगती ह आर हल्का जल नीचे के अधिक ठडे, सघनतर जल के ऊपर गिरता है जिससे कि एक ताप प्रवणता उत्पन्न हा जाती है। जल विभिन्न परतों म स्थिर हा जाता है और ऊपर-नीचे की दिशा मे जल की गति होनी बन्द हा जाती है। पोषण पदार्थों की परिपूर्ति नही हा सकती और जन्तु तेजी से पादप-कोशिकाआ का उपभोग करते जाते है। जितनी तेजी से व खाए जाते हैं उतनी तेजी स जनन न हा सकन के कारण ग्रीष्मकाल मे पादप समष्टि घट जाती है।

शरद म फिर स जल म हलचल पैदा होती है। ताप प्रवणता का छाडकर पोषण पदाथ सतह की आर आ जाते है। प्रकाश सश्लेषण के लिए अभी भी पर्याप्त रोशनी हाती ह आर तीव्र वद्धि का दूसरा दौर चलता है। उसके बाद, जस जस सूय आसमान म नीचे जाता जाता है और दिन छोटे हात जात हैं वैस-वैस पुन पाधा की सख्या में कमी आती जाती है। पादप-जीवद्रव्य सघनित होकर सिलिका की एक बाहरी मोटी दीवार मे बन्द हा जा सकता है जिसस कि एक प्रसुप्त बीजाणु बन जाता है और इस प्रकार एक विलम्बित जीवन के रूप मे वह कोशिका तब तक विस्थापित हाती रह सकती है जब तक पुन उपयुक्त परिस्थितिया प्राप्त नही हा जाती।

ताप का इन तीन बाता पर भी प्रभाव पडता ह वद्धि पर (ठडे जल म जन्तु अधिक धीरे धीर बढत है और उनमे परिपक्व अवस्था देर मे आती है) जनन पर (ठडे जल मे जनन जल्दी नही हाता) और जीवन क्रियाआ पर (ठडे जल के जन्तु अधिक निष्क्रिय हात हैं)। फलत ध्रुवा प्रदेशा म विभिन्न प्रकार के जन्तु अपक्षाकृत कम होत हैं किन्तु आकार म वे अधिक बडे हात है और

१ यह एक पादप-कोशिका हाती ह जो अस्थायी रूप मे प्रसुप्त हाती है लकिन उसमे जनन-क्षमता मौजूद रहती है।

प्रत्येक किस्म के जन्तु की समष्टियो की बहुत ज्यादा सख्या पाई जाती है। उष्ण-कटिबधो मे जहा रहने की परिस्थितिया अधिक अच्छी होती है और नई नई पीढिया जल्दी जल्दी बनती रहती है, वहा विविधता तो अधिक होती है किन्तु हर अलग अलग किस्म मे पाए जाने वाले प्राणियो की सख्या कम होती है।

जन्तुओ की ऊपर-नीचे आने जाने की गति को ताप के उस प्रकार के तीक्ष्ण परिवर्तनो के द्वारा रोका जा सकता है जैसे कि ताप प्रवणता पर जो कि गर्म ऊपरी परतो को ठडी गहरी परतो से पृथक् करती है, पाए जाते है। यह असातत्य परत सामान्यत ५०० और १,५०० फुट के बीच रहती पाई जाती है और माध्य प्रकाश क्षेत्र के जन्तुओ को ऊपर के आहार सम्पन्न भाग मे जाने से रोकती है और साथ ही गर्मी-पसन्द करने वाले जन्तुओ को गहरे भागो म जाने से रोकती है। जन्तुओ मे इसी परत के इर्द गिर्द एकत्रित होते जाने की प्रवृत्ति होती है जिससे कि परभक्षियो के वास्ते यह एक उत्तम आखेट-क्षेत्र बन जाता है और कदाचित इसी के कारण जीवन का वह सान्द्रण भी सम्भव हो सका है जो कि ५०० और १,५०० फुट के बीच मे होता देखा गया है।

समुद्र के भीतर का प्रकाश

तमाम कार्बनिक आहार—चाहे वह कही भी क्यो न पाया जाता हो—अनिवार्यत सूर्य के प्रकाश द्वारा प्रदीप्त ऊपरी सतहो मे ही बनाया जाता है। इस निर्मित आहार की क्या मात्रा होगी, यह इस बात पर निर्भर होगा कि प्रकाश की कितनी मात्रा उपलब्ध रहती है। अत गलथिया खोज यात्रा का एक महत्त्वपूर्ण कार्य यह था कि विभिन्न गहराइयो तक प्रविष्ट होने वाले प्रकाश की मात्राओ का मापन किया जाए। ऐसा करने के लिए एक प्रकाश मीटर लिया गया जो कि सूर्य के प्रकाश की चमक के १० खरबवें भाग की चमक तक को परख सकता है। इस मीटर को एक जलसह केस मे रखकर सील बन्द कर दिया गया और डेक पर रखे एक सवदी-सूचक के साथ इसका सम्बन्ध जोड कर इस जल म विभिन्न गहराइयो पर छोडा जाता था।

अधिक से अधिक साफ महासागरीय जल मे जहा प्लवक और निलम्बित पदार्थ न के बराबर हो वहा २,००० फुट की गहराई तक कुछ प्रकाश (एक अत्यन्त अल्प मात्रा म) दृष्टिगोचर होता है। तथापि प्रकाश-सश्लेषण के लिए पर्याप्त प्रकाश केवल लगभग ३०० फुट तक ही पहुच पाता है। अधिक मिट्टी वाले, कण एव प्लवक म लदे तटवर्ती जल म प्रकाश-सश्लेषण कदाचित ३० फुट या उससे भी कम भाग म सीमित हो सकता है शैवालादि पौधो प्रकाश ७००

फुट या यहां तक कि १००० फुट की गहराई तक पहुंच सकता है। यह ध्यान में रखना होगा कि आंकड़े मनुष्य की आंखों की क्षमता पर आधारित हैं—मनुष्य की आंखें सूर्य के प्रकाश के दस अरबवें भाग को पहचान सकती हैं। गंभीर सागर के जन्तुओं के लिए यह हो सकता है कि प्रकाश और अन्धकार की सीमा रेखा सबके लिए एक-सी न हो।

सूर्य का प्रकाश अथवा सफेद रोशनी अनेक रंगों (तरंग दैर्घ्यों) की बनी होती है जिनमें से प्रत्येक रंग अलग प्रकार से अवशोषित और प्रक्षीण होता है और यही कारण है कि वह विभिन्न गहराई तक पहुंच पाता है। लाल प्रकाश जिसमें सबसे कम ऊर्जा होती है सबसे पहले लगभग ८५ फुट पर विलीन हो जाता है। ३०० फुट पर पीला हरा रंग जिसके लिए मनुष्य की आंखें सबसे अधिक संवेदनशील होती हैं समाप्त हो जाता है। ६०० फुट के नीचे देखा जा सकने वाला मात्र रंग नीला होता है और ८०० फुट से नीचे जल गहरे से गहरा नीला और काला होता जाता है।

परिवर्तनशील प्रकाश से जन्तुओं की वर्णक-कोशिकाओं पर क्रिया होती है जिसके कारण उनमें गहराई के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के रंगों की विभिन्न पर्तें उत्पन्न होती हैं। सतह पर अथवा उसके समीप जन्तु प्राय पारदर्शी रंगविहीन अथवा नीलापन लिए होते हैं। ५०० और १५०० फुट के बीच में रहने वाले अधिकतर जन्तु रुपहले, सलेटी अथवा हल्के भूरे रंग के होते हैं। इस क्षेत्र के निचले भाग में तथा उसके नीचे लाल झींगे और लाल कापीपौड पाए जाते हैं और साथ ही गहरे लाल रंग के ग्रूमि भड़कीली लाल जेली फिश तथा रक्त के समान लाल रंग के स्क्विड पाए जाते हैं। १५०० फुट के नीचे रहने वाले अधिकतर स्क्विड और सभी मछलियां काली, काली-बैगनी अथवा गहरी भूरी होती हैं।

रंग का उद्देश्य सुरक्षा करना जान पड़ता है। चूंकि लाल प्रकाश १०० फुट से अधिक नीचे नहीं पहुंच पाता इसलिए उससे नीचे के सभी जीव काले दिखाई पड़ेंगे, और काला रंग ठंडे अन्धकार की पृष्ठभूमि में यथार्थत अदृश्य होता है। दिन के प्रकाश के क्षेत्र में रहने वाली मछलियों की पीठ उनके बाजुओं और पेट की अपेक्षा, प्रकाश की ओर अधिक खुली होती है। इसी प्रभाव के कारण मैकेरेल, बोनिटास तथा ट्यूना आदि मछलियों में 'दोरंगी' व्यवस्था पाई जाती है—अर्थात उनकी पीठ अधिक गहरे नीले रंग की होती है तथा बाजू और पेट रुपहले होते हैं। तीव्र दृष्टि वाले शत्रु ऊपर से नीचे को देखते समय गहरे जल की नीली पृष्ठभूमि में केवल नीले रंग को ही देखते हैं। ऊपर की ओर को

देखने वाले परमक्षिया का ऊपर से आने वाले प्रकाश की चाध के प्रति पहले पट का देखना होता है।

मछलियों का संचालन

१,५०० फुट तक की गहराई पर भी सूर्य की किरण छाया बनाती है और जिस दशा में यह छाया पड़ती है उनमें जंतुओं को अपने स्थिति-स्थापन में सहायता मिलती है। अटलांटिक पार करने में ईल का और प्रशांत पार करने में सामन मछलियों को जो लम्बी यात्राएं करनी पड़ती हैं उनसे यह अर्थ निकलता है कि इन मछलियों में सूर्य की दिशा से स्व संचालन की क्षमता पाई जाती है। ऐसा ख्याल किया जाता है कि खुले समुद्र में वे अपना एक ऐसा मार्ग बना कर चलती हैं जिसमें वे आकाश में सूर्य की दैनिक गति की क्षति पूर्ति करते हुए भी अपनी दिशा बनाए रखती हैं। ईल मछलियां अमरीकी और यूरोपीय धाराओं के ऊपरी जलों से चलकर बमुडा के दक्षिण पूर्व के गहरे और उष्ण जल में अंडे देने के स्थानों तक पहुंचने में २००० से ३०० मील लम्बी यात्राएं करती हैं। अंडों से निकलने वाले पारदर्शी और पत्ते की आकृति वाले शिशु गल्फ-स्ट्रीम तथा उत्तर अटलांटिक की अन्य धाराओं के द्वारा वापस अपने घर की नदियों के मुहानों पर पहुंच जाते हैं।

सामन मछलियों की यात्राएं उल्टी होती हैं। वे तीव्रतम धाराओं के विपरीत तैरती जाती हैं और जलप्रपातों में से ऊपर को उछल उछल कर चलते हुए उन्हीं स्वच्छ जल वाली पर्वतीय सरिताओं में पहुंच जाती हैं जिनसे वे स्वयं पैदा हुई थीं। इन सरिताओं में दिए जाने वाले अंडों से निकले हुए नए-नए शिशु नदियों में बहते जाते हुए प्रशांत-तट तक आ जाते हैं और २,५०० मील की दूरी तक तैरकर अपने जनकों के आहार भक्षण क्षेत्रों तक पहुंच जाते हैं। विस्कान्सिन विश्व विद्यालय के प्रोफेसर आर्थर डी. हैस्लर के अनुसंधानों से ऐसा लगता है कि सामन मछलियां प्रधान नदी को सूंघ-सूंघ कर संचालन करते हुए अपनी गृह सरिता में पहुंचती हैं। प्रोफेसर हैस्लर का सुझाव है कि शिशु सामन में एक विशिष्ट गंध आनुवंशिक रूप में प्राप्त हो सकती है अथवा हो सकता है कि यह शिशु अपनी जन्म-सरिता की गंध के लिए आदी हो। हो सकता है कि यही ऐन्द्रीय ज्ञान ईल-मछलियों के लिए भी सही मार्ग को ढूंढ़ने में उत्तरदायी हो, किन्तु इस मामले में गंध को आनुवंशिक रूप में पहचानना होगा।

एक अन्य रहस्य

सूर्य का सम्बन्ध किसी न किसी प्रकार समुद्र में दैनिक उदग्र (ऊपर नीचे) की गतियों के साथ भी रहता है। चलेंजर खोज-यात्रा के दौरान यह पाया गया कि अनेक स्क्विड मछलियां और प्लवक जीव सूर्यास्त के होने-होने सतह की ओर पहुंच जाते हैं किन्तु पौ फटने पर अथवा उससे पहले पुनः गहरे जल में वापस पहुंच जाते हैं। गलथिया ने रात के समय जो जाल सतह के समीप डाले उनमें उन्हीं स्थानों पर दिन के समय डाले गए जालों की अपेक्षा कहीं अधिक संख्या में जीव प्राप्त हुए। साथ ही इन दोनों में एक से ही जंतु नहीं थे जिससे यह संकेत मिलता है कि ऊपर-नीचे की गति में विभिन्न स्पीशीज़ तथा विभिन्न आयु-वर्गों में अलग-अलग आदतें पाई जाती हैं।

इस दैनिक प्रवास में ६०० से लेकर १,२०० फुट तक की खड़ी दूरी तय की जाती है जिसमें दाब में होने वाले भारी परिवर्तन और ताप तथा लवणता में विस्तृत फेर-बदल पाए जाते हैं। कुछ धीमे तैरने वाले झींगे प्रतिदिन दो बार १,२०० फुट की दूरी तय करते हैं। ऐसे दुर्बल जंतुओं को इतनी कठोर यात्राएं करने की क्या जरूरत है जिनमें हर रोज़ समुद्र में ऊपर चले जाने और नीचे डूबते जाने में कई-कई घंटे बिताने पड़ते हैं? सबसे अधिक तर्कपूर्ण उत्तर यह है कि ऐसा वे अपने आहार ग्रहण के उद्देश्य के लिए करते हैं। अधिकतर बड़े कोपीपोड, चीग्रे श्रिम्प तथा अन्य क्रस्टेशियन[1]—जो कि समुद्र में सबसे अधिक संख्या में पाए जाने वाले जंतु होते हैं—६०० फुट के नीचे रहते हैं जब कि पौधों का उत्पादन ३०० फुट के ऊपर होता है। ऐसा सम्भव जान पड़ता है कि रात को क्रस्टेशियन प्राणी पौधों को खाने के लिए ऊपर आते हैं और उनके पीछे-पीछे मछलियां और स्क्विड भी पहुंच जाते हैं।

इस दैनिक उदग्र गति के लिए कुछ और भी सम्भावित स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए जाते हैं। हार्वर्ड एवं वुड्ज होल के डा० जार्ज एल० क्लार्क के मत से ऐसा ज्ञात होता है कि ये जंतु एक विशिष्ट तीव्रता के प्रकाश को 'पसंद' करते हैं और जैसे-जैसे रात और दिन का उतार चढ़ाव होता जाता है वैसे-वैसे उसी प्रकाश को प्राप्त करने के लिए वे ऊपर-नीचे चलते उतरते जाते हैं। विभिन्न जंतु एक साथ समूह बनाकर एक सम्पूर्ण संहति के रूप में नहीं आते जाते बल्कि

१ वे समुद्री जन्तु जिनमें शरीर और विभिन्न पर संधियुक्त होते हैं तथा एक भृंगीय कवच होता है। यह वर्ग स्थल के कीटों से सम्बन्धित होता है और इसमें लॉब्स्टर, केकड़े, बार्नेकल और वाटर पलो शामिल हैं।

उनका वितरण ऊपरी ६०० से १,००० फुट तक के समस्त जल म अविच्छिन्न रूप म पाया जाता है। हा, इतना जरूर है कि विभिन्न समतलो पर व्यष्टियो का सकेन्द्रण हो सकता है। ये समतल समान तीव्रता वाले अध समुद्री प्रकाश का अनुसरण करते जाते जान पडते है, किन्तु जतुओ की यह गति ताप, लवणता मख और यहा तक कि अभी तक अज्ञात कारको द्वारा परिवर्तित हो सकती है।

खाद्य का अभाव

गभीर सागर मे जीवन की प्रचुरता मे सबस अधिक गम्भीर सीमाकारी कारक आहार है। चूकि गभीर जीव समष्टि एकदम उस पर निभर होती है जो कि ऊपर वाली परता मे होता रहता है इसलिए किसी भी ऐसी परिस्थिति की—जिसके कारण सतह के समीप वाली समष्टि म अधिक वद्धि हो जाए—प्रतिच्छाया तली के समीप वाली अधिक सम्पन्न प्रचुर जीव सष्टि के रूप म पाई जाएगी। जल के उबल कर ऊपर आन की गति सबसे ज्यादा तटो के सहार सहार होती है और उथले जल म हवाए और लहर इतनी गहराई तक पहुच जाती ह जो कि अपघटन तथा डूबत जान के द्वारा एकत्रित हए पोषण-तत्वो के भण्डार को हिला देने के लिए पयाप्त होती है। अत जीव-सष्टि उन क्षेत्रो मे सकेन्द्रित होती है जो महाद्वीपीय ढलान के ऊपर पाए जाते ह। तट म जितनी अधिक दूरी होगी सतह पर अथवा गभीर-सागर मे पाए जाने वाले जीव उतने ही कम होगे।

चूकि वितलनिवासी जीव अपन से ऊपर की परतो पर रहन वाले जीवो पर इतन ज्यादा निभर होत है इसलिए यह जरूरी है कि गभीर सागर के लिए उनका विकास और अनकूलन केवल उसके बाद ही हो सकता था जब कि उनके पूवज पहले से ही ऊपरी प्रकाशयुक्त क्षेत्रो म स्थापित हो चुके होगे। इसी प्रकार स, खुले समुद्रो मे रहन वाले जन्तुओ की उत्पत्ति उनम हुई होगी जो कि तट के नजदीक रहा करत थ। किसी समय ऐसा सोचा जाता था कि वितल क्षेत्रो म लाखो-लाखो साल की आयु वाले बहुत प्राचीन और आदिम जन्तु रहा करत होगे और यह कि जाल डालकर ऊपर खीच लाए जान वाले जन्तुओ मे एस जन्तु प्राप्त हो सकते चाहिए जो कि विलुप्त कडिया होगी और जो गए बीत दिनो क एस जन्तु होग जो आजकल केवल फासिल रूप मे ही पाए जात है। तथापि केवल एक को छोडकर तमाम जीवन्त फासिल ० म ६५०० फुट की गहराई के महाद्वीपीय ढलानो म प्राप्त हुए है। वितल गहराइयो म जो एकमात्र उदाहरण मिला ह वह एक एस प्राचीन घोघ अथवा लिम्पट का

निकट सम्बन्धी है जो पिछले ३५ करोड़ वर्षों से विलुप्त चला आ रहा है। कास्टा रिका के पार के जल में ११८०० फुट की गहराई पर से गैलेथिया ने इसके १० जीवित नमूने प्राप्त किए जिन्हें इस यान के सम्मान में नियोपिलाइना गैलथीई (Neopilina galatheae) का नाम दिया गया। अब स्वीकृत धारणा यह है कि वितल और अलवण जल के निवासी उथले लवण जल प्राणियों के वंशज हैं और अलवण जल में रहने वाले जीव वितल सागर के जीवों से अधिक पुराने हैं।

आहार के अभाव में टक्कर लेने के लिए अनेक मछलियों ने अपना भोजन प्राप्त करने के लिए बहुत ही विशेष साधन विकसित किए हैं। वितल सागर में ऐसी मछलियों का एक वर्ग पाया जाता है जिन्हें विशाल निगलने वाले कहा
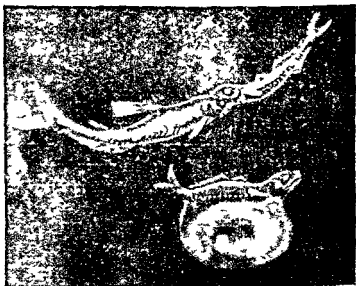
चित्र ३७ एक क्रियाशील भीमकाय निगलने वाला जन्तु (काएसमोडस नाइजर)। उनके मुख तथा उनके आमाशय इस हद तक खुलते और फलते जाते हैं कि उनके शरीर से दुगुने और तिगुने आकार तक का शिकार भीतर ले जाया जा सकता है।

जाता है। ये अपने मुंह और अपने आमाशय को इस हद तक फैला सकती हैं कि अपने साइज से तिगुने बड़े साइज तक की मछली को निगल सकती हैं (चित्र ३७)। निगलने वाली मछलियों में ऐसी ऐसी मछलियाँ देखी गई हैं जो स्वयं

दो इंच लम्बी होती है, किन्तु उनकी अपनी ही जाति की चार चार इंच लम्बी मछलियाँ उनके आमाशय में देखी गई हैं। ये बड़े-बड़े पेट उतने ही प्रायः खाली भी रहते हैं जितने कि भरे हुए क्योंकि इन मछलियों के मुंह में मुड़े हुए खंजर जैसी आकृति के दांत भरे होते हैं ताकि लम्बे लम्बे उपवास के बाद पकड़ा जाने वाला शिकार फिसल कर भाग न सके।

गलथिया के जालों ने 'भीतरी' अन्तरिक्ष में अनेक विचित्र जीव प्राप्त किए। इनमें से एक प्राणी तो ऐसा था जिसमें बिना दांतों का एक छोटा सा मुंह था किन्तु इसे पूरी तरह और तीव्रता से इस प्रकार आगे को फेंका जा सकता था मानो यह सिर से अलग हो जाने वाला हो। उस समय उसके तमाम चेहरे की आकृति बदल जाती है और दूरबीन-सी आंख सर्पों आगे पीछे को तब तक घूमती जाती है जब तक वे एक जोड़ी बाइनाकुलर की तरह सीधी ऊपर को नहीं देखने लग जातीं। इस मछली का नाम स्टाइलेफोरस (Stylephorus) है, जो एक रुपहला, रिबन की आकृति का जन्तु है और जो एक समुद्री घोड़े की तरह सीधी खड़ी दिशा में तैरता है। उसकी दुम का कुछ भाग एक लम्बे धागे के रूप में निकला होता है जो शरीर की दुगुनी लम्बाई तक के बराबर हो सकता है।

बेहिसाब लम्बी सूत जैसी दुम होना और परों में प्रसार हो जाना गहन क्षेत्र में सामान्यतः पाए जाते हैं। अनेक गंभीर सागर मछलियों में जो कि नेत्रहीन होती हैं या जिनकी आंखें बहुत कमजोर होती हैं ये रचनाएं संवेदी अंगों अथवा स्पर्शकों के रूप में काम करती हैं। ये मछलियां अपने लम्बे स्पर्शकों को कीचड़ में खींचते हुए समुद्र के फर्श के ऊपर तैरती जाती हैं और कीचड़ में आहार को ढूंढ़ती जाती हैं (चित्र ३८)।

१८००० फुट अथवा उससे भी अधिक गहरे सागरों में से ब्रोटेल्डि कुल की पारदर्शी छोटी नेत्रहीन मछलियां पाई जाती हैं (चित्र ३९)। गंभीर सागर की अधिकतर मछलियां इसी कुल के अन्तर्गत आती हैं। उनकी अधिक से अधिक लम्बाई ३ फुट तक होती है और उनके सम्बन्धी प्राणी स्थल पर अन्तर्भूमिक गुहाओं में रहते पाए जाते हैं। यह तर्कसंगत जान पड़ता है कि ब्रोटेल्डि प्राणी नेत्रहीन और रंगविहीन हों क्योंकि सतत अन्धकार में रंग का कोई लाभ नहीं तथा दृष्टि के अतिरिक्त अन्य ऐन्द्रिय ज्ञान महत्त्वपूर्ण होते हैं।

एक अन्य प्रसिद्ध गंभीर सागर कुल मैक्रोउईडी (Macrouidae) अथवा रैट-टेलों का है जिनमें प्रकाश के लिए तीव्र संवेदना वाली बड़ी बड़ी आंखें पाई जाती हैं। कभी कभी आहार खोजते खोजते कुछ रैट-टेल ऊपर की ओर

तैरते हुए २०० फुट की गहराई तक आ जाती है। यहा पर नीले-काले प्रकाश का जा मन्तम अवशेष पहुचता है उसमे तीव्र आखा का प्रयाग है। साथ ही, य आग मछली क प्रारम्भिक जीवनकाल मे भी प्रयुक्त होती है—यह काल ऊपर काफी अच्छी तरह रोशनी वाले जल मे बीतता है। बडी होती जाने के साथ-साथ य रट-टेर नीचे पहुचती है किन्तु उनकी आख, जिनका कोई काय नही, फिर भी वद्धिशील होकर आकार म बढती जाती है।
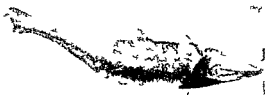
चित्र ३८ बेथोसोरस—एक नेत्रहीन मछली जो ११,००० फुट की गहराई पर अधकार में तैरती है और अपने अत्यधिक लम्बे स्पर्शको से आहार अथवा सम्भोग साथी को ढूढती रहती है। यह उत्तर अटलाटिक, प्रशात और हिद महासागरा की तली के समीप पाई जाती है।

फिलिपीन और बोर्नियो क बीच म स्थित सेलीबीस सागर मे १७,३०० फुट की गहराई म, गलैथिया के मछुआ ने एक ऐसी ब्राटुलिट मछली पकडी जिसमे एक विशाल फैला हुआ सिर था जो नम और जिलेटिनी था। उसके सिर के पीछे एक छोटा अध-पारदर्शी देह और एक अगल-बगल स चपटी दुम था। टिफ्लोनस (Typhlonous) नामक यह मछली नत्रहीन था किन्तु खाल के नीचे गहराई पर कुछ ऐसी रचनाए था जो दूर के पूवजा मे अवश्य ही आखे रही होगा। इसके बडे सिर की निचली दिशा मे एक घाडे की नाल का आकृति

वाला मुख बना था जो कि आहार की तलाश में तली की कीचड़ को खादन के लिए एक कुदाले का सा काम करता था। टिफलोनस बहुत कुछ **मक्राऊरायडीज** (Macrouroides) नामक विरल रैट-टेल के सदृश थी जो कि उसी प्रकार से खाती है (चित्र ८० तथा ८१)।

चित्र ३९ एक अर्ध पारदर्शी ब्राटयूलिड मछली (ऐक्योनस) जो पश्चिम अफ्रीका के तट के पार ८,००० फुट की गहराई पर रहती है।

हो सकता है कि ब्राटुलिड प्राणियों और रैट-टेलों का टिफलोनस से—जो उनके बीच की विलुप्त कड़ी है—दूर का सम्बन्ध हो। हालांकि २३,००० फुट की गहराई पर भी कुछ ऐसे ब्राटुलिड प्राणी पाए जाते हैं जिनमें आखें अच्छी तरह बनी होती हैं किंतु जो नेत्रहीन और रंगविहीन होते हैं वे अधिक विशेषित तथा उन्नत माने जा सकते हैं। अर्थात हो सकता है कि गंभीर-सागर की परिस्थिति के लिए अनुकूलन के मार्ग पर वे अपने देख सकने वाले साथियों अथवा रैट-टेलों की अपेक्षा और आगे बढ़ गए हों।

जीव ज्योति

आखों के होने का तभी कोई लाभ हो सकता है जब कि देख सकने के लिए भी कुछ हो। एक रात्रि को डा० जार्ज क्लार्क ने एक अत्यन्त सवेदी प्रकाश-मीटर को १०० फुट की गहराई पर उतारा और देखा कि वहां पर उसमें भी

अधिक प्रकाश मात्र है जितना कि दिन में उस गहराई पर पहुंच पाता है। इसी तरह एक बार दुबारा २०० फुट की गहराई पर रात का प्रकाश मीटर डुबा कर यह देखा गया कि वहां उतना ही धीमा प्रकाश मौजूद है जितना कि दिन के समय में पहुंच पाता है और मापी गई अलग-अलग दमक तो १,०००

चित्र ४० टिफ्लोनस—एक नेत्रहीन, कुदाले जैसे मुंहवाली ब्राटयूलिड मछली जो फिलिपाइन और बोर्नियो के बीच सेलेबास सागर में १७,७०० फुट की गहराई से प्राप्त की गई थी। हो सकता है कि यह मछली ब्राटयूलिडा तथा रैट-टेलों के बीच की विलुप्त कड़ी हो।

गुना अधिक चमकीली तक पाई गई। डा० क्लार्क इस नतीजे पर पहुंचे कि यह प्रकाश जीव-सदीप्ति था—जिसे आमतौर से स्फुरदीप्ति कहा जाता था क्योंकि पहले ऐसा सोचा जाता था कि यह फास्फोरस के कारण होता है। यह जीवित ज्योति अनेक गंभीर सागर मछलियों, स्क्विडों और क्रस्टेशियनों में अधिक विकसित होती है। सत्य तो यह है कि रात्रि क्षेत्र की कम-से-कम ४४ प्रतिशत मछलियों में अपना प्रकाश मौजूद रहता है जिसका यह अर्थ है कि सतत-अंधकार' में कोई देखी जाने वाली चीज़ भी निश्चय ही मौजूद है।

अनेक जन्तु अपनी देह के विभिन्न भागों के ऊपर एक सदीप्तिमान अवपंक का स्रावण करते हैं अथवा मानो उसका एक बादल जल में छोड़ते हैं। एक दमकीला मिट्टी लाल झींगा—जिसे ऐकेथेफाइडा (Acanthephyra)

सहते है—अपनी हर आंख के नीचे बने एक छिद्र में से सदीप्तिशील पदार्थ को बाहर निकालता हुआ उनको एक दमकते हुए बादल का आवरण बना सकता है। हेटेरोटयूथिस (Heteroteuthis) नामक स्क्विड सतह के नजदीक रहने वाले अपने सम्बन्धियों के द्वारा निकाले जाने वाले सामान्य स्याही के बादल

चित्र ४१ दुर्लभ रैट टेल मक्रोआयडीज, जो कि हो सकता है टिफलोनस के द्वारा बाटयूलिडो से संबधित हो।

की बजाए एक अग्नियुक्त सहति बाहर छोडता है। अंधकार में अचानक तीव्र प्रकाश के चमकने से उतनी ही गड़बड़ी मचेगी और उतना ही संरक्षण प्रदान होगा जितना कि सूर्य के प्रकाश से प्रकाशमान परतों में वाले बादल के द्वारा होता है।

अनेक रैट-टैलों में उनके पेट के सहारे बनी हुई एक लम्बी खुली ग्रंथि होती है जिसमें जगमगा-करोड़ो सदीप्त बैक्टीरिया भरे रहते हैं। देखने में ये जन्तु ऐसे लगेंगे मानो गभीर-सागर की रात्रि में धीरे धीरे रेंगती जा रही छोटी छोटी पैसेंजर-रेलें हों। चूंकि रैट-टेलों में आंखें होती हैं इसलिए यह प्रकाश उन्हें अपना मार्ग देखने तथा आहार ढूंढने में सहायक हो सकता है। अन्य मछलियों और स्क्विड्स में अत्यधिक विकसित अंग होते हैं जिनमें प्रकाश उत्पादक कोशिकाएं होती हैं—इन कोशिकाओं के पीछे एक परावर्तक होता है और आगे एक लेन्स। कुछ में तो वर्ण फिल्टर तथा समायोज्य डायफ्राम तक होते हैं। चूंकि अनेक

उदाहरण में ये अंग तंत्रिका नियंत्रण के अधीन होते हैं इसलिए हो सकता है कि वे अन्य मछलियों को भक्षण देने में काम आते हों, अथवा प्रकाश की विभेदक व्यवस्थाओं से एक ही स्पीशीज के सदस्यों को परस्पर पहचान करने में सहायता

चित्र ४२ एक मादा बमी मछली (फाइटोकेरीनस हिपनिसेप्स) जिसके शरीर पर आंख के तुरंत पीछे एक अल्पविकसित नर जुड़ा हुआ है। मादा मछली नर को पोषण पहुंचाती है और वह बदले में उसके अंगों का निषेचन करता है। मादा के सिर के सामने मछली पकड़ने वाला एक सदीप्तिशील अंग देखा जा सकता है।

प्रदान करते हों। इसका विशिष्ट उपयोग मत्स्य समूहों के निर्माण तथा प्रजनन काल में अपने से विपरीत नर या मादा प्राणियों के ढूंढ सकने में होगा।

अंधेरे में विपरीत सेक्स के सदस्य को ढूंढना बहुत कठिन हो सकता है। एक वानी बसी मछली ने इस समस्या को बहुत ही विचित्र ढंग से सुलझाया है। इसका अल्प वयस्क नर मादा के शरीर को अपने जबड़ों में कस कर पकड़ लेता है और तब तक इसी तरह लटका रहता है जब तक उसके मुख का मादा के शरीर से समेकन नहीं हो जाता। तदुपरांत, नर के केवल जनन अंगों को छोड़कर अन्य सभी अंगों का ह्रास हो जाता है और वह अपने शेष जीवनकाल में मादा

द्वारा पोषण प्राप्त करता है और बदले में उनके अंडों का निषेचन करता रहता है। (चित्र ८२)।

प्रकाश-अंगों में पटन और रंगों की दृष्टि में अपार विविधता मिलती है। इन रंगों में हल्का नीला, बैगनी नारंगी, पीला पीला-हरा और नीला हरा भी शामिल है। बैक्टीरिया और प्रोटोजोअनों से लेकर कशेरुकियों तक के अनेक जन्तु वर्गों में प्रकाश छोड़ने की शक्ति पाई जाती है, तथा ये प्रकाश उत्पादक हर गहराई पर पाए जाते हैं। जिस किसी ने कभी अंधेरी रात में जहाजों की बाजू पर से देखा हो, विशेषकर उष्णकटिबन्धी क्षेत्रों में, तो उसने दमकते हुए जन्तुओं को कभी-कभी इतनी रोशनी निकालते हुए देखा होगा कि उसमें पुस्तक अच्छी तरह से पढ़ी जा सकती है। वहां के पानी में एक लगातार हरी चमक दिखाई देती रहती है जो कि सेरेशियम और नाक्टिल्यूका जैसे बहुसंख्यक सूक्ष्मदर्शीय घुमक्कड़ों द्वारा निकलती रहती है। इस प्रकाश के बीच-बीच में अधिक चमकदार और विभिन्न रंगों वाली तीव्र प्रकाश रेखाएं दीखती हैं जो कि स्पंदनशील जेलीफिशों, कापीपोडों कृमियों इत्यादि से निकलती है। कभी-कभी जहाज के पीछे-पीछे बनने वाली जल रेखा अथवा चिरती जाती हुई ऊंची लहरों की किरीटिया हरे प्रकार में प्रज्वलित हो उठती है। तेज हवाएं अपने साथ उन प्रकाशमान फुहार-पुंजों को उठाकर अंधेरे एकांत सागर पर छितरा देती है या उन्हें उठाकर ऊपर उछाल देती है मानो पहले में ही तारों से भरे आकाश में उन्हें पहुंचा रही हों—यह दृश्य ऐसा होता है जिसे देखकर कोई भी व्यक्ति अचम्भे से भयभीत हुए बिना और मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।

जीव विज्ञानियों के मन में इस विषय में बहुत ज्यादा मतभेद बना हुआ है कि इन रोशनियों का उनके पैदा करने वाले हर अलग अलग प्राणी के लिए क्या महत्त्व है और इस विषय में भी कि समुद्री जन्तुओं के जीवन में सामान्यतः जीव-संदीप्ति का क्या महत्त्व है। प्रकाश और दृष्टि के बीच कोई सह सम्बन्ध होना नहीं जान पड़ता। कुछ जीवों में सुविकसित आंख तो है लेकिन अंधेरे में देख सकने के लिए प्रकाश नहीं है। अन्य में प्रकाश अंग मौजूद हैं लेकिन आंख नहीं है। किन्तु एक विलक्षण वर्ग ऐसा है जिसमें प्रकाश का निश्चित उद्देश्य होने के बारे में कोई सन्देह नहीं।

मछली मार मछली

वंसी मछली की पीठ पर बने कांटों में से एक कांटा बढ़कर एक लम्बी, पतली छड़ बन गया है जो ठीक मुंह के ऊपर तक पहुंचती है। इस कांटे के

अंतिम सिरे पर एक लालटेन जैसा अंग बना होता है (**चित्र ८२**)। इस वंशी मछली में कुछ ग्रंथियाँ होती हैं जिनकी सहायता से वह इस प्रकाश को रोक देती या चालू कर देती है या उसमें कम्पन सा पैदा कर सकती है ताकि उस ओर और अधिक ध्यान आकर्षित हो सके। जैसे ही कोई जिज्ञासु जीव इसे अपना होने वाला आहार समझ कर अपने स्पर्शकों, शृंगिकाओं अथवा थूथन से इसको परखता है कि छड़ पीछे को हट जाती है और एक विशाल, दाँतों से भरा हुआ मुँह खुल जाता है और मुँह के भीतर की जगह को भरने के लिए तेजी से भीतर जाते हुए पानी के साथ साथ शिकार भी अन्दर पहुँच जाता है।

गहरे समुद्र की वंशी मछली का एक सम्बन्धी सारगैसम के बीच में रहता पाया जाता है। इस मछली के शरीर के किनारे किनारे पत्ते-जैसे प्रवर्ध निकले होते हैं और इसकी सतह पर ऐसे चित्तीदार धब्बे बने होते हैं कि इसे अपने परिवेश में अलग पहचानना लगभग असम्भव सा हो जाता है (इस अध्याय के प्रारम्भ में दिए गए चित्र को देखिए)। लम्बे और मोटे जो सकल बाड़ काँटे के अन्तिम सिरे पर एक मांसल कृमि सरीखा चारा होता है जो कि सतह के पास भी उतना ही कारगर होता है जितना कि गहरे समुद्र में प्रकाश होता है। जब यह जीव मछलियों का शिकार नहीं करता होता तो उसका छड़ सिर के ऊपर मोड़ ली जाती है और चारा कुंडलित करके एक छोटे से खोखल में रख लिया जाता है।

केन्द्रीय अमरीका के पश्चिमी तट के पार ११८०० फुट की गहराई पर मछलियाँ पकड़ते समय गैलथिया के वैज्ञानिकों ने अपने ही किस्म की एक बहुत अजीब वंशी मछली पकड़ी। 'यह काले रंग का और चौड़े मुँह वाला जीव था जिसकी कुल लम्बाई लगभग डेढ़ फुट थी। इसके मुँह के भीतर एक बड़ा द्विभाजित प्रकाश अंग बना होता है जो ऊपरी जबड़े में किनारे किनारे लगे नुकीले और मुड़े हुए दाँतों के पीछे छत से लटका रहता है।' गम्भीर-सागर का यह वंशी जीव वंशी मछली की सभी अन्य किस्म के वंशी जीवों से इतना अधिक भिन्न होता है कि इस खोज-यात्रा के जहाज के तथा खोज यात्रा की कमेटी के अध्यक्ष डेनमार्क के प्रिंस एक्सेल के नाम पर नया भारी भरकम नाम **गैलैथीयथौमा एक्सेलाई** (Galatheathauma axeli) दिया गया (**चित्र ८३**)।

छह मील नीचे

सन १९५१ की २२ जुलाई के प्रभात होने से तनिक पूर्व गैलथिया ने खड़ी ढलान वाली दीवारों तथा चपटी तली वाली फिलिपीन ट्रेंच में—जो कि फिलिपीन द्वीपों के ठीक पश्चिम में स्थित है—अपनी समुद्र यात्रा के दौरान

का सबसे अधिक गहरा ट्राल डाला । पूरे का पूरा ८१ मील लम्बा भारी तार समुद्र में छोड़ा गया जिसके निचले सिरे पर तब तक का सबसे गहरे जल में गिराया गया सबसे बड़ा ट्राल था। जाल को ३३ ३/४ फुट नीची चपटी तली पर पूरे ११० मिनट तक घसीटा गया। इस खोज यात्रा के नेता डा० ऐंटन
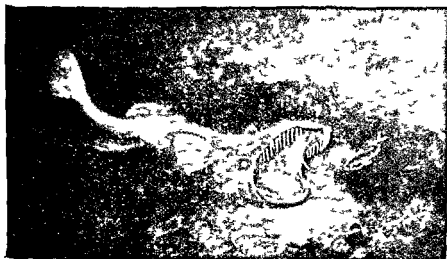
चित्र ४३ गलथिऐथौमा ऐक्सेलाई—नई खोजी गई वंसी मछली, जिसे यह नाम एक जहाज और एक शहजादे के नाम पर दिया गया है। द्विशाखित प्रकाश शिकार को ललचा कर मुड़े हुए दांतों से भरे मुख में ले जाता है।

एफ ब्रुन ने इस क्रिया की तुलना करते हुए कहा कि 'मानो यह छह मील ऊपर उड़ते हुए हवाई जहाज द्वारा योजमाइट वैली में एक जाल खींचने के समान था और वह भी इस तरह से कि इस घाटी की पथरीली दीवारों में फंसकर जाल फट न जाए ।

जाल को छह मील से अधिक जल में से ऊपर खींच लेकर लाने में कई घंटों का समय लगा। जिस समय जाल ने पानी की सतह को चीरा उस समय जहाज के हर व्यक्ति की उत्तेजना का ठिकाना न था। हर व्यक्ति जो भी अपना काम छोड़ सकता था जाल की तरफ पहुंच गया। इस तरह उत्सुक भीड़ ने वह दृश्य देखा जब कि विज्ञानी गण ने अपनी अधीर उंगलियों से जाल की डोरियां ढीली कीं और उसके भीतर के पदार्थों को पहले से तैयार रखी गई बाल्टियों में भरना शुरू किया। कीचड़ और रोड़ों के साथ-साथ एक सफेद समुद्री एनीमोन विभिन्न समुद्री कुकुम्बर सीपिया जैसे जीव एक क्रस्टेशियन और एक शूक-

कृमि बाहर आ गिरे--३०,००० फुट से अधिक की गहराई से प्राप्त किए जाने वाले ये सबसे पहले जीव थे। वह एनीमोन जतुओ के एक ऐसे विल्कुल नए कुल का सदस्य था जिसके प्राणियो को मनुष्य ने पहले कभी नहीं देखा था।

उस दौरान सबसे गहरा गभीर मापन ३५,६३९ फुट था, और डा० ब्रुन ने घोषणा की कि "अब ऐसा मानने के लिए कोई तर्कशुद्ध आधार नही है कि जीव-सृष्टि कुल सौ मीटर और नीचे पहुच कर मारियाना ट्रेंच की गहराई के नए रिकार्ड १०८६३ मीटर (पौने सात मील) तक नहीं पाई जा सकती, बशर्ते कि वहा पर भी पर्याप्त ऑक्सीजन हो।" (अध्याय १२ देखिए)।

समुद्र मे हर तीस फुट की गहराई पर १५ पाड प्रति वर्ग इच की दर से दाब मे वृद्धि होती जाती है। अत फिलिपीन ट्रेंच की तली मे जन्तु के शरीर पर सात टन प्रति वर्ग इच से भी अधिक दाब पडती है। अपने ऊपर इतने अधिक भारी दवाव को सहन करते हुए कोमल जन्तु इसलिए जीवित रह पाते हैं क्योकि उनके ऊतको मे बहने वाला द्रव भी उतनी ही दाब का होता है जितना कि बाहरी जल। इसके परिणामस्वरूप इन जतुओ के भीतर और बाहर एक-सी ही दशा होती है और इसलिए उन्हे अपने ऊपर कोई वजन दवाव डालता हुआ महसूस नही होता। इसका यह अर्थ नहीं है कि जन्तु को इस प्रकार के जीवन के लिए अपने आपको ढालना नही पडता है। निश्चय ही इन जन्तुओ मे अनुकूलन होता है यह बात इस तथ्य से प्रदर्शित होती है कि **गलथिया** द्वारा ऊपर लाए गए बक्टीरिया मे अधिक तीव्र जनन तथा मदीप्ति केवल तभी होती पाई गई जब उन्हे प्रयोगशाला परिस्थितियो मे लगभग उतनी ही दाब पर ले आया गया जितनी कि उन गहराइयो पर पाई जाती थी जहा से वे प्राप्त किए गए थे।

एक बार ट्रेंचो के जीवन के वास्ते अनुकूलित हो जाने के बाद कोई जन्तु इतनी प्राप्त ऊचाई तक उठकर नही आ सकता कि वह उन ट्रेंचो को हमेशा के लिए छोड दे। ट्रेंचो के ये जतु ठीक उसी तरह अलग अलग रहते हैं जैसे कि वे किसी टापू पर अथवा किसी ऊची पर्वतीय चोटी पर रह रहे हो, और वे समुद्र के अन्य जीवो से पृथक रहते हुए जीवित रहते तथा परिवर्धित होते हैं। अत जो जतु **गलथिया** के विज्ञानियो ने विभिन्न ट्रेंचो से पकडे थे वे एक-दूसरे से भी भिन्न थे और सागर के उच्चतर समतलो पर पाए जाने वाले उनके सम्बन्धियो से भी भिन्न थे।

हर जतु हर दाब के लिए अपने आपको नही ढाल सकता। कुछ जतु जैसे समुद्री अर्चिन, और कुछ कृमि ज्वार रेखा से लेकर १६,००० फुट की गहराई तक पाए जाते है किन्तु अधिकतर प्राणी--और खासकर मछलियां--कुछ

विशिष्ट गहराइयों के बीच ही सीमित रहते हैं। अधिक गहराइयों में पाई जाने वाली मछलियां सामान्यतः सतह पर नहीं आ सकतीं। सतह की मछलियां कितनी गहराइयों तक जा सकती हैं—इसकी भी सीमा है और बीच के क्षेत्रों की मछलियां सहन किए जा सकने वाले दाब के द्वारा निश्चित या प्रकाश समतलों तक ही सीमित रहती हैं। इन सीमाओं के बीच में वे एक समायोजनशील उत्प्लाविका अथवा गैस से भरी तरण थैली के द्वारा—जो कि ठीक उनके मेरुदंड के नीचे स्थित रहती है—अपने आप को ऊपर नीचे ले जा सकती हैं। जब कोई मछली नीचे को तैरती जाती है तो बाहरी दाब के कारण थैली में गैस सिचकर बाहर निकल जाती है जिससे मछली का आभासी भार बढ़ जाता है (अर्थात उत्प्लावकता घट जाती है)। जब मछली ऊपर की ओर आती है तो थैली में अतिरिक्त गैस का स्राव किया जाता है और जंतु का भार हटाए जाने वाले जल के भार के बराबर हो जाता है। इस प्रकार यथावत भार-हीन होकर मछली सुगमतापूर्वक और बड़ी सुगमता के साथ नए समतल पर तैरने लगती है।

जब कोई मछली अधिक गहराइयों से सतह की ओर बहुत तेजी से लाई जाती है जैसे कि जाल के द्वारा तो उसके शरीर के बाहर की दाब में अचानक कमी आ जाने पर थैली के भीतर की गैस इतनी तेजी से फैल जा सकती है कि उससे मछली का ही विस्फोट हो जाए। अन्य अवसरों पर जब मछलियां सतह पर आती हैं तो 'उनकी आंखें सिरों से फूट कर बाहर आ गई होती हैं उनके शल्क उखड़ गए होते हैं या शरीर के अन्य भागों में भारी विकृति आ गई होती है।' गहरे जल की अनेक मछलियों में क्रम विकास के दौरान थैलियां समाप्त हो गई हैं।

किसी समय ऐसा आमतौर से विश्वास किया जाता था कि दाब के द्वारा संपीडित होकर गहरा समुद्र एक चिपचिपा गाद जैसा पदार्थ बन जाता है जो कि गहराइयों में हर स्तर पर मनुष्यों और जहाजों को हमेशा तैराता रहता है। चैलेंजर के नाविकों को इस बात की चिंता लगी रहती थी कि उनका कोई मृत साथी 'जिसे दफनाने' के लिए उसके पैरों में शाट बांध कर ठीक तल तक पहुंचाने का प्रयत्न किया जाता था, क्या वह वहां तक पहुंच पाएगा या नहीं, या वह 'अपना स्तर ढूंढ लेगा और वहीं पर सदा सदा के लिए तैरता रहेगा?' वास्तव में सबसे अधिक दाब वाले स्थानों पर भी जल का संपीडन बहुत ही कम होता है और जैसा कि जान मरे ने अपने नाविकों की जिज्ञासा का उत्तर देते हुए ठीक ही कहा था, जो कोई भी चीज एक गिलास के जल में

तली तक डूब सकती है वह व्यवहारतः गहरे-से-गहरे महासागर की तली तक डूब जाएगी।

महासागर की तली पर पाया जाने वाला जीवन

तली में रहने वाले प्राणियों के लिए जो वस्तुएं भोजन में योग देती हैं उनमें ये सब शामिल हैं : ऊपर से नीचे गिरते जाने वाले मृत जीव और उनके उत्सर्गी पदार्थ, तल-जीवी जन्तुओं का (तथा उथले जल में पौधों का) विघटन, बैक्टीरिया, जल में घुला हुआ कार्बनिक पदार्थ तथा थल से बहकर आया हुआ पदार्थ। तल के रहने वाले जीवों में अनिवार्यतः दो प्रकार के जन्तु होते हैं : एक तो वे जो पौधों की तरह स्थायी तौर पर चिपके रहते हैं, और दूसरे वे जो समुद्र के फर्श पर चलते या रेंगते रहते हुए नम निक्षेपक में अपना आहार टटोलते रहते हैं।

चलने फिरने वाले तलवासी जीवों के आहार-स्वभाव में अन्तर पाए जाते हैं। समुद्री-खीरे, जो कि गलथियों के द्वारा में पकड़े गए सबसे आम जन्तु थे, बहुत सारी मिट्टी खाते हैं और उसमें जो कुछ भी पाचनशील पदार्थ होता है उससे पोषण प्राप्त करते हैं। ऐसा हिसाब लगाया गया है कि इनमें से कुछ जन्तु प्रति वर्ग गज आहार भूमि के हिसाब से १५ पाउंड मिट्टी प्रति वर्ष अपने शरीर में से निकालते हैं। बरमूडा के पास दो मील वर्ग क्षेत्रफल में आहार करने वाले समुद्री खीरों द्वारा खाई जाने वाली मिट्टी प्रतिवर्ष ५०० और १,००० टन के बीच होती है। उनके अन्त्रीय आमाशय रस लगभग हर कार्बनिक पदार्थ को पचा लेते हैं, अपचनीय मिट्टी केवल विष्ठा के रूप में बाहर निकाल दी जाती है। ब्रिटल-स्टार कीचड़ में दबे पड़े रहते हैं और अपनी भुजाओं को फैला कर तली की सतह के अवपंक में छुपाए रहते हैं—इसी अवपंक को वे भीतर ले जाते और अपने मुख में पहुंचाते जाते हैं। उथले जल में, शक्तिशाली चूषकों से युक्त स्टार फिशें कम्मों और सीपियों के कवचों को खोलकर भीतरी नम जन्तु को खा जाती हैं। एक स्टार फिश एक दिन में पांच या छह कम्मों को खा जाती है और बहुत सी संख्या में होने पर उन्होंने उत्पादनशील कस्तूरा क्षेत्रों को बरबाद किया है।

कम्मे तथा अन्य दो कवच वाले जन्तु मिट्टी में घुस जाया करते हैं और अपने लम्बे साइफनों को फैला कर अवपंक भीतर ले जाते हैं। कुछ कृमि मिट्टी में बिल बनाते हैं और खोदने की क्रिया में जो कुछ बीच में आता है उस सबको बिना भेद किए के निगलते जाते हैं और जो कुछ भी पाचनशील पदार्थ उसमें मौजूद होता है उसका उपयोग कर लेते हैं। **यूरेक्सि** (Urechis)

नामक एक कृमि 'U' की आकृति का बिल बनाता है और फिर 'U' की एक भुजा में श्लेष्म के एक कीपनुमा पिंड का स्राव करता है। कीप का चौडा सिरा बिल की दीवारों से कसकर चिपक जाता है और उसका सकीर्ण सिरा एक कालर के रूप में पूर्ण जन्तु को घेरे रहता है। यूरेकिस अपने बिल में से पानी पम्प करता है और जैव कण, छोटे-छोटे जन्तुओ तथा बैक्टीरिया को श्लेष्म में फासता जाता है। जब कीप हट जाती है तो कृमि कालर को उतार देता है और उसे काट काट कर आगे बढ़ता जाता है और इस तरह श्लेष्म और उसमें लदे पोषण को खाता जाता है।

अधिक बडे तलवासी—जैसे कि नेत्रहीन हर्मिट केकडे, लाब्स्टर (उथले जल में), कुछ कृमि और समुद्री एनीमोन कीचड खाने वाले प्राणियों का आहार करते है। स्वयं इनको ब्राटयूलिड, रैट-टेल स्क्विड और उथले जल में प्लेस फलाउंडर, हलिबट, कॉड क्रोकर, स्टिंग एवं मोटा रे मछलियां तथा अन्य तलवासी मछलियां खाती है।

अनेक व्यक्तियों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि स्पंज भी एक जन्तु है। यह जन्तु विकास में प्रोटोजोआओ से अगली ऊंची श्रेणी में आता है। यह विभिन्न प्रकार की कोशिकाओ का बना होता है और ये कोशिकाए स्पंज को जीवित रखने के लिए आपस में कार्य का विभाजन कर लेती है। कुछ कोशिकाए आहार और आक्सीजन प्राप्त करती है, अन्य कोशिकाए 'त्वचा' को बनाने वाली परतो का निर्माण करती है और कुछ अन्य कोशिकाए मांस के रूप में कार्य करती है। सामान्य बाथ-स्पंज उथले जल के एक खास जन्तु का कंकाल होता है। गहरे जल के चिपके हुए जन्तुओ में ही 'कांच स्पंज' भी है—जो कि सिलिकामय कंकालों से युक्त स्पंज होते है और ये कंकाल तीन या चार फुट तक मोटे हो जाते है और भीतर को गाडे गए घास के पूले जैसे दिखाई देते है। (चित्र ६८)।

तली से स्थायी तौर पर जुडे हुए जन्तुओं में ये भी शामिल है ब्रायोजोअन अथवा काई जन्तु, समुद्री स्क्वर्ट (इस अध्याय के प्रारम्भ में दिया गया चित्र देखिए), गहरे समुद्र के बार्नेकल पालिप और लम्बी शाखाओ वाले समुद्री-लिली। ये जन्तु अपने कडे, रज्जुनुमा वृन्तो द्वारा अथवा कांच-स्पंजो के मामले में दृढ रस्सीनुमा कांटों के रूप में ऐंठे हुए सिलिका के सूत्रो द्वारा जमीन में गडे रहते है। इस व्यवस्था में वे नर्म सिधुपंक से काफी ऊपर उठे रहते है और उनके आहार अग उस कीचड से साफ बचे रह जाते है जो कि वहां चलने और रेंगने वाले जन्तुओ के द्वारा उठ जाती है। चाहे कितनी भी गहराई क्यों न हो समुद्र का जल सदा गतिशील रहता है, जिसके फलस्वरूप ये जन्तु सदा

निलम्बित आहार कणा एव घुला हुड आक्सीजन म डूब रहत ह । स्थिर जन्तु महासागर म ही रह सकत ह जब कि नदियो मे अथवा झीलो क समान अल्वण जल राशियो म व नही रह सकत—इसका एक तो यही कारण ह जो अभी-

चित्र ४४ काच स्पज (हायलोनीमा) एक दढ, रस्सी जसे व त के द्वारा समुद्र की तल। से जुडा रहता ह, और उसमें सिलिकामय सुइयो का कवाल होता ह, जिनमें से कुछ एक फुट तक लम्बी हो सकती हैं ।

अभी बताया गया ह और दूसरा इसलिए कि वहा धाराए तेज नही होती और प्रकाश, लवणता तथा ताप मे एकदम बहुत ज्यादा परिवतन नही हो जात । इन परिस्थितियो का योग महासागर का ही विभेदक लक्षण है आर इसी के द्वारा स्थायी रूप म चिपके हुए उन जतुओ की ब डी-ब डी समष्टियो का विकास हुआ ह जो कि ज्वार रेखा से लेकर गभीरटचो तक पूरे रास्त पाए जात हैं।

अब तक की मिली सबसे गहरी मछली

फिलिपीन से चलकर गलथिया खोज यात्रा बोनियो तथा दक्षिण मुडा दृच का ओर ब ढी जो कि जावा आर सुमात्रा के दक्षिण म एक चाडा वक्र बनाती है। यहा उद्रोन २३ ००० फुट गहरे जल म टाल डालकर एक ही बार म ३,००० समुद्री खीरे ८० समुद्री एनीमोन वाले प्रवाल स्टार फिश क्रस्टेशियन, कृमि, घोघे आर अय जीव प्राप्त किए । गहर जल म डाला गया यह सबसे ज्यादा
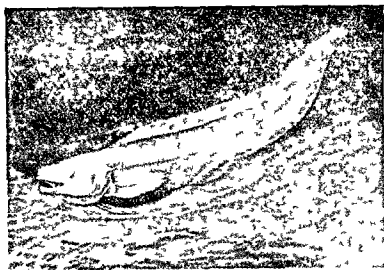
चित्र ४५ बसोजाइगस । यह मछली पूर्वी द्वीप समूह के पार २३,००० फुट की गहराई से प्राप्त की गई थी, जो कि अभी तक कभी भी पकड़ी जाने वाली मछलियों में से सबसे अधिक गहराई से पकड़ी जाने वाली है।

भरपूर टाल था। इन निम्नतर जन्तुओं के अतिरिक्त एक ७ इंच लम्बा ब्राटुलिड प्राणी २३ ४०० फुट की गहराई में प्राप्त किया गया। **गलथिया** खोज यात्रा पर प्राप्त की गई मछलियों में यह सबसे बड़ी मछली थी जो तब तक की जानी हुई मछलियों में से ३ ६०० फुट और ज्यादा गहराई से प्राप्त की गई थी। आज भी समुद्र से प्राप्त की जाने वाली सबसे गहरी मछली यही रही है। (**चित्र ४५**)।

गलथिया के तेज प्रोपेलरों ने ८½ करोड़ बार चक्कर खाए इसके बाद और उस जहाज को [illegible]३ ३०० मील की यात्रा—अर्थात पूरी पृथ्वी की परिक्रमा का लगभग ढाई गुना फासला—तय कराकर जहाज को १७ जुलाई १९५२ को वापस कोपेनहेगन पहुँचाया। दो वर्ष के सफलतापूर्वक टाल डालने और समुद्री जीवों को पकड़ने के दौरान सतह पर ऐसे ऐसे जन्तु लाए गए जिन्हें इससे पहले मानव ने कभी नहीं देखा था। इसके दौरान एक ऐसे वर्ग का जीवित प्राणी खोजा गया जो [illegible] करोड़ वर्ष पूर्व में विलुप्त हो गया हुआ माना जाता था तथा जीवन के पाए जाने की ज्ञात सीमाएँ डेढ़ मील और अधिक गहराई में पहुँच गए। इस खोजयात्रा ने यह सिद्ध कर दिखाया कि अधिक से अधिक गहराइयों में भी जीवन मौजूद है और वहाँ एक ऐसी आश्चर्य मुग्ध कर देने वाली जीव-सृष्टि पाई जाती है जो गंभीर सागर के पर्यावरण को बनाने वाले तमाम कठोर और हमारे स्वयं के अनुसार असाधारण परिस्थितियों के लिए अनुकूलित हो गई है।

८

लहरें अथवा "जलकन्याएँ"

"ओ गहरे-गहरे, नील वर्ण के सागर !
लहरा, लहरा, लहराता रह ।"—बाइरन

जनवरी, १९२८ में तीन मस्तूल वाले स्कूनर वेमा ने अपना १४००० वर्ग फुट का पाल वायु के सम्मुख खोला और न्यूयार्क से दक्षिण दिशा में चल पड़ा। यह २०२ फुट का स्कूनर जो उस समय समुद्र विज्ञान की सेवा में कार्य करने वाला सबसे बड़ा पोत था, मुड़ी हुई मेंढ़ में घूम कर खूब उछाल भरते समुद्र में पहुंचा। १९२३ में एक याट के रूप में बनाया गया यह पोत, वायु-वेग के कारण कैनवस के भार से बाजू में इतना ज्यादा झुक गया कि उसका किनारा करीब करीब जल में छूने लगा। जब यान तरंग द्रोणियों में होता तो उसके वाम-पार्श्व में लगी खिड़कियों से भरता हुआ जल डेक पर पहुंच जाता और जब तक तरंग शृंगों पर होता तो उन्हीं छिद्रों से निकलता और धातु के बने ढांचे पर से बहता हुआ जल वापस समुद्र में पहुंच जाता।

इस नौका वेमा को १९५३ में कोलम्बिया विश्वविद्यालय की लमांट भू वैज्ञानिक वेधशाला ने प्राप्त किया था। इसमें ८०० हार्सपावर का डीजल इंजन लगा है और इसमें इतनी क्षमता है कि यह ३५ विज्ञानियों और नाविकों को हर महासागर में हर मौसम में पार करा सकता है। इस विशिष्ट समुद्र-यात्रा के दौरान मौसम खराब था। दक्षिण की ओर जाते हुए तमाम रास्ते यह भी इस स्कूनर का पीछा करती रही। हैटेरास अंतरीप के पास समुद्र बहुत ज्यादा

चित्र ४६ "डाक"—प्रोफेसर डब्ल्यू० मौरिस एविंग

फोटो कोलम्बिया विश्वविद्यालय

चित्र ४७ वेमा। सन १९२३ में एक याट के रूप में बनाया गया यह २०० फुट लम्बा स्कूनर १९५३ से अमरीकी अनुसंधान बेडे में निजी सम्पत्ति के रूप में सबसे बडा पोत है। इसे कोलम्बिया विश्वविद्यालय की लमाॅट भू-वैज्ञानिक वेधशाला चलाती है।
फोटो कोलम्बिया विश्वविद्यालय

१३ जनवरी की उस सवेर जब कि टीक की लकड़ी के बने डेक हाउस में काफी पानी पहुंचता जा रहा था डॉ॰ बेमा की स्थिति की पड़ताल के लिए चार्ट हाउस की तरफ चल पड़ा। जैसे ही वह डेक पार कर जहाज के अगले भाग की ओर पहुंचा कि तल में भरे चार जेन्वे ड्रम बंधन से खुल कर डेक पर लुढ़कने लगे। उस समय बेमा में आग में पीछे की दिशा में बहुत जबर्दस्त हिचकोले लग रहे थे। लुढ़कते हुए ये ड्रम—जिनमें से प्रत्येक का वजन ५०० पाउंड था—जहाज में टक्कर मार मार कर ऐसी दरार पैदा कर देने के लिए पर्याप्त थे कि जहाज डूब जाता।

डॉक ने अपने भाई जान को—जो कि उसी जहाज पर एक सिपाही था—तथा चार्ली विकी व माइक ब्राऊन नामक दो मेटों को आवाज लगाई। इन चारों लोगों ने उस फिसलन वाले और उछाल खाते हुए डेक पर बड़े परिश्रम से किसी तरह उन ड्रमों को पकड़ लिया और खींचतान कर उन्हें वापस उनके स्थान पर ले आए। वे उन्हें अभी बांध ही रहे थे कि बेमा को अगला सिरा एक ३५ फुट ऊंची लहर के लपेट में आ गया। बढ़ती आती हुई इस लहर पर चारों में से किसी भी व्यक्ति की निगाह नहीं पड़ी। लहर डेक के ऊपर से बहती हुई निकल गई और उन्हें भी अपने साथ तेजी से बहाकर समुद्र में ले गई।

डाक एक डेक फिटिंग पर जा गिरा और फिर वहां से पानी उसे जहाज की बाजू पर से बहाकर ले गया। जब अचानक अवस्था में वह तैरते हुए ऊपर आ रहा था और जब वह एक बार सतह पर पहुंच ही गया तो उसके फेफड़ों में पानी भर चुका था। पुनः सांस प्राप्त करने के लिए जब वह सांस जोर से हांफ रहा था तो उसने अपने समीप ही जल में अपने तीन साथियों को देखा।

मेटों में से हर एक एक एक खाली ड्रम को पकड़े था और जान एविंग जहाज से लटकती हुई एक डोरी पकड़ने के लिए तैर रहा था। डाक को मालूम था कि जहाज इतनी तेजी से जा रहा था कि अगर उसका भाई डोरी तक पहुंच भी गया तो उसे पकड़ नहीं सकेगा।

डाक की बात सही निकली। जानी ने डोरी पकड़ी लेकिन फौरन ही उसकी रगड़ से उसके हाथ जल गए। जानी ने क्षण भर के लिए अपना सांस रोका डोरी छोड़ दी और पास ही में तिरती हुई एक लम्बी सीढ़ी की तरफ तैरता हुआ लपका।

डाक ने तेल के एक खाली ड्रम की ओर तैरने की कोशिश की किन्तु उसके फेफड़े अभी भी पानी से भरे थे और उसके भारी पैर उसे नीचे को खींच रहे थे। बड़ी कोशिश के साथ उसने किसी तरह अपना एक जूता उतार फेंका।

जूते को तली तक पहुंचने में तीन मील की गहराई तय करनी पड़ी। डाक का कहना है कि उसे अपना वह विस्मय याद आ जाता है कि इतना रास्ता तय करने में कितना समय लगा होगा। उसने समुद्र की तली के अनेक छोर फाड़ा लिए थे और उसे विचार आया कि वहां पर बैठा हुआ जूता कितना अजीब लग रहा होगा।

जैसे ही उसने अपना दूसरा जूता और पट उतारे तो उसे एक पुकार सुनाई दी डाक डाक! बचाओ! बचाओ! मेरी जान बचाओ।" यह आवाज प्रथम मेट चार्ली किर्री की थी।

डाक ने उसको देखने की कोशिश की लेकिन उसे सिर्फ उड़ती हुई फुहार तथा ऊंची भारी भारी लहरें ही दिखाई दीं। वह यह भी नहीं बता सकता था कि आवाज किस दिशा से आई थी। उसने तरने की कोशिश की, लेकिन उसकी कमर में चोट आ चुकी थी और वह तैर सकने में सफल नहीं हुआ।

मदद के लिए दुबारा आवाज आई। उसमें पहले खांसी थी फिर गला रुंधा हुआ था और फिर कराहट आ रही थी—और फिर वह समाप्त हो गई।

डाक ने बड़ी बेचैनी से इधर उधर देखा लेकिन कहीं कुछ न दिखाई दिया—केवल वे भयानक ऊंची लहरें ही थीं।

उधर **बेमा** पर सवार कप्तान डानल्ड गाल्ड ने—जो कि रुटजर्स विश्व विद्यालय का एक प्रोफेसर था—चीख कर स्कूनर को उलटा घुमाने का आदेश दिया। उसने हवा और फुहार में आखें गडाते हुए देखने की कोशिश की, मगर कुछ नजर न आया। कप्तान सकसरे ने जो कि सेलिंग मास्टर था, स्टीयरिंग व्हील सम्भाला और गाल्ड पाल की बल्लियों की ओर लपका। एक मस्तूल की चोटी पर चढ़कर उसने देखा कि तीन आदमी जल में हैं और सकसर को उसी ओर जहाज घुमाने का संकेत किया।

वे जॉनी तक पहुंच गए और उसे खींच कर जहाज पर चढ़ा लिया।

डाक ने **बेमा** को मुड़ते और फिर रुकते देखा। लेकिन उसने सोचा कि शायद ऐसा होने का कारण उसका दोषी स्टीयरिंग-गीयर रहा होगा जो उससे दो रोज पहले ही टूट गया था। उसने सोचा कि अब उसका अन्तिम समय आ ही गया।

स्कूनर लगभग आधा मील दूर था। डाक को उसकी तभी कुछ थोड़ी सी झलक मिलती थी जब वह स्वयं किसी लहर के शृंग पर उठ जाता था और उसके बाद लहर उसे पार कर जाती और वह तरंग द्रोणी में पहुंच जाता। उसने देखा कि जहाज फिर से चलने लगा था लेकिन वह नहीं समझता था कि जब तक जहाज उसके समीप तक पहुंचेगा तब तक वह बचा रहेगा।

वेमा अचानक आर दूर खिसक गया। हवा उल्टी थी और वह जल म डूबे इन व्यक्तियो के पास तक नही आ सकता था। कप्तान गारड आर कप्तान मैकमर का जहाज मोड कर एक दूसर चक्करदार रास्त म आना पडा।

डाक ने तैरन का प्रयत्न करना छाड दिया था। वह पीठ क बल उल्टा हो गया और उतराने का प्रयत्न करन लगा। वह बहुत बहुत सा सास अन्दर खीच कर राक लता लेकिन लहर उसक ऊपर टूट-टूट कर आती आर उस बार बार लुडकइया खिलाती जाती। वह आर ज्यादा पानी पी गया और लगता था कि सब कुछ समाप्त होन वाला है।

मौरिस एविग के अपन सार प्रिय गणा का स्मति चित्र उसकी आखा के सामने आ गया—उसका परिवार, उसकी पत्नी और चार छोटे छोटे बच्चे। व सब उसे पुकार रह थ, और उसने उन्हें उत्तर दन का प्रयत्न किया। उसन अपनी सबसे छोटी पुत्री मैगी का देखा आर उसक पास पहुचन की कोशिश की।

उन्ही क्षणा म एक स्पष्ट आवाज उसके काना म पडी डाक मै इस बैरल को पकडे हू--अगर तुम इसका दूसरा सिरा पकड लो ता म और भी अच्छी तरह पकडे रहूगा। मार्क ब्राऊन न ढाल का डाक की तरफ धक्का दिया और डाक ने झट उसे दबोच लिया।

उसके बाद म दशा कुछ सुधरी।

गार्ड और मैकमर **वेमा** का चलाते चलाते ढोल तक ले आए। किसी न उनकी आर रस्सा फका और माइक न उसे गपच लिया। वह एक हाथ मे रस्सा पकडे था आर दूसर मे ढोल। नाविक दल न उन्ह जहाज तक खीच लिया।

वेमा अगल बगल हिचकोले खा रहा था और हर हिचकाले के साथ उसकी रेलिंग का ऊपरी सिरा जल के समीप पहुच जाता था। एक गहरा हिचकाला आया आर माइक न रेलिंग पर अपनी बाह डाल दी और **वेमा** ने उसे समुद्र म ऊपर उठा लिया।

उसी हिचकाले ने डाक का जल क भीतर धकेल दिया। जस ही वह नीच गया कि एक रस्सा भी उसके पास गडप से गिराया गया। अपनी आखिरी शक्ति लगाकर उसन उस दबोच लिया आर उस पर चिपके रहा।

ठीक उसी समय जब कि **वेमा** के लोगो न डाक की आर रस्सा फका था उसका स्टीयरिंग व्हील टूट गया। **वेमा** अपनी दिशा आदि मोड सकन म अब लाचार था। डाक के हाथ से अगर रस्सा छूट जाता ता फिर वह कभी भी ऊपर नहा आ सकता था अगर वह जहाज से दूर हट कर ऊपर आता ता जहाज उस तक नही जा सकता था।

इस प्रकार से एक दूसरे में बाधा डाल सकती, या संयुक्त हो सकती है कि उनकी ऊंचाई बढ़ जाए। इस तरह के लहर लगते जाने की क्रिया से महासागर में सबसे ऊंची लहर बन जाती है। इस प्रकार के एक 'जल राक्षस' की ऊंचाई बड़े ही रोचक ढंग से मापी गई थी।

७ फरवरी १९३३ को यू० एस० एस० रामापो एक ऐसे सागर के सामने दौड़ा जा रहा था जो ६० नाट वाली एक अल्पकालिक वर्षा वाली हवा के सामने अधिकांश उत्तर प्रशांत में तरंग-परास बन चुका था। आसमान में से बादल साफ हो चुके थे और बहुत सवेरे समुद्र पर चान्दनी फैली हुई थी। एक तरंग की गहरी

चित्र ४८ संयुक्त राज्य अमरीका का एक विध्वंसक पोत जो प्रशांत महासागर में इंधन लेते समय ऊंची ऊंची लहरों द्वारा टक्कर खा रहा है।

फोटो यू० एस० नेवी

तरंग द्रोणी में प्रहरी अफसर ने ब्रिज में खड़े होकर जहाज के पिछले भाग की ओर देखा। क्षितिज समाप्त हो गया था और उसे बस एक चीज़ ही दिखाई दी—जहाज़ की ओर बढ़ती हुई जल की एक काली दीवार। उसने सिर उठा कर ऊपर

का देखा तो तरग श्रृग मानो तारो को छूता दिखाई दिया। यह लहर उसके इतने करीब थी कि वह कुछ नही कर सकता था—बस अपनी जगह खडा रहा। जब यह लहर रामापो के ठीक पिछले भाग पर आ गई तो उसने देखा कि तरग श्रृग मस्तूल के ऊपर लगे हुए दूरदर्शी पिंजडे के समतल मे था।

उस अफसर को यह तरग ससार की सबसे ऊची तरग लगी होगी और वास्तव मे अभिलिखित लहरो मे यह सबसे ऊची थी। अगर वह जहाज को ऊपर उठाकर नीचे से निकल जाने की बजाए उससे टक्कर मारती तो वह अफसर उसकी ऊँचाई[1] का हिसाब लगाने के लिए कभी नही बचता। यह लहर ११२-**फुट**, यानी लगभग ११ मजिली इमारत की ऊचाई के बराबर थी।

लहरो की रचना

लहर किस प्रकार बनती है, इसकी वास्तव मे न तो नाविको को और न ही *विज्ञानियो को जानकारी है। मापना से पता चला है कि २$\frac{3}{4}$ मील प्रति घटा* से कम की रफ्तार से चलने वाली हवा द्वारा जल की सतह मे इतना पर्याप्त विक्षोभ नही हो पाता कि लहर बन सके। तथापि, यदि हवा बढ़कर २$\frac{1}{2}$ मील प्रति घटा अथवा उससे अधिक वेग से बहने लगती है तो तुरन्त ऊर्मिकाए बनने लगती है। *कदाचित इस रफ्तार वाली हवाए लगातार अथवा एक सीधी* रेखा मे नही चलती बल्कि उनके छोटे छोटे भवर बन जाते है। इनके कारण सतह के एक भाग मे दूसरे भाग की अपेक्षा अधिक घर्षण अथवा दाब पडती है जिसके कारण उसमे और भी अधिक छोटी छोटी ऊर्मिकाए बन जाती है।

एक बार सूक्ष्मतम लहरो के बन जाने के बाद, पवनविमुख दिशा के ढालो की अपेक्षा जिन पर तरग-श्रृगो का साया रहता है उनके पवनाभिमुख ढालो पर हवा और भी अधिक दबाव डालती है। इसके परिणामस्वरूप लहर और भी अधिक ऊची तथा शक्तिशाली होती जाएगी। तरग की लम्बाई (एक तरग-श्रृग से दूसरे तरग श्रृग तक की दूरी) जितनी ज्यादा होगी, वह उतनी ही अधिक तेजी से दौडती जाएगी और वह उतनी ही ज्यादा ऊची होती जाएगी क्योकि वह हवा मे अधिक ऊर्जा प्राप्त कर लेगी। सबसे लम्बी और सबसे तेज लहर छोटी लहरो पर प्रभावी हो जाएगी और वे हवा की गति से कुछ ही कम गति पर चलती

---

१ जहाज की नाप लम्बाई चौडाई और आगे निकल जाती हुई लहर पर जहाज के झुकाव के आधार पर साधारण ज्यामिति के द्वारा उस लहर की ऊचाई का हिसाब लगा लिया जा सकता है।

जाएगी। लहर तूफान का इसलिए पीछे छोड़ दे सकती हैं क्योंकि कुल मिलाकर जिस रफ्तार से झंझा या तूफान चलता है वह पवन की अधिकतम रफ्तार से कम होता है और इसलिए उस विक्षुब्ध क्षेत्र में लहरों की रफ्तार से भी कम होता है।

थल पर से लहरों को निहारने वाले किसी व्यक्ति को यह सहज ही भ्रम हो सकता है कि जल सहतियां स्वयं सतह पर सशरीर चली जा रही हैं। यदि ऐसा ही होता तो वह विपुल जलराशि—जो कि ११२ फुट ऊँची लहर में अथवा ४० फुट ऊंचे तरंग क्रम में निहित होती है—इतना अधिक जल को हटा देती और समुद्र में इतनी ज्यादा हलचल पैदा कर देता है कि नौचालन असम्भव
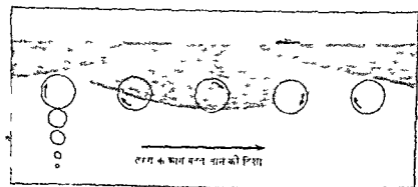
चित्र ४९ लहरें सतह पर जल राशियों को आगे नहीं खिसकातीं। जैसा कि इस आडा काट में दर्शाया गया है चलने वाली चीज लहर का स्वरूप है न कि जल। जल का प्रत्येक कण एक वृत्ताकार कक्ष में घूमता है, अर्थात तरंग शृंग में वह आगे और ऊपर की ओर चलता है तथा तरंग द्रोणी में नीचे और पीछे की ओर सरकता हुआ वहीं पहुंच जाता है जहां से चलना शुरू हुआ था। कक्षा का व्यास सतह पर लहर की ऊंचाई के बराबर होता है तथा गहराई के साथ साथ कक्षा तब तक छोटी होती जाती है जब तक कि लहर महसूस होनी समाप्त नहीं हो जाती।

हो जाता है। यदि कोई किसी नाव में तिरते हुए काक को या समुद्र में ऊपर-नीचे करती हुई किसी बोतल को देखे तो उसे फौरन यह अनुभव हो जाएगा कि आगे बढ़ती जाने वाली चीज जल नहीं बल्कि लहर का ऊर्मिल स्वरूप है। यथास्थित जल-कण जैसे कि काग अथवा बोतल ऊपर नीचे तथा आगे पीछे हिलते डुलते हैं लेकिन कोई खास आगे नहीं बढ़ते।

अगर आप एक मुट्ठी भर बारीक मिट्टी कुछ लहरों में फेंक दें और उसके निलम्बित कणों की गति पर गौर करें तो आप देखेंगे कि वे एक वृत्ताकार कक्ष में घूम रहे होते हैं[1]। तरंग द्रोणी की तली के नीचे प्रत्येक कण की गति पीछे को होती है तथा तरंग-शृंग पर आगे की ओर और जैसे-जैसे वह कण अगली द्रोणी में आने लगता है, तो वह नीचे और पीछे की ओर चलता जाता है। (**चित्र** ४९)। तरंग शृंग की चोटी के आगे निकल जाने के क्षण समस्त ऊंची लहर में फंसे हुए तमाम मिट्टी या जल के कण एक साथ आगे बढ़ते हैं। तरंग द्रोणी में आने पर वे फिर पीछे लौटते हैं, लेकिन तरंग आकृति के आगे बढ़ने की दिशा में बहुत थोड़ी सी शुद्ध प्रगति हो जाती है। धाराओं के अभाव में, वस्तुओं के बहाव का कारण **समुद्र की यही उछाल है** किंतु यह इतनी धीमी होती है कि नौचालन में इसका कोई व्यावहारिक महत्व नहीं है।

जब तक लहरों की पीठ पर हवाओं के थपेड़े लगते रहते हैं तब तक वे अनियमित और अधिक ढालू बनी रहती हैं। हवा के धक्के अथवा उसके घर्षण का खिंचाव महसूस करती हुई लहरों को सामूहिक रूप में अंग्रेजी में 'सी' कहते हैं—जैसे कि 'हाई-सी' (ऊंची तरंगें) "लो सी' (नीची तरंगें), "स्मूथ सी" (शांत सागर) अथवा "रफ सी" (विक्षुब्ध सागर)। किसी भी एक समय पर, सागर पर अकेले स्थिर पवन का प्रभाव न होकर प्राय विभिन्न दिशाओं और विभिन्न शक्ति की हवाओं का प्रभाव पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप "क्रास सी' ("आड़ा सागर') बन जाता है अथवा ऐसी लहरें बनने लगती हैं जो परस्पर घुल मिल जाती अथवा एक दूसरे का विरोध करती हुई समुद्र की सतह का एक अव्यवस्थित स्वरूप प्रस्तुत करती हैं।

जब हवा शान्त हो जाती है अथवा लहरें उसके प्रभाव-क्षेत्र से बाहर निकल जाती हैं तो उनकी ऊर्जा कम हो जाती है तथा आकृतियां बदल जाती हैं। उनकी ऊंचाई घट जाती है तथा तरंग शृंग अधिक गोल हो जाते हैं। आड़े-सागर समाप्त हो जाते हैं और तरंग शृंग पार्श्व में फैल फैलकर आधे मील या उससे ज्यादा चौड़े हो जाते हैं। तब समुद्र 'महा तरंग' ("Swell") में बदल जाता है।

महा-तरंगें प्राय एक अत्यंत व्यवस्थापूर्ण ढंग से चलती हैं जो कि जल में लम्बी लम्बी समातर पंक्तियों में बढ़ती जाती हैं। जब उनके मार्ग में कोई बाधा आती है अथवा वे ऐसे जल में पहुंच जाती हैं जो एक तरंग शृंग से दूसरे तरंग शृंग तक की दूरी से आधे से भी ज्यादा उथला होता है तब उनकी दिशा आकृति

---

१ कक्षा का व्यास लहर की ऊंचाई के बराबर होता है।

और रफ्तार भी घट जाती है। उथले जल में बढ़ते समय लहरों की तलियां समुद्र के फर्श के घर्षण के कारण धीमी पड़ जाती हैं। उनके पीछे आने वाली अन्य लहरें एक दूसरे के ऊपर आती जाती हैं और तरंग शृंगों के बीच की दूरियां कम हो जाती हैं। ऊर्जा का लहर की तली से उसकी चोटी की ओर स्थानान्तरण हो जाता है और तरंग शृंग तरंग द्रोणी की अपेक्षा अधिक तेज़ी से आगे बढ़ जाता है। इस क्रिया के कारण लहर अधिकाधिक ढालू होती जाती है और ऐसा तब तक होता जाता है जब तक कि वह अन्त में आगे की ओर गिर नहीं पड़ती, और भग्नोर्मि नहीं बन जाती। लहर तब विखण्डित होती है जब कि जल उथला होता जाता हुआ उसकी ऊंचाई से १.३ गुना रह जाता है।

पुलिन पर अथवा किसी जलमग्न चट्टान या तट पर ऊपर चढ़ती जाती हुई भग्नोर्मियों के अनवरत क्रम से फेनिल-तरंग उत्पन्न होती है। प्रवाल-भित्तियों और उथले जल पर विखण्डित अथवा विघटित होने वाली लहरें ही कभी कभी वह मात्र चेतावनी होती है जिसके द्वारा नाविक इन खतरों को जान जाते हैं। स्वयं भग्नोर्मियां भी भयानक हो सकती हैं—एक घनी फेनिल-तरंग में भारी विनाश की क्षमता होती है। भग्नोर्मि किसी वस्तु पर कितने बल से टक्कर मारती है यह उस वस्तु की आकृति पर निर्भर होगा। फेनिल तरंग में आड़ा पड़ा हुआ असहाय जहाज भग्नोर्मियों की टक्करों से टूट-टूटकर छोटी-छोटी खिप्पियां बन जा सकता है जब कि यदि उसका सामने वाला सिरा समुद्र की ओर हो तो वह बचा रह सकता है।

"मेरी मेन आफ मे"

कहानी-लेखक राबर्ट लुई स्टीवेंसन के पिता टामस स्टीवेंसन (Thomas Stevenson) उन सबसे पहले व्यक्तियों में से एक थे जिन्होंने भग्नोर्मियों द्वारा पड़ने वाले ज़ोर को मापा। उसने उन भग्नोर्मियों का अध्ययन किया जो कि उसकी मातृभूमि स्काटलैण्ड के तटों पर टक्कर मारती थीं और यह सिद्ध किया कि एक तीव्र तूफान के द्वारा चलाई जाने वाली २० फुट ऊंची लहर किसी वस्तु के प्रति वर्ग फुट पर ६,००० पौंड तक का दबाव डाल सकती है। इस बल का एक छोटा भाग भी—५०० पौंड प्रति फुट—जलरोधों में साथ-साथ लगाए गए [illegible] भारी चट्टान और कंक्रीट को खिसका देने के लिए पर्याप्त है।

दिसम्बर, १८७२ में एक तूफान के दौरान विक नामक स्थान पर स्काटलैण्ड के समुद्र तट पर पहुंचने वाली कुछ लहरों का तरंग परास लगभग सम्पूर्ण उत्तर अटलांटिक रहा था। जिस समय तूफान पूरे ज़ोर पर था वहां का स्थायी

इंजीनियर एक भग्न पर खड़ा होकर विक तरंगरोध में टक्कर मारने वाली ८० फुट तक ऊंची लहरों को ध्यान से देखने लगा। यह भारी भरकम निर्माण, जो कि ४५ फुट लम्बा था, कंक्रीट के टुकड़ों और बड़े बड़े गोलाश्मों से—जो बहुत ज्यादा यहां तक कि १९ ००० पाउंड वजन तक थे—बनाया गया था। इनको सीमेंट द्वारा परस्पर जोड़ कर नीचे के शैल मस्तरों से लोहे की छड़ों के द्वारा जकड़ दिया गया था। इस सब के बावजूद इंजीनियर ने देखते ही देखते वह नींव पर से उखाड़ दिया गया और समूचा उठा कर उसे तट की ओर के उस जल में ला गिराया गया जिसकी रक्षा के हेतु उसका निर्माण किया गया था।

इसके स्थान पर १,० लाख पाउंड वजन की एक नयी और कहीं अधिक भयावह रचना तैयार की गई। पांच वर्ष बाद, ६ ३८० पाउंड प्रति वर्ग फुट का दबाव डालने वाली लहरों ने इस दूसरे तरंग रोध को भी बहा दिया।

ऐसे और भी अनेक उदाहरणों के लिखित उल्लेख मिलते हैं जिनमें लहरों की ताकत और उनकी ताकत का परिचय मिलता है। हालैंड में ऐम्स्टडम बन्दरगाह के प्रवेश पर एक बार २० टन वजन के कंक्रीट-ब्लाक को सीधा खड़ा उठाकर उच्च जल चिह्न के ५ फुट ऊपर बने एक स्थान पर ला जमाया। फ्रांस स्थित चरबुर्ग में इंगलिश चैनल पर लहरों ने ७०१० पाउंड वजन के एक ब्लाक को २० फुट ऊंची दीवार के ऊपर से उछाल दिया।

लहरों द्वारा क्षति पहुंचने की एक सबसे हाल की घटना १५ जनवरी १९६१ की रात को घटी। हवा द्वारा चालित लहरों ने न्यूयार्क के ८० मील दक्षिण-पूर्व में अटलांटिक में बने एक वायु सुरक्षा राडर प्लेटफार्म, टेक्सास टावर नं० ४ को तोड़ डाला जिसमें २८ व्यक्तियों की जानें गई।

विशेष भग्नोर्मियों सागरों में वास्तविक लहरों की ऊंचाई और—जिस ऊंचाई तक जल की चादरों को उछाला जा सकता है—इन दोनों में काफी अंतर पाया जाता है। जब कोई भग्नोर्मिल तरंग श्रृंग तेजी से लिपटता जाता है तो उसके बीच में कभी कभी कुछ वायु बन्द हो जाती है। जैसे जैसे लपेट छोटा होता जाता है तो भीतर की वायु अधिकाधिक दबती जाती है और अन्त में एक तेज आवाज के साथ फूटकर बाहर आ जाती और जल की एक ऊंचा फुवारा-सा बना देती है।

राबर्ट स्टीवनसन ने—जो कि कहानी वाचक का बाबा था—अपना सारा जीवन स्काटलैंड के तूफानी समुद्र तट की नौ चालन के लिए सुरक्षापूर्ण बनाने में लगा दिया। भारी कठिनाइयों पर काबू पाते हुए उसने उस तट के एक खतरनाक स्थल बेल राक पर ११३ फुट ऊंचा एक प्रकाश-स्तम्भ बनाया।

नवम्बर मास के एक दिन जब हवा शान्त थी, अटलांटिक में से एक भारी महातरंग चढ़ता हुआ आया। यह वह राक पर आकर टकराया और विच्छिन्न होकर इसने जल की चादरों को इतना ऊंचा उछाला कि वे प्रकाश-स्तम्भ की चोटी
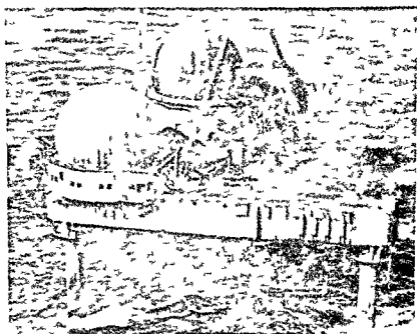
फोटो यू० एस० एयर फोर्स

चित्र ५० उन टेक्सास टावर राडर प्लेटफार्मों में से एक प्लेटफार्म, जो कि संयुक्त राज्य अमरीका के पूर्वी तट की ओर बढ़ते हुए शत्रु विमानों की पूर्व चेतावनी देने के लिए बनाए गए थे। न्यूयार्क के ८५ मील दक्षिण पूर्व में स्थित टेक्साम टावर न० ४, जनवरी, १९६१ में लहरों द्वारा नष्ट हो गया और २८ व्यक्तियों की जानें गई।

पर बने सुनहले गोल तक पहुंची। उसके साथ-साथ ही समुद्र से ८९ फुट की ऊंचाई पर लगाई हुई सहायक सीढ़ी अपने धारक से टूटकर अलग हो गई थी।

आरेगन के तट पर टिलामूक राक पर एक बार १३५ पौंड के पत्थर ने समुद्र-तल से ९० फुट ऊपर प्रकाश रखवार के घर की छत में सूराख कर दिया।

तीव्र पूर्वा झंझाओं में मसचुसेट की खाड़ी में स्थित मिनाट के शिला निक्षेप (Minot's Ledge) पर समग्राभिमुख लहर वहां पर बने ९० फुट ऊंचे प्रकाश

पूछा जाता है कि पनिर द्वारा स्थर की ओर — जाया जाने वाला तमाम जल कहा जाता है ? इसका उत्तर है कि यह घूमकर तट के समानर "तटवर्ती धाराओ के रूप म बहने लगता है और वही रहा पर पुलिनो का अपरदन करता जाता तथा कही कही पर जार जमाता हुआ नए पुलिनो का निर्माण करता जाता है। जब यह किसी एम स्थान पर पहुंच जाता है जहा समुद्र म से आने वाली लहर सबसे कमजोर होती हैं वहा वह पुन समुद्र म बह जाता है। कभी-कभी यह वापसी प्रवाह सकीर्ण तीव्र तरगिकाओ का रूप — ता है जो पुलिन से आधार मील या उससे कुछ कम या ज्यादा रा तक सतह के ऊपर या सतह के नीचे बहती जाती है। ये विशेष बीच बीच म आने रहने वाले प्रवाह दो या तीन मील प्रति घण्टा की चाल तक पहुच जाते है। स्नान करने वालो के लिए ये तरगिकाए एक सम्भव खतरा होती है और कदाचित सामान्यत पुकारे जाने वाले "अध प्रवाह का कारण यही है।

विनाशकारी तरगें

सामान्यत ज्वार-तरग कहलाने वाली 'तरगें' दो प्रकार की होती है। इनमे से किसी भी प्रकार की तरग" का ज्वारो से कोई सम्बन्ध नही होता और एक प्रकार तो यहा तक कि तरग भी नही होता। वे ज्वार तरग जो वास्तव मे तरग होती है अन्त समुद्री भूचालो म सम्बन्धित होती है, और जो तरगे नही होता वे भारी तूफानो म बनती है।

अन्त समुद्री भूचाल म समुद्र की सतह ऊपर नीचे डोलने लगती है और यह गति वहा से गुजरने हुए जहाज पर एक भीषण हिलन के रूप म महसूस होती है। यह हिलना इतना भीषण तक हो सकता है कि नाविक भ्रमवश आकर कह उठे कि जहाज किसी चट्टान म टकराया है। इसी के कारण नक्शे के चार्टो मे उन जलो का उथला दिखाया गया था जो बाद मे गभीर मापन के द्वारा कई हजार फुट गहर पाए गए। कभी-कभी अध समुद्री भूचालो अथवा ज्वालामुखी विस्फोटो के साथ साथ भारी मात्रा म गैस भी निकला करती है। इन गैसो के कारण समुद्र की सतह एक ऊची गुम्बद जसी उठ जाती है जो टूटने पर ठीक उसके ऊपर आ जाने वाले किसी भी अभागे जहाज को नष्ट कर देगा। निस्सन्देह वे अनेक जहाज जिनका गायब होना एक रहस्य बना रहा है ऐसे ही प्रचण्ड विभ्रमो के शिकार रहे है।

वे लहर जो यह तक पहुचती और सबसे अधिक विनाशकारी सिद्ध होती हैं झपपटी म दरारो अथवा दाबो के सहारे सहारे महासागरीय तलो के उदग्र

विस्थापना ने या "भूचालों" के द्वारा प्रारम्भ होने वाले अन्तःसमुद्री भूभ्रंशों में उत्पन्न होती है। ऐसी लहरों का विपुल आकार बन जाता है और यह मालूम है कि वे सम्पूर्ण अटलांटिक अथवा प्रशान्त पर एक छोर से दूसरे छोर तक चलती हैं। जब वे आबादी वाले निचले तटवर्ती इलाकों पर पहुँचती हैं तो जान और माल की भारी दुःखद हानि पहुँचाती हैं। उन्हें प्रचलित रूप में भूकम्पी समुद्री तरंगें कहा जाता है। किन्तु जो लोग इस नाम को बहुत अटपटा समझते हैं वे जापानी शब्द 'सुनामी' (tsunami) का प्रयोग करते हैं जिसका अर्थ है 'बन्दरगाहों की ऊँची लहरें'।

सुनामी बहुत ज्यादा १०० से [illegible] मील तक लम्बी होती है और ४५० मील प्रति घंटा तक की रफ्तार प्राप्त कर लेती है। खुले समुद्र में वे केवल एक या दो फुट ऊँची होती हैं और चूँकि उनके तरंग शृंगों के बीच में बहुत ज्यादा दूरी होती है इसलिए उनमें से गुजरते हुए जहाज़ का उन पर कोई ध्यान तक नहीं जाता। जब वे तट पर पहुँचती हैं तो अधिकांश मामलों में समुद्र काफी अधिक नीचा होता जाता है जिसके कारण बन्दरगाह की तली पूरी तरह खुली रह जा सकती है। कुछ ही मिनटों के बाद समुद्र में वह ऊँचाई फिर से लौट आती है जो कि प्रतिसार की गहराई के बराबर होती है—और यह गहराई कभी-कभी ५० से लेकर १[illegible]० फुट तक होती है।

सन् १८८३ के वसन्त में जावा और सुमात्रा के बीच सुन्डा जलडमरूमध्य में स्थित क्राकाटोआ नामक ज्वालामुखी द्वीप पर भूचाल [illegible] ने भारी क्षति पहुँचाई थी। उस वर्ष २७ अगस्त को यह द्वीप शब्दशः विस्फोटित हुआ—अब तक के समस्त इतिहास में यह सबसे बड़ा विस्फोट था। इसका शोर दूर-दूर भारत और आस्ट्रेलिया तक सुनाई दिया और उद्गार के कारण [illegible]० फुट ऊँची तरंग उठी जिसने समीप के तटवर्ती क्षेत्रों में [illegible]० व्यक्तियों को समुद्र में डुबा दिया।

सुनामी अधिकतर प्रशान्त में ही उठती हैं क्योंकि यह महासागर पूर्णतः सक्रिय भूकम्पी क्षेत्रों द्वारा घिरा हुआ है। १ अप्रैल १९४६ को उनिमक द्वीप के दक्षिण में स्थित ऐल्यूशियन ट्रेंच में होने वाले विभ्रंश ने ऐसी भूकम्पी तरंगावलि पैदा की जिसकी लहरें १०[illegible] फुट से भी अधिक ऊँची उठीं। ये लहरें उनिमक में टकराईं और वहाँ कंक्रीट के बने एक दुमंजिले प्रकाश-स्तम्भ को पूरी तरह गिरा दिया और १[illegible]० फुट ऊँचे सागु की चोटी पर बने एक रेडियो मस्तूल को तोड़ डाला। सौभाग्य से उस द्वीप पर तथा ऐल्यूशियन द्वीपमाला के खुले दक्षिणी तटों पर बहुत ही कम लोग रहते हैं, इसलिए जान का नुकसान नहीं हुआ।

किंतु ये लहर अन्य दिशाओं में भी फैल गई। वे ९० मील लम्बी थी और ऐल्यूशियन से लेकर हवाई द्वीपों तक के २,३०० मील लम्बे मार्ग को उन्होंने लगभग चार घंटों में तय कर लिया। हवाई स्थित हिलो के पार के सागर में खड़े हुए एक जहाज के कप्तान ने इन लहरों को जहाज के नीचे से गुजरते हुए तक नहीं देखा। लेकिन उस समय वह भौचक्का रह गया जब उसने तट की ओर देखा जहां ३७ फुट तक की ऊंची लहरें बंदरगाह की तमाम सुविधाओं को और शहर की इमारतों को नष्ट कर रही थीं। इन लहरों के कारण १७३ लोगों की जानें गईं और ढाई करोड़ डालर से भी अधिक का नुकसान हुआ।

इस समय के बाद से संयुक्त राज्य अमरीका, जापान और सोवियत संघ के द्वारा प्रशांत महासागर में सुनामी चेतावनी निकाय (वार्निंग सिस्टम्स) स्थापित कर दिए गए हैं। भूचाल की कम्पन-लहर महासागरीय तलों के नीचे तथा महाद्वीपों में से लगभग १०,००० मील प्रति घंटा की चाल से चलती हैं और किसी स्थान पर सुनामियों के पहुंचने से बहुत पहले ही पहुंच जाती हैं। संयुक्त राज्य अमरीका ने प्रशांत महासागर में महत्वपूर्ण स्थानों पर भूकम्प पकड़ने वाले १८ सिस्मोग्राफ (भूकम्पलेखी) लगा रखे हैं ताकि भूचाल के स्रोत का ठीक-ठीक ज्ञान हो सके। यदि यह समुद्र के भीतर होता है तो उसकी स्थिति की सूचना होनोलूलू स्थित एक केंद्रीय स्टेशन पर पहुंचा दी जाती है। तब यहां से एक चेतावनी ज्वार-स्टेशनों तथा जापान स्थित एक भय-सूचना केंद्र को भेज दी जाती है। सुनामियों को उनके तरंग-दैर्घ्यों और उच्च चाल के द्वारा ज्वारमापियों पर आसानी से पहचाना जा सकता है। लहरों की चाल और दिशा निर्धारित कर ली जाती है और उनके मार्ग में आने वाले स्थानों को तटवर्ती इलाके खाली कर देने की चेतावनी दे दी जाती है।

मई १९६० में ये निकाय उस समय काम कर रहे थे जब चिली के दक्षिणांचल में एक भारी भूकम्प आया। उस देश में चेतावनी पहुंचाने का समय नहीं था और भूचालों, सुनामियों, एक ज्वालामुखी उद्गार, ऐवलांशों तथा बाढ़ों से होने वाली ४००० मौतों में से अधिकांश मौतों का कारण ३० फुट ऊंची लहरें थीं। लेकिन हवाई और जापान में लहरों के आने से घंटा पहले ही सायरन गरजते रहे। लेकिन एक बड़ी अजीब बात हुई। खतरे के स्थान से दूर हटकर ऊंची जगह पर भाग जाने की बजाए अनेक व्यक्ति लहरों को आता देखने के लिए पुलिन पर पहुंच गए। अन्य लोग यह सोचकर कि यह शायद कोई ड्रिल थी, चेतावनी की ओर कतई ध्यान न देकर अपने घरों में ही बैठे रहे। इस व्यवहार

सबसे महत्त्वपूर्ण मरणी गगरी नदी के समीप ५० ००० व्यक्ति मरे। इस प्रकार से जानों की सबसे अधिक दर्दनाक हानि १७३७ की ७ अक्तूबर को हुई जबकि ३ लाख लोगों की जान गई।

लम्बी लहरें

अभी तक की मापी गई वायु द्वारा बनी सबसे लम्बी लहर एक तरंग शृंग से दूसरे तरंग शृंग तक ७०० फुट लम्बी थी। वह ९०मील प्रति घण्टा से अधिक की चाल से चल रही थी और उसका आवर्त-काल (period) २७ सेकंड था। आवर्त-काल वह समय होता है जो कि एक स्थिर बिन्दु पर से गुजरती हुई लहरों के एक तरंग शृंग के बाद अगले क्रमिक तरंग शृंग के गुजरने के बीच का होता है। साधारण लहरों और महातरंगों के आवर्त काल समुद्र में सबसे छोटे होते हैं जब कि ज्वारों के आवर्त काल सबसे लम्बे—१२ और २४ घंटे—होते हैं।

समुद्र में अन्य लहरें भी होती हैं जिनके आवर्त काल कुछ मिनट से लेकर कई घंटों तक होते हैं और जिनके बारे में अच्छी जानकारी नहीं है। इन्हें दीर्घ आवर्त काल तरंग या कभी-कभी दीर्घ तरंगें कहते हैं। भू-भौतिकी वर्ष के दौरान उनके अध्ययन के लिए महासागरीय द्वीपों तथा अटलांटिक, प्रशान्त और हिन्द महासागरों में कुछ एक तटों पर लगभग ३० सबदी तरंग मीटर लगाए गए। यह पता चला कि इनके निर्माण के अनेक विभिन्न कारण थे जैसे कि दूरवर्ती तूफान, वायु तरंगें अथवा दाब विक्षोभ जिनका समुद्र के साथ 'गठबंधन' होता है और अपनी ऊर्जा उसमें पहुंचा देते हैं, तट रेखा की आकृति और कदाचित अन्य समुद्री मसाले भी। इनमें से कोई भी एक कारण जलराशि में गड़बड़ पैदा कर सकता है।

कोई भी दीर्घ-तरंग समुद्र पर ६ इंच से ज्यादा की ऊंचाई तक नहीं पहुंचती लेकिन जब वह समुद्र-तटों पर आकर गिरती है तो प्रायः ४० फुट ऊंचा फेनिल जल बना देती है। इस प्रकार की समुद्री महोर्मियां हैमर एंटिलीज के बार बडाम तथा अन्य द्वीपों के तट पर भारी नुकसान पहुंचाती हैं। बिलकुल साफ और शांत हवा वाले दिन भी बिना किसी चेतावनी के समुद्री महोर्मियां बन जाती हैं और दो दिन या उससे भी ज्यादा समय तक चलती रहती हैं। बहुत समय तक वे कुछ-कुछ रहस्य बनी रहीं क्योंकि स्थानीय अथवा कैरिबियन तूफानों से, और यहां तक कि अन्य समुद्री विक्षोभों से भी, उनका सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता था। अन्त में लमाट भू-वैज्ञानिक वेधशाला और ब्रुकलिन कालेज के डा० विलियम एल० डान (Dr William L Donn) ने—जो कि भू-भौतिकी वर्ष के

दौरान अटलांटिक में दीर्घ तरंग मापन का अग्रगामी अधिकारी था—यह सिद्ध कर दिया कि ये समुद्री महोर्मियां उत्तर अटलांटिक के मध्य अक्षांशों में होने वाले भीषण तूफानों द्वारा पैदा होती हैं।

इन तूफानों में चारों तरफ विकिरित होती जाने वाली तीव्र महातरंगें उत्तर एंटिलीज की ओर २० नाट की रफ्तार से चलती जाती हैं। यदि वे द्वीपों पर निम्न ज्वार के समय पहुंचती हैं तो उनकी शक्ति बाहरी शैल भित्तियों में ही समाप्त हो जाती है। किन्तु उच्च ज्वार के समय वे शैल भित्तियों को पार कर तट पर ऊंचे और शक्तिकारक फेनिल ज्वार का निर्माण करती हैं। डा० डान के अध्ययन के फलस्वरूप अब यह सम्भव हो गया है कि सिर्फ उत्तर अटलांटिक के तीव्र तूफानों के मौसम चार्टों को देखकर ही समुद्री महोर्मियों की दो या तीन दिन पहले पूर्व सूचना दे दी जा सकती है।

जहाजों का "चिपकना"

अभी तक हमने केवल लहरों का विवेचन किया है जो सतह पर पाई जाती हैं अथवा जल और वायु के बीच सीमा पर। किन्तु विभिन्न घनत्व की किन्हीं भी दो परतों के बीच की सीमा पर लहरें उत्पन्न हो सकती हैं—जैसे कि समुद्र के भीतर भीतर विभिन्न लवणता अथवा ताप की दो जल परतों के बीच की सीमा पर। वास्तव में, आन्तरिक तरंगों की—जिनमें साधारण और लम्बी दोनों ही शामिल हैं—अनन्त संख्या निश्चय ही हर गहराई पर पाई जाती है। वे बहुत धीमे धीमे चलती हैं प्राय दो मील प्रति घंटा की रफ्तार से कम पर लेकिन सतह की लहरों से कहीं अधिक ऊंची हो जाती हैं। लंगर डाले हुए जहाज पर से ताप और लवणता के द्रुत तथा और जल्दी जल्दी लिए गए मापन क्रमों के द्वारा २६० फुट ऊंची आन्तरिक लहरें मापी गई हैं।

आन्तरिक लहरों के आधार पर 'मृत जल' नामक व्यापार का स्पष्टीकरण किया गया है। पाल वाली नावों के चलन के दिनों में अनेक कप्तानों ने यह सूचना दी कि हल्की हवा से उनके जहाज मानो जल में 'चिपक' कर रह जाते थे। धीमे चलने वाले स्टीमरों का भी यही अनुभव हुआ। यह चिपकना विशिष्टतः उत्तर ध्रुव जल में आम तौर से पाया जाता था जहां पर पिघलती जाती बर्फ और नदियों द्वारा लाए गए जल में बनने वाली कम घनत्व की सबसे ऊपर वाली परत अधिक खारी जल के प्रधान पिंड के ऊपर रहती है। धीमे चलने वाले जलयानों से इन दो परतों के बीच की सीमा पर लहरें उत्पन्न हो जा सकती हैं ऊपर की लहरें यानों के ढांचे से अधिक मोटी नहीं होती। वह ऊर्जा जो

सामान्यत जल गोर के विपरीत आगे जल मे लगती है तब भातरी लहरो का बनाना और उन जागी जल म सच होती है और जहाज जल म 'चिपका गया' हुआ जान पडता है । चूंकि य लहर बहुत ही धीमी चाल से चलती है

फोटो यू० एस० नवी ।
चित्र ५१ युद्धपोत यू० एस० एस० आयोवा, उस समय "हरे जल" को अपने डेक पर लेते हुए जब कि वह प्रशात महासागर में एक ऊची लहर के तरग शृंग को चीरता हुआ जा रहा था ।

इसलिए उस 'रहस्यमय जीव का जो कि जहाज के नातल (Keel) को पकडे रहता है" दो नॉट से अधिक की चाल बनाकर, पकड छोड देने पर मजबूर किया जा सकता है ।

इन विशाल धीमी गति वाली लहरो का कारण ज्ञात नही है । इनका सम्बन्ध मासम विभागो से बताया गया है और चूंकि इनम से अनेक के आवर्त काल भी वही है जो ज्वारो के है, इसलिए ज्वार उत्पादक बलो से भी इनकी उत्पत्ति हो सकती है । वे चाहे जैसे भी बनती हो पर अन्त में वे इद गिर्द के जल के घर्षण के कारण धीरे धीरे समाप्त हो जाती है । 'भातरी ज्वारो

के साथ-साथ ठीक उसी तरह धाराएँ पाई जाती हैं जैसे साधारण ज्वारों के साथ साथ। तब एक अत्यन्त जटिल व्यवस्था महासागर में उत्पन्न होगी यदि १२ या २४ घंटे के ज्वार आवर्त-काल वाली अनेक आन्तरिक तरंगें साधारण ज्वार धाराओं पर अतिव्याप्त होती जाएँ। पहली बार नज़र डालने पर ऐसा लग सकता है कि उनके सुलझाने का प्रयत्न करना निरर्थक होगा किन्तु पर्याप्त प्रेक्षणों और कुछ गणित के द्वारा ऐसा किया जा सकता है। तथापि ये प्रेक्षण कठिन, श्रमसाध्य और महँगे हैं तथा अभी तक आंतरिक लहरों और ज्वारों पर बहुत ही कम कार्य किया गया है। शायद सुरक्षा और आक्रमण के लिए अन्तःसमुद्री मशीनों पर जो आज बल दिया जा रहा है उससे निकट भविष्य में इस क्षेत्र में और अधिक अनुसंधान करने की उत्तेजना मिलेगी।

९
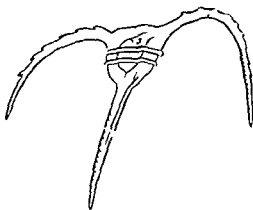
चन्द्रमा सूर्य और सागर

"ज्वार महासागर की हृदयगतियां हैं " —डफाट

दक्षिण ध्रुव से हवा नीचे चली आ रही थी। वर्फ और हवा के तीव्र वेग के रूप में वह फुट की ऊंचाइयों से चली और ध्रुवीय पठार के वर्फीले ढलानों पर से बहती हुई नीचे आई। बर्फीन मोड़े पवनों से टकरा कर वह एक सम्भ्रांत विश्राम के रूप में घूमी और उन मार्गों की खोज करने लगी जो १५,० ० फुट ऊंचे गिरिशृंगों में कठोर हिमनद बर्फ के लाखों वर्षों में बहते हुए अपरदन द्वारा काट काट कर बना लिए थे। ये विशाल सकरे मार्ग अरबों टन वर्फ बहाते हैं और ध्रुवीय पठार से आने वाली तीव्र हवाओं को इन सकीर्ण मार्गों से निकालते हुए ८० ० फुट की निचाई वाले सपाट बर्फ शेल्फ पर पहुचाते हैं।

गिरिपादों पर हिम सरिताएं फैल जाती और परस्पर जुड़ जाती हैं, जिससे एक ऐसा तिरता रहने वाला प्लेटफार्म बन जाता है जिस पर इस कराड शीत ऋतुएं बर्फ की तह पर तह जमाती रही हैं—इसी रचना को नाम आइस शेल्फ कहा जाता है। इसकी ४०० मील की चौड़ाई में जब हवाएं मनमानी हैं तो वे कभी तो बर्फ की लावर जमा देती और कभी उसे उठाकर सीधे आगे बढ़ाती या कभी उसे तीव्र भवरों में चक्कर खिलाती रहती है। ध्रुव को छोड़ने से दस घंटे के बाद ७० मील प्रति घंटे वेग से झाड़ लिटिल अमेरिका के भू भौतिकी

वर्ष अध्ययन केन्द्र पर फूट पड़े। अथाह बर्फ के नीचे यह केन्द्र दबता चला गया और नीचे की बर्फ-सुरंगों में बंद १०७ व्यक्तियों को भूलते हुए तूफान चलता रहा।

उससे तीन मील आगे रास शेल्फ के १०० फुट ऊंचे किनारे से हवाएं नीचे आ गिरती और जमे हुए सागर पर बहती जाती थीं। लिटिल अमरिका के ठीक उत्तर में शेल्फ में एक खाड़ी बनी है जिसे कैनान खाड़ी कहते हैं। यह ऐसी आकृति है कि इसके तीन बाजू समुद्र की पतली बर्फ को बीच में घेरे रहते हैं, ठीक उसी तरह जैसे तीन दिशाओं में बने हुए पवन १,००० फुट मोटे शेल्फ को दक्षिण ध्रुव प्रदेश से मजबूती से जकड़े रहते हैं। एक बार शेल्फ पर कूद जाने और कैनान की खाड़ी में प्रविष्ट हो जाने के बाद हवा के रास्ते में अगले ४००० मील तक कोई बाधा नहीं आती थी, बस एक छोटा सा खेमा था जो कि उड़ा लिए जाने से बचने के लिए बर्फ में जमा था।

झोंकों के जोर से खेमे का कपड़ा फूल जाता और एक ओर झुक जाता। भीतर कैनवस के फड़फड़ाने से जो शोर हो रहा था उसमें किसी को बोला कान सुनाई नहीं पड़ता था। एक कूकान स्टोव में ज्वाला जल रही थी किन्तु उसके द्वारा बर्फ के जमने के निशान से शायद ही कुछ ऊपर ताप उठ पाता था। एक लालटैन के प्रकाश में मैंने ऐल्बर्ट पी० क्रेरी के साथ अपने पहले समुद्र विज्ञान अध्ययन केन्द्र का कार्य किया।

उसी समय, पूरे जगत सागर पर अन्य समुद्र विज्ञानी इसी प्रकार के मापनों का कार्य कर रहे थे। अंतर्राष्ट्रीय भू भौतिकी वर्ष के प्रयासों के अंग के रूप में न केवल समुद्र विज्ञानी गण बल्कि भू भौतिकी[1] के तमाम क्षेत्रों के ५,००० विज्ञानी गण, इंजीनियर और टक्नीशियन इस ग्रह के—जिस पर हम रहते हैं—बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे थे। ६१ राष्ट्र मिलजुल कर उस अज्ञात को जानने के लिए पूरी तरह जुटे थे जिसे अकेले अकेले करने के लिए किसी भी देश के पास साधन न थे। इसी कारण से जुलाई १, १९५७ से लेकर दिसम्बर ३१, १९५८ तक का काल मनुष्य के एक महत्तम मेधावी प्रयास का सूचक है।

१८ मास लम्बे भू भौतिकी वर्ष की संकल्पना का उदय उस अनौपचारिक बातचीत से हुआ जो अप्रैल, १९५० में वाशिंगटन डी० सी० के एक उपनगर में

---

१ यह वह विज्ञान है जिसमें भौतिकी की परिशुद्ध विधियां पृथ्वी के अध्ययन में लगाई जाती है।

एकत्रित कुछ विज्ञानियों के बीच हुई थी। बातचीत के दौरान यह सुझाव रखा गया था कि अनेक नए महत्त्वपूर्ण और सबसे यन्त्र—जिनमें विद्युत-कम्प्यूटर, राकेट लांचर, राडर और कदाचित् कृत्रिम उपग्रह भी शामिल थे—या तो उपलब्ध थे या उपलब्ध हो सकेंगे जैसा कि इससे पहले कभी नहीं हुआ था, और इन नई प्रविधियों के द्वारा पूरे विश्व में एक ही समय पर मापन कार्य करते हुए इस भू-ग्रह के अनेक रहस्यों का पता चल सकेगा। ये विज्ञानी गण, जैसे कि अन्य बहुत से भी होते हैं परस्पर जानकारी आदान प्रदान करने वाली अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं के सदस्य थे, और ये संस्थाएँ ही वह साधन बनी जिनके द्वारा यह विचार अन्य देशों तक फैला। स्वयं इन अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं का भी एक प्रतिनिधि-स्वरूप समन्वयकारी वर्ग है जिसका नाम वैज्ञानिक सभा की अन्तरराष्ट्रीय सभा (इंटर नेशनल काउंसिल आफ साइंटिफिक यूनियन्स) है जिसे प्रायः उसके अंग्रेजी नाम के प्रथम अक्षरों ICSU के आधार पर इक्सू भी कहते हैं। इक्सू ने इस योजना का उत्साहपूर्वक स्वागत किया और भूभौतिक वर्ष का कार्यक्रम संघटित करने के लिए १९५१ में एक विशिष्ट कमेटी नियुक्त की। तब सदस्य राष्ट्रों ने अपने अपने देश में कार्यक्रम तैयार करने के लिए अपनी अपनी कमेटियाँ बनाईं।

संयुक्त राज्य अमरीका में नेशनल एकेडमी आफ साइंसेज ने एक कमेटी बनाई जिसका यह नाम रखा—यू० एस० नेशनल कमेटी फार दी इंटरनेशनल जियोफिजिकल इयर (U.S. National Committee for the International Geophysical Year) जिसे संक्षेप में USNC-IGY कहा जाता था। इस वर्ग को सरकार से ८ करोड़ डालर की सहायता मिली और साथ ही साथ सुरक्षा विभाग नेशनल साइंस फाउंडेशन तथा अन्य सरकारी व गैर-सरकारी अनुसन्धान संस्थाओं की ओर से जन धन जलयानों वायुयानों तथा अन्य सप्लाइयों की भी सहायता मिली। USNC-IGY और विभिन्न राष्ट्रीय कमेटियों का समन्वय इक्सू की विशेष कमेटी ने किया और निम्नलिखित कार्यों के लिए योजनाएँ बनाई गईं: अधिकांश ज्ञात महासागरों का सर्वेक्षण करना; पृथ्वी की आकृति और उसकी भीतरी संरचना का अच्छी तरह अवलोकन करना; दीर्घकालीन और समस्त विश्व के आधार पर मौसम का प्रेक्षण तथा उसकी पूर्व घोषणा करना; गुरुत्व, पृथ्वी के चुम्बकीय-क्षेत्र, अन्तरिक्ष किरणों और सूर्य के विकिरणों का मापन करना; उत्तरीय एवं दक्षिणीय प्रकाशों का एक ही समय पर फोटो लेना और उनका अभिलेखन करना; तथा पूरे संसार के तमाम हिमनदों और हिमावरणों का निरीक्षण करना। यह निर्णय किया गया कि बीसवीं सदी की टेक्नालाजी

ने दक्षिण ध्रुव प्रदेश को मानव की पहुँच के भीतर ला दिया है इसलिए इस अंतिम अज्ञात महाद्वीप की खोज के लिए प्रथम पूर्ण विश्व प्रयास की सफलता की गई। वहाँ पर USNC IGY ने सात यन्त्र स्थापित करने की योजना बनाई और यही वह कमेटी थी जिसने मुझे खोज-यात्रा के एक सदस्य के रूप में चुना।

अप्रैल, १९५७ का वह अन्तिम सप्ताह था जब 'बर्ट' क्रैरी और मैंने बाहर आकर रॉस की खाड़ी में १२ फुट मोटे बर्फ पर समुद्र विज्ञान सम्बन्धी उपकरणों से भरे स्लेज को अपने हाथों से घसीटा। बर्ट लिटिल अमरिका का प्रमुख विज्ञानी और सम्पूर्ण दक्षिण ध्रुव कार्यक्रम का उप प्रधान विज्ञानी था।

हमने छैनी से बर्फ में सूराख किया ताकि उसमें से हम अपने यन्त्रों को जल के भीतर उतार सकें और फिर उसके ऊपर सुरक्षा के लिए एक खेमा गाड़ दिया। तीन पाइप (नलका) का एक ट्राइपॉड (तिपाई) के रूप में लगाकर हमने उन्हें सूराख के ऊपर टिका दिया। ट्राइपॉड की चोटी पर एक संयुक्त घिरनी

फोटो विलियम जे० ग्रीनी

चित्र ५२ "बर्ट" क्रैरी—नेशनल साइंस फाउण्डेशन के दक्षिण ध्रुव प्रदेश प्रोग्रामों के कार्यालय का मुख्य विज्ञानी।

तथा गणित्र लगाए गए। इस गणित्र से यह पता लग जाता था कि कितना तार निकाला गया है। तार का केबिल घिरनी के ऊपर से चलता था और उसे सूराख

के किनारे पर रखी धातु का बनी एक बडी चरखी पर लपेटा हुआ था। इस सम उपकरण म न कोई गीयर थे और न ही कोई यान्त्रिकीय लाभ लगे थ। यह ए प्राचीन सिद्धात पर काय करता था जिस लिटिल अमेरिका पर काम करन वाल हमारा एक सहयोगी 'चीनी द्रवचालिकी' ('Chinese hydraulics' कहना पसन्द करता था। चरखी के प्रत्येक बाजू पर टाका लगा एक घुमा वाला हत्थ लगा था, और इन्हे घुमान के लिए दो 'कुली' थे—नरी और मैं।

इसी खडे हुए ढाच म जब हमारा प्रथम समुद्र विज्ञान सम्बन्धी मापन ह रहा था कि अचानक दक्षिण स हिम झझावात आया और हम खेम मे घेर लिया बिना गम शयन थैला क अथवा अतिरिक्त भोजन के हम पकड लिए गए औ तूफान व अधेरे म ही हम वापस लिटिल अमेरिका की ओर रास्ता ढूढ क निकालना पडा। अप्रल का महीना दक्षिण ध्रुव मे शीत का महीना होता ह इस महीन क लगभग मध्य म सूय अस्त हो जाता है और अगस्त महीने के अ क आन तक दुबारा उदय नही होता।

शून्य म ४० डिग्री नीचे की ठड मे हमारी फ्लैश लाइटो की बैटरिया ते म जम गई और बेकार हो गइ। हम वापस लिटिल अमरिका की ओर की पगड नही ढढ पाए और हवा मे उडते तथा सुई की तरह चुभने हुए बफ म सा गए साम लेना मुश्किल था और दिखाई दना बिल्कुल असम्भव हो गया था। बट मेरे पार्का (एक किस्म का फरकोट) को पकड कर उस समय आग म झटक दकर बचा लिया जब मैं चारो तरफ की सफेदी म कुछ न दख पा कर रास शेल के किनार म गिरन ही वाला था। तीव्र झोको के बीच-बीच म हमने उत्तरी आकाश मे ओरियान तथा सीरियस तारा मडलो को पहचाना और उनक मदद से दिशा निर्धारण करते हुए उल्टे पीठ करके चले ताकि हिम झझावा पीछे की ओर रह। किन्तु रास्ते का सकेत करन वाली एक झडी से अचान ठोकर खा जान पर हमने लिटिल अमरिका क समीप अपना रास्ता ढूढ लिया एक बार नजदीक आ जान पर एक धीमा सा प्रकाश, जो उडती हुई बफ म दिखाई पडता था हमारा माग दशन करता रहा। यह जानकर कि हम वह कही बाहर गए हुए हैं हमारे साथियो ने कैम्प की इमारतो की छतो पर शक्तिशाल सचलाइटें लगा दी थी और तूफानी रात म उनके द्वारा रोशनी फेंक रहे थ।

हमारे चेहरो के वे भाग जो दाढी स नही ढके थे बुरी तरह हिमगलित ह गए। हिमगलित होने मे चोट नही लगती, किन्तु परीक्षा का समय तब आता ह जब गर्मी म पहुचते ह और सुन हो गए हुए भागो म पानी पडने लगता है हमार प्रभावित भागो में फफाले पड गए और मेरी त्वचा काली पड गइ। कि

कुछ ही दिनों में मैं अपना प्रशिक्षण पूरा करके, शून्य से ५० डिग्री नीचे के मौसम में बाहर जा सकने योग्य हो गया और मैं तथा वह अगले सप्ताह समुद्र विज्ञान अध्ययन केन्द्र पर लौटे। हमने ऐसा इरादा किया था कि धाराओं और ज्वार को लगातार मापते रहने के लिए हिम गाड़ी पर तीन दिन ठहरेंगे।

तटों के महासागर तथा खाड़ियों और मुहानों[1] में जल के ऊपर उठने और नीचे गिरने को मापन तट पर स्थित किसी स्थिर बिन्दु के सम्बन्ध में किया जाता है। ध्रुव सागर और कैनाल-खाड़ी में यह सम्भव नहीं है क्योंकि वहां कोई स्थिर सम्बन्ध बिन्दु नहीं है। समुद्र में तैरते किसी जहाज पर अथवा उतराती हुई हिम-गाड़ी या हिम-द्वीप पर मापन के काम पड़े हो सकने के लिए कोई स्थान नहीं होता क्योंकि स्वयं जहाज और बर्फ ज्वार के साथ-साथ ऊपर-नीचे उठते गिरते रहते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए हमने चार छोटे छोटे वाटे बुल्डोजर के रस्से के एक मोटे भाग में टांके से जोड़ दिए और इस लंगर को अपने तार के एक सिरे पर जोड़ कर जल की तली में छोड़ा। तार को दूसरा सिरा हमने घिरनी पर चढ़ा लिया था और उसे एक स्प्रिंग मापनी के—जिसे बर्फ में कस कर जमा दिया था—साथ जोड़ लिया गया। जैसे ही ज्वार आया तो बर्फ ऊपर उठी और उसने स्प्रिंग को फैला लिया और जैसे ही ज्वार नीचे उतरा बर्फ नीचे आई और स्प्रिंग संकुचित हो गया। वास्तव में बर्फ में बना स्वयं सूराख ही तार के बाहर-बाहर ऊपर-नीचे आता था। यह निर्धारित करने के लिए कि स्प्रिंग मापनी के ऊपर बने हुए निशान के हिसाब से कितना तार छेद के ऊपर आया या नीचे चला गया, हमने कुछ मापन किए और फिर हम सीधे मापनी की सुई को दर्ज करके ही जल तल के परिवर्तन की रीडिंग ले सकते थे।

तार को बर्फ में जम जाने से रोकने के लिए हमने उसे एक खोखले नलके में से पिरोया और नलके में मिट्टी का तेल भर दिया। किन्तु, जो ढांचा हमने वहां खड़ा किया था, उसने उतना अच्छा काम नहीं किया जितना हमने सोचा था। सबसे पहले तो स्प्रिंग-मापनी ही उखड़ आई। उसके बाद धाराओं ने तार के प्रति नलके को तिरछा कर लिया और ज्वार की ऊपर-नीचे की गति ने पाइप के किनारे को चीर लिया। हमारा २००० फुट लम्बा तार और घर का बनाया लंगर दोनों ही जाते रहे किन्तु उससे पहले हमने इतने पर्याप्त मापन कर लिए थे जिनसे हमें यह मालूम हो गया कि कैनाल की खाड़ी में अधिकतम ज्वार परास चार फुट का है।

---

१ वह स्थान जहां पर ज्वार नदी की धाराओं से आकर मिलता है।

इस अपरिष्कृत उपकरण के सही-सही काम करने व परीक्षण के लिए हमने एक बहुत ही कृत्रिम साधन का प्रयोग किया। लिटिल अमेरिका पर हमारे दल के पास एक गुरुत्वमापी (Gravimeter) था—यह एक ऐसा यन्त्र होता है जो पृथ्वी के गुरुत्व के परिवर्तनों को नापता है। गुरुत्व हर जगह एक-सा नहीं होता बल्कि पृथ्वी के केन्द्र से दूरी के अनुसार बदलता रहता है। ज्वार में हर रोज एक बार रास सेल्फ की ओर कनान की खाड़ी की बर्फ पृथ्वी के केन्द्र से परे ऊपर उठ जाती है (गुरुत्व कम होता जाता है) और एक बार पृथ्वी के केन्द्र की ओर नीचे गिर जाती है (गुरुत्व बढ़ जाता है)। गुरुत्वमापी इतना सक्षम होता है कि इस गति में गुरुत्व में होने वाले बहुत ही मामूली परिवर्तनों को भी नाप सकता है। एक उपयुक्त गणितीय सूत्र के द्वारा गुरुत्व परिवर्तनों को जल की ऊंचाई[1] में होने वाले परिवर्तनों में बदला जा सकता है। लगातार एक महीने तक हर तीन-तीन घण्टे के बाद गुरुत्वमापी की रीडिंगों को लेकर, हमें पता चला कि कृष्णपक्ष की सप्तमी और शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दौरान ज्वार परास एक फुट से कुछ ही ज्यादा होता है, जब कि अमावस्या तथा पूर्णिमा को चार फुट से कुछ अधिक था। यह परिणाम हमारे 'पच उपकरण' के द्वारा लिए मापनों से मिलान पर भी काफी ठीक-ठीक उतरा।

अतः भू-भौतिकी वर्ष के दौरान हमारे ये दो योगदान रहे—एक तो, संसार के सबसे अधिक दक्षिणी (और शीततल्तम) समुद्र विज्ञान अध्ययन केन्द्र की स्थापना, और दूसरे इस क्षेत्र में ज्वारों का सबसे पहला मापन। इस प्रकार हमने एक विश्वव्यापी प्रयास में एक विश्वव्यापी व्यापार के दूसरे मापन का योगदान दिया।

मरीग्राफ

वस्तुतः ज्वार का मापन के लिए जो तरीके हमने अपनाए थे, वे आमतौर से प्रयोग में नहीं लाए जाते। परम्परागत रूप में, समुद्र की सतह में होने वाले परिवर्तनों को एक स्थिर शैल सतह पर बनाए गए निर्देश चिह्न (Bench marks) के सन्दर्भ में मापा जाता है। उथले तटों के सहारे जहां अधिक फेनिल नहीं होता, वहां निर्देश चिह्न से विभिन्न दूरियों पर समुद्र की तली में अशाक्ति खम्भे गाड़ कर यह कार्य किया जा सकता है। आसत समुद्र-तल के ऊपर इस चिह्न की ऊंचाई को सही-सही तलमान के द्वारा निर्धारित कर लिया जाता है। समुद्र

१ मीटरों में ज्वार ऊंचाइयाँ मिलीगलों में गुरुत्व विचलन के ३७६५३ गुना होती हैं।

की सतह की ऊंचाई मे होने वाले परिवतनो को सम्भो पर बने निशानो द्वारा माप लिया जाता है जिन्हे समय-समय पर टेलिस्कोप अथवा सर्वेक्षण टाजिट द्वारा बेंच चक पर से पढ लिया जाता है।

इस विधि का उन तटो पर प्रयोग नही किया जा सकता जहा बहुत ज्यादा फेनिल बनता है अथवा लहरो के कारण सही-सही रीडिंग नही ली जा सकती। ऐसी स्थिति मे, तट के समीप किसी सुरक्षित स्थान पर एक ऐसी टकी जो उच्च ज्वार चिह्न से काफी ऊंचाई से लेकर निम्न ज्वार चिह्न से तीन से छह फुट नीचे तक जाती है, गाड दी जाती है। इस टकी की तली को एक पाइप या नल्की के द्वारा सागर मे जोड दिया जाता है। नल्की का सिरा समुद्र के फर्श से उठा रखा जाता है लेकिन इतनी पर्याप्त गहराई पर होता है कि उस पर लहरो की गति का कोई प्रभाव नही पडता। अत टकी मे जल की सतह शात बनी रहती है और उसका समतल वही होता है जो कि बाहर महासागर का होता है। टकी मे समतल के परिवतनो से ज्वार की गतिया पता चल जाती है और इन परिवतनो को एक अशाकित छड द्वारा मापा जाता है।

यदि टकी मे एक प्लव (फ्लोट) डाल दिया जाए तो समतल के परिवतनो का स्वत अभिलेखन किया जा सकता है (चित्र ५३)। प्लव से ले जाकर एक तार टकी के ऊपर आराधित एक स्वतन्त्र घूमने वाले ड्रम पर लगा दिया जाता है। तार के दूसरे सिर पर एक प्रतिभार लगा दिया जाता है ताकि जैसे ही प्लव ऊपर-नीचे चले तो ड्रम घूमने लगेगा। ड्रम पर एक कलम या सुई जोड दी जाती है जिसका दूसरा मुक्त सिरा निशान लगे चाट-पेपर की पटटी पर टिका होता है। एक घटीयन्त्र विधि के द्वारा एक स्थिर रफ्तार से कागज की पटटी कलम के सामने से गुजरती जाती है और ड्रम की गतिया चाट पेपर पर एक थिरकती हुई अथवा लहरदार रेखा बना देती है। इस प्रकार से समय (ज्वार) के साथ-साथ जल की ऊचाई का एक सतत रिकाड प्राप्त कर लिया जाता है।

स्वचालित ज्वार-अभिलेखन साधनो को मरिग्राफ कहते है और वे उस साधारण साधन से जिसका कि अभी अभी वणन किया गया है बहुत अधिक नाजुक और कृत्रिम हो सकते है। एक सबसे उपयोगी रूपान्तरण वह है जिसमे प्लव की गति को बदलते हुए वैद्युत स्पदनो मे बदल दिया जाता है जिन्हे वहा से एक केन्द्रीय स्टेशन पर पहुचा दिया जाता है और उस स्टेशन पर दूर-दूर लगे अनेक प्रमापियो द्वारा एक ही समय पर रिकाड कर लिया जाता है।

खुले समुद्र मे किसी लगर डाले हुए जहाज द्वारा लगातार गभीरतामापन

करते हुए ज्वारा का निधारण किया जा सकता है । किन्तु ३०० फुट से अधिक गहरे जल म गभीरतामापन इतना सही-सही नही हाता कि उसमे सन्तोषजनक परिणाम निकाले जा सके । यह विधि वहा पर भी ठीक नही रहती जहा पर समुद्र की तली ऊबड-खाबड और ऊची-नीची हो ।
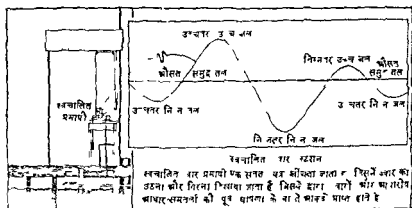
फोटो यू० एस० कोस्ट एण्ड जियाडेटिक सर्वे

चित्र ५३ एक स्वचालित ज्वार स्टेशन जैसे कि सयुक्त राज्य अमरीका के तट के सहारे सहारे और उसके तमाम अधिकृत भागो में तट तथा भू-गणितीय सर्वेक्षण नामक सस्था द्वारा लगाए गए हैं । जल तल में हाने वाले परिवतनो के रिकार्ड का एक अश दाहिनी ओर दिखाया गया है ।

ऐसे भी यन्त्र है जिनमे जल की विभिन्न ऊचाइया के द्वारा पडने वाले दबावा के द्वारा ज्वारीय फेर-बदल का मापा जाता है । किसी निश्चित स्थान पर जितना ज्यादा जल पहुचेगा वह उतना ही अधिक भारी हागा और समुद्र की तली पर अथवा वहा पर रखे गए दाब सबन्धी यन्त्र पर उतना ही ज्यादा दबाव डालेगा । इसी प्रकार के यन्त्र का लहरा की ऊचाइया मापन मे भी प्रयोग किया जा सकता है । ये यन्त्र ६०० फुट तक की गहराइया पर सन्तोषजनक रूप म काय करते है किन्तु और अधिक गहरे जल मे व सही-सही काय नही करते । ऐसी आशा की जाती है कि अपेक्षाकृत अधिक नई गुरुत्व मापी प्रविधि भविष्य म अधिक गहरे सागर मे ज्वारा के मापना के काय म सफल सिद्ध हागी ।

गुरुत्व

न्यूटन के गुरुत्व नियम म कहा जाता है कि विश्व म हर कण हर अन्य

कण पर अपना आकर्षण डालता है। कण जितने अधिक बड़े होंगे उनके बीच का आकर्षण भी उतना ही ज्यादा होगा, किन्तु वे एक-दूसरे से जितने अधिक दूर होंगे उनका परस्पर आकर्षण भी उतना ही कम होगा। यही आकर्षण गुरुत्व-बल (force of gravity) है। हमारी पृथ्वी जो एक बहुत बड़ा "कण" है, अपनी सतह के तमाम सूक्ष्मतर कणों अथवा जल राशियों पर एक शक्तिशाली बल डालती है। इनमें से प्रत्येक वस्तु के पृथ्वी के केन्द्र की ओर के खिंचाव की मात्रा को उस वस्तु का भार (weight) कहते हैं। जगत महासागर की जल राशियाँ अपनी-अपनी द्रोणियों में गुरुत्व के आकर्षण के द्वारा टिकी हुई हैं और यह आकर्षण बहुत ज्यादा है क्योंकि पृथ्वी और सागर दोनों एक-दूसरे के इतने ज्यादा समीप हैं और दोनों ही बहुत विशाल हैं।

यदि विश्व में बस अकेली पृथ्वी ही होती, तो इसका तीव्र अपरिवर्तनशील 'खिंचाव' महासागर को इसकी सतह पर एकसार दशा में फैला देता। तब ज्वार नहीं उठते क्योंकि सौर-परिवार के अन्य पिंडों के महासागर पर पड़ने वाले खिंचाव के कारण ही ज्वार बनते हैं। सिद्धांततः सौर परिवार का हर ग्रह तथा विश्व का हर तारा महासागर में गड़बड़ करता है किन्तु व्यवहारतः केवल चन्द्रमा ही इतना नजदीक है, और सूर्य ही इतना विशाल है कि उनसे पर्याप्त गति पैदा हो सकती है। इनमें भी चन्द्रमा का प्रभाव अधिक होता है क्योंकि वह अधिक नज़दीक है (२,४०,००० मील दूर)। सूर्य में चन्द्रमा की अपेक्षा २ करोड़ ७० लाख गुना अधिक द्रव्यमान है, किन्तु यह चन्द्रमा की दूरी से ४०० गुना अधिक दूर है (९ करोड़ ३० लाख मील दूर) जिसके कारण इसका आकर्षण चन्द्रमा के आकर्षण से आधे से कम है।

चन्द्रमा और सूर्य पृथ्वी के शैलों में और हवा के तथा साथ ही साथ जल के महासागरों में एक तालबद्ध गति पैदा करते हैं। स्वयं उस स्थिर शैल सतह जिस पर हमारा निर्देश चिह्न लगा है **पृथ्वी के ज्वारों** का प्रभाव पड़ता है लेकिन चूंकि ठोस शैल में उतनी ज्यादा "ढील" अथवा लचीलापन नहीं होता जितना कि जल में, इसलिए इस मामले में इसकी गति महत्त्वहीन है। हवा (तथा अन्य सभी गैसें) जल की अपेक्षा कहीं अधिक लचीली होती हैं किन्तु इसकी क्षतिपूर्ति इसके निम्न घनत्व से होती है अर्थात इसका द्रव्यमान बहुत थोड़ा होता है और इसलिए आकर्षण भी थोड़ा ही होता है।

पृथ्वी का आकर्षण सूर्य और चन्द्रमा पर भी पड़ता है। जो चीज इस आकर्षण को अपेक्षाकृत मामूली तालबद्ध विक्षोभ बनाए रखती है और इन पिंडों को एक दूसरे की ओर खिंचकर टकराने से रोकती है वह इनकी तीव्र गति है।

पृथ्वी की सूर्य के चारों ओर तथा चांद की पृथ्वी के चारों ओर की परिक्रमा से एक अपकेंद्री बल (centrifugal force)[1] उत्पन्न होता है जो पृथ्वी के गुरुत्व का विरोध करता है और विभिन्न पिंडों को दूर-दूर बनाए रखता है। विश्व की तमाम स्थिरता इन्हीं दो बलों के बीच के सही-सही संतुलन पर टिकी है।

भाटा और प्रवाह

अपकेंद्री बल पृथ्वी की सतह पर हर जगह एक सा होता है क्योंकि इस पर पाया जाने वाला हर बिन्दु सूर्य के इर्द गिर्द एक सी ही गति करता है। किंतु पृथ्वी और चन्द्रमा के मार्ग अर्थात उनकी कक्षाएं दीर्घवर्तुलीय (elliptical) होती हैं जिससे कि पृथ्वी की सतह के किसी बिन्दु की सूर्य और चन्द्रमा से दूरी लगातार बदलती रहती है। अतः हर बिन्दु पर गुरुत्व बल लगातार बदलता रहेगा और सूर्य तथा चन्द्रमा की स्थिति पर निर्भर होगा। यह तभी तक सम्भव है जब तक कि तमाम गुरुत्व बलों का कुल योग अपकेन्द्री बल के ठीक बराबर मान वाला और विपरीत नहीं हो जाता।

जब चन्द्रमा महासागर के किसी बिन्दु के ठीक ऊपर होता है तो उस समय उस बिन्दु पर पड़ने वाला आकर्षण बल अपकेन्द्री बल से अधिक होता है। इस प्रभाव के परिणामस्वरूप चन्द्रमा के नीचे आने वाला जल उठ कर गुम्बद बना लेता है। पृथ्वी की दूसरी दिशा में, जो कि चन्द्रमा के ठीक विपरीत होती है अपकेन्द्री बल आकर्षण बल से अधिक हो जाता है जिससे कि जल में सतह से बाहर को उड़ने की प्रवृत्ति होती है अथवा बाहर को गुम्बद बनाने की प्रवृत्ति। अतः चन्द्रमा (और सूर्य भी) पृथ्वी की विपरीत दिशाओं में एक ही समय पर उच्च ज्वार पैदा करेगा न कि एक दिशा में उच्च ज्वार और दूसरी में निम्न ज्वार।

निम्न ज्वार ९० डिग्री दूर के बिन्दुओं पर बनते हैं क्योंकि उन क्षेत्रों से जल उच्च ज्वार वाले क्षेत्रों की ओर बह जाता है। नतीजा यह होता है कि महासागर के हर बिन्दु से उन बिन्दुओं की ओर एक क्षैतिज प्रवाह चलता जाता है, जो चन्द्रमा अथवा सूर्य के ठीक नीचे अथवा विपरीत आ जाते हैं। ठीक यही क्षैतिज गति वह चीज है न कि उदग्र उभार जिससे कि विश्व भर में

[1] 'उड़कर अंतरिक्ष में पहुंच जाने अथवा घूर्णन के केन्द्र से बाहर निकल जाने की प्रवृत्ति।

भाटा और प्रवाह पैदा होते है। चन्द्रमा द्वारा पडने वाला ऊपरी खिंचाव पृथ्वी के खिंचाव का केवल दस-लाखवा भाग है और सूर्य का खिंचाव तो उससे भी कम है। अत जब भी हम आकर्षण बल अथवा गुरुत्व-खिंचाव की बात करेगे तो हम केवल क्षैतिज घटक का विचार कर रहे होगे न कि उर्ध्व घटक का।

गुम्बद अथवा ज्वार के उभार की ऊचाई चन्द्रमा और सूर्य की दूरियो तथा उनकी आपेक्षिक स्थितियो पर निर्भर होगी। जब अमावस्या होती है तब चन्द्रमा सूर्य और पृथ्वी के बीच मे होता है जिससे कि इन दोनो के आकर्षण मिलकर एक हो जाते है (चित्र ५४)। उसके दो सप्ताह बाद जब पूर्णिमा होती है तब चन्द्रमा पृथ्वी की दूसरी ओर पहुच जाता है। उस समय पृथ्वी सूर्य और चन्द्रमा के बीच मे होती है और पुन वे दोनो मिलकर महासागर को खीचते है। इन समयो पर ज्वार सबसे ज्यादा ऊचे उठते और सबसे ज्यादा नीचे गिरते है। इस प्रकार के औसत से ऊचे, ज्वारो को बृहत ज्वार (spring tides) कहते है।

शुक्ल पक्ष की सप्तमी अथवा 'अर्ध चन्द्र' अमावस्या के एक सप्ताह बाद आता है, तथा कृष्णपक्ष की सप्तमी पूर्णिमा के एक सप्ताह बाद आती है। इन दोनो के समय पर सूर्य और चन्द्रमा ९० डिग्री दूर होते है अर्थात वे एक दूसरे से समकोण बनाते है और उनके खिंचाव विरोधी होते है। इन मौको पर ज्वार का परास सबसे कम होता है और उनके द्वारा उत्पन्न होने वाले दुर्बल ज्वार लघुतम ज्वार (neap tides) कहलाते है। बृहत ज्वारो का परास लघुतम ज्वारो के परास से लगभग तीन गुना अधिक होता है।

यदि चन्द्रमा स्थिर खडा होता और यदि महासागर के तल तथा जल के बीच घर्षण न होता तो पृथ्वी के घूर्णन से उसकी सतह के एक के बाद एक स्थान चन्द्रमा के अथवा ज्वारीय उभार के नीचे से चलते जाते। जैसे ही हर बिन्दु उभार में से गुजरता तो वह उच्च ज्वार का अनुभव करता। इसका यह अर्थ हुआ कि हर बिन्दु पर हर १२ घंटे बाद उच्च ज्वार आता—एक बार उस समय जब कि वह चन्द्रमा के नीचे आता और दूसरी बार तब जब वह पृथ्वी की उल्टी दिशा में होता।

स्थिर खडे रहने की बजाए चन्द्रमा धीरे धीरे पृथ्वी की उसी दिशा में परिक्रमा कर रहा है जिसमे पृथ्वी घूम रही है अर्थात पश्चिम से पूर्व की ओर। इसके परिणामस्वरूप, जब पृथ्वी पूरा एक चक्कर खाती है तब उसकी सतह का वही बिन्दु दुबारा चन्द्रमा के नीचे नहीं आता क्योंकि तब तक चन्द्रमा आगे निकल गया होता है। पृथ्वी को अगले ५० मिनट और घूमना होता है और तब जाकर

वही विंदु पुन चन्द्रमा के नीचे आता है। इसी कारण से चन्द्रमा हर रोज़ ५० मिनट बाद उदय होता है तथा हर उच्च ज्वार २५ मिनट देर से आता है।
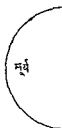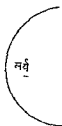
चित्र ५४ जब पथ्वी, सूय और चन्द्रमा एक सीध म होते हैं जैसे कि वे अमावस्या तथा पूर्णिमा के समय होते हैं, तो सूय और चन्द्रमा पथ्वी के महासागरो पर पडने वाले एक दूसरे के खिचावो को और अधिक सबल बना देते ह, जिसके परिणामस्वरूप मास के उच्चतम उच्च ज्वार और निम्नतम निम्न ज्वार उत्पन्न होते हैं। इन्हें बहुत ज्वार कहते हैं। शुक्ल पक्ष की सप्तमी और कृष्ण पक्ष की सप्तमी को ये खिचाव एक दूसरे से समकोण बनाते हैं और लघुतम ज्वार नामक धीमे ज्वार उत्पन्न होते ह।

अत, चन्द्र ज्वारो का आवत काल (अर्थात एक उच्च ज्वार से दूसरे उच्च ज्वार तक का काल) १२ घटे २५ मिनट है। सूय ज्वार का आवत-काल १२ घटे होता है। जब सूय सागर के किसी बिन्दु के ठीक ऊपर होता है तो वहा पर उस समय दोपहर होगी और वहा उच्च सूय ज्वार होगा। साथ ही,

अर्धरात्रि को, अर्थात् पृथ्वी की विपरीत दिशा में भी, उच्च ज्वार होगा। उसके १२ घंटे बाद स्थिति उलट जाएगी।

यदि पृथ्वी का चक्कर लगाते समय चन्द्रमा सदैव विषुवत-वृत्त पर स्थिर रहता तो उच्च ज्वार हर १२ घंटे २५ मिनट पर आते और पृथ्वी की दोनों दिशाओं में समान होते। उस स्थिति में, हर बन्दरगाह में प्रतिदिन दो समान उच्च ज्वार और दो समान निम्न ज्वार आते। किन्तु चन्द्रमा एक ऐसी दीर्घ-वृत्तीय कक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है जो विषुवत वृत्त के समतल के मन्दस में झुकी हुई है। इस बात के कारण, पृथ्वी के इर्द गिर्द अपनी २८ दिन की परिक्रमा के दौरान चन्द्रमा उत्तर और दक्षिणी गोलार्द्ध में फ्लोरिडा के अक्षांश से लेकर आस्ट्रेलिया स्थित ब्रिस्बेन तक (२८½ उत्तर तथा दक्षिण तक) डोलता है।

चन्द्रमा की कक्षा के इस झुकाव के कारण दो प्रकार के ज्वार पैदा होते हैं एक का आवर्त काल १२ घंटे २५ मिनट है—जिसे अर्ध प्रतिदिनी अथवा अर्ध दैनिक ज्वार कहते हैं, और दूसरे का आवर्त काल २४ घंटे ५० मिनट है—जिसे दैनिक ज्वार कहते हैं। पृथ्वी का अक्ष, उसके सूर्य की परिक्रमा की कक्षा के समतल के मन्दस में तिरछा होता है, और इसके कारण से भी दैनिक और अर्ध दैनिक सूर्य ज्वार बनते हैं। जहां कहीं भी ज्वार-उत्पादक बल प्रधानतः अर्ध-दैनिक होते हैं वहां प्रतिदिन दो चक्र आते हैं अर्थात दो उच्च और दो निम्न ज्वार आते हैं जिनकी ऊंचाइयों में कोई खास अन्तर नहीं होता। संयुक्तराज्य अमरीका और यूरोप के तटों के सहारे आने वाले ज्वारों की यही स्थिति होती है। वास्तव में अटलांटिक में आने वाले सभी ज्वार विशिष्टतः अर्ध दैनिक होते हैं।

जहां पर ज्वार उत्पादक बल प्रधानतः दैनिक होते हैं वहां हर रोज केवल एक उच्च और एक निम्न ज्वार होगा। ऐसी ही स्थिति कैनान की खाड़ी, मक्सिको की खाड़ी, और अलास्का, फिलिप्पीन द्वीप समूह तथा चीन के कुछ विशिष्ट स्थानों पर मिलती है। यह भी सम्भव है कि ज्वार कुछ अंश तक दैनिक हो और कुछ अंश तक अर्ध दैनिक, ऐसे ज्वारों की ऊंचाइ दोनों बलों के योग के बराबर होती है। इस प्रकार के मामले में ज्वार को मिश्रित ज्वार कहा जाता है और प्रतिदिन दो दो ऊंचे और नीचे ज्वार आते हैं और सवेर तथा दोपहर-बाद के ज्वारों की ऊंचाइयों में काफी अधिक अन्तर पाया जाता है। प्रशांत तट पर स्थित सान डीएगो तथा अन्य नगरों में आने वाले ज्वार इसी प्रकार के होते हैं। वास्तव में प्रशांत और हिन्द इन दोनों महासागरों में मिश्रित प्रकार के ज्वारों का ही प्राबल्य है।

दुनिया के सबसे ऊँचे ज्वार

अभी तक जो कुछ कहा गया है उसके आधार पर आप यह आशा करेंगे कि उत्तर अमरीका के पूर्वी तट पर उच्च ज्वार उस समय आएगा जब चन्द्रमा सिर के ऊपर होगा और फिर १२ घंटे २५ मिनट के बाद दुबारा आएगा। किन्तु यदि आप विभिन्न स्थानों पर चांद और ज्वारों के समय का नोट करके देखें तो आपको पता चलेगा कि चन्द्रमा के ठीक सिर के ऊपर से गुजरने तथा उच्च ज्वार के आने के बीच का समय—जिसे चान्द्र-अंतराल (lunar interval) कहते हैं—शून्य और १२ घंटे २५ मिनट के बीच में कुछ भी हो सकता है। साथ ही यदि आप तट के सहारे विभिन्न बिन्दुओं की जांच करें तो आपको पता चलेगा कि ऊंचाइयां कुछ फुट से लेकर बहुत ज्यादा यहां तक कि ७० फुट तक अदलती-बदलती हैं।

यह फर्क क्यों होता है इसे हम तब अच्छी तरह समझ सकते हैं जब हम ज्वारों को ऐसा समझें कि वे महासागरों में बनी व्यष्टिगत द्रोणियों के भीतर भीतर सीमित हैं। इन द्रोणियों की आकृति जल की गहराई तथा स्थल के वितरण पर निर्भर होती है। जब सूर्य तथा चन्द्रमा के दैनिक तथा अर्ध-दैनिक आकर्षणों से इन द्रोणियों के जल में गति उत्पन्न हो जाती है तो वह एक केन्द्रीय, यथायत ज्वारहीन रेखा के इधर उधर झूलने लगता है। इस रेखा को निस्पंद (node) कहते हैं और झूलने को स्थिर दोलन (stationary oscillations) अथवा खड़ी लहरें (standing waves) कहा जाता है। हर अलग अलग द्रोणी अथवा उस दृष्टि से देखें तो हर जलराशि आवर्ती (periodic) बलों से विक्षुब्ध होने पर एक ऐसे विशिष्ट आवर्त काल के साथ साथ आगे पीछे छलकती 'गुड़' हो जाएगी जो उसकी आकृति और गहराई के लिए विशेष होता है। ऐसे आवर्त-काल को उसके दोलन का प्राकृतिक आवर्त काल (Natural period of oscillation) कहते हैं।

इस चीज को नहाने के टब में सहज ही अनुभव किया जा सकता है। जब आप टब में बैठते हैं तो आप उसे विक्षुब्ध करते हैं और वह अपने प्राकृतिक आवर्त काल पर आगे-पीछे झूलने लगता है। यह आवर्त काल टब की लम्बाई और जल की गहराई पर निर्भर होता है लेकिन प्रायः लगभग दो सैकंड होता है। निस्पंद वह रेखा है जो टब के मध्य के आर पार चलती है और इस बिंदु पर जल मुश्किल से ही गति करता है। अधिकतम गति दोनों अन्तिम सिरों पर होती है जहां जल एकांतर क्रम में ऊपर उठता और नीचे गिरता है और इस गति में हर तरंग शृंग के बीच लगभग दो सैकंड का अन्तर होता है। यदि

आप हर दो सेकण्ड के बाद जल को लगातार हिलाते रहेंगे, चाहे वह हिलाना कितना ही धीमा क्यों न हो, तो दोलन एक दूसरे को अधिक तीव्र करते जाएंगे और जल तब तक अधिकाधिक ऊंचा उठता जाएगा जब तक वह सिरों से ऊपर होकर बाहर नहीं छलकने लगता।

कुछ कुछ ऐसी ही चीज हर रोज फंडी की खाड़ी में होती रहती है। इस खाड़ी को, जो कि नोवा स्कोशिया को मेन और कैनाडा की मुख्य भूमि से पृथक करती है, एक बड़े आकार के ऐसे टब के रूप में समझा जा सकता है जिसका एक सिरा खुला है। इस खाड़ी का प्राकृतिक आवर्त-काल लगभग १२ घंटे है जो कि चान्द्र-सौर आवर्त-काल के समीप है। खुले सिरे के द्वारा अटलांटिक से आने वाले ज्वारीय दोलन आगे बने रहते हैं और उन्हें इस खाड़ी के जल के प्राकृतिक हिलने डुलने के द्वारा और अधिक बल मिल जाता है। इस सबके प्रभाव से असाधारण ऊंचाई वाले ज्वार आते हैं जिन्हें अनुनाद ज्वार (resonance tides) कहते हैं। किसी जलराशि का प्राकृतिक आवर्त काल ज्वार-उत्पादक बलों के जितना अधिक समीप होगा अनुनाद ज्वार उतने ही अधिक ऊंचे होंगे।

यदि किसी द्रोणी का प्राकृतिक आवर्त-काल ज्वार-आवर्त काल से कम होता है तो ज्वारों के द्वारा प्राकृतिक छलक दब जाएगी और वे उस जलराशि पर अपने आवर्त काल को थोप देंगे। जब प्राकृतिक आवर्त काल अधिक लम्बा होता है तो जल को गतिशील करना कठिन होता है और ज्वार छोटे तथा उत्क्रमित होंगे। इसका यह अर्थ हुआ कि जब चन्द्रमा ठीक सिर के ऊपर होगा अथवा जब ज्वार-बल सबसे अधिक होंगे, तो निम्न ज्वार होगा और जब वे सबसे कम होंगे तो जल ऊंचा होगा।

दुनिया के नक्शे में हम उन 'बाथ टबों' अथवा द्रोणियों को अलग कर सकते हैं जिनमें दैनिक अथवा अर्ध-दैनिक आवर्त काल की स्थिर लहरों का साधन के लिए आवश्यक लम्बाई और गहराई पाई जाती है। यदि हम अटलांटिक को ही लें तो उसमें हमें दो ऐसी द्रोणियां मिलती हैं जिनमें चन्द्रमा के अर्ध दैनिक बल की प्रतिनियां होती हैं। इन द्रोणियों में होने वाले दोलन उन दोलनों के योग होते हैं जो एक तो सीधे चन्द्रमा द्वारा पैदा होते हैं और दूसरे वे जो दक्षिण ध्रुव महासागर के ज्वारों द्वारा अटलांटिक पर आरोपित होते हैं। ये दोनों मिलकर अटलांटिक को उत्तर दक्षिण दिशा में आगे पीछे हिलाने लगते हैं। इस पर पृथ्वी के घूर्णन द्वारा बनने वाले पूर्व-पश्चिम दोलनों तथा तट रेखाओं और समुद्र-तली के कारण होने वाले घर्षण प्रभाव भी अध्यारोपित हो जाते हैं।

इसका शुद्ध परिणाम यह होता है कि दो द्रोणियां बन जाती हैं जो कि एक दूसरे को तथा अटलांटिक को उत्तरपश्चिम दक्षिण पूर्व तथा उत्तरपूर्व-दक्षिण-पश्चिम दिशाओं में काटती है, और इस तरह एक बहुत बड़ा 'X' बनाती है जिसका प्रतिच्छेद टिनिडाड तथा केप वर्डे द्वीपों पर पाया जाता है। 'L' की आकृति की एक द्रोणी टिनिडाड और ब्राजील स्थित नैटाल के बीच दक्षिण अमरीका के तट से लेकर यूरोप के दक्षिण-पश्चिमी तट और फिर उसके बाद आइसलैंड ग्रीनलैंड और लैब्रेडोर के तटों तक फैली है। दूसरी द्रोणी न्यू फाउन्डलैंड और टिनिडाड के बीच से लेकर पाट गिनी तथा केप आफ गुड होप के बीच अफ्रीका के पश्चिमी तट तक फैली है।

इन दोनों में से दूसरी द्रोणी में सम्मिश्र आकृति के कारण एक से अधिक निस्पन्द रेखाएं हैं। इनमें से एक निस्पंद रेखा लेसर एंटिलीस के दक्षिणी द्वीपों— विंडवर्ड द्वीपों —के समीप आती है। इसके फलस्वरूप यहां पर ज्वार कुछ ही इंच उठते गिरते हैं। उत्तर-पश्चिम की ओर अर्थात एक बाथ-टब के सिर की तरफ ज्वार बढ़ जाते हैं। पोर्टो रिको में एक फुट के ज्वार होते हैं बहामा द्वीपों में दो फुट के और फ्लोरिडा तथा जियॉर्जिया के तटों पर ६ फुट के। न्यूजर्सी स्थित अटलांटिक सिटी पर ज्वार परास ४ फुट होता है और न्यूयार्क बन्दरगाह में नैरोज पर ५ फुट। ये अन्तिम दो स्थान निस्पंद रेखा से उतनी दूर नहीं हैं जितने फ्लोरिडा और जियॉर्जिया।

केप कॉड और फंडी की खाड़ी के बीच के तट में, जो जल घिरा हुआ है उसका आकार और गहराई इतनी है कि उस पर अर्धदैनिक चान्द्र बल का बहुत ही कम प्रभाव पड़ता है। इस क्षेत्र में ज्वार समीपवर्ती प्रदेशों के दोलनों द्वारा उत्पन्न होते हैं। केप कॉड पर नासेट बन्दरगाह पर ज्वार-परास ६ फुट है मैसचसेटस स्थित ग्लासेस्टर पर ९ फुट और फंडी की खाड़ी के मुहाने पर १० फुट। जैसा पहले कहा जा चुका है यह खाड़ी अटलांटिक से आने वाले ज्वारों के अनुनाद से दोलायमान होती है जिसके फलस्वरूप अत्यधिक ऊंचाइयां प्राप्त होती हैं। संयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा के बीच की सीमा पर स्थित पसामाक्वोडी खाड़ी पर आने वाले ज्वार १६ फुट होते हैं और कनाडा स्थित सेंट जान पर २१ फुट। खाड़ी के शीर्ष की ओर तंग होती जाती चौड़ाई और उथली होती जाती तली के कारण जल एक निरन्तर कम होते जाते क्षेत्र में 'भिचता" जाता है जिससे ज्वार और भी अधिक ऊंचे हो जाते हैं। इसका शीर्ष दो शाखाओं में बंट जाता है और उत्तरीय शाखा पर स्थित फौली पाइंट पर ज्वार-परास ३९ फुट होता है। दक्षिण शाखा बनाने वाली मिनास द्रोणी में

उच्च जल दिन म दो बार सामायत ४० से ४५ फुट ऊपर उठ जाता ह। बहत ज्वारो के दौरान यह जल छह घटा मे लगभग ७० फुट ऊचा उठ जाता ह जो कि ससार का सब से ऊचा ज्वार है।

कैरिबियन सागर तथा मक्सिको की खाडी अटलाटिक द्राणिया से उन प्रवाल भित्तिया तथा द्वीपा की शृखला द्वारा पथक हो जाते ह जो कि फ्लोरिडा से ट्रिनिडाड तक फैल ह। अध दैनिक दोलना को बनाए रखने के लिए इन जल राशिया की उचित लम्बाई और गहराई नही है किन्तु व दैनिक दोलना का प्राप्त कर सकत है। अत यहा पर बहुत कम अन्तर वाला एक निम्न और एक उच्च ज्वार आता है। ८० मील चौडे पनामा के स्थल सयोजक की करिबियन सागर वाली दिशा पर स्थित कोलन पर ज्वार एक फुट स कम होत ह। इसके विपरीत, इस स्थल सयोजक की प्रशात महासागर वाली दिशा उस महासागर की एक दोलन द्राणी के सिर पर स्थित रहती है और बालबोआ नामक स्थान पर ज्वार १२ से १६ फुट होता है।

हिन्द महासागर म तीन अध-दैनिक चान्द्र द्राणिया होती है और प्रशात महासागर मे दो। इन दोनो महासागरो म दनिक दोलना के लिए होन वाली प्रतिक्रिया के वास्ते उचित लम्बाई चौडाई आदि पाई जाती ह और इसके परिणामस्वरूप प्रधानत मिश्रित ज्वार बनते है। जैसा कि आपको याद होगा, इसका अथ है दिन मे विभिन्न ऊचाइयो के दो उच्च और दो निम्न ज्वारो का आना। दनिक दोलन जितने अधिक शक्तिशाली होगे, दोनो ज्वारो के बीच का अन्तर भी उतना ही ज्यादा होगा। प्रशात महासागर म एक निस्पद रेखा जापान स लेकर करोलीन द्वीपा तक फैली होती है जहा पर ज्वार क्रमश केवल डेढ फुट और एक फुट होत है। इसके विपरीत, अलास्का की खाडी एक द्राणी के अन्त पर स्थित है और उसमे ३५ फुट तक के बहुत ऊचे ज्वार आत है।

एक अन्य निस्पद रेखा दक्षिण प्रशात म ताहिती द्वीप के बहुत समीप स गुजरती है जिसस एक असाधारण ज्वार स्थिति पैदा हो जाती है। यहा पर चन्द्रमा का न तो दनिक और न ही अध-दैनिक बल महसूस किया जाता है जिसके फलस्वरूप जल म केवल सूय के खिचाव की ही प्रतिक्रिया होती है जो सामायत प्रकट नही होता। परिणामी ज्वार छोटे होते है—एक फुट म कम—और वे इतने नियमित होते है कि आप चाहे तो पुलिन को देखकर अपनी घडी मिला सकत है। मामली से विभेद को छोडकर (जो कि विषुवत-वत्त के ऊपर या नीचे सूय की दूरी के ऊपर निभर रहता है) उच्च जल ठीक दोपहर और आधी रात को होता है तथा निम्न जल ६ बजे सवेरे और ६ बजे शाम को।

ज्वारों की पूर्व घोषणा करना

चूंकि ज्वारों पर न केवल चन्द्रमा और सूर्य का ही प्रभाव पड़ता है बल्कि इन सबका भी पृथ्वी के घूर्णन का तट रेखा और समुद्र की तली के प्रति घर्षण का प्रत्येक महासागरीय द्रोणी समुद्र, खाड़ी या नलनिवर्गिका की आकृति और गहराई का और यहां तक कि ताप और वायुमंडलीय दाब के परिवर्तनों का भी प्रभाव पड़ता है, इसलिए केवल आकाशीय पिंडों की स्थिति के ही आधार पर इनकी भविष्यवाणी कर सकना सम्भव नहीं है। विभिन्न प्रकार से कार्य करने वाले इन कारकों के विविध संयोजनों के परिणामस्वरूप जो ज्वार उत्पन्न होते हैं वे संसार के हर बन्दरगाह खाड़ी निवर्गिका और जलडमरूमध्य में अलग अलग होते हैं। अतः किसी भी विशिष्ट स्थान के ज्वारों को केवल सीधे मापन के द्वारा ही निर्धारित किया जा सकता है।

औसत समुद्र तल के ऊपर जल कितने फुट ऊंचा उठता है और उसके नीचे कितने फुट गिरता है इसका निर्धारण स्वचालित ज्वार प्रमापियों द्वारा प्रेक्षणों के एक लम्बे क्रम द्वारा किया जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका में यह कार्य प्रायः यू० एस० कोस्ट एंड जियोडेटिक सर्वे (अर्थात् संयुक्त राज्य समुद्र-तट एवं भू-गणितीय सर्वेक्षण) द्वारा किया जाता है। एक ही समय पर परास मापा जाता, ठीक सिर के ऊपर से चन्द्रमा के गुजरने का समय ज्वार रिकार्ड पर नोट किया जाता और चान्द्र अन्तराल निर्धारित किया जाता है। चन्द्रमा के ठीक सिर के ऊपर होने के ठीक समय को सेक्सटैंट अथवा याम्योत्तर यन्त्र (transit) तथा एक सही घड़ी द्वारा जाना जा सकता है अथवा अधिक सुगम तरीका यह हो सकता है कि यू० एस० नैवल ऑब्जर्वेटरी द्वारा प्रकाशित सारणियों में देख लिया जाए।

जिस रूप में हम प्रकृति में वास्तविक ज्वार को देखते हैं उसे एक-दूसरे पर अतिव्याप्त अनेक साधारण ज्वारों का संयोजन माना जाता है। सबसे अधिक सुविधाजनक यह होगा कि ज्वारों को अलग अलग एक एक करके लिया जाए। ऐसा करने के लिए सम्मिश्र चन्द्र सूर्य आकर्षण को उसके विविध रचकों में विभाजित कर लिया जाता है—अर्ध दैनिक और दैनिक रचकों में, अर्थात् वे बल जो पृथ्वी और चन्द्रमा की दीर्घ वृत्तीय कक्षाओं द्वारा दूरी में होने वाले विभेदों से बनते हैं और वे बल जो कि विषुवत वृत्त के ऊपर और नीचे सूर्य और चन्द्रमा की बदलती हुई दूरी के कारण होते हैं इत्यादि। इनमें से प्रत्येक कारक को एक सरल ज्वार उत्पन्न करने वाला माना जाता है तथा वास्तविक

ज्वार का समय और उसकी ऊचाई ये दोनो इन तमाम रचको के परिणामी होते हैं। इन सरल ज्वारो को ज्वार रिकार्डों में से सनादि विश्लेषण (harmonic analysis) नामक गणितीय प्रक्रम द्वारा निकाल लिया जाता है।

एक बार हर सरल ज्वार के लिए ऊचाई और चान्द्र अन्तराल निर्धारित कर लेने के बाद किसी भी भावी तिथि के लिए वास्तविक ज्वार की पूर्व घोषणा की जा सकती है। जावत काल, अथवा उच्च ज्वारो के बीच का अन्तराल आसानी से निर्धारित किया जा सकता है क्योंकि खगोलज्ञ सूय चन्द्रमा और पृथ्वी की आपेक्षिक स्थितियो का बहुत वर्षों आगे तक का पहले से ही हिसाब लगा सकते है। यह मालूम करने के लिए कि (चन्द्रमा के सिर के ऊपर स गुज़र जाने के बाद) उच्च ज्वार किस समय आएगा और वह कितना ऊचा उठेगा प्रत्येक रचक ज्वार के समय और उनकी ऊचाइया जोड ली जाती है।

आप ३० जुलाई, १९६२ के ज्वार का मापन करके यही नही कह सकते कि आगे आने वाले हर वर्ष की ३० जुलाई को उस स्थान पर ज्वार का वही समय होगा और वही ऊचाई भी। ऐसा इसलिए है क्योकि सूय चन्द्रमा और पृथ्वी हर वर्ष उसी समय पर एक ही स्थिति म नही होगे। आपको उनकी स्थिति जानने के लिए खगोलज्ञो के परिकलनो पर निर्भर रहना होगा। तब आपको

चित्र ५५ वाशिंगटन, डी० सी० में स्थित कोस्ट एण्ड ज्योडेटिक सर्वे (तट एव भू गणितीय सर्वेक्षण) द्वारा चलाई जाने वाली और ज्वार पूर्व घोषणा करने वाली मशीन।

फोटो यू०एस० कोस्ट एण्ड जियाडेटिक सर्वे
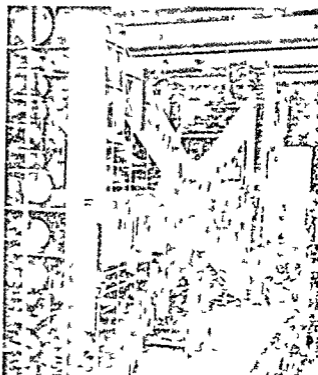
पता चलेगा कि कौन से सरल ज्वार कार्य करते होंगे और सीधे मापन द्वारा प्रत्येक ज्वार का सम्पूर्ण ज्वार में योग पता चल जाएगा। इस हिसाब में जितने अधिक रचकों को लिया जाएगा पूर्व घोषणा भी उतनी ही अधिक सही होगी। ज्वार पूर्व घोषणा मशीन नामक कम्प्यूटर में बहुत ज्यादा यहां तक कि ३० सरल ज्वारों को भरा जा सकता है। वाशिंगटन डी० सी० में स्थित कोस्ट सर्वे (तट सर्वेक्षण) द्वारा चलाए जाने वाला एक ऐसा ही कम्प्यूटर किसी एक स्थान के लिए सात घंटे में पूरे वर्ष भर के लिए ज्वारों की पूर्व घोषणा कर सकता है (चित्र ९.५)।

इस मशीन के डायलों पर लिए गए पाठ्यांक "टाइड टेबल्स" में प्रकाशित किए जाते हैं, जो किसी विशिष्ट स्थान के लिए वर्ष के हर दिन के लिए न केवल उच्च और निम्न ज्वारों के आने के समय और ऊंचाइयां ही बतलाते हैं बल्कि जल की गहराई भी। संसार के हर महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह के लिए ये सारणियां उपलब्ध हैं जिससे कि कप्तानों और नाविकों को यह सहज ही पता चल सकता है कि किसी बन्दरगाह में अपने जहाजों को ले जाने और उन्हें वहां खड़ा रखने के लिए पर्याप्त जल मिल सकेगा या नहीं।

समुद्र की तली

"समुद्र के भीतर, जो कि उनके लिए आसमान है, वे जल की ऊंचाइयों में इ
ज्यादा ऊपर चढ़ती जाती है जितनी कि सुदूर हिमालय की चोटियां

—सी० वाई० र

ग्रीष्म मानसून हिंद महासागर पर भीषण रफ्तार से चल रहा था और स
को विक्षुब्ध करता हुआ उसमें असंख्य श्वेत शीर्ष लहरों को जन्म दे रहा
चमचमाते प्रशियन सागर पर धुंधले और पीले आकाश में बादलों के केवल ट
ही नज़र आते थे। सनसनाता पवन धूप से गर्म होता जा रहा था और चमच
प्रकाश हीरे विखण्डित होते जाते तरंग शृंगों से उड़ने वाले फेन में मिल रहे थे

वेमा, जो उस समय खड़ा हुआ था, अपने नीचे से बोझिल लहरों के गरजने
एक ओर से दूसरी ओर को बहुत ज्यादा झुकता जा रहा था। मैं प्रधान मस्
के 'क्रास-ट्रीज' पर खड़ा था और यकायक मुझे महसूस हुआ कि मैं पह
बार तो चमचमाते उत्तेजित समुद्र के ऊपर था और दूसरी बार लकड़ी के डेक
आ गया था जहां पर समुद्र विज्ञान और समुद्र सम्बन्धी तमाम विचित्र आ
एक-साथ ठसाठस आ गए थे। डेक तेजी से मेरे नीचे से निकल गया और मैं फि
समुद्र के ऊपर था। उस खारी, काटते हुए फुहार के ऊपर से जो कि डेक
खड़े मेरे साथियों को मानो अंधा किए हुए था, मैं क्षितिज पर ऐटलांटिस का ख
रहा था।

दक्षिण ध्रुव प्रदेश से लौटती यात्रा के दौरान मैं दक्षिण अफ्रीका में वेमा
शामिल हुआ था। मैंने समुद्र विज्ञानी तथा जलवायुशास्त्र की डायरी इसित

इकरारनामे पर हस्ताक्षर किए थे और १९५८ की मध्य अप्रैल म हम लाग कपटाऊन से अपनी समुद्र यात्रा पर निकल प`े। हिन्द महासागर मे लम्बे पूव पश्चिमी ट़े म`े रास्ता से गुजरते हुए उत्तर की आर ब`े आर मई के ‌अ त तक हम अपन स्कूनर को अफ्रीका क उत्तर पूर्वी सिर के पार ले आए (चित्र ५६)। ऐटलाटिस ने भी अप्रैल मे ही यात्रा आरम्भ की थी लेकिन मैसैचुसटस स्थित वडज होल से। वह अटलाटिक भूमध्यसागर और लाल सागर का पार करता हुआ पूव-व्यवस्था के अनुसार ७° उत्तर अक्षाश तथा ६०° पूव रखान के समीप पहुचा—उसी समय जब कि वेमा भी वहा पहुचा था।

मने मस्तूल पर से उसे क्षितिज पर एक छाटे सफेद त्रिभुज के रूप म दखा। शुरू शुरू मे तो वह सफेद लहरा म मुश्किल से ही पृथक नजर आता था लेकिन जसे जस वह हमारी आर बढ़ता आ रहा था ता मैं उसके हवा म फूलते जात अलग-अलग पाला का पहचान सका। १४२ फुट लम्बे इस केच जलयान मे एक प्रधान पाल था एक पीछे का पाल और दो आगे के पाल (जिब) थे। हवा का कमी इधर से आर कभी उधर स पकडने की काशिश करत हुए आर देर तक कभी एक ओर खिसकत हुए कभी दूसरी आर अन्त म वह हमारी तरफ बढ़ने मे सफल हुआ।

अधिक नजदीक आन पर एक बार वह हवा के दूसर रुख होने के कारण बहुत ज्यादा झुक गया आर उसका सफेद गोल अथ शरीर दिखाई पडा। पानी से भीगा पटा धप खाकर चादी की माहर जैसा चमचमा उठा। हर बार जब वह तरग शृग की चाटी पर ऊपर उठता ता उसके चमचमाते पटे और नीले सागर के बीच मे पीत आसमान का पच्चर नजर आता। ऊची-ऊची लहरा की पीठ के ढलाना पर नाच आते हुए उसका अगला सिरा जल का चीरत हुए तरग द्रोणी मे आता और जब वह फिर से तरग शृग की ओर उठना शुरू होता ता वह फेन और फुहार के दो घुगराले फव्वारे उठा देता।

ऐटलाटिस नजदीक आया आर वेमा के कुछ सा गज पीछे से निकल गया। हवा स पूरी तरह भरे हुए उसके पाल उसे टूटनी जाती हुई लहरा के ऊपर ऊपर उठाए ले जाते जान पड रहे थे और उसकी शानदार गतिया भारी विक्षुब्ध सागर के साथ एक विचित्र वैषम्य बनाए थी। जब वह हमारे पास स गुजरा तो उसका ७ विज्ञानिया आर २० नाविका का नाविक दल खूब जार-जोर से पुकारता और हाथ हिलाता रहा। हमने भी उनकी शुभकामनाओ का ज़ोर जोर से चिल्लाकर और बडे उत्साह से स्वागत करत हुए उन्हे अपनी शुभकामनाए पहुचाइ।

जसे ही एटलाटिस निकल गया उसने अपने बाजुआ पर स तिरस्फाटक उछालने शुरू किए। मैं मस्तूल पर से उतर कर नीचे आया और जहाज के पिछले भाग म

उस दल में जो हाइड्रोफोनों को जल में उतार रहा था, शामिल हो गया। विस्फोटों से चलकर ध्वनि-तरंगे नीचे समुद्र की तली में बिछे हुए अवसादों में पहुंचती है जिन्हें बेध कर वे तली के नीचे स्थित शैल आधार तक पहुंच जाती हैं। कीचड़ और शैल की विभिन्न परतों से वे मुड़ जाती और पलट कर हाइड्रोफोनों की ओर आती हैं। इन तरंगों की यात्रा का समय और उनकी चाल ने उस पदार्थ के प्रकार का संकेत देना प्रारम्भ कर दिया जिसमें से होकर वे गुजरी थीं। इस गोली दागने के द्वारा हमें हिन्द महासागर के उस गहरे भाग की विस्तृत रचना मालूम हो सकी जिसे अरब द्रोणी कहते हैं। यह द्रोणी अरब प्रायद्वीप के दक्षिण और पूर्व में स्थित है और यह अंशतः एक अध समुद्री पर्वतमाला द्वारा घिरी है जिसे कार्ल्सबर्ग रिज कहते हैं (चित्र ६०)। जब हमारा काम पूरा हो गया तो हम अपने जहाज को अदन में ले गए—अदन एक बन्दरगाह है जो अरब की दक्षिणी नाक पर स्थित है और 'ऐडन प्रोटेक्टोरेट" के अधीन है। तीन दिन के विश्राम के दौरान हमने कुछ विजातीय दृश्य देखे और ऐटलांटिस के अपने मित्रों के साथ हमने अपनी खोज यात्रा के दूसरे दौर के बारे में बातचीत की अर्थात् लाल सागर के नीचे की भू-पपटी के प्रथम अध्ययन के बारे में।

वेमा और ऐटलांटिस ९ जून को अदन से रवाना हो गए और तीन दिन बाद बाब एल माँदेब (मुसीबत का द्वार) नामक जलडमरूमध्य से होते हुए लाल सागर में पहुंचे। लाल सागर इस संसार का एक सबसे अधिक गर्म समुद्र है। इस सागर का यह नाम अरबों की मान्यता में पाए जाने वाले उन सूक्ष्म शैवालों (ट्राइकोडेसियम एरिथ्रीयम) के आधार पर है जो सतह के नजदीक रहते थे तथा उसका रंग बदल देते है। जैसे ही हमने बाब एल मांदेब को पार किया तो लाल जल के प्रथम दर्शन के लिए अनेक नाविक गण और विज्ञानी जहाज के जंगले पर इकट्ठे हो गए। लेकिन जब उन्होंने लाल सागर को भी उतना ही नीला पाया जितना कि गहरा महासागर तो उन्हें बहुत निराशा हुई। कुछ दिनों के बाद वेमा पीले नारंगी रंग की कुछ अनियमित पट्टियों और टुकड़ों में गुजरा। पहले तो हमने सोचा कि यह दानों किनारों से उड़कर आया हुआ रेत था लेकिन बाल्टी डाल कर जो देखा तो हम उसमें सूक्ष्म शैवाल दिखाई पड़े जिनका माप और मोटाई लगभग इतनी ही जितनी कि पूर्णी से पन्सिल द्वारा लगाए गए किसी छोटे से निशान की। अगले कुछ सप्ताहों में हमने बदलते हुए रंग के जल के अनेक टुकड़े देखे, लेकिन वे सभी पीले नारंगी थे, लाल नहीं।

तूफानी हिन्द महासागर के बाद यह काचाभ शांत सागर सुखद था लेकिन १००° की गर्मी बेचैन कर देने वाली थी तथा डेक के नीचे वाले भागों में बहुत

ज्यादा परेशानी पैदा करती थी। इसलिए, उस रोज १७ जून को जब उत्तर पश्चिम से एक हल्का पवन चला तो हम सबने उसका बहुत ही स्वागत किया। उसका वेग बढ़कर दस नाट हो गया था जब कि हम अपने जहाज के पिछले भाग पर विस्फो

चित्र ५६ हिंद महासागर और लाल सागर में १९५९ की अपनी यात्रा के दौरान थेमा नौका का जल मार्ग।

टकों को तैयार कर रहे थे तथा उन्हें जहाज के जाले के ऊपर से उछाल कर फेंक रहे थे। पहले तीन विस्फोटक पनडुब्बियों को डुबाने के लिए प्रयोग किए जाने वाले प्रकार के बम थे—३०० पौण्ड के ऐश कैन प्रकार के बम जो कि द्वितीय विश्वयुद्ध में प्रयोग किए गए थे। इन्हें टी०एन०टी० के पलीतों से छोड़ा गया था। जैसे-जैसे ऐटलांटिस से हमारा फासला कम होता गया वैसे वैसे बराबर समय पर छोड़े जाने वाले विस्फोट उत्तरोत्तर छोटे किए जाते गए—८० पौण्ड—४० पौण्ड—१० पौण्ड—५ पौण्ड— और फिर प्रति मिनट ३ पौण्ड वाला विस्फोट।

जल के भीतर काम करने वाले विशिष्ट पलीतों के द्वारा छोड़े जाने वाले विस्फोटों से निकलने वाली ऊर्जा धक्का तरंगों के रूप में, अथवा बहुत कुछ ध्वनि

तरंगों के रूप में होने वाले कम्पनों के रूप में हर दिशा में फैलती जाती हैं। ये तरंगें जल में उसी चाल से चलती हैं जो कि ध्वनि की होती है अर्थात् ४८०० फुट प्रति सेकण्ड की रफ्तार से (जो कि लगभग ३३०० मील प्रति घंटा होती है)। विभिन्न पदार्थों के बीच की सीमा पर ये उछल पड़ती अथवा परावर्तित हो जाती हैं—ठीक उसी तरह जैसे किसी गभीरतामापी से निकले स्पन्दन समुद्र की तली से टकरा कर वापस उलट आ जाते हैं अथवा स्वयं आपकी आवाज किसी पर्वतीय चट्टान से टकरा कर प्रतिध्वनि के रूप में वापस आप तक पहुँच जाती है (चित्र ५८)। इस प्रकार तरंगें जल और समुद्र की तली के बीच की सीमा से अवसादों की विभिन्न परतों के बीच की सीमाओं से और अवसादों एवं उन ठोस शैलों के बीच की सीमा से, जिन पर वे टिके रहते हैं, परावर्तित होकर सतह पर पहुँचती हैं।

इन परावर्तित तरंगों को प्राप्त करने वाले जहाज को उनको छोड़ने वाले जहाज

चित्र ५७ "भूकम्पन दागते" हुए ऐटलांटिस। ३०० पौंड "डेप्थ चार्ज" से लेकर टी एन-टी के आधा पौंड ब्लाकों तक के परास के विस्फोटकों से ऐसी ऊर्जायुक्त ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं जो महासागर की तली और उपतली का मानो "एक्स रे" परीक्षण कर लेती हैं।

फोटो जान हाल्ट, वुड्ज होल ओशेनोग्राफिक इंस्टीट्यूशन।
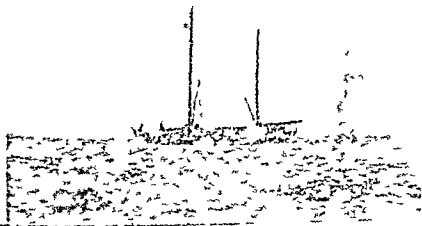
के काफी समीप होना पड़ता है। तरगो द्वारा उत्पन्न होने वाले दाब विभेद विद्युत आवेगो म बदल दिए जाते हैं जिन्हे रिकार्ड कर लिया जाता है और उनका समय जान लिया जाता है। चूकि जल म तथा समुद्र के नीचे के विभिन्न पदार्थो म ध्वनि की रफ्तार मालूम होती है इसलिए तरगो के आने जाने के पूरे एक फेर म लगे समय का माप कर समुद्र-तली तक की दूरी (गहराई) और प्रत्येक सीमा तक की दूरी का हिसाब लगाया जा सकता है। तरगो का एक बार नीचे जाना और फिर लौट कर आना होता ह अर्थात दूना रास्ता तय करना होता है, इसलिए समय को दो से भाग करना होता ह ठीक उसी तरह जस प्रतिध्वनि गभीरतामापन म।

चाल एक निश्चित समय म तय की गई दूरी, अथवा गहराई होती है। इसलिए यदि चाल मालूम है और उसम लगा समय माप लिया जाए तो सामान्य गुणा के द्वारा गहराई निकाली जा सकती है। इसी तरह से यदि आप दूरी और रास्ता
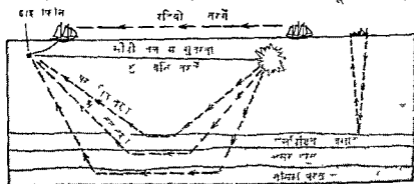
चित्र ५८ विस्फोटक ध्वनि-तरगो का महासागरीय तली से परावर्तन और अपवर्तन होता ह। परावर्तित तरगो द्वारा तली तक की दूरी अथवा जल की गहराई का उसी विधि से सकेत मिल जाता है, जसे प्रतिध्वनि गभीरतामापी से भेजे जाने वाले स्पदो द्वारा, जो चित्र की दाहिनी ओर समुद्र के पदा की तरफ सकेत भेजते हुए दिखाया गया है। चूकि तरगो की यात्रा का काल उस शल अथवा अवसाद के प्रकार पर निभर होता ह जिसमें से होकर वे गुजरती हैं, इसलिए अपवर्तित तरगो से समुद्र विज्ञानियों को समुद्र की तली की परतो की रचना और उनकी मोटाई का अन्दाजा लग जाता है।

तय करने का समय माप ले तो साधारण भाग के द्वारा चाल मालूम कर सकते हैं। चूकि तरगो की चाल उस पदार्थ के प्रकार पर निभर होती है जिसम से होकर वे गुजरती हैं, इसलिए यह अनुमान लगाया जा सकता ह कि समुद्र के नीचे की परत किस चीज की बनी ह।

उम रोज तमाम दिन हवा चलती रही और शाम होने तक समुद्र म छोटी छोटी ममर ध्वनिया शुरू हो गइ। रात को चौकसी करते समय मैंने चांद की रोशनी परावर्तित करती सफेद लहर शिखरो को देखा और समुद्र के शोर को नीरस विशुब्ध ममर ध्वनि म बदलते देखा। लहर लम्बी और भारी होती जा रही थी, उनकी ऊचाई बढती गई और उनके तरग शृ ग उठकर आगे गिर पडते और छिन्न भिन्न हो जाते। वेमा मे आगे-पीछे और दाए-बाए जबदस्त हिचकोले लग रहे थ और फुहार से उसका डेक भीग गया। अगले दिन सवेर ऐटलांटिस का आरोपो को विस्फोट करते हुए वेमा का अपने माग पर बनाए रखने म हमे बहुत मश्किल पडी।

विभिन्न पदार्थो के बीच की सीमाओ मे परावर्तित होने के अलावा धक्के की तरगे कम सघन पदाथ मे से अधिक सघन पदाथ मे जाते हुए—जैसे कि जल म कीचड मे या कीचड से शैल म जाते हुए—क्षितिज की ओर भी मुड अथवा अपवर्तित हो जाती है (चित्र ५८ देखिए) —वे सघनतर पदाथ की ऊपरी सतह पर उस चाल से चलती है जो कि उस पदाथ के लिए विशिष्ट होती है—अर्थात असमेकित अवसाद के लिए लगभग ६,००० फुट प्रति सैकण्ड (लगभग ४,००० मील प्रति घंटा) और उसके नीचे पाए जाने वाले शल के लिए २२,००० फुट प्रति सैकण्ड (लगभग १५,००० मील प्रति घटा)। अपने पूरे माग के दौरान व ऊपर के धीमी चाल वाले पदाथ मे भटकती जाती है और ऊपर की ओर परावर्तित होकर प्राप्त-कर्त्ता जहाज तक पहुच जाती है।

व तरगे, जो कि बढती हुइ अधिक गहरी, सघनतर परतो मे पहुचती है हाइड्रोफोनो तक सबसे पहले पहुचती है क्योकि व अधिकतम चाल द्वारा चलती है हालांकि व सबसे ज्यादा दूरी तय करती है। अन्य तरग आगे पीछे एक व्यवस्था पूर्ण क्रम म आती है। जब एक चाल वाली तरग प्राय काफी समाप्त हो जाता है उसके बाद ही अगली सबसे धीमी चाल वाली तरग पहुचती है। जहाजो के बीच की दूरी प्राय ०० मील से शुरू होती है और घटते जाते हुए शून्य हो जाती है जो फिर से लेकिन विपरीत दिशा म बढ्ती हुई ६० मील हो जाती है। इस दूरी और तरगो के यात्राकाल से उनकी चाल और इस तरह उस पदाथ का लगभग प्रकार का जिसमे से होकर वे गजरती है निर्धारण किया जा सकता है। अपवतन विस्फोट के छोडने से परतो की मोटाइ के परिकलन के लिए भी काफी जानकारी मिल जाती है।

जब १८ जून का अपवतन काय पूरा हो गया तो उस समय लहर लगातार मग्न होती जा रही थी और सतह पर घनी, समान्तर धारियो के रूप म फुहार

उड़ती जा रही थी। शीघ्र ही दोनों जहाजों में समूची उठती और उतरती जाती लहरों के शीर्ष का जल पहुंचने लगा। एटलांटिस ने संकेतों द्वारा सूचना दी कि वह हवा और समुद्र के विपरीत आगे नहीं जा पा रहा था। उसके कप्तान ने बड़ा ज़ोर देकर कहा "अगर हमने अपने जहाज़ के पिछले भाग से एक और विस्फोटक छोड़ा तो हमारे जहाज़ के बोस्प्रिट फट जायेंगे। मैं तो हवा के सहारे सहारे पोर्ट सईद की ओर जा रहा हूं।"

हमारा साथ छूट गया और वह बचाव शरण के लिए अफ्रीकी तट की ओर लौट गया। वेमा पर सवार हुए हम लोगों ने यह निर्णय किया कि हम उसे चलाते रहेंगे और चुम्बकीय प्रेक्षण तथा गम्भीरतामापन करते रहेंगे। वेमा एक अधिक बड़ा जहाज़ था और अधिक शक्तिशाली इंजन से लैस था।

उस रात जब मैं चांद की रोशनी में विस्तृत सागर को खड़ा निहार रहा था, तो हमारे उप इंजीनियर श्री पेट्ज़ ब्रिज पर आए। वह मेरे बराबर में खड़े हो गए और अपने हाथों को चुपचाप तेल से चिकने हुए एक कपड़े से पोंछते हुए निहारते रहे। एक तरंग द्रोणी में वेमा बहुत ज्यादा तिरछा हो गया और पेट्ज़ आगे को गिर गए। उन्होंने मस्तूल को साधने वाली एक रस्सी को पकड़ लिया और उसी क्षण एक लहर की चोटी ने हम दोनों को भिगो दिया। वेमा तरंग द्रोणी में से फिसलता हुआ अगली लहर का सामना करने लगा। यह एक ऊंची सी लहर थी और वह पुराना स्कूनर मानो उसके ऊपर चढ़ने में झिझक रहा था। पानी से भीगे और हांफते हुए हम यह पूरा विश्वास हो गया था कि वह जहाज़ उस जल लहर के नीचे अवश्य ही दब जाएगा। लेकिन बोस्प्रिट अचानक एकदम सीधा ऊपर तारों की तरफ पहुंच गया और हमने देखा कि जहाज़ का माथा लगभग ठीक हमारे सिरों के ऊपर आ गया। जब वेमा तरंग शृंग की चोटी पर पहुंचा तो पेट्ज़ ने चिल्लाकर कहा "मेट! तुम जहाज़ को सीधा नहीं रख सकोगे वह तो एक सिर पर सीधा खड़ा होना चाहता है।"

१९ तारीख की सवेरे होने हवा पूरे तूफान में बदल चुकी थी और चीत्कार करती हुई हमारे कानों को फाड़े डाल रही थी। अधिकाधिक जल हमारे ऊपर आ रहा था। फुहार पर फुहार और स्वयं लहर पर लहर डेक के ऊपर आकर गिर रही थी और जहाज़ पर लगातार पानी बना हुआ था। हर अगल-बगल के हिचकोले में पानी ज़ोर से छलकता और जहाज़ की मेड़ के ऊपर से कूदता हुआ डेक पर बने कमरों में घुस जाता और सीढ़ियों पर से होता हुआ अन्दर अन्दर नीचे को बहता। कोई चीज़ सूखी नहीं बची न ही कोई चीज़ अपनी जगह स्थिर रही।

जल के ज़ोर से वेमा की चाल बहुत धीमी हो गई। लहरों के तरंग शृंगों पर

विनम्र गति से चलने की बजाय उसका वाल्स्प्रिट (जहाज का अगला भाग) ज्वार के शीर्षों को चीरता जा रहा था। लहरों के साथ थपेड़े मारने पर जहाज में कम्पन पैदा हो रहे थे और जल का अधिकाधिक बोझ उसके ऊपर पड़ता जा रहा था। इसी तरह की चोट पर चोट लगने वाले प्रकार के स्वर दिन भर वह जहाज एक बार पूरी तरह एक लहर के नीचे में गोता लगा गया। डेक के ऊपर १० फुट से भी ऊंचा पानी आ गया और पूरे जहाज को एक सिरे से दूसरे सिरे तक पार कर गया। एक पिछले डेक हाउस का दरवाजा टूट कर खुल गया और लहर भीतर प्रविष्ट हो गई और प्रयोगशाला को जल से भर दिया।

उस समय ब्रिज पर से मैंने पीछे को मुड़कर देखा कि डेक पर पानी की मार से कोई भी पुरजा टूट कर अलग नहीं हुआ था। जब मैंने दुबारा सामने की ओर गर्दन घुमाई तो फिर से जल की एक ठोस दीवार सामने से दिखाई दी। यह इससे पहली दीवार से भी दूनी ऊंची थी और मुझे याद है उस समय मेरे मन में ऐसा विचार आया था कि यदि वह लहर जहाज पर से गुजरी तो हमारा जहाज जरूर चकनाचूर हो जाएगा। डेक पर पहले से ही मौजूद जल अपने बोझ से मानो जहाज का माथा उस समय नीचे झुकाना चाह रहा था जब कि डरावनी लहर वाल्स्प्रिट तक पहुंच रही थी। मैंने जहाज के कर्णधार को चिल्लाकर आगाह किया और स्वयं अपनी जगह पर जमा रहा।

अन्तिम क्षण में बेसा एक ओर बहुत ज्यादा झुक गया और उसके डेक पर आया हुआ पानी जंगले के ऊपर से छलका और पातद्वारों में से बहता हुआ बाहर निकल गया। वाल्स्प्रिट फिर से एक बार सीधा ऊपर आसमान में को आया और हमारा जहाज लहर के ऊपर से लगभग चढ़ गया।

तरंग शृंग पर क्षणमात्र के लिए हमारा जहाज गतिहीन सा हुआ और फिर तरंग द्रोणी में गोता मार गया। वह तरंग शृंग की दूसरी ओर झुक गया और लहर की पीठ पर तेजी से फिसलता हुआ नीचे आया। वह मुश्किल से ही सीधा हुआ था कि दूसरी लहर आई। मैंने रस्सी पर से अपना हाथ ढीला किया और श्री पट्टेज के बारे में सोचने लगा। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं था कि जहाज दूसरे तरंग शृंग पर भी ऊपर चढ़ जाएगा—और फिर उससे अगले पर भी और फिर उससे अगले पर भी—भले ही चाहे उसे 'अपने एक सिरे पर सीधा ही क्यों न खड़ा होना पड़े'।

सागर का विशाल गम्भीरखंड

लाल सागर की द्रोणी पृथ्वी की भू पपटी के किसी विशाल खण्ड के नाते

धम जाने के कारण उत्पन्न हुई जान पड़ती है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि किसी सुदूर भू वैज्ञानिक काल में भू-पपटी में तनाव उत्पन्न हुआ था और अफ्रीका तथा अरब एक दूसरे से दूर खिचते जा रहे थे। इस गति से लम्बे गहरे विभंग, अथवा द्रोणियाँ, पैदा हो गए जिससे कि ऐसी फिसलन वाली ढालू सतह बन गई जिनके ऊपर से अफ्रीका और अरब के बीच का एक लम्बा शिलाखण्ड नीचे खिसक गया। विभंग उत्तरी दिशा में बढ़ते गए और उन्होंने अरब तथा सिनाई प्रायद्वीप के बीच की अकाबा की खाड़ी जोड़ने का खाली भाग और उस गर्त को जन्म दिया जिसमें आजकल मृत सागर भरा हुआ है। विभंग की एक अन्य शाखा ने मिस्र को सिनाई से अलग काट दिया जिससे कि सुएज़ की खाड़ी बन गई ((चित्र ६०)।

इसके विपरीत दिशा में दोष तन्त्र अदन की खाड़ी से होता हुआ अफ्रीका में पहुँच जाता है और दरार तथा कटक अफ्रीका की समस्त पूर्वी दिशा में १,१,०० मील की दूरी तक फैले हैं। अब समुद्री कार्ल्सबर्ग रिज महासागर से अदन की खाड़ी में प्रविष्ट होता है और तट पर उसी स्थान पर आता है जहाँ पर दोष क्षेत्र ...ता है। पूर्व की ओर और फिर उसके बाद दक्षिण की ओर बढ़ते हुए यह कटक महासागर के फर्श पर दक्षिण में बहुत दूर यहाँ तक कि मडागास्कर के सामने स्थित मौरिशियस तथा राडीग्ज द्वीपों तक चलते जाते हैं। एक समय ऐसा सोचा जाता था कि कार्ल्सबर्ग कटक इस क्षेत्र में समाप्त हो जाता है। लेकिन भू-भौतिकी वर्ष के दौरान **वेमा** पर से लिए गए गंभीरतामापनों तथा अन्य भू-भौतिकीय आँकड़ों से ऐसा संकेत मिलता है कि यह दक्षिण-पश्चिमी दिशा में जारी रहता होगा।

सन् १९६० में **वेमा** हिन्द महासागर में लौट आया और मडागास्कर तथा मारिशियस के दक्षिण में स्थित क्षेत्र पर पाँच लम्बी टेढ़ी-मेढ़ी यात्राएँ कीं। गंभीरता-मापनों से लैमाँट के वैज्ञानिकों को यह विश्वास हो गया कि एक कटक हिन्द महासागर की पूरी लम्बाई में फैला है और वह गुडहोप अन्तरीप के एक हज़ार मील दक्षिण में *अफ्रीका का घेरा लगाते हुए उस मध्य समुद्री पर्वत से जा मिलता है जो कि* पूरे अटलांटिक महासागर के मध्य में होता हुआ ऊपर चलता है (चित्र ६०)।

इस रीढ़ की हड्डी के समान कटक के पाए जाने का पहला संकेत **चलेंजर** की यात्रा में उस समय प्राप्त हुआ था जब समुद्र विज्ञानियों ने देखा कि अटलांटिक का मध्य उससे आधे से भी कम गहरा है जितने कि उसके दोनों ओर के भाग क्षेत्र गहरे हैं। उसके बाद **मीटियोर** के विज्ञानियों ने जब कि वे दक्षिण अटलांटिक की जल-संहतियों का अध्ययन कर रहे थे, यह अनुमान किया कि इस महासागर के पूर्वी और पश्चिमी दिशाओं के गंभीर जल में कुछ कुछ अलग विभिन्नताएँ थीं। उनके

प्रतिध्वनि गभीरतामापी के द्वारा बनाई गई परिच्छेदिकाओं से पता चला था कि वहाँ एक ऊबड़-खाबड़ पर्वतीय अवरोध है जो अटलांटिक को दो द्रोणियों में विभाजित करता है। बाद में अन्य अन्वेषण-नौकाओं द्वारा लिए गए अनिगिनत गभीरता मापनों से पता चला कि उत्तर अटलांटिक में नीचे भी एक पर्वतीय कटक है।

इस कटक का सबसे ज्यादा अचरजभरा लक्षण पहले पहल ब्रिटिश समुद्र विज्ञानियों ने पता चलाया। यह लक्षण था ऐजोर्स के उत्तर में इस कटक के मध्य में चलती जाती हुई एक घाटी का बना होना जिसके बाजू सीधे खड़े थे। लमाँट के डा० ब्रूस सी० हीजेन ने, जब कि वह तमाम उपलब्ध गभीरतामापनों के आधार पर अटलांटिक के फर्श का एक विस्तारपूर्वक मानचित्र बना रहे थे, यह देखा कि गहरी घाटियाँ इस मध्य अटलांटिक कटक में अनेक स्थानों पर बनी हैं। डा० हीजेन का ऐसा विश्वास था कि यह घाटी अविच्छिन्न है और पृथ्वी की भूपपटी में बनी उस दरार की स्थिति बताती है जो कि अटलांटिक द्रोणी को ठीक दो भागों में विभाजित करती है। कटक और घाटी महाद्वीपों की रूपरेखा का अनुसरण करते चलते हैं तथा महाद्वीपीय ढालों एवं घाटी, अथवा कटक के मध्य के बीच की दूरी दोनों दिशाओं में समान है।

यह बहुत बुरा है कि वह समय, जब हम महासागर के फर्श के प्राकृतिक दृश्य को अपनी आँखों से देख सकेंगे, भविष्य में अभी बहुत दूर है क्योंकि यह दृश्य स्थल पर पाए जाने वाले किसी भी दृश्य से कहीं अधिक मनोरम और भव्य होगा। ऊबड़ खाबड़ मध्य अटलांटिक कटक दोनों बाजुओं पर बने चपटे मैदानों के ०००० फुट ऊपर खड़ा है—जो कि पूर्वी उत्तर अमरीका के किसी भी पर्वत से २००० फुट अधिक ऊँचा है। इसकी ७०० मील की चौड़ाई अटलांटिक द्रोणी का सम्पूर्ण मध्य तिहाई भाग घेरे हुए है। अधिकांश स्थानों पर चोटियाँ सतह से एक मील के भीतर आ जाती हैं किन्तु कुछ स्थानों पर वे ज्वालामुखी द्वीपों के रूप में सतह के ऊपर उठ आती हैं जैसे ऐजोर द्वीप समूह, सेंट पाल कटक, ऐसेन्शन तथा ट्रिस्टान डा कुन्हा। बाजुओं के मैदान नीची वितल पहाड़ियों के रूप में उठ जाते हैं जो फिर उससे आगे धीरे धीरे तीन ऊबड़ खाबड़ कगार जैसी सीढ़ियों के रूप में ऊँची जाती हैं। ये सीढ़ियाँ समुद्र से लगभग १४ ००० फुट से लेकर लगभग ११ ००० फुट नीचे तक उठती जाती हैं जहाँ पर वे क्रमिक रूप से ऊँचे विभग पठारों में मिल जाती हैं। ये पठार कटक की उच्चतम चोटियों से—जिन्हें रिफ्ट पर्वत कहते हैं—मिल जाते हैं।

इन पर्वतों की चोटियाँ दोनों बाजुओं में ६ ००० फुट गहरी रिफ्ट घाटी में

दारान वेमा न ऐम्स्टर्डम और सट पौल द्वीपा के क्षेत्र मे पूर्वी शाखा का आलेखन किया—य द्वीप इस कटक पर बनी दो चोटियां है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह शाखा आस्ट्रेलिया और दक्षिण ध्रुव महासागर के बीच मे बने उभार क्रमशः मे मिल जाती है। पूर्वी शाखा पर अथवा आस्ट्रेलिया के दक्षिण म, रिफ्ट घाटी स्पष्टत व्यक्त नहीं होती बल्कि कटक और रिफ्ट दानों ही न्यूजीलैण्ड के दक्षिण पूर्व म गए हे। हो सकता है कि रिफ्ट उस महान् भ्रंश-व्यवस्था से जाकर मिल जिसने न्यूजीलैण्ड के दो द्वीपों को बीच कर अलग अलग कर दिया है।

फैलती जाती हुई पृथ्वी ?

न्यूजीलैण्ड स लेकर मेक्सिको तक का प्रशान्त महासागर का फर्श एक दूतन बड़े क्षेत्रफल क बराबर विशाल धीमे उभार के रूप म उठा हुआ है जितना कि उत्तर और दक्षिण अमरीका के महाद्वीपों का कुल मिलाकर है। इस विशाल लक्षण को पूर्वी प्रशान्त उभार कहते है और यह अपनी पूरी ७,८०० मील लम्बाई म एक से दो मील तक ऊंचा हो जाता है और १ २०० स २ ६०० मील तक चौड़ा है। उभार एकसार रूप म चलता जाता है और उसके ढाल, अटलांटिक तथा हिन्द महासागरीय कटको के ऊबड़-खाबड़ विषम उद्भूत चित्र की अपेक्षा बहुत ही समित रूप म चलते हैं। साथ ही यह प्रशान्त महासागर की पूर्वी दिशा म है न कि महासागर के मध्य म। १९५७ के उत्तरार्द्ध में स्क्रिप्स इन्स्टीटयूशन आफ ओशेनोग्राफी की दो जहाजी खोज-यात्रा—एक्सपडिशन डाऊनविंग—ने इस उभार का विस्तृत अध्ययन किया। हालाकि इसके शृंग म ४८० मील चौड़ी चक्रमी पट्टी का विशिष्ट लक्षण पाया जाता है, फिर भी इसकी मध्य रेखा म खोजयात्रा को कोई भी रिफ्ट घाटी नहीं मालूम हो सकी।

यदि पूर्वी प्रशान्त उभार विश्वव्यापी कटक-यन्त्र का एक अविच्छिन्न भाग होता तो ऐसा कोई कारण नहीं था कि यह मेक्सिको के तट के पार अचानक समाप्त हो जाता। वास्तव म स्क्रि स के डा० हनरी डब्ल्यू० मनाड का ऐसा विश्वास है कि पश्चिमी बाजू अलास्का तक जाता है और कैलिफोर्निया तथा हवाई के बीच समुद्री फर्श का नीचे का ढलान इसी के कारण है। इसका किरीट और पूर्वी बाजू मेक्सिको को काटते हैं और वहा पर स्थल के बीच बीच म ज्वालामुखी बन है तथा यह स्थल एक ऊंचे पठार के रूप मे उठा हुआ है। उत्तर दिशा मे यह उठकर कोलोराडो पठार बन जाता है और कैलीफोर्निया से उटाह तक पश्चिमी राज्यों तथा मेक्सिकन बाडर से ओरगान तक के राज्यो मे बीच-बीच म ६,००० फुट ऊंचे कटक तथा घाटियां बनी हैं। यह स्थलाकृति इस महाद्वीप मे एक लगभग उतना ही

बड़ा उभार बनाती है जितना कि समुद्र के फर्श में पाया जाता है। इसी प्रकार का पठारीय उच्च भूमि पूर्वी अफ्रीका में भी पाई जाती है।

भूकम्प-पट्टी कैलिफोर्निया की घाटी में से होती हुई तट तक पहुंचती है। यह घाटी एक बड़ा रिफ्ट है जो कि लोअर कैलिफोर्निया को मेक्सिको से पृथक करता है। यह कैलिफोर्निया में से होकर गुजरता है और इस राज्य के उत्तरी भाग में स्थित सैन फ्रांसिस्को अंतरीप के पार पुन: समुद्र में पहुंच जाता है। पश्चिमी तट को हिला देने वाले अनेक भूकम्प, जिनमें १९०६ का सैन फ्रांसिस्को नगर को नष्ट कर देने वाला भूकम्प भी शामिल था, इसी क्षेत्र में होते हैं। तथापि इनमें से अधिकतर भूकम्प सैन ऐंड्रयाज़ दोष के सहारे-सहारे होने वाली गति के कारण आते हैं। हो सकता है इस गति का उभार पर कटक और घाटियां उत्पन्न करने वाले तनावों से कोई सम्बन्ध न हो।

आरगॉन तथा वाशिंगटन के पार श्रृंग पुन: समुद्र में पहुंच जाता है और यहां पर महासागरीय फर्श में दोष आकर बड़े-बड़े शैलखण्डों के रूप में ऊपर को उठे हुए कटक बन जाते हैं और भीतर को धंसी हुई घाटियां। यहां की स्थलाकृति मध्य महासागरीय कटकों के बहुत समान है। वैंकुवर द्वीप के पार यह उभार फिर से इसवार रूप में चलता जाता है लेकिन भूकम्प पट्टी उत्तर की ओर चलती जाती है और अलास्का के हृदय को लिन नहर में से पुन: महाद्वीप को काटती है। हीज़ेन का विश्वास है कि यह नहर पूर्व घोषित समार व्यापी रिफ्ट का ही एक भाग होना चाहिए।

मेनार्ड का विचार है कि पूर्वी प्रशान्त का फर्श इस उभार के रूप में एक नीचे से ऊपर उठती जाने वाली संवहन धारा के द्वारा उठा है। इस विचारधारा के अनुसार भू-क्रोड में पाए जाने वाले क्षयशील रेडियोऐक्टिव तत्त्व प्रावार की तली को गरम करते रहते हैं (पृष्ठ २८ देखिए)। प्रावार पदार्थ फैलता है और हल्का होकर भू-पर्पटी की ओर उठता जाता है (चित्र ४)। ऊपर उठता जाता पदार्थ भू-पर्पटी में उभार पैदा कर देता है और उसे खींचता हुआ पतला कर देता है। फिर यह धारा फैल जाती है और क्षैतिज रूप में भू-पर्पटी की तली के सहारे सहारे बहती है। जैसे जैसे यह बहती जाती है वैसे-वैसे अपनी गर्मी छोड़ती हुई ठण्डी और सघनतर होती जाती है और अन्त में नीचे बैठती जाती है। मेनार्ड का विश्वास है कि नीचे बैठने जाने की क्रिया इस पूर्व प्रशान्त उभार के बाजुओं पर होती है। परिसंचरण पूरा होने के लिए प्रावार पदार्थ में क्रोड के ऊपर-ऊपर बहता हुआ पुन: ऊपर उबलने वाले क्षेत्र में पहुंच जाता है, और जैसे-जैसे यह चलता

जाता है वैसे वैसे गम होता जाता है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि एक सम्पूर्ण चक्र के पूरा होने में लगभग ६ करोड वर्ष लगते हैं।

इस सिद्धान्त का अगला प्रमाण इस तथ्य के रूप में मिलता है कि किराटो पर एक उच्च ऊष्मा प्रवाह और इस उभार के बाजुओं पर असाधारण निम्न ऊष्मा प्रवाह पाया गया है। जवमापी द्वारा ज्ञात की गई जाने वाली और जल में पहुंचने वाली गर्मी का डाऊनविंड खोजयात्रा (Downwind Expedition) पर मापा गया। इस मापन-कार्य में दस फुट लम्बी सलाइयों का समुद्र के फर्श में गाड़ा गया जिनके साथ-साथ ताप मापी युक्तियां लगी हुई थीं। सलाई के विभिन्न बिन्दुओं के बीच में पाए जाने वाले ताप विभेद का रिकार्ड किया गया और तल का नमूना लिया गया ताकि उस अवसाद के ऊष्मा संवहन गुणधर्मों का पता लगाया जा सके। शिखर पर ऊष्मा प्रवाह महासागरीय द्रोणी के दोनों बाजुओं में पाए जाने वाले ऊष्मा प्रवाह से पांच गुना अधिक है और पश्चिमी बाजू पर पाए जाने वाले ऊष्मा प्रवाह से आठ से दस गुना अधिक होता है।

मध्य-अटलांटिक कटक में भी ऊष्मा प्रवाह की उच्च दर पाई जाती है। एविंग का विश्वास है कि संवहन धाराएं यहां रिफ्ट घाटी के नीचे उठती जा रही हैं। हो सकता है कि ये धाराएं पूर्वी प्रशान्त उभार के नीचे पाई जाने वाली धाराओं से अधिक पुरानी और अधिक विकसित हों। जहां पर क्षैतिज गति पर्याप्त प्रबल होती है वहां भू पपटी अगल-बगल खिंचती जाती है और रिफ्ट बनता जाता है। एविंग का ख्याल है कि पिघले हुए शैल के उबल कर ऊपर आने से ही कटक बना है। इसके विपरीत हीजेन का मत है कि मध्य-अटलांटिक कटक दोष-रेखाओं पर भू-पपटी के विशाल खण्डों के ऊपर उठने के कारण बना है और यह कि रिफ्ट-घाटी मुख्य दोष क्षेत्र है। कुछ अन्य व्यक्तियों का विश्वास है कि ऊपरी प्रावार में होने वाले रासायनिक परिवर्तनों से उसमें प्रसार हुआ है और भू पपटी बलपूर्वक ऊपर को उठती हुई कटकों और उभारों में बदल गई है।

यह सिद्ध नहीं किया जा सका है कि संवहन धाराएं वास्तव में विद्यमान हैं, और, ऊष्मा प्रवाह के मापनों के निष्कर्षों का अन्य रूपों में भी स्पष्टीकरण किया जा सकता है। अतः हो सकता है कि कटकों और उभारों के उद्भव के सम्बन्ध में इसी तरह कोई अन्य सिद्धान्त ठीक हो या यह भी हो सकता है कि सही सिद्धान्त की ओर अभी तक किसी का ध्यान ही न गया हो। अब समुद्री पर्वत-तन्त्र के उद्भव के विषय में समस्या बनी हुई है किन्तु इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यह तन्त्र मौजूद है और महासागरीय फर्श का इतना बड़ा क्षेत्र घेरे हुए है जो तमाम महाद्वीपों को मिलाकर भी उनसे ज्यादा है। यह सबसे बड़ी पर्वतमाला है और

निम्नदेह हमारे इस भू-ग्रह का एक सबसे भव्य और महत्त्वपूर्ण भू-वैज्ञानिक पहलू है।

रिफ्ट घाटी और उथले अन्तःसमुद्री भूकम्पों में एक निश्चित सम्बन्ध है लेकिन क्या यह रिफ्ट प्रस्तावित ४०,००० मील की समस्त लम्बाई में पाया जाता है या नहीं, यह एक अलग प्रश्न है। अंग्रेज तथा जर्मन समुद्र विज्ञानियों ने उत्तर अटलांटिक में रिफ्ट में छूटे हुए स्थान पाए हैं, और हिन्द महासागर में इसकी विच्छिन्नता सिद्ध कर दी जा चुकी है। साथ ही, स्विस के समुद्र विज्ञानियों ने पूर्वी प्रशान्त उभार पर भी इसे मौजूद नहीं पाया। फिर भी ऐसा हो सकता है कि जिन जिन स्थानों पर यह नहीं पाया जा सका है वहां यह इतना कम विकसित हुआ हो सकता है कि गंभीरतामापनों से इसका पता ही न चले अथवा यह भी हो सकता है कि ऊबड़-खाबड़ स्थलाकृति में यह छिप गया हो।

इस सिद्धान्त से कि हमारे इस ग्रह में ४०,००० मील लम्बी एक दरार पड़ी हुई है और आगे महत्त्वपूर्ण अटकलें लगाई गई हैं। ऐसा बहुत-सा प्रमाण मौजूद है कि विभिन्न महाद्वीप सदा उन्हीं स्थानों पर नहीं रहे हैं जहां वे आज हैं और पिछले ५० करोड़ वर्षों में वे अपना स्थान बदलते रहे हैं। इस प्रमाण के स्पष्टीकरण के लिए कुछ भू-विज्ञानियों का कहना है कि आज के विभिन्न महाद्वीप किसी बड़े अकेले थल-खण्ड के टुकड़े हैं जो टूट कर अलग-अलग हो गए थे, और ये टुकड़े एक दूसरे से दूर-दूर खिसकते जाते रहे हैं और कदाचित आज भी खिसकते जा रहे हैं। तथापि, यदि ऐसा वास्तव में हुआ होता तो महाद्वीपों के अग्रगामी सीमान्तों पर महाद्वीपीय महासागरीय शैलों के टूटते फूटते जाने से भारी अस्त-व्यस्तता पैदा हो जाती, और पिछले सिमटते हुए सीमान्तों पर बड़ी बड़ी खरोंचे पैदा हो जातीं। ये लक्षण आसानी से ही देखे जा सकते थे, लेकिन ऐसी कोई चीज पता नहीं चली है। साथ ही, ऐसे किसी भी सन्तोषप्रद कारण अथवा बल का सुझाव अभी तक नहीं रखा जा सका है जिससे इस बात का स्पष्टीकरण हो सके कि आखिरकार पहली बार इन महाद्वीपों का खिसकना शुरू ही कैसे हुआ।

इस सिद्धान्त के विरोध में इन प्रबल तर्कों के बावजूद कुछ भू-विज्ञानियों का ख्याल है कि इससे मध्य महासागरीय कटकों और रिफ्टों के पाए जाने का स्पष्टीकरण हो जाता है। किन्तु यदि एक महासागर की रिफ्ट घाटी से दूसरे महासागर की रिफ्ट घाटी तक भू-पपटी के विशाल खण्ड एक सम्पूर्ण पिण्ड के रूप में चल रहे होते तो अग्रगामी सीमान्तों पर पाए जाने वाले रिफ्ट खुलते जाते और अनुगामी सीमान्तों पर बन्द होते जाते। ऐसा होने की पुष्टि करने वाला कोई प्रमाण नहीं

मिला है उल्टे हीजेन का कहना है कि लगता है दूर महाद्वीप का चारो ओर से घेरने वाले रिफ्ट खुलते जा रहे हैं।

इस प्रमाण के स्पष्टीकरण के लिए कि विभिन्न महाद्वीप समुद्र के नीचे की एक ससार व्यापी दरार के आधार पर निर्भर है हीजेन का कहना है कि पृथ्वी फैल रही है। उसका विश्वास है कि महाद्वीप एक ही आकार के बने हुए हैं केवल उनकी आपेक्षिक स्थिति बदल रही है उसी तरह जैसे कि चित्तीदार बने हुए गुब्बारे को फुलाते जाने से उसके निशान एक-दूसरे से दूर हटते जाते हैं। वह कौन-सा बल है जो इस पृथ्वी के गुब्बारे को फुला रहा है? ब्रिटिश भौतिकविद् पी०ए०एम० डिरैक ने जिसने आज से २५ वर्ष पूर्व सबसे पहले यह कहा था कि पृथ्वी फैल रही है यह सोचा था कि ऐसा होने का कारण यह तथ्य है कि जैसे जैसे विश्व पुराना होता जा रहा है गुरुत्व का बल कम होता जा रहा है।

यदि पृथ्वी के हर भाग को उसके केन्द्र की ओर खीचने वाला आकर्षण बल समय के साथ साथ घटता जाता है तो इसका अर्थ होगा कि प्रत्येक कण में केन्द्र से दूर चलते जाने की प्रवृत्ति होगी। इस गति का कुल मिलाकर नतीजा यह होगा कि पृथ्वी की परिधि बढ़ती गई होगी और ऐसा हिसाब लगाया गया है कि ३½ अरब वर्ष में यह परिधि १,१०० मील अधिक हो गई होगी। यह फासला लगभग न्यूयार्क सिटि से आर्कंसस स्थित लिटिल रॉक के बीच की दूरी के बराबर है। कनाडा के टोरांटो विश्वविद्यालय के डा० जे० टजो विल्सन ने यह दर्शाया है कि इस प्रकार से पृथ्वी की सतह का क्षेत्रफल लगभग उतना बढ़ गया होगा जितना कि ठीक मध्य महासागरीय कटकों का कुल मिलाकर है।

हीजेन के कल्पना चित्र के अनुसार मूलत पृथ्वी छोटी थी और उस पर ग्रेनाइट का एक कवच पूरी तरह मढ़ा हुआ था। ग्रेनाइट महाद्वीपों का प्रधान शैल है। भीतर से होने वाले प्रसार के कारण यह कवच महाद्वीपों के आकार के बराबर के टुकड़ो मे खण्डित हो गया। इन खण्डो के बीच-बीच मे महासागरीय द्रोणिया बन गई जो कि आज भी बढ़ती जा रही है। रिफ्ट घाटिया उन स्थानो की सूचक हैं जहा पर तनाव के प्रभाव से पृथ्वी खुलती जा रही है। प्रावार से रिफ्टो मे को उबल उबल कर आने वाला नया पदार्थ भू पर्पटी के नए भागो के रूप में 'जमता जाता है'। अत घाटियो की तली मे हम भू पर्पटी के सबसे पहले और नवीनतम भाग मिलने चाहिए। महासागरीय द्रोणियो तथा महाद्वीपो के उद्भव का यह सिद्धान्त बहुत कुछ मीनज तथा एविंग के सिद्धान्त से (पृष्ठ २७ पर देखिए) के समान है। इन दोनो मे केवल एक ही अन्तर गतिदायक बल का है—एक सिद्धान्त मे यह बल प्रसार का है और दूसरे मे सवहन धाराओ का।

सिकुड़ती जाती हुई पृथ्वी ?

वटव रिफ्ट तन्त्र अवश्य ही भव्य आर विस्तृत ह लेकिन निश्चय ही मबस अधिक सक्रिय नही है और न ही महासागरीय फश का सबसे अधिक दर्शनीय क्षत्र है। मध्य महासागरीय रिफ्टो मे सम्बन्धित भूकम्प समस्त ससार की भूकम्प-ऊर्जा क ५ प्रतिशत स भी कम के उत्तरदायी ह। इस ऊर्जा का ८ प्रतिशत म अधिक भाग और ९० प्रतिशत वाले भूकम्प अधिकतर प्रशान्त द्वारा की घेरने वाले गभीर टचा पर स्थित ह। हमारे ग्रह पर पाए जान वाले अधिकतर सक्रिय ज्वालामुखी इन ट्रेचो के ठीक स्थलाभिमुख दिशा म पवतमालाओ पर अथवा ऐल्युशियन, जापान आर फिलिपीन के समान ज्वालामुखी द्वीपो के विशाल घुमावदार वक्रो पर स्थित ह। भूकम्पो, ज्वालामुखियो और ट्रेचो की इस परि प्रशान्त पट्टी को "अग्नि वलय" कहा जाता है (**चित्र ६**), जा ठीक ही है।

ट्रेचें प्रशान्त महासागर की विशेषता ह केवल एक ट्रेच हिन्द महासागर म और चार छोटी छोटी टेंचें अटलाटिक म पाई जाती ह। एक ही ट्रेच किसी भाग म V की आकृति की हो सकती ह आर किसी भाग मे चपटे फश वाली। भूकम्पी परावतन से पता चला है कि चपटे फर्शों के नीचे अवसादो की मोटी मोटी परत बनी है जो कि V की आकृति की आडी काटो म नही पाई जाती। प्राय फर्शो म क्रमिक गड्ढे बन हाते ह जिन्हें गभीर (deeps) कहते ह। इन्ही गभीरो म समार महासागर की सबम अधिक गहराइया पाई जाती है। ट्रेचो की तलियो म उभरन वाले पहाड़ या अनुमानत ज्वालामुखी ह।

ट्रेचो की यह विशिष्टता भी ह कि एक तो उनम ऊष्मा प्रवाह कम होता ह आर दूसर गुरुत्व म कमी होती ह अथात उन पर आशा क विपरीत गुरुत्व का खिचाव कम होता ह। चूकि गुरुत्व तत्त्व महति पर निभर होता ह इसलिए इसम ऐसा पता चलता है कि ट्रेचो के नीचे पदाथ की एक रहस्यमय कमी ह अथवा उसम बहुत ही हल्का पदाथ पाया जाता ह। वलित मेखला का सिद्धान्त है कि ट्रेंचे उस समय बनी थी जब कि भू-पपटी के भाग परस्पर सपीडित हो अथवा भीच गए आर नीचे प्रावार म मुड गए। सामान्यत, हल्के पदाथ को यह नीचे मुडना समस्थितिक म तुलन (isostatic balance)[1] के द्वारा बलपूवक उठ जाएगा, ठीक उमी तरह जम कि अधिक भारी उस के नीचे दाब की स्थान स्थान पर स्थायी हटाव

---

[1] अधिक हल्के पदार्थो क। गुरुत्व क द्वारा ऊपर धकेल दिए जान की अथवा गुरुत्व प्रावार म अधिक भारी पदार्थों की अपेक्षा अधिक ऊचा ऊचा निकल जान की प्रवृत्ति (पृष्ठ २७ देखिए)।

चित्र ६० प्रशांत महासागर को घेरने वाले भूकम्प क्षेत्रों, अध समुद्री पर्वतमालाओं और गभीर ट्रेंचों के परस्पर सम्बन्ध। "अग्नि घेरे" से सम्बन्धित गभीर और मध्य भूकम्पों के अधिकेन्द्रों का अलग से आलेखन किया गया है। आलेख आरेख में यह दर्शाया गया है कि भूकम्प जब तिरछे होकर महाद्वीपों के नीचे पहुंचते हैं तो वे किस तरह अधिक गहरे होते जाते हैं जो कि इस उदाहरण में जापान और एशिया के नीचे के हैं।

गुजरती है। एक जमन भू विज्ञानी डा० हैन्स स्टील का ख्याल है कि यह ढालू दोष मनर उस पिघले हुए गल के लिए माग प्रदान करती है जो ज्वालामुखियों म इधन का काम करता है। साथ ही उसका यह विश्वास भी है कि पथ्वी का भीतरी भाग ठण्डा होता जा रहा है जिमसे यह ग्रह सिकुडता जा रहा है। अत ये दोष उन विमपण समतलो का काम करते है जिन पर से महाद्वीपों के सीमान्त ऊपर खिसकते हुए महासागरीय द्रोणियों के ऊपर आते जा रहे हैं।

महाद्वीपों की वद्धि

पथ्वी फल रहा है सिकुड रही है या स्थिर है—इस बात की अभी तक जानकारी नहीं है। न ही हम उन जटिल रचनाओं और घटनाओं की प्रकृति के बारे म मालूम है जो कि महाद्वीपों तथा महासागरीय द्रोणियों के मिलने के स्थान पर होता है। इन समस्याओं का उत्तर समुद्र के नीचे तथा गम्भीर शैलों के नीचे छिपा है, और हो सकता है ये समस्याएं हमारे अपने ही जीवनकाल म हल हो जाए। तथापि कुछ एस सिद्धान्त भी हैं जिनका कभी सीधा सत्यापन नहीं हो सकेगा। कुछ एसी विशेष घटनाए है जो भू विज्ञानियों के अनुसार सुदूर बीते युग म घटी थी और उस सुदूर भविष्य म दुबारा घटेंगी जिसे हम अपनी आयों से कभी नहीं देख सकेंगे। जब तक हम इस अनभ्यास के क्षेत्र म रहते हैं तब तक मैं उन कुछ घटनाओं के वर्णन करने का प्रयत्न करूंगा जो कि उपलब्ध परोक्ष प्रमाण और सबसे अच्छी तरह जाने हुए सिद्धान्तों के अनुरूप है।

देखने म एसा लगता है कि व टेच—जो कि महाद्वीपों अथवा उच्च ज्वालामुखी द्वीपों म सलग्न स्थित हैं और महासागर के सबसे गहरे भाग बनाती हैं—प्राकृतिक द्रोणियां हैं जिनमें समीपवर्ती स्थल से अपरदन हुए शल्क बह बह कर आते रहे होंगे। यदि यह सच है तो इसका मतलब होगा कि टचें जल्दी ही भर जाएंगी बशर्ते कि उनकी तलियां अवसादन की दर के समान दर से नीचे न बठती जा रही हों। इस प्रकार का नीचे बैठते जाना किसी दोष पर लगातार नीचे खिसकते जाने के कारण हो सकता है अथवा तलों के नीचे खींचती जाने वाली संवहन धाराओं के द्वारा हो सकता है। यदि ऐसा हो रहा होता तो ऐसी कल्पना की जा सकती है कि छह मील तक मोटे अवसाद टचों म एकत्रित हो सकते थ।

यदि ऐसा होता कि आ आकर एकत्रित होते जाने वाले अवसादों की गति से नीचे की ओर खिसकते जाने की क्रिया पीछे रह जाती तो अतत टचें भर जातीं। भूकम्पी परावर्तन और अपवर्तन से—जो कि भीतरी अवकाश के लिए हमारी एक्स र आख हैं—यह पता चला है कि उत्तर अमरीका के तट के पार, हैटेरास अन्तरीप

उठ गई हो कि यह समस्त रचना महाद्वीप से जुड़कर उसका अभिन्न अंग बन गई। क्षैतिज रूप में बहती हुई संवहन धाराएं या ऊपर को उबलता हुआ मैगमा (पिघला हुआ नैल और गैस), हो सकता है इन नए पर्वतों के निचले भाग में अतिरिक्त हल्के पदार्थ को जोड़ते गए हों जिससे कि छह मील मोटी महासागरीय भूपपटी को मोटा करते हुए २५ मील मोटी महाद्वीपीय भूपपटी बन गई। इस प्रकार से महासागरीय द्रोणियों की कीमत पर विभिन्न महाद्वीपों में वृद्धि होती गई होगी।

११

अवसादों की पुस्तक

"उससे भी गहरा जहा तक नारव्हाल व्हेल लगाता गोता,
उससे भी गहरा जहा तक समुद्री घोडा रहता जल पीता "—टी० मिलर

अप्रल, १९५७ म सयुक्त राज्य अमरीका न उत्तर ध्रुव महासागर म बहत हुए एक दस फुट माटे हिम-खड के ऊपर एक अनुसधान केन्द्र स्थापित किया। दो मील लम्बे और दो मील चौडे इस बहते हुए बर्फ के टुकडे को एसा आदश प्लेटफाम समझा गया जहा से उत्तर ध्रुव को घेरने वाले क्षेत्र का अध्ययन किया जा सकता था। इस केन्द्र को स्टेशन एल्फा का नाम दिया गया था और इसमे काम करने वाले व्यक्ति असैनिक विज्ञानी गण तथा एयरफोस के व्यक्ति थे। नवम्बर १९५८ तक यह केन्द्र काम करता रहा लेकिन तब यह बहता हुआ बर्फ का टुकडा एक भीषण हिम दाब के क्षेत्र म फस गया और चूर चूर हो गया। उत्तर ध्रुव के अधेरे और वहा की कडी ठड की प्रतिकूल परिस्थितियो मे थूले (ग्रीनलैंड) की वायुसेना के एक हवाई जहाज ने बडी हिम्मत के साथ बहते हुए बर्फ के एक खड पर विमान को उतारा और बिना किसी जान का नुकसान पहुचे सभी व्यक्तियो को सकुशल निकाल लिया।

एक अन्य केन्द्र जिसका नाम 'स्टेशन ब्रैवो' था उत्तर कैनाडा म एक हिम शेल्फ से टूट कर अलग हुए १५० फुट मोटे और ऊपर से चपटी सतह वाले प्लावी हिमशैल पर बनाया गया था। ९ मील लम्बे और ८ मील चौडे इस हिम द्वीप पर १९५२ और १९५५ के बीच म रह रह कर रहा गया और

नू माताती वप क प्रारम्भ म उम पुन्नप क ग्गिन क ममय तक लगभग लगातार म्म पर रहा जाना रहा है। १९६ म म्म हिम द्वीप म स एक वडा गड टटकर अलग हा गया था जा अलास्का स्थित पाएन्ट बरा के पार उथले जल म कुछ बार के लिए नीचे ज़मीन म बट गया था।

सन १९५९ म यह निणय किया गया कि फ्लावी हिम पज म एक अय केन्द्र स्थापित करक केन्द्रीय उत्तर ध्रुव प्रदेश म अध्ययन करना जारी रखा जाए। अप्रल के महीने म पाएट बरा क ५५० मील उत्तर म बहते हुए एक १० फुट माट और ७ मील लम्बे तथा ४ मील चौडे बफ के टुकडे पर स्टेशन चार्ली नामक केन्द्र का निमाण किया गया। यह केन्द्र अमेरिक यविनया वायुसना तथा नामना का एक मिश्र जला प्रयास था जा अतर्राष्ट्रीय भू भातिकी महयाग वप १०५९ (आई० जी० सी०—१९१९) के साथ जुडा था। आई० जी० सा० की समाप्ति अन्तराष्ट्रीय भ भातिकी वप क अनमरण रूप म की गइ थी ताकि वैज्ञानिक प्रक्षणा म करन और जानकारी के आदान प्रदान म अन्तराष्ट्रीय महयाग जारी रखा जा मक और इमलिए भी कि एक आर अन्तर्राष्ट्रीय भ भातिकी वप के कायक्रम तथा दूसरी आर विशिष्ट क्षेत्रा म अधिक स्थायी अन्तराष्ट्रीय प्रयासा क बीच की खाई पाटी जा सके।

स्टशन चार्ली म स वच निकल हुए अनेक विज्ञानी और वायुसना के व्यक्ति स्टेशन चार्ली म काम करन क लिए स्वेच्छा स अपनी सेवाए अर्पित करन क लिए सामन आए। वायुसेना न उनम स बावर्चिया रडियोमना, मेकेनिका तथा भारी उपकरण चालका क तथा अलास्का क अलग थलग स्टेशना से अय स्वयसवका क दस्त का चुना। असनिक दस्ते मे सयुक्त राज्य मामम ब्यूरा नामना की अध जल ध्वनि प्रयाग शाला और हाइड्रोग्राफिक आफिस, वाशिगटन विश्वविद्यालय तथा डैमाट भू विज्ञान वधशाला क विज्ञानीगण शामिल थे। जब मैंने यह सुना कि चार्ली पर समुद्र विज्ञान सम्बन्धी आर समुद्री भू भातिकी का एक कायक्रम लमाट करन जा रहा है ता मैंने भी वहा जान क लिए अपन आप का समर्पित किया आर मेरी प्राथना स्वीकार हुई।

इस केन्द्र का जिस हमने नोट्यर का उपनाम दिया था, आगामी जावन अल्पकालीन आर विक्षुब्ध हान वाला था। जिस बहत हुए बफ के टुकडे पर यह बनाया गया था वह बहकर खिसकता हुआ ध्रुव के ७०० मील के भीतर आ गया, और उसक बाद पश्चिम की ओर मुडा और साइबेरिया क तट के समान्तर चलता गया। १९५९ के आखिर म इस बहत हुए बफ के बहन की दिशा उलटी हो गई और दिसम्बर म यह पुन अलास्का के उत्तर म पहुच गया था।
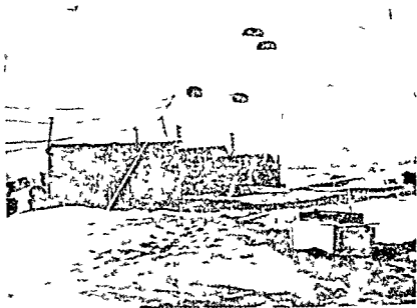
फोटो विलियम जे० क्रोमी।

चित्र ६१ उत्तर ध्रुव महासागर विस्थापन स्टेशन चार्ली पर कार्य करने वाले व्यक्तियों को खाना और अन्य सप्लाई उस समय पैराशूट द्वारा पहुचानी पडती थी जब ग्रीष्म में पिघलने से बर्फ पतली हो जाने के कारण विमानों का उतरना सम्भव नहीं था। यह चित्र उस समय लिया गया था जब बहती हुई बर्फ अलास्का के लगभग ३०० मील उत्तर में थी।

लेकिन अपनी उस निद्रालु आख से एड ने गस को अपनी बन्दूक मे गोली भरते हुए देख लिया था। वह तुरन्त बिस्तर से कूदा और एक बन्दूक दबाच कर गस के साथ हो लिया। भाग्य से यह अच्छा ही रहा क्योकि बाहर दो भालू थे—एक मादा भालू और एक उसका बच्चा। आज गस और एड दोनो के घर मे इन भालुओ की खाल के कालीन बिछे है।

जब बहता हुआ हिम खड तिर रहा था तो लमाट की एक मुख्य दिलचस्पी उस समुद्र फर्श के ऊपर बिछे अवसादो का अध्ययन करने मे थी जिसके ऊपर से होकर वह हिम-खड बह रहा था। हमने आशा की थी कि क्रोडक (corer)

फोटो वुडज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टाटयूशन।
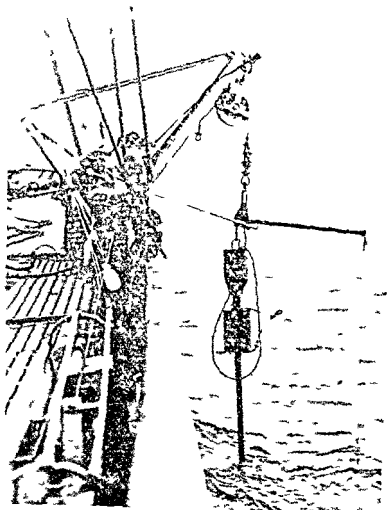
चित्र ६३ महासागरीय तली के नीचे का अवसाद परतों के अविक्षुब्ध नमूने प्राप्त करने के लिए एक बड़ा क्रोडक उतारा जा रहा है। दाहिनी ओर जल में डूबा हुआ सून अपने ही सहारे, बाई ओर की खोखली क्रोडक नली की तली के १० से २० फुट नीचे के समतल पर, लटके हुए एक भार के द्वारा कसकर तना रहता है। तली से सबसे पहले यही भार टकराता है और भुजा के ऊपर चलाते हुए तिकोने "बेल" से क्रोडक को मुक्त कर देता है। क्रोडक स्लक लाइन के पाश पर गिरता है और भार उसे तली में घुसा देता है।

एक दिन जब कि हम पिघले हुए पानी की एक खाई में से एक बाल्टी को भारी डी ६ बुलडोजर द्वारा खींचे जाने का ढंग देख रहे थे तो मुझे एक ध्यान सूझा। मैंने वायुसेना के कप्तान से, जो कि उस केन्द्र का अधिकारी था, उस क्रेन मशीन को मांगने के लिए कहा। उसने जवाब दिया कि मशीन के हिसाब से एक केबल ज्यादा पतली होती जा रही थी और उसको इधर उधर घुमाना मुश्किल लगता था इसलिए मैं उसे वहीं प्रयोग कर सकता था। उस केन्द्र पर काम करने वाले तीन अन्य समुद्रविज्ञों की सहायता से मैंने उसके पीछे की टोइंग चर्खी पर चढ़ी भारी केबिल को उतारा और उसके स्थान पर उस पर कुछ हजार फुट लम्बा
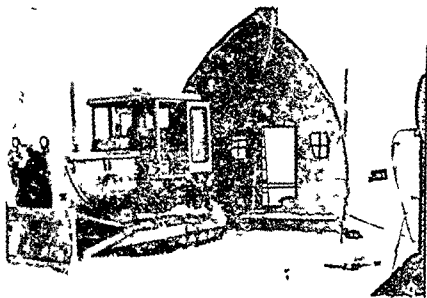
फोटो विलियम जे० कोमी।

चित्र ६४ जब स्टेशन नोर्थईयर पर समुद्र विज्ञानियों के पास अपने उपस्कर उठाने और गिराने के लिए चर्खी नहीं थी तो उन्होंने अपनी ही झोंपड़ी की एक बाजू तोड़ दी और एक बुलडोजर को वहां तक उल्टा चला लाए और इस मशीन के पिछले भाग में लगी, किसी नौका आदि को खींचने वाली चर्खी को प्रयोग किया। झोंपड़ी के अन्दर रखा विशाल त्रिपाद बर्फ में बनाए गए एक छिद्र के ऊपर लगा है।

समुद्र विनानी तार लपट दिया। तब हम बुल्डाजर को उल्टा चलाकर बफ म बन सूराख के पास तक ले आए और एक तिपाही पर म लटकाइ गई गरारी के ऊपर म तार को छाडत गए आर हमारा समुद्र विनानीक ाम चालू हा गया।
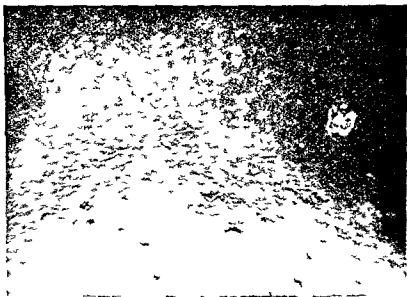
फोटो विलियम जे० कोमी।

चित्र ६५ बुलडोजर के पीछे से जल में डाले गए एक अध जलीय कैमरे द्वारा उत्तर ध्रुव महासागर के फश का एक फोटो। दाहिनी ओर बनी सफेद वस्तु कदाचित स्पजा का कोई मडल है। बाइ ओर काली वस्तु शायद कोई नर्म शरीर वाला तल निवासी जतु है, जसे समुद्री खीरा अथवा समुद्री स्लग। तीन स्टार फिशें देखी जा सकती हैं और उनमें से दो के बीच में एक कृमि रेंग रहा है जो चित्र के लगभग बीचो-बीच, अपने पीछे एक चौडा, लहरदार अनगामी पद चिह्न छोड रहा है। टहनी-जैसी वद्धिया कदाचित ब्रायोजोअन मडल हैं।

वायुसेना के किसी भी व्यक्ति को हम अपने काम मे न छीन लें इसलिए हमने बुल्डाजर का चलाना आर उसकी स्वय सर्विस करना, आदि सीख लिया। एक दिन जब हम एक कोड लने का प्रयत्न कर रहे थे तो वायुसेना के व्यक्तियो का एक दल हमारा तमाशा देखने के लिए आया। जब हमन उत्तर ध्रुव महासागर की तली मे स सफलतापूवक आठ फुट लम्बा कोड खीचा तो केन्द्र के भारी

एक परत से दूसरी परत में होने वाले परिवर्तनों में, जो कि क्रोडों में स्पष्ट दीखते हैं जलवायु, ज्वालामुखी क्रिया अपक्षय, हिमनदन और बाहरी अंतरिक्ष में आने वाले पदार्थ की मात्रा के परिवर्तनों का संकेत मिलता है। अवसाद के जमते जाने की दर बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि ये इस बात के सूचक हैं कि ये परिवर्तन कब और कितनी तीव्रता से हुए। यदि किसी एक नियत समय में जमने वाले अवसाद की मात्रा मालूम हो तो क्रोड में किसी बिंदु के ऊपर अवसाद की मोटाई उस बिंदु की आयु की सूचक होगी। खुले समुद्र में अवसाद के जमते जाने की औसत दर प्रायः प्रति १,००० वर्ष एक इंच के $\frac{४}{१०}$ वें भाग के लगभग होती है। लेकिन इस दर में बहुत काफी अंतर पाए जा सकते हैं क्योंकि यह समुद्र के भीतर और समुद्र के ऊपर की परिस्थितियों पर निर्भर होती है और ये परिस्थितियाँ समय और स्थान के अनुसार सदा बदलती रहती हैं।

भू-विज्ञानियों का ऐसा विश्वास है कि विभिन्न महाद्वीपों की आज जो ऊँचाई है वह पृथ्वी के अधिकतर इतिहास में इससे पहले कभी नहीं पहुँची थी। इस ऊँचे स्थल पर हवाओं और जल का अधिक सुगमता से आक्रमण होता है जिसके परिणामस्वरूप अपरदन की मात्रा बढ़ गई है और अवसाद के जमते जाने की दर तेज हो गई है। अधिकांश भू-वैज्ञानिक काल के दौरान अवसादों के बिछते जाने की दर कदाचित आज की दर की केवल ५ प्रतिशत अर्थात प्रति १,००० वर्ष में एक इंच के पचासवें भाग के लगभग थी। (एक इंच का पचासवाँ भाग इस पृष्ठ पर दिए हुए किसी भी अनुस्वार बिंदु की मोटाई के लगभग है।) हिम युगों के दौरान जब पृथ्वी का एक चौथाई से लेकर एक तिहाई तक भाग बहुत ज्यादा यहाँ तक कि १०,००० फुट मोटी बर्फ की चादर से ढका हुआ था, अवसादों के जमते जाने की दर आज की दर से दो या तीन गुना अधिक थी। इसका कारण यह है कि पिघली हुई बर्फ के जल और बहती हुई बर्फ से उमड़ती हुई नदियाँ समुद्र की ओर जाते हुए अपने साथ स्थल का अधिक भाग वहाँ भर ले जाती हैं।

इतनी विविध और विशाल प्रकृति विज्ञान सम्बन्धी पुस्तक में अवश्य ही तिथियों के "अंगूठा के निशान" की अनुक्रमणिका बनी होनी चाहिए, जिससे कि हमें पृथ्वी की कहानी में होने वाली घटनाओं के समय के विषय में सही पता चल सकता है। यह निशानी अंगूठा हमें उस कार्बन के रूप में मिलती है जिसे कुछ जन्तु अपने जीवन के दौरान अपने कवचों के निर्माण में शामिल करते हैं। तमाम कार्बन में, जिसमें वायु में पाई जाने वाली कार्बन डाइआक्साइड का कार्बन भी शामिल है, एक विशिष्ट मात्रा रेडियोऐक्टिव कार्बन—कार्बन १४—

की शामिल होती है और उसमें कहीं अधिक मात्रा स्थिर, अरेडियोऐक्टिव कार्बन १२ की होती है। एक के सम्मुख में दूसरे की मात्रा अथवा इन दोनों का अनुपात हवा में भी वही है जो किसी जंतु के दृढ़ कवच में होता है क्योंकि समुद्र की सतह के ऊपर इन दोनों के बीच एक स्वच्छंद आदान प्रदान होता रहता है।

जन्तु के मरते ही यह आदान प्रदान समाप्त हो जाता है। जंतु तली में बैठने लगते हैं और रेडियोऐक्टिव कार्बन का क्षय प्रारम्भ हो जाता है (पृष्ठ २१ देखिए)। इसकी किसी भी मात्रा के आधे भाग का ५,७६० वर्ष में क्षय होता है, जब कि कार्बन १२ की मात्रा स्थिर बनी रहती है। चूंकि हवा में पाया जाने वाला अनुपात समय के साथ नहीं बदलता, इसलिए बचे हुए कार्बन १४ की मात्रा का माप कर हम यह पता लगा सकते हैं कि उन कवचों को सतह से कितने समय से सम्पर्क कटा रहा है, अथवा वे समुद्र की तली में कब से पड़े रहे हैं — अर्थात उनकी "आयु" क्या है। कार्बन द्वारा समय निर्धारण की यह विधि स्थल पर अथवा सागर में किसी भी ऐसे पौधे और जंतु पर लागू की जा सकती है जिसके शरीर में कार्बन की कुछ भी मात्रा पाई जाती हो। इस विधि में कम एक यह कमी है कि इसके द्वारा केवल ४५,००० वर्ष से कम की आयु वाली वस्तुओं का ही समय जाना जा सकता है। यूरेनियम-लैड विधि तथा अन्य विधियां १० लाख वर्ष से पुरानी वस्तुओं के लिए काम में लाई जाती हैं, लेकिन ४५,००० तथा दस लाख वर्ष के बीच में एक खाई बनी हुई है।

एककोशिकीय फारैम प्राणियों (पृष्ठ १४५ देखिए) के सूक्ष्म चूनेदार अथवा कैल्सियम कार्बोनेट के बने हुए कवच अवसादों में विस्तृत रूप में पाए जाते हैं और समय निर्धारण के लिए आदर्श सामग्री हैं। इन जीवों का महत्त्व इसलिए भी है कि इनसे हम अपनी अवसादों की पुस्तक के लिए ताप सूचना प्राप्त होती है। आधुनिक प्लवक प्राणी ट्रालों में पता चला है कि फारैम प्राणियों की कुछ खास स्पीशीजें केवल एक निश्चित ताप-परास के जल में ही पाई जाती हैं। कुछ केवल गर्म जल में पाई जाती हैं, कुछ को मध्य अक्षांश ताप पसन्द है और कुछ केवल ऊंचे अक्षांशों के ठंडे जल में ही रहती हैं। ग्लोबोरोटेलिया ट्रंकटुलिनायडीज (Globorotalia truncatulinoides) नामक एक स्पीशीज गर्म और ठंडे दोनों ही प्रकार के जल में रहती है, लेकिन ठंडे जल में इसके घोंघे जैसे शंख के समान कवच दक्षिणावर्ती रूप में कुंडलित होते हैं, जब कि गर्म जल में वामावर्ती। चूंकि जो आज है वही बीते हुए काल का संकेत है इसलिए हम बता सकते हैं कि प्रत्येक क्रोड परत के अवसाद उनमें पाए जाने वाले फारैम प्राणियों द्वारा गर्म जल में बिछाए गए थे अथवा ठंडे जल में।

लैमान्ट के विज्ञानियों ने अटलान्टिक तथा सम्मन समुद्रों से लगभग १००० क्रोडों का अध्ययन किया है ताकि वे पृथ्वी पर पाई जाने वाली जलवायु के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर सकें। इनमें से अनेक क्रोडों में भूरी-सी मिटटी की एक सबसे ऊपरी परत है जिसमें गर्म जल के अनेक फारैम प्राणी हैं, दूसरी परत कुछ मोटे सलेटी रंग के पदार्थ की है जिसमें ठंडे जल के फारम प्राणी हैं, उसके बाद भूरी मिटटी की एक अन्य परत आती है जिसमें गर्म जल के जीव पाए जाते है। विश्वास किया जाता है कि मोटा सलेटी पदार्थ अन्तिम हिम युग द्वारा ठंडे हो गए जल में निक्षेपित हुआ था। सबसे ऊपरी परत का निक्षेप आजकल हो रहा है और सबसे तली की परत अन्तिम हिम प्रगति के पहले के आपेक्षिक गर्मी वाले एक अन्य काल का प्रदर्शन करती है।

सलेटी परत के सबसे ऊपरी भाग में से फारम प्राणियों को निकाल कर और उनके कवचों में शेष बचे कार्बन १४ की मात्रा माप कर यह निर्धारित किया गया कि अन्तिम हिम युग लगभग ११००० वर्ष पहले समाप्त हुआ था। इस परत का सबसे निचला भाग कार्बन विधि के परास से बाहर था, लेकिन निक्षेप की उसी दर का प्रयोग करते हुए जो कि क्रोड के तिथि निर्धारित भाग के लिए परिकल्पित की गई थी, ऐसा पता चलता है कि अन्तिम हिम युग लगभग ६०,००० वर्ष पहले शुरू हुआ था। यह हिम युग लगभग १८,००० वर्ष पूर्व चरम सीमा पर पहुच चुका था जब कि वर्फ ओहायो स्थित क्लीवलैंड के भी १५० मील दक्षिण में बढ आया था।

मान लिया हमें कोई ऐसा फारम प्राणी मिला जिसका आज कोई जीवित सम्बन्धी नहीं है एक ऐसा प्राणी जिसके बारे में हम उसे देखकर ही यह नहीं कह सकते कि उसे कौन-सा ताप पसन्द था। इस मामले में, हमारी अवसादों की पुस्तक के लिए एक अन्य अधिक तथार्य ताप-सूचक उपलब्ध है। इस बात की जानकारी फारम कवचों में विभिन्न प्रकार की आक्सीजनों के अनुपात माप कर की जा सकती है।

सामान्य आक्सीजन—आक्सीजन १६—के साथ-साथ सदैव ऑक्सीजन १८ भी पाई जाती है जो रसायन की दृष्टि से तो भिन्न नहीं है लेकिन उसका भार कुछ अधिक है। कार्बनों की तरह इनका भी हवा में एक के प्रति दूसरे का अनुपात वही है जो सतह पर किसी जन्तु के कवच में पाया जाता है। किन्तु यह अनुपात सदैव एक-सा स्थिर नहीं बना रहता बल्कि वायु के ताप के साथ साथ बदलता रहता है। ताप बढने के साथ-साथ वाष्पन की मात्रा भी बढ जाती है और आक्सीजन १८ की अपेक्षा अधिक हल्की ऑक्सीजन १६ ज्यादा तेजी से उड़ती

जनक अटलांटिक श्राग की सबसे ऊपरी परत म मिलती है। अवसादा का क्षेत्रग, और गहराई दाना है। दष्टि स परिवतन होता रहता है, तथा मत्तिका आर सिंधुपको (Oozes) म एकातर क्रम बना हाता है। मत्तिका म अधिकतर बारीक अकाबनिक पदाथ हाता है जिसमें फौरम एव अय काबनिक पदाथ ३० प्रतिशत से कम होता है। जब अवमाद म ३० प्रतिशत से अधिक भाग कवचा तथा मत प्राणि एव पादप प्लवक के ककाला का हाता है ता उसे सिंधुपक कहा जाता ह। सिंधुपका मे मब से अधिक योग देन वाले जीव ग्लाबाजेराइना वग क हैं और उनके चूनेदार कवच २५०० तथा २० ००० फुट के बीच सभी गहराइया पर पाए जाते है। ग्लाबीजेराइना सिंधुपक जगत महासागर के ४५ प्रतिशत भाग का ढके है जिसम अटलाटिक का ६० प्रतिशत तथा दक्षिण प्रशात का अधिकतर भाग शामिल ह।

अनक ग्लाबीजराइना कवच तली तक पहुचने से पहले ही ठडे काबन डाइआक्साइड-सम्पन्न जल द्वारा घुल जाते है। इस विलयन के प्रति सिलिका अधिक प्रतिरोधी ह आर इसलिए रडियालरियना के नाजुक लेस-जैसे अवशेष तथा डायटमा के कवच नीचे डूबते हुए अधिक गहराइया तक पहुच सकते है। रेडियोलेरियन सिंधपक तमाम महासागरा म १४,००० स २७ ००० फुट के बीच पाया जाता ह। तथापि इसकी महत्त्वपूण मात्रा केवल विषुवनीय प्रशात म पाई जाती हैं जहा विषुवत-वत्त से लगभग ५०० मील उत्तर म स्थित केंद्र वाला एक क्षत्र दिनाक रखा स लेकर दक्षिण अमरीकी तट के समीप तक पहुचता है। यह क्षेत्र उत्तर विषुवतीय धारा और प्रतिधारा के बीच के अपसरण से सम्बधित है (चित्र १९ देखिए)। नीच स उवल कर ऊपर आन वाले पोषण-पदाथ रेडियोलेरियना की विपुल जीव सख्या का सहारा दत हैं और इसी बात की झलक तली म पाए जान वाले कवचा की प्रचुरता मे चिनित होती है।

ठडे प्रदेशा के सिंधपका क निर्माण में मुख्य योगदान एककाशिकीय डायटमा का रहता है। डायटम-युक्त सिंधुपक दक्षिण ध्रुव महाद्वीप का घेरे हुए है आर सभी महासागरा मे लगभग ४५ –५०°— दक्षिण तक फैली हैं। साथ ही इसकी एक पटटी उत्तर प्रशात म जापान से अलास्का तक भी पाई जाती है। डायटम-युक्त सिंधुपक का गहराई-परास ३,६०० से १९ ००० फुट ह, आर रडियालरियन सिंधुपक के साथ मिलकर यह महासागरीय फश पर अवसादा का १४ प्रतिशत भाग बनाता है।

टेरेपोड नामक घाघे जसे जन्तुआ के कवच दक्षिण अटलांटिक का एक महत्त्वपूण क्षत्र अपनाए हुए ह। य कवच बहुत ज्यादा, यहा तक कि एक एक

गई जबकि उथले जल के पौधो और जंतुओं के कवच एवं अवशेष भी इन स्तरो मे पाए गए। इन परतों का सबसे पहले यह मान लेते हुए स्पष्टीकरण किया गया कि समुद्री नलिया किसी समय सतह के समीप रही होगी और उसके बाद वे नीचे धसी। तथापि सामान्य गंभीर सागर अवसादो के साथ बीच-बीच मे पुलिन प्रकार की रेत की परतो का पाया जाना इस प्रकार का है कि उनके लिए एकातर क्रम से ऊपर उठने और फिर से निमग्न हो जाने की कल्पना करना जरूरी हो जाता है लेकिन इस ऊपर उठने और नीचे गिरने का विस्तार इतना ज्यादा विशाल है कि वह तमाम भौतिकीय नियमो का उल्लघन करेगा।

अनेक परत महाद्वीपीय ढलानो के आधार पर अवसाद के चौड़े चौड़े फलते जाते हुए पखो के रूप मे दिखाई पड़ती है और इस वजह से ऐसा माना जाता था कि वे अध जलीय भूस्खलनो के कारण बनी रही होगी। लेकिन महाद्वीपीय शेल्फो के बाहरी सीमान्तो और ढलानो पर पाया जाने वाला पदार्थ सिधुपक और मृत्तिका है न कि रेत और गाद। साथ ही, इन परतो मे सबसे ऊपर बारीक रेत से लेकर सबसे नीचे की मोटी रेत तक के रूप मे एक बढ़ता जाता क्रमिक परिवर्तन भी दिखाई पड़ता है। इस क्रमिक संस्तरण से ऐसा लगता है कि वे धाराओ द्वारा जमी है न कि भूस्खलनो के द्वारा। तब यह प्रश्न उठता है कि क्या ऐसी धाराए रही होगी जो महाद्वीपीय ढलान पर नीचे की ओर अधिक गहरे वितलो की ओर बहती थी? वास्तव मे, इतनी प्रबल धाराओ के पाए जाने का प्रमाण मिला है जो समुद्र मे बिछे हुए टेलीग्राफ केबिलो को तोड़ डालती है।

जब १८ नवम्बर १९२८ मे न्यू फाउडलैण्ड के दक्षिण मे एक भीषण अध समुद्री भूकम्प ने ग्रैंड बैंक्स के क्षेत्र को कम्पित किया तो यूरोप की ओर जाने वाले अनेक केबिल टूट गए। उस समय केबिलो के टूटने का कारण यह भूकम्प ही बताया गया, और ऐसा कहना स्वाभाविक ही था। लेकिन १९५२ मे एविग और हीजेन ने इस टूट फूट के रेकार्ड का परीक्षण किया और यह पाया कि प्रथम और अंतिम केबिलो के टूटने मे १३ घटे की देर लगी थी। वे केबिल जो अधिकेन्द्र के सब से नजदीक थे—और यह अधिकेन्द्र महाद्वीपीय शेल्फ पर था—तुरत टूट गए लेकिन जो केबिल नीचे ढलान पर थे वे एक एक करके भूकम्प से बढ़ते जाते फासले के अनुसार टूटते गए।

हीजेन ने निष्कर्ष निकाला कि इस भूकम्प से केवल वे ही केबिल टूटे जो अधिकेन्द्र से ६० मील के भीतर थे। लेकिन भूकम्प के झटको ने अवसादो की विशाल सहतियो को ढलान पर से नीचे को खिसकाना शुरू किया और उनके ऊपर के जल मे रेत और गाद को हिलाता तथा उसमे विक्षुब्ध गति से युक्त

निलम्बित कणों को भर देना शुरू कर दिया। ढाल के ऊपरी भाग में गदला जल ढाल के निचले भाग के स्वच्छ जल से अधिक सघन हो गया और इस विभेद के कारण गाद से लदे जल का अवधाव होने लगा। जैसे-जैसे यह सरिता ढलान के नीचे की ओर बहती गई, वैसे वैसे विक्षोभ में अधिकाधिक जल मिलता गया और उसकी चाल बढ़ गई। हीजेन और एविंग का विश्वास है कि इसी प्रकार की **मलिनता धाराओं** (turbidity currents) के कारण अध समुद्री केनियन टूटने और रेत की क्रमिक परतें जमती हैं।

ग्रैंड बैंक भूकम्प के बाद एक एक केबिल के टूटने का सही-सही समय उन मशीनों द्वारा रिकार्ड किया गया था जो टेलीग्राफ संचरण का बोधक कार्य कर रही थीं। अतः मलिनता धारा की चाल का हिसाब लगाना सम्भव हो सका। परिकलनों से यह प्रकट होता है कि महाद्वीपीय ढलान पर इसकी चाल ५५ मील प्रति घंटा हो गई थी, और सलग्न समुद्री फर्श पर धीमी होती हुई १५ मील प्रति घंटा पर आ गई थी। हीजेन का विश्वास है कि यह धारा ४५० मील की दूरी तक चली और अपने द्वारा जमाए जाते अवसाद के नीचे केबिल को जहा-तहा दूर-दूर तक दबा दिया। इससे इस तथ्य का स्पष्टीकरण हो जाता है कि मरम्मत करने वाले दलों को अनेक टूटे हुए भाग नहीं मिल पाए। उन्हीं चालों से बहती हुई एक नदी के आधार पर एक प्रसिद्ध डच भू विज्ञानी डा० फिलिप एच० क्वेनेन ने हिसाब लगाया कि ऊपर बिछे हुए अवसाद की परत की ठीक ठीक मोटाई क्या होनी चाहिए। सबसे अधिक गहरी तोड़ के क्षेत्र में हीजेन ने कोड प्राप्त किए और देखा कि क्रमिक गाद और रेत की मोटाई ठीक वही निकली जैसी कि पूर्व घोषणा की गई थी।

इस तथा अन्य प्रमाण के आधार पर, अनेक भू विज्ञानी केबिलों के टूटने और गभीर-सागर की विभिन्न रेतों के सम्बन्ध में हीजेन तथा एविंग द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण से सहमत हैं। अन्य इस बात में विश्वास नहीं करते कि मलिनता धाराएं उस चाल तक पहुंच जाती हैं अथवा उतनी शक्ति प्राप्त कर लेती हैं जितनी कि उन्हें 'गारे में लथपथ जल विस्तार' उनके लिए निर्धारित करते हैं। स्क्रिप्स के डा० फ्रासिस पी० शेपार्ड इसी दूसरे वर्ग में आते हैं। उनका ख्याल है कि यह कहना असम्भव है कि कौन से केबिलों का टूटना भूस्खलन के कारण हुआ और कौन-से केबिलों का मलिनता धाराओं के द्वारा और यह कि ग्रैंड बैंक्स पर होने वाली क्रमिक टूटें स्वतन्त्र भूस्खलनों की शृंखला द्वारा घटित हो सकती थीं।

अपने सिद्धांत की रक्षा करते हुए हीजेन ने मलिनता धाराओं के कारणों

आर उनकी ऊर्जा के अन्य उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। कोलम्बिया की नदी मैग्डेलेना और अफ्रीका की नदी कागो दोनो ही के मुहान महाद्वीपीय ढलान की घाटी के पास है और शेल्फ बहुत ही सकीर्ण है या बिल्कुल ही नहीं है। मौसमी वर्षाओं में जब ये नदियाँ उमडती हुई अपने साथ अवसादों की भारी मात्रा बहाकर ले जाती हैं तो इन नदियों के मुहानों के नीचे ढलानों पर केबिलो का टूटना अक्सर होता रहता है। १९३५ की ३० अगस्त को मैग्डलेना नदी के मुहान पर १५०० फुट लम्बी जेटी और एक बालूगत्र का अधिकतर भाग समुद्र में बह गया और उस रात ढाल पर १५ मील नीचे बिछा एक केबिल बहा ले जाया गया।

हीजेन ने अनुमान लगाया है कि एक मलिनता धारा हर वर्ष में होती है जिससे कि वह अपेक्षाकृत विरल होती है। उसका विश्वास है कि ये धाराएं भूकम्पो, सुनामियो प्रभजनो कीचड से लदी नदियों के मौसमी विसर्जन द्वारा अथवा उन भूस्खलनो द्वारा चालू हो सकती हैं जो कि ढलान पर उस समय होते हैं जब अवसादो के इस हद तक एकत्रित होने जाने पर कि वे अत्यधिक खडे ढालू हो जाए अपने ही बोझ में नीचे को खिसकने लगें।

इस प्रकार का अवसाद-परिवहन, हो सकता है महासागरीय फर्श में बने गढों को भरने और वहाँ की पहाडियो तथा कटको को दबा देने का एक सबसे महत्त्वपूर्ण कारक हो। मध्य अटलाटिक कटक के दोनो बाजुओं पर चौडे, चपटे मैदान हैं जो कटक-पार्श्व स्थित वितल पहाडियो से लेकर महाद्वीपीय ढलान के आधार पर बन गये तक फैले हैं। ये वितल मैदान (abyssal plains) पृथ्वी की सतह पर पाए जाने वाले सबसे चपटे क्षेत्र हैं, इनका झुकाव हर हजार फुट में केवल एक फुट है। वे हर महासागर के फर्श पर पाए जाते हैं तथा उनके अधिक गहरे भागो के बडे बडे क्षेत्रो को घेरे हुए हैं। हीजेन का विश्वास है कि उनका निर्माण मुख्यत मलिनता धाराओं के निक्षेपो द्वारा हुआ है जिन्होंने उभाड को सपाट बना दिया है।

केबिलो के टूटने गभीर सागर में रेतो के पाए जाने तथा इन चपटे क्षेत्रो के बन होने के स्पष्टीकरण के रूप में कई वैकल्पिक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं। कुछ भू विज्ञानियो ने यह तक रखा है कि वितल मैदान उन चपटे लावा सस्तरो के परिणाम हैं जो परम्परागत विधि में बौछार द्वारा बने हुए अवसादो से ढक गए हैं। इनमें से किसी भी विकल्प सिद्धात ने मलिनता धाराओं का खडन नहीं किया है। इसके विपरीत गभीर सागर अवसादो के जमाने वाले एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रम के रूप में इनकी अधिकाधिक स्वीकृति होती जाती जान पड रही है।

हीजेन का सुझाव है कि उथले तटा से ले जाया जाने वाला कावनिक पदाथ तथा मलिनता धाराआ द्वारा अचानक नीच दव जाने वाले जतु गहरे मागर की प्राणिया म एकत्रित होते जा सकते ह और अतत उनमे तेल का निमाण हा मकता है। उसका यह भी कहना है कि "हा सकता है तट भार वाले किसी परमाणु विस्फाट से मलिनता धारा प्रारम्भ हो जाए जो रडियाएक्टिव मलवे का एक मम्पूण महासागरीय प्राणी मे फैला देगी।"

अधसमुद्री गभीरखडड

एविग हीजेन न मलिनता धाराआ का अध्ययन उनक गभीर मागर रता तथा केविलो के टूटने के साथ सम्ब ध होने के कारण नही किया था बल्कि अध समुद्री स्थलाकृति के एक अय उलझन मे डालने वाले पहले के स्पष्टीकरण के लिए किया था। लगभग पूरे एक सौ वप पहले तार द्वारा गभीर मापन स यह पता चला था कि सयुक्तराज्य अमरीका के पूर्वी तट के पार महाद्वीपीय ढाल का चीरते फाडते हुए विशाल गमीर खडड बने हुए है। जब परिशुद्ध प्रतिध्वनि गभारता मापिया का प्रयाग शुरू हुआ ता जहा-जहा भी तफमीलवार गभारतामापन किया गया वहा वहा ये दर्रे नजर आए। प्रतिध्वनि लखना (एकाग्रामा) स पता चलता है कि व ढलाना मे का तथा शेल्फा के सीमाता म का काटती हुई V की आकृति की मरणिया हैं। अनक उदाहरणा में वे ढलान की पूरी गहराई तक चलती जाती हैं और उनके अत मे नदिया के डेल्टा के समान चौडे पख सरीखे मैदान बन जाते है।

मन १९३६ से लेकर आज तक हावड विश्वविद्यालय के डा० रजिनाल्ड ए० डली न इस विचारधारा का पुरजोर समथन किया है कि इन गभीरखडडा का निर्माण मलिनता धाराआ द्वारा हाने वाले अपरदन के कारण हुआ है। हीजन न इस तथ्य की ओर सकेत किया है कि इन पखा मे क्रमिक रेत एव उथले जल का कचरा पाया जाता है जो इस बात का प्रमाण है कि यह स्पष्टीकरण सही है। उसन कल्पना की है कि हिम-युग के पिघलते हुए हिमनदा मे जा विशाल नदिया बनी वे अपन साथ तेज किनारा वाले रत आर बजरी का बहाकर समुद्र तट की ओर लाइ जहा पर ये शेल्फ एव ऊपरी ढलान पर एकत्रित हा गइ। जब य पदाथ महतिया विक्षुब्ध हुइ ता व एक प्रपात के रूप म नीचे का गिरकर गइ और जिस माग से हाकर व चली वहा उन्हाने गभीरखडड काट दिए। हीजन का कहना है कि ऐसा कोई कारण नजर नही आता कि इस प्रक्रम का केवल हिमनद युगा तक ही सीमित माना जाए। ढलाना पर एकत्रित हान

जाते अवसाद नीचे फिसलते रह सकते है अथवा समय समय पर कम्पनो द्वारा नीचे गिसक सकते है जिससे मलिनता धाराए बन कर अपरदन को जारी किए रह सकती हैं।

मैंगडैलेना नदी के पार अध समुद्री गभीरखडडा का एक जाल-सा बिछा है तथा काल्गो नदी के पार एक विशाल गभीरखडड है। यह दूसरा गभीरखण्ड सकीर्ण शल्फ को काटता हुआ चलता है और नदी की तली से सीधा जा मिलता है—यह तली स्थल का छोडन के स्थान पर ३०० फुट गहरी है। इस गभीरखडड के मुहाने पर अवसाद का एक विस्तृत डल्टा सदृश पखा बना है जो कमश अत मे एक बडा गभीर मदान बन जाता है। इस क्षेत्र में लिए गए काडो के द्वारा १३,८०० फुट की गहराई से पुलिन रेत और पत्तिया प्राप्त की गई है तथा इस गभीरखडड के ऊपर आर-पार बिछाए गए केबिल इतनी अधिक बार टूटे है कि उनके स्थान पर रस्सियो का प्रयोग करने के पक्ष में केबिल बिछाने का प्रयत्न ही छोड दिया गया है।

शेपड ऐसा विश्वास नहीं करते कि घनत्व विभेद इतने अधिक पर्याप्त हो सकते हैं कि उनसे मलिनता धाराओ की इतनी चाल प्राप्त हो सके कि उनके द्वारा ठोस शैलो मे अपरदन होकर गभीरखडड बन जाए। उनका विचार है कि वे ढाल पर नीचे की ओर अवसाद को बहा ले जाते हुए केवल गभीरखडडो का मुह खुले रखती है। कैलिफोर्निया के पार अनेक गभीरखडडो का अध्ययन करने के बाद वह इस स्पष्टीकरण का समर्थन करते है कि वे किसी प्राचीन काल मे (हिम युगो से लाखो वर्ष पूर्व) उस समय नदियो द्वारा कटे जब ससार की तट रेखाए आज की तट रेखाओ से अधिक ऊची थी। तब महाद्वीपीय सीमात धीरे धीरे नीचे धसते गए और गभीरखडडो का मुह भूस्खलनो तथा मलिनता धाराओं द्वारा खुला रहा। इस अवतलन के प्रमाण के रूप मे उसने इस तथ्य का उल्लेख किया है, जो पिछले अध्याय मे बताया जा चुका है कि तेल कम्पनियो द्वारा किए गए वेधनो मे ६,५०० फुट शैल्फ अवसाद प्राप्त किए गए है जिनका निक्षेप उथले जल मे हुआ था। शेपड का विश्वास है कि गभीरखडड के शीर्ष पर भूस्खलन होने से वे तट की ओर बढते जा सकते हैं और वे समुद्र की ओर इसलिए चलते हुए प्रकट होते हैं क्योकि मलिनता धाराओ द्वारा खिसकने वाले असृढ पख-अवसादो से सरणियो का अपरदन होता है। हर अध समुद्री गभीरखडड थल-गभीरखडड की तरह से किसी न किसी नदी से नहीं जुडा हुआ है। और न ही वे नदियो के ठीक सामने स्थित होते है जैसे कि न्यूयार्क मे हडसन नदी के पार ३,००० फुट गहरा और पाच मील चौडा हडसन गभीरखडड है। वास्तव

म कई गभीरखडड स्थल पर स्थित नदी-घाटिया से कनइ कोई सम्बन्ध नही दर्शाते, जैसे कि हैटेराम अन्तरीप के पार का गहरा गभीरखडड।

पर्याप्त सर्वेक्षण किए गए हर महाद्वीपीय ढलान पर पाए जाने के अतिरिक्त य गभीरखडड गहरे महासागरीय फर्श पर भी पाए गए है। दक्षिण अमरीका मे ब्राजील के पार महाद्वीपीय ढलान और मध्य अटलांटिक कटक के बीच म एक उथला, वक्र की आकृति का गभीरखडड है। एक अन्य गभीरखडड ग्रीनलैण्ड और कनाडा के बीच के डेविस जलडमरूमध्य मे प्रारम्भ होकर दूर दक्षिण म, यहा तक कि वाशिंगटन, डी० सी० के अक्षाश तक वितरीय मदान म फला हुआ है।

उत्तर अटलांटिक के फर्श म पाये जाने वाले गभीरखडड की भव्यता वहा के ढलानो पर पाए जाने वाले गभीरखडडो की भव्यता से बहुत कम है। इन्हें कभी-कभी हडसन चैनेल भी कहा जाता है। इसकी चौडाई दो स चार मील है और इसकी तली सलग्न समुद्री फर्श से १५० से ३०० फुट ज्यादा नीचा है। तली स लिए गए नमूनो मे क्रमिक रेतें पाई गई हैं, और हीजेन का विश्वास है कि हो सकता है यह चैनेल उन मलिनता धाराओ द्वारा कटी हो जो अपने साथ हिमयुगो में हडसन की घाटी और डेविस जलडमरूमध्य से हिमनदीय पदार्थ का बहा ले जाती रही हो। उनका ख्याल है कि अधिक आधुनिक मलिनता धाराओ द्वारा यह खुला रहता चला आ रहा है। कुछ अन्य व्यक्तियो के विचार म यह चैनेल उत्तर अटलांटिक के गभीर जल की उन धाराओ द्वारा कटी है जो ग्रीनलैण्ड के पार नीचे डूबती जाती है और अपने दक्षिणाभिमुख प्रवाह के दौरान तली को माजती चली जाती है। शेपर्ड का कहना है कि इसके वक्स जसे रूप स ऐसा सकेत मिलता है कि यह किसी दोष के कारण नीचे धसत हुए एक द्रोणी बना है। उसने इस बात की ओर ध्यान दिलाया है कि यह चैनेल मध्य-अटलांटिक कटक के समातर चलती है और उसके विचार मे, जैसा कि हीजेन न भी कहा है, यह मध्य-अटलांटिक कटक दोषो के स्थान पर ऊपर उठ गया हुआ भू पपटी का एक खड है।

इन मतभेदो से यह स्पष्ट हो जाता है कि जगत महासागर की तली एक स्थिर गतिहीन परिवेश नही है बल्कि एक गतिक चिर-परिवतनशील परिवेश है जो बिना सुलझाए गए रहस्यो और पेचीदा समस्याओ स भरा हुआ है। कुछ अन्य कारक भी ह जो इस चित्र को और भी अधिक जटिल बना देते हैं। तीव्र तलीय और अध सतही धाराए अपने माग म आने वाले कटको और घाटियो पर से अवसाद बहाकर उन्हें साफ कर देती है और भीतरी तरगो द्वारा नियमित

विशाल जल-सहतिया से निक्षेप और अपरदन हो सकना है। स्थल पर भू वैज्ञानिक लक्षणा के बनन और समुद्र म उनके बनने में एक आधारभूत विभेद पाया जाता है। हवाए और जल स्थल को अपरदन द्वारा स्वरूप प्रदान करते हैं जब कि वितल म स्वरूप प्रदान करन म निक्षेप का प्राबल्य रहता है।

"सूक्ष्म शिल्पी"

प्रवाल भित्तिया उस स्थान पर स्थल बनाती हैं जहा पहले कोई स्थल मौजूद नही होता, और समुद्र म विकसित हुए निक्षेप-लक्षण का एक प्राथमिक उदाहरण है। ये निक्षेप शैलो के टीले प्लेटफार्म और कटक होते हैं जो कि उथले समुद्री फर्शो के ऊपर-ऊपर बनते जाते हैं, और प्रवाल ककालो तथा अन्य जन्तुओ के अवशेषो के बने होते है।

विभिन्न प्रवाल जेली फिशा तथा समुद्री एनीमोना के सम्बन्धी होते हैं। उनके शरीर से एक चूनेदार पदार्थ का स्राव होता है जिससे वे अपने ककालो का निर्माण करते हैं—ये ही ककाल प्रवाल भित्तिया के प्रधान निर्माण-खड होते हैं (इस अध्याय के प्रारम्भ म दिए गए चित्र को देखिए)। सूक्ष्मदर्शीय शैवाल जिन्हें जूजैथेला कहते है प्रवालो के भीतर रहते हैं और एक ऐसे पदार्थ का स्राव करते हैं जो मृत प्रवालो और अन्य जन्तुओ के कठोर भागो को परस्पर जोडते हुए एक दृढ छिद्रिल चूना-पत्थर बना देता है। कुछ अन्य प्रकार के शैवालो म अपने ही जीवित ऊतक म चूना-पत्थर होता है और कुछ उदाहरणो मे प्रवाल भित्ति की रचना म इन्ही का योगदान अनिवार्य और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। प्रवाल भित्ति पर अथवा उसके समीप रहने वाले हजारो विभिन्न जीव—विविध एनीमोन, बार्नेकल, समुद्री-अर्चिन, विभिन्न कृमि, क्लैम, लॉबस्टर, श्रिम्प केकडे, और मछलिया—अपने कठोर भागो का योगदान देते है और बंधन कर के शैल को नष्ट करते हैं। यह एक सम्मिश्र समुदाय है जिसम कुछ सदस्य शैल को तोडते रहते है और कुछ अन्य उसे बनाते रहते हैं किन्तु कुल मिलाकर वे प्रवाल भित्ति के निर्माण म योग देते हैं।

प्रवाल और जूजथेला एक-दूसरे के साथ सामजस्यपूर्ण जीवन बिताते हुए (सहजीवी रूप मे) रहते है। पौधा अपने साथी प्रवाल से आहार और कार्बन डाइऑक्साइड प्राप्त करता है तथा बदले मे वह उसके अपशिष्ट पदार्थो को साफ करता तथा उसे ऑक्सीजन प्रदान करता है। आक्सीजन का निर्माण प्रकाश-सश्लेषण द्वारा होता है इसलिए प्रवाल-शैवाल सयोजन लगभग ३०० फुट से अधिक गहरे जल म जीवित नही रह सकता। हर प्रवाल प्रवाल भित्ति निर्माता नही

होता बल्कि केवल व प्रवाल ही ऐसा करते हैं जो गर्म तथा गादरहित स्वच्छ लवण जल में रहते हैं। उन्हें ७१ तथा ८६ फा॰ के बीच का ताप तथा २७ और ४० भाग प्रति हजार के बीच की लवणता अनिवार्य है। ये परिस्थितियाँ उन्हें उस ३,५०० मील चौड़ी पट्टी में सीमित कर देती हैं जो विषुवत वृत्त से लगभग ३०° उत्तर और दक्षिण के बीच फैली हुई है। १८४२ में चार्ल्स डार्विन द्वारा बनाए गए एक मानचित्र में यह दर्शाया गया है कि वे अधिकतर उष्ण कटिबंधीय प्रशान्त और हिन्द महासागरों में पाए जाते हैं तथा एक छोटा समूह अटलांटिक में पश्चिमी द्वीप समूह को घेरे हुए है।

प्रवाल भित्तियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। तटीय प्रवालभित्तियाँ अनेक द्वीपों तथा महाद्वीपों के ढालू तटों से बाहर की ओर को बढ़ती जाती हैं और चौड़े उथले प्लेटफार्म बनाती हैं जो तट से आगे एक मील तक चौड़े हो सकते हैं और निम्न ज्वार के समय बाहर खुल जाते हैं। प्रवालरोधी वे प्रवाल कटक होते हैं जो तट से एक लैगून अथवा चैनल द्वारा पृथक् होते हैं। वे प्रायः ज्वालामुखीय द्वीपों को घेरते हुए पाए जाते हैं लेकिन इस प्रकार का सबसे प्रसिद्ध उदाहरण—ग्रेट बरियर रीफ—आस्ट्रेलिया के तट के समान्तर १,२०० मील तक चलता है। है। अडल (ऐटॉल) अनियमित आकृति की अथवा अण्डाकार भित्तियाँ होती हैं जो एक लैगून को घेरे रहती हैं। अडल भित्तियों के भागों पर बनने वाले निचले सकोण द्वीप उन टुकड़ों और उस प्रवाल बालू के बने होते हैं जो प्रवाल भित्ति से हवा और लहरों द्वारा सम्पतित होती और ढेर लगती जाती है।

अडल स्थल से हजारों-हजारों मील दूर पाए जाते हैं और विशाल गहराइयों में से अचानक ही ऊपर उठते हुए प्रतीत होते हैं। इससे एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठता है। वे जीव जो केवल उथले सूर्य के प्रकाश से प्रदीप्त जल में उगते हैं, वाह्य महासागर की गहराइयों में किस तरह प्रवाल भित्तियाँ बना सकते हैं? अथवा उन द्वीपों के चारों ओर जो समुद्र में एकदम सीधे ढलान वाले होते हैं वे किस तरह उनके तट के पार प्रवाल रोधों का निर्माण करते हैं? चार्ल्स डार्विन ने, जिसने कि बीगल नामक नौका पर समुद्र यात्रा के दौरान प्रशान्त और हिन्द महासागर की प्रवाल भित्तियों का अध्ययन किया था इसके स्पष्टीकरण के लिए एक सिद्धान्त तैयार किया। उसने ऐसा माना कि तटीय प्रवाल भित्ति प्रवालरोध तथा अडल, ये सब उस प्रवाल भित्ति की ही वृद्धि की विभिन्न अवस्थाएँ हैं जो किसी अवतलनशील ज्वालामुखीय द्वीप के चारों ओर उग रही हो।

तटीय प्रवालभित्तियों से घिरे हुए किसी द्वीप के सम्बन्ध में कोई समस्या नहीं

आती क्योंकि वे स्थल को घेरने वाले उथले भागों में से उगती हैं। यदि समुद्र की तली धीरे धीरे नीचे धसनी शुरू हो जाए जिससे कि द्वीप और प्रवाल-भित्तियां नीचे को डूबने लगें तो सूर्य के प्रकाश के इच्छुक प्रवालों की तब तक ऊपर-ऊपर को वद्धि होती जाएगी जब तक वह पुन सतह पर नहीं पहुंच जाते। निस्संदेह ऐसा तभी हो सकता है जब नीचे डूबते जाना इतना धीमा हो कि प्रवालों की ऊपर को होने वाली वद्धि उसकी रफ्तार का मुकाबला कर सके।

जैसे-जैसे नीचे डूबते जाते हुए द्वीप को पानी अधिकाधिक घेरता गया, वैसे-वैसे द्वीप और प्रवाल भित्ति के बीच की दूरी भी अधिकाधिक बढ़ती गई। धीरे धीरे जैसे-जैसे द्वीप उत्तरोत्तर अधिक नीचा और छोटा होता जाएगा वैसे वैसे एक घेरने वाला प्रवालरोध बन जाएगा और तब 'सूक्ष्म शिल्पी अपनी विशाल दीवार सदृश महतियां बना चुके होंगे उन आधारों पर जो अन्य प्रवालों तथा उनके समेकित खंडों के रूप में बन जाते हैं।' प्रकटत विभिन्न प्रवाल तट के पास ही दूर उगे रहे होंगे, किन्तु वास्तव में उनके आधार नीचे डूबते जाते हुए द्वीप के ढलानों पर और अपने ही मृत पूर्वजों के ऊपर बने होंगे।

स्वयं डार्विन के शब्दों में यह प्रक्रम इस प्रकार आगे जारी रहता है "जैसे जैसे प्रवालरोध धीरे धीरे नीचे डूबता जाता है वैसे वैसे प्रवाल ऊपर की ओर तेजी से बढ़ते जाते हैं लेकिन जैसे जैसे द्वीप डूबता जाता है उसके तट पर जल एक-एक इंच करके ऊपर उठता जाता है—अलग-अलग पर्वत (चोटियां) पहले एक ही बड़ी प्रवाल भित्ति के भीतर घिरे हुए पृथक-पृथक् द्वीपों का रूप लेती हैं और
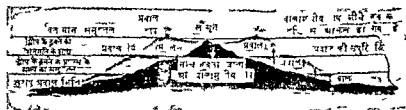
चित्र ६६ डार्विन के सिद्धांत के अनुसार प्रवाल रोधों और अडलों का निर्माण। तटीय प्रवालभित्तियों की उपरिवद्धि धीरे धीरे नीचे बैठते जाते हुए ज्वालामुखीय द्वीपों से समगति मिलाते हुए चलती जाती है जिसके परिणामस्वरूप एक प्रवाल रोध उत्पन्न हो जाता है जो चौडे हो जाते हुए एक लैगून को अनंत घेरता है। जब द्वीप नीचे बैठता जाता हुआ समुद्र की सतह के नीचे पहुंच जाता है तो एक अडल शेष दिखाई पडता है जिसके ऊपर निचले प्रवाल द्वीप बने होते हैं तथा जिसका आधार नीचे डूब चुका हुआ ज्वालामुखी होता है।

अन्तत अन्तिम आर सर्वोच्च शिखर भी विलीन हो जाता है। जिस क्षण एसा होता है उस समय एक सम्पूर्ण अडल बन जाता है।'

डार्विन के जैव विकास के सिद्धान्त की तरह, उसकी इस विचारधारा ने भी एक तक वितर्क को जन्म दिया। डार्विन के बाद म भू विज्ञानियो को समुद्र क फश क अवतलन की क्रिया का समथन म बहुत कठिनाई का सामना करना पडा। वे इस प्रकार क स्पष्टीकरण की ओर प्रवत्त थे कि प्रवाल भित्तिया एसी प्रवाल वद्धिया हैं जो पहले म मौजद उथले प्लेटफार्मों की चोटी पर—जैसे कि निमग्न ज्वालामुखीय विवरो के किनारे—पर उग रही है। अन्य व्यक्तिया से पहले जो इस विचारधारा की मौलिकता का दावा करते थे, स्वय डार्विन भी कुछ प्रवाल भित्तिया क विषय म पहले से मौजूद प्लेटफॉर्मों का सम्भावित स्थान मानते थे। उन्होंने अपनी पुस्तक **"दी स्ट्रक्चर एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन आफ कोरल रीफ्स"** (१८४२) म टिप्पणी करते हुए लिखा है कि उस प्रवाल भित्ति म 'जो किसी विलग तट पर उग रही होगी अडल-जैसी सरचना प्राप्त करने की प्रवत्ति होगी, अत यदि प्रवाल कुछ फन्म की गहराई पर गहरे समुद्र म निमग्न तट से उग रहे हो तो एक एसी प्रवाल भित्ति बन सकती है जो अडल से पृथक् नही होगी ।'

डार्विन का विचार था कि कुछ अडल तो इस प्रकार से बन सकते रहे होंगे, लकिन हिन्द प्रशात प्रवाल भित्तियों के बहत्तर समूह अवतलन द्वारा बने होंगे। उन्होंने ही पहले-पहल यह सकेत किया कि कुछ प्रवाल भित्तियां चपटे अवतलनशील प्लेटफार्मों पर बन सकी होंगी और प्रवालरोधी अवस्था से बिना गुजरे ही उनसे अडल बन गए होंगे। अन्य भू विज्ञानियों का ऐसा आग्रहपूवक कहना है कि हिम युगो क दौरान और उनके बाद जो परिस्थितियां हुई उन्ही के कारण हर जगह की प्रवाल भित्तियां बनी, और यह कि उनके निर्माण म अवतलन का कोई महत्त्वपूर्ण योग नही था। डार्विन ने सुझाव रखा कि प्रवाल भित्ति के निर्माण की समस्या का एक बार हमेशा के लिए हल इस प्रकार हो सकता है कि हिन्द प्रशात महासागर क अडलो म गहरा वेधन करके यह देखा जाए कि क्या उनके नीचे ज्वालामुखीय शैल है या नही।

निर्णायक वेधन केवल १९५२ म ही जाकर किए जा सके जब कि सयुक्त राज्य अमरीका की नौसेना तथा तट एव भूगणितीय सर्वेक्षण ने मार्शल द्वीपो मे एनिवटाक अडल के दोनो बाजुओ पर गहरे छेद किए। परमाणु-बम्ब परीक्षण की तयारी के अश क रूप मे दो गहरे छेद ४,६३० तथा ४२२२ फुट तक खोदे गए। दोनो वेधनो म इन गहराइयो पर लावा मिला। क्रोडो के परीक्षणों से यह निर्णायक रूप मे स्पष्ट हो गया कि उस पूरे काल मे जब कि ये हजारो फुट गहरे

प्रवाल उगने जा रहे थ उथली जल परिस्थितिया बनी था। बधन ऐसी प्रवाल रचाओ तक पहुच गया जो ६ करोड वर्ष पुरानी थी जिसमे यह प्रकट होता है कि एनिवेटाक उस समय से लगभग एक इंच प्रति हज़ार वर्ष की रफ्तार से नीचे डूबता जाता रहा है।

बधन एव बाद के भूकम्पी अपवर्तन के लिए दागन मे प्राप्त परिणामों स डार्विन का यह कथन प्रमाणित हो जाता है कि अटल जिना किसी प्रवाल रा जवस्था म गुजरे चपटे अवतलनशील प्लेटफार्मो पर बन सकते है। दूसरे श मे, इसस पहल कि प्रवाल उगने शुरु हुए ज्वालामुखीय द्वीपा का लहरा और हवाओ द्वारा अपरदन होकर उनके चपट प्लेटफाम बन गए। कदाचित अपरदन द्वारा बनी गाद और ज्वालामखीय कचरे न तब तक उन प्रवाला की वृद्धि नही होने दी जब तक वह द्वीप अवरल्न होत-होत समुद्र के समतल मे कुछ नीचा नही हो गया। तब लहरा द्वारा कटे हुए य प्लेटफाम नीचे धसन लगे जब कि ऊपर को बढ़ते जाने वाले प्रवाल निचली प्रवाल भित्तिया का सतह तक ले आए जो इस प्रकार माना डूबत हुए स्थल की समाधि शिलाए बन गइ । एनिवटाक सम्भवत बिकिनी, तथा मार्शल द्वीपसमह के अय अडल कदाचित इसी विधि से बने है।

जहा किसी प्रकार स प्रवाल वद्धि म कोई अडचन आ गई, या नीचे डूबने की रफ्तार बहुत ज्यादा तज हो गइ वहा अडल डूब गए और समुद्र क नीचे फासिलीकृत हो गए। विलक्षण डार्विन न उस समय इस बात की भी पूर्वानुभूति की था जब उसन लिखा था कि 'कभी कभी चपटी सतह वाले ऐस गहरे-गहरे अवतलित तट पाए जात है जिनमे एक सम्पूर्ण अडल के सभी लक्षण मौजूद होत हैं लेकिन जो केवल मत पवाल शैला के ही बने होत है ।"

हालाकि आज की किसी भी ऐसी प्रवाल भित्ति की जानकारी नही है जो ज्वालामुखीय द्वीपा के चारो ओर उस समय उगी जब व डूबते जा रह थे, डार्विन का सिद्धान्त प्रवाल भित्तिया के सभी ज्ञात तथ्या के स्पष्टीकरण के निकटतम आता है। निश्चय ही हिमयुगो के दौरान प्रवाल भित्तिया पर महत्त्वपूर्ण रूपान्तरकारी प्रभाव पडे किन्तु निष्कपत उनके निर्माण का सबसे महत्त्वपूर्ण कारक अवतलन ही है।

प्रशान्त महासागर के डूबे हुए द्वीप

जो ज्वालामुखी द्वीप लहरो की क्रिया से समतल बन गए और नावे धस गए हैं उन्हे गेयो (guyots) कहते है—यह नाम फ्रासीसी भूगोलशास्त्री आर्नोल्ड गेयो के आधार पर दिया गया है। गेयो शकुरूपी, ऊपर से चपटे और

अवतल बाजुओं वाले उभार होते हैं जो महासागरीय तली में कम से कम ३ ००० फुट ऊंचे उठे होते हैं। उनकी चोटियों की मोटाई कुछ मील से लेकर बहुत ज्यादा ६० मील तक होती है और व समुद्र की सतह से ३,८०० से लेकर ५ ००० फुट या उससे अधिक के बीच में नीचे होते हैं। इनकी चपटी चोटियों के आधार पर इन्हें समुद्री टीले नामक अन्य समुद्री उभारों से पृथक किया जा सकता है समुद्री टीले भी ३००० फुट से अधिक ऊंचे होते हैं। समुद्री टीले ज्वालामुखीय शंकु होते हैं जो महासागरीय फर्श से उठने हुए बने हैं लेकिन जो अभी तक सतह पर नहीं पहुंच पाए हैं।

अटलांटिक और प्रशांत महासागरों की तली में बहुत-से समुद्री-टीले छितराए हुए हैं और उनमें कोई निश्चित दिशा-व्यवस्था नहीं है। गेयो अटलांटिक में विरले हैं किन्तु प्रशांत में वे काफी अधिक हैं जो चार सामान्य क्षेत्रों में सामूहित हैं। इस गेयो का एक समूह जिनकी चोटियां समुद्र तल से औसतन ३ ००० फुट नीची हैं अलास्का की खाड़ी में स्थित है। एक अन्य समूह उत्तर-पश्चिम साइबेरिया व कामचाटका प्रायद्वीप से लेकर दक्षिण जापान के अक्षांश तक फैला है। गेयो हवाई द्वीप समूह से मार्शल द्वीपों तथा मार्शल द्वीपों से मारियाना द्वीपों तक भी फैले हुए हैं। यदि ये सारे गेयो डूबे हुए द्वीपों के प्रतिदर्श हैं तो इसका यह अर्थ होगा कि प्रशांत की सतह के नीचे एक सौ से अधिक द्वीप डूब चुके हैं। तब यह प्रश्न उठता है कि इतने बड़े पैमाने पर अवतलन होने का कारण कौन-से बल हो सकते थे? क्या इस अवतलन में प्रशांत महासागर की सम्पूर्ण तली शामिल है या हर गेयो अथवा गेयो-समूह के नीचे यह स्वतन्त्र रूप से घटित हुआ है? साथ ही, ये द्वीप कब सतह से ऊपर थे और कब उनके शिखर कटे?

सन १९५० में एक संयुक्त स्क्रिप्स नेवी खोजयात्रा ने पहली बार यह खोज की कि हवाई और मार्शल द्वीप समूहों के बीच के समुद्री-टीले एवं गेयो की मालाएं—जिसे मध्य प्रशांत पर्वतमाला कहते हैं—अलग अलग उभार नहीं थे बल्कि वे एक अन्य समुद्री कटक की चोटियों के रूप में ऊपर उठे हैं। यह कटक हवाई शृंखला के मध्य में स्थित नेकर द्वीप से पूर्व की ओर बढ़ता जाता है और लगभग वेक द्वीप तक पहुंचता है और स्वयं यह महासागरीय फर्श में बने एक चौड़े उत्फूलन से ऊपर उठता है। ड्रेजों द्वारा इन गेयो की चोटियों से प्राप्त किए गए फासिलों से पता चलता है कि ये गेयो ६ करोड़ से १० करोड़ वर्ष पहले के बीच के काल में कटकर समतल हुए। प्रशांत महासागर के अन्य सभी गेयो जिनकी तिथि निर्धारित की जा चुकी है लगभग उसी समय खंडित हुए थे।

माशल द्वीप के गेया से प्राप्त किए गए ज्वालामुखीय ढेलों से उन उद्गारों की तिथि निर्धारित होती है जिनके द्वारा लगभग २५ से ३० करोड़ वर्ष पहले सतह के ऊपर ज्वालामुखी बने थे।

भू-पपटी की एक अपेक्षाकृत सहसा नीचे को होने वाली गति या सम्भवत समुद्र की सतह का सहसा ऊपर उठ जाना, कम से कम ५ करोड़ वर्ष पहले हुआ जिसने चपटे, उथले तटों को इतनी तेज़ी से ५०० फुट के नीचे निमग्न कर दिया कि विभिन्न प्रवाल तथा अन्य उथले जलीय जन्तु मर गए। इस नीचे को डूबते जाने की क्रिया में हो सकता है ये दो मिले-जुले कारण हों एक तो भू-पपटी के नीचे से पिघले ज्वालामुखीय पदार्थ का हट जाना, और दूसरे एक-एक व्यष्टिगत गेयो का अपने भार द्वारा भू-पपटी को ऊपर से नीचे को दबाना। इसके विपरीत हो सकता है प्रशांत महासागर के फर्श के सम्पूर्ण क्षेत्र निमग्न हो गए हों। नौसेना इलेक्ट्रानिक्स प्रयोगशाला के डा० एडविन एल० हैमिल्टन का विचार है कि मध्य प्रशांत पर्वतमाला के समान बड़े क्षेत्रों का अवतलन या तो अब मुखी गतिशील संवहन धारा (या किसी उपरिधारा के रुक जाने) के कारण हो सकता है या इस तथ्य के कारण कि भू-पपटी के ऊपर पर्वतों का भार इस हद तक सीमा से ज्यादा हो गया कि अन्तत वह टूट गई और तमाम पर्वतमाला धराशायी हो गई।

राजर रवेल का सुझाव है कि अवतलन का मुख्य कारण समुद्र की सतह में होने वाला उभार है और लावा का जुड़ गया हुआ भार तथा भू-पपटी के नीचे से निकल कर आने वाला जल, ये दोनों केवल गौण अवतलन के ही उत्तरदायी हैं। इस सिद्धांत का यह एक अनिवार्य निष्कर्ष होगा कि जगत्-महासागर का बहुत ज्यादा—यहां तक कि एक चौथाई—जल १० करोड़ वर्ष पहले उस समय आकर मिला जब ज्वालामुखीय क्रिया द्वारा यह जल पृथ्वी के भीतर से निकल कर ऊपर आया था (पृष्ठ ३२ देखिए)।

मेनार्ड का विश्वास है कि मध्य प्रशांत पर्वतमाला का अवतलन मध्य महासागरीय पर्वत-तन्त्रों के विकास का ही एक अंग है और यह कि पूर्वी प्रशांत उभार, मध्य-अटलांटिक कटक और मध्य प्रशांत पर्वतमाला, ये सब इसी विकास की विभिन्न अवस्थाओं को दर्शाते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार, पूर्वी प्रशांत उभार को महासागरीय फर्श के एक प्रारम्भिक निम्न उत्फूलन के रूप में मानना होगा जिसमें से ज्वालामुखी और कटक निकलते रहते हैं। डाउनविंड खोज-यात्रा पर किए गए अन्वेषणों द्वारा यह प्रकट होता है कि यह उभार उन विशाल विभंग क्षेत्रों द्वारा घिरा हुआ है जो इसे अनुप्रस्थ रूप में दक्षिण अमरीका की दक्षिणी नाक से दक्षिण-पश्चिम कनाडा के पार वैंकुवर द्वीप तक काटते हैं।

चार सबमे बडे क्षेत्र कैलिफार्निया और मक्सिको मे समुद्र की दिशा म तट से १,६०० से ३,३०० मील दूर तक चल्ल जात है। व लगभग साठ मील चाडे ह और उनमे कटक, दाप घाटिया, समुद्री टीले आर ज्वालामखी भर पडे ह। इन दापो के सहारे-सहार पृथ्वी की भू-पपटी के पडा की क्षैतिज गति बहुत ज्यादा हाती है। इस गति का पराम ना मील से लेकर बहुत ज्यादा ७२० मील तक, जा कि कैल्फिर्निया के सबसे अधिक पश्चिमी बिन्दु मडासिनो अन्तरीप से पश्चिम की ओर फैले हुए क्षेत्र पर पाइ जाती है होता है। मेनाड का कहना है कि स्थल पर होने वाला इसी प्रकार का विस्थापन किसी महाद्वीप का दो भागो मे चीर देगा।

इन दोपा की स्थितिया मे सकत मिलता है कि इनका निर्माण भू-पपटी के तनाव या दूर दूर खिचते जाने के कारण हुआ है। इन्ही के जैसे दापा म से बाहर उगलता हुआ लावा और खडित पत्थर समुद्र के ऊपर उस प्रकार के ज्वालामखी निमाण कर सकते थे जैसे कि २५ करोड वष पहले मध्य प्रशात पवता म पाए जाते थे। इन पवता के लाप और दरार हवाई द्वीपा का काटत जाते हैं और यह सम्भव है कि ये द्वीप इसी विधि से बन हा।

अतत, उभार नीचे बढ़ता गया होगा और भूकम्पा से ग्दा हुआ एक सकीर्ण अतिप्रवण कटक बच गया हागा और साथ मे इस कटक से चाटिया के रूप मे अनक ज्वालामुखीय द्वीप और समुद्री टीले उठ गए हागे। मेनाड का विचार है कि इस प्रकार का एक कटक, अथवा कटक माला, आज के महासागर म मध्य अटलाटिक आर मध्य हिंद महासागरीय कटक के रूप म प्रतिदर्शित ह। कटक पर बन ज्वालामुखी द्वीपा पर आक्रमणशील लहरा आर हवा ने समय क साथ साथ उन्हें अपरदन द्वारा समुद्र की सतह तक काट दिया होगा जिससे ऐस प्लेट-फॉम बन गए जिन पर प्रवाल उग सकते थे। उसके बाद यदि कटक अवनमित होता गया होगा तो वह निष्क्रिय अध समुद्री पवत बन गया हागा जिसक शाप पर इस प्रकार के गेयो तथा अडल बन गए हागे जस कि मध्य प्रशात पवतमाला, क्रिमस द्वीप कटक आर टुआमोटु कटक। इन दाना अतिम कटका पर उनके शृगा के ऊपर अटल, समुद्री टीले आर गेयो बने ह आर य कटक प्रशात क बीचो-बीच से हाकर मध्य प्रशात पवता से पूर्वी प्रशात उभार तक चल्ल जात है। इस प्रकार मेनाड का विश्वास ह कि प्रशात महासागर क नीच इने विभिन्न द्वाप आर कटक अध समुद्री पवता के विकास म प्राचीनतम अवस्थाआ क प्रतिदर्श ह।

अवसादों की पहेली

यदि विभिन्न जीवों नदियों हवाओं ज्वालामुखियों और बाहरी अन्तरिक्ष के योग से समय के साथ-साथ अवसादों की पुस्तक मोटी होती जाती रही है, तो इसका यह अर्थ होगा कि महासागरीय फर्श पर पदार्थ का एक अत्यधिक मोटा एकत्रीकरण होना चाहिए। महासागर की आयु को दो अरब वर्ष मानते हुए ऐसा हिसाब लगाया गया है कि अवसादों की औसत मोटाई ९,८०० फुट होनी चाहिए। परावर्तन शॉटिंग द्वारा इस संख्या की आसानी से जाँच की जा सकती है। अटलांटिक और प्रशान्त महासागरों में ऐसे काफी मापन किए गए हैं जिनमें यह सिद्ध होता है कि ऊपर दिया गया अनुमान बहुत ज्यादा ऊंचा है और यह कि अवसादों की औसत चादर आश्चर्यजनक रूप में पतली है—अटलांटिक में केवल २००० फुट और प्रशान्त में १,००० फुट। अटलांटिक में एकत्रीकरण अधिक है क्योंकि इसमें अधिक संख्या में नदियाँ आकर गिरती हैं, और चूंकि यह प्रशान्त की अपेक्षा संकीर्ण है इसलिए उन्हें फैलते जाने के लिए कम स्थान मिलता है।

तब फिर लुप्त अवसाद कहाँ है ? महाद्वीपों पर पाए जाने वाले ऐसे शैलों की तिथि निर्धारण हो चुका है जो ४ अरब वर्ष से अधिक पुराने हैं और ऐसी बहुत ज्यादा सम्भावना है कि उसी समय से अपरदन होता चला आ रहा है। क्या यह सारा अवसाद समुद्र में विलय हो चुका है, क्या विभिन्न महाद्वीप अधिकांश भूवैज्ञानिक काल में निमग्न रहे हैं जिससे कि अपरदन नहीं हुआ अथवा क्या बहुत ही कम अवसाद है क्योंकि प्लवक तब तक मौजूद नहीं था जब तक कि अपेक्षाकृत आधुनिक काल नहीं आ गया। ये सब सम्भावना मात्र है लेकिन डा० एडविन हैमिल्टन ने एक अधिक उत्तम स्पष्टीकरण रखा है।

अपवर्तन शॉटिंग में प्रकट होता है कि अटलांटिक अवसादों के नीचे ५,००० से ६,००० फुट मोटी एक कठोर परत है। यह पृथ्वी की भू-पपड़ी की सब से निचली परत अथवा 'आधारीय शैल' नहीं है, बल्कि यह वह परत है जिसे द्वितीय परत कहा जाता है। इसके नीचे तीसरी परत है जो अटलांटिक में लगभग तीन मील मोटी है। हैमिल्टन का मत है कि सबसे ऊपरी अवसादों के भार से प्राचीनतर एवं अधिक गहरे अवसाद दब दब कर शैल बन गए हैं। उसने प्रयोगशाला में ऐसे प्रयोग किए हैं जिनसे प्रकट होता है कि मृत्तिका का दाब के प्रभाव में रखने पर वह संमेकित होकर कहीं अधिक पतली शैल बन जाएगी। यदि अटलांटिक की तली में यही मामला रहा है तो ७,८०० फुट लुप्त अवसाद सम्पीडित होकर ६,३०० फुट शैल बन गया है।

निस्सन्देह कुछ अन्य हल भी सम्भव हैं। इन्हीं में एक है रेवेल का सिद्धांत, जिसमें यह कहा गया है कि आज के महासागर उससे कहीं अधिक कम आयु वाले हैं जितना कि उन्हें सामान्यतः माना जाता है। उसका विचार है कि १० करोड़ वर्ष पहले जो भारी ज्वालामुखीय क्रिया हुई उसमें इतनी ज्यादा मात्रा में लावा निकला होगा कि वह समुद्र के फर्श पर फैल गया और पुरातन अवसाद उसके नीचे दब गए। अपवर्तन विस्फोटों से निकलने वाली कम्पन तरंगें लावा द्वारा नीचे को मुड़ जानी चाहिए न कि नीचे बिछे हुए अवसादों को छिपाते हुए ऊपर सतह की ओर मुड़ जाएगी।

इस विचारधारा को मोहोल[1] प्रायोजना द्वारा प्राप्त जानकारियों से कुछ बल मिला है। स्क्रिप्स के डा० वाल्टर मंक तथा प्रिंस्टन विश्वविद्यालय के डा० हैरी हेस द्वारा मूलतः प्रारम्भ की गई यह एक विलक्षण योजना है जिसमें महासागरीय अवसादों और पृथ्वी की भू-पपटी में से प्रावार तक एक छिद्रवेधन की योजना बनाई गई है ताकि जो बात कम्पन तरंग नहीं बता सकतीं वह हम स्वयं अपनी आंखों से देख सकें। इस कार्य में कुछ ऐसी बाधाएं आ रही थीं जिन पर विजय पाना असम्भव सा दीख रहा था। लेकिन अन्त में उन पर भी काबू पाते हुए मार्च, १९६१ में इस योजना की वेधन-जहाज-नौका "कुस प्रथम" गंभीर महासागरीय फर्श में पहला सूराख वेधन में सफल हुई। मेक्सिको के पश्चिमी तट के पार सैन डीएगो के २२० मील दक्षिण में और ग्वाडालूप द्वीप के ४० मील पूर्व में एक स्थान पर ११,७०० फुट गहरे जल में पांच वेधन किए गए। वेधन पाइप के भीतर डाले गए क्रोड प्राप्त करने वाले एक विशेष यंत्र के द्वारा हरी भूरी मृत्तिका का ५६० फुट नमूना प्राप्त किया गया—यह हमारी अवसाद पुस्तक के ऐसे पृष्ठों के रूप में था जो सबसे पहली बार खोले गए थे और जिनमें इतिहास से पहले के जीवन, तब की अवस्थाओं और घटनाओं की बहुत ज्यादा जानकारी भरी पड़ी थी। ५६० फुट पर वेधक-यन्त्र का छेदन करने वाला भाग ठोस शैल से टकराया (इस क्षेत्र में अवसाद का आवरण असाधारण रूप से पतला है)। वेधन ६०१ फुट की गहराई तक जारी रहा और यह अनिश्चय भ्रांतिजनक दूसरी परत का पहला नमूना ऊपर लाया। अन्तिम कुछ फुट के क्रोडों में वह ज्वालामुखीय शैल भरा था जो नीले बेसाल्ट रूप में ... फर्श बिछा था।

1 मोहोल —अर्थात मोहो में से गुजरता हुआ एक छिद्र। मोहो मोहोरो विकिक विच्छिन्नता का, जो कि भू-पपटी और प्रावार के बीच की सीमा है, वैज्ञानिक नाम है।

इसका यह अर्थ नहीं है कि दूसरी परत पूरी की पूरी इस ज्वालामुखीय पदार्थ की ही बनी है। हो सकता है अन्य स्थानों पर यह संपीडित अवसाद के रूप में हो अथवा अन्य किसी ऐसे पदार्थ के रूप में जिसकी ओर अभी तक ध्यान नहीं गया है। इसे निर्धारण करने के लिए अभी विभिन्न स्थानों और अधिक छिद्रों का वेधन करना होगा। ग्वाडाल्प के पार वेधन किए गए छिद्र मोहाल का पूर्वाभ्यास मात्र थे। मोहाल प्रायोजना तीसरी परत का वेधकर प्रावार का नमूना प्राप्त करेगी—उस अज्ञात परत का जो भीतरी अवकाश का ८४ प्रतिशत भाग बनाती है।

पृथ्वी की अथवा महासागरीय द्रोणियों की आयु से अवसाद की मोटाई का परिकलन करने की प्रविधि को उलट कर यह सम्भव है कि अवसाद की मोटाई अथवा पतलेपन से महासागरीय द्रोणियों की आयु का हिसाब लगाया जा सके। ऐसा करने पर निष्कर्षों से पता चलता है कि महासागर २० करोड़ वर्ष या उससे कम पुराना है। इसका इस तथ्य द्वारा भी समर्थन होता है कि नाडों से प्राप्त किए गए तमाम अवसादों और महासागरीय फर्श से ड्रेज द्वारा प्राप्त किए गए तमाम नमूनों में से एक भी नमूना ऐसा नहीं है जो १० करोड़ वर्ष से अधिक पुराना रहा हो। अध समुद्री गंभीर-खडडों से निकले शैल भी, जो अपरदन द्वारा महाद्वीपीय शेल्फ से गहरे गहरे पहुंच गए हैं इससे अधिक प्राचीन नहीं है। ऐसा जान पडता है कि या तो जितना सामान्यत विश्वास किया जाता है उससे महासागर कहीं अधिक कम आयु के है या फिर पृथ्वी की भू पपटी के उस भाग में जो आज महासागरों से ढकी है, लगभग १० करोड़ वर्ष पहले कोई क्रांतिक परिवर्तन अवश्य हुआ।

महासागरों के इतिहास के बारे में हमारी इतनी कम जानकारी है इसका कारण यही है कि हमने अवसादों की पुस्तक का अभी केवल खोला हो है। महासागर कैसे बना? जीवन, पृथ्वी और यहां तक कि सौर-परिवार का उद्भव कब हुआ? इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर गहरे और अभी तक के अछूते पृष्ठों में मिलेगा—ऐसे पृष्ठों में जो मोहोल के समान साहसी और कल्पनाशील प्रायोजनाओं द्वारा खुलेंगे।
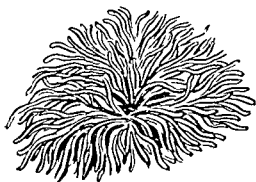
व्यवसाय के औजार

"यह सोचना कि हर चीज की खोज हो चुकी है, भारी गलती है,
जरा उस क्षितिज की ही कल्पना कीजिए जो हमारे संसार की सीमा है।"

—लेमोयर

"वहां जरा एक मछली देखिए। बस इतना भर ही दायरे में आता है। बस एक ही चीज।" डा० ऐंड्रीयास ('ऐंडी") रेश्नीटज़ेर, जो कि नौ-सेना के गंभीर निमज्जन प्रायोजना 'नक्टान" का वैज्ञानिक निदेशक था, इन शब्दों में लेफ्टीनेंट डॉन वाल्श से महासागर के गंभीरतम बिन्दु में सात मील नीचे एक मछली दिखाने के लिए कह रहा था।

'कदाचित मैं इतनी आंख गड़ा कर देखूंगा कि कुछ न होते हुए भी कुछ देख लूंगा," वाल्श ने उत्तर दिया। यह २८ वर्षीय अफसर संयुक्त राज्य अमरीका की नौ-सेना का सबसे अधिक विचित्र जलयान—ट्रीस्टे नामक बेथिस्कैफ—का मुख्य-अधिकारी था।

दो व्यक्ति यू० एस० एस० ल्यूइस के ब्रिज पर उस समय खड़े हुए थे जबकि यह पोत असाधारणतः विक्षुब्ध प्रशांत सागर में आगे पीछे, अगल-बगल हिचकोले खाता और लड़खड़ाता हुआ चल रहा था। इससे पहले के दो दिनों के दौरान विध्वंसक अनुरक्षक ने महासागरीय फर्श पर ८०० टन से भी अधिक टी एन-टी बरसाया था—यह ढूंढने के प्रयत्न में कि मारियाना ट्रेंच का सबसे गहरा भाग कौन सा है। हाथ में स्टाप वाच लिए रेश्नीटजेर गहराई का मापन करता जा रहा था जिसके लिए वह विस्फोट और लौटकर जाती हुई ध्वनि

तरगा द्वारा उस हेडसेट" म—जिसे वह पहने हुए था, क्लिक होने के बीच का काल नापता था। जब यह अतराल १८ सैकड हो गया तो वह पलट कर वाल्श से बोला बेटा सचमुच हम एक गड्ढा मिल गया है।" यह ३३,६०० फुट गहरा था[1]।

वाल्श ने मुडकर जहाज के पीछे को देखा। लगभग एक मील दूर अधेरे म से चीरती हुई यू० एस० एस० वाडाक की ज्योतिया दीख प रही थी। चार दिनो से खीचने वाली यह नौका ट्रीस्टे को ग्वाम म बने अपने अड्डे से मारियाना टेच तक २२० मील की दूरी म खीचती ले जा रही थी। वाडाक पर दो व्यक्ति थे एक तो इसी बथिस्कफ के डिजाइन कर्त्ता एव निर्माता—प्रोफेसर आगस्टे पिकाड का ३७-वर्षीय पुत्र जैक पिकाड और दूसरा, उस बथिस्कैफ का उस्ताद मकेनिक गिसेप ब्यूओनो। गिसेप भी ३७ वर्ष का ही था। जक ने इस पोत के बनाने म अपने पिता की सहायता की थी और १९५३ मे इसका निर्माण पूरा हो जाने के बाद स ही वह और गिसेप इसका चालन करते आ रहे थे। अब २३ जनवरी, १९६० थी और ट्रीस्टे अपना ८०वा गोता लगाने वाला था—जो कि उसका अब तक का सबसे गहरा गोता था।

वाल्श रबड की व्हेल-नौका मे रवाना हुआ और बेथिस्कैफ के उग्र रूप मे हिचकोले खाते डेक पर सवार पिकाड से जा मिला। धक्का देती और फूटती जाती लहरो द्वारा डेक लगातार पानी के नीचे डूबता चल रहा था जिससे उस पर पर रखना कठिन और जोखिम स भरा था। छह फुट सात इच डील डौल वाला पिकाड हैच म स होकर ऊर्ध्वाधर प्रवेश शाफ्ट मे घुस गया। ट्रीस्टे का परिचालनगृह नीचे बने इस्पात-गोले से १८ फुट लम्बे सीधे खडे मार्ग द्वारा जुडा था जो इस पोत के उत्प्लावक भाग म से होकर गुजरता था (चित्र ६७)। यह लम्बा-तडगा स्विटजरलैंड-वासी इजीनियर सीढी से नीचे उतरा, एक अन्य हैच को खोल और आराम से छह फुट चार इच के व्यास वाले एक दाब रोधी बुदबुदे म पहुच गया।

जैक न तमाम यन्त्रो और परिपथो को पूरी तरह से चैक कर लिया और यह तसल्ली करके कि सब कुछ ठीक था वह फिर से चक्कर डेक पर पहुच गया। अब गोले म उसकी जगह वाल्श आया जो एक अनुभवी पनडुब्बी चालक रहा

---

[1] १८ सकण्ड को जल म ध्वनि की चाल ४,८०० फुट प्रति सैकण्ड से गुणा करने पर जो गुणनफल आता है उसको दो से भाग देने पर ३३,६०० फुट आता है।

है। उसने वही नित्य का पूरा चैकिंग किया जो उसने उससे पहले वे छह बार गोता लगाने के समय किया था—बैटरिया ठीक है वायु पुनरुत्पादक काय कर रहे हैं सब यन्त्र अपना अपना काम कर रहे है।

यह सब काम उसने पूरा भी नही किया था कि सबसे ऊपर का हैच खुला और जैक के भीगे जूते फच फच करते हुए तेजी से सीढ़ी के नीचे उतरते जा रहे थे। ठीक उसके पीछे गिसेप था। मकेनिक ने कहा "मिले ग्राज़ी। आरिवेडेसी ('धयवाद, नमस्कार") । उत्तर मे जैक ने धयवाद और नमस्कार किया। तीना व्यक्तियो ने हाथ मिलाए।

लाहे का हैच खटाक से बद हो गया और प्रशात महासागर के हज़ारो टन जल को बाहर रोके रखने वाला अकेला बोल्ट अपने स्थान म कसकर लगा दिया गया। पोत को नीचे की ओर चलाने का काम गिसेपे के सुपुर्द था। उसने एक वाल्व खोला। तभी वाल्श तथा पिकार्ड ने एक खिडकी म से देखा कि प्रवेश शाफ्ट मे जल भरता जा रहा था। गिसेपे ने दो और वाल्व खोले तथा दो टन समुद्र जल गोले के ऊपर बनी ५८ फुट लम्बी उत्प्लावक रचना के अतिम सिरो पर बनी टकियो मे भर गया। ऐसा करने से सावधानीपूर्वक नमूना बनाए गए ट्रीस्टे का भार इतना बढ़ गया कि वह नीचे को चलने लगा।

गोले के अदर लगे गेज थिरके और बेथिस्कैफ की चलती जाती अनिश्चित गति धीमी हुई। धीरे धीरे इसकी उग्रता कम होती गई। प्रात ८ बजकर ३२ मिनट पर, ट्रीस्टे हवाओ और लहरो से नीचे शातमय और पूर्णत अविक्षुब्ध जल मे पहुच गया।

बेथिस्कैफ सतह पर इसलिए उतराता रहता है क्योकि उसकी टकियो म पट्रोल भरा रहता है जो जल से हल्का होता है। आगे-पीछे दोनो सिरो पर अतिरिक्त वायु कोष्ठक होते है जो खीचे जाने के दौरान अतिरिक्त उत्प्लावकता (उछाल) प्रदान करते हैं लेकिन जब उनमे जल भर दिया जाता है तो वे पोत को नीचे ले जाना प्रारम्भ कर देते है। उत्प्लावक प्लव अथवा टकी म विभाजन द्वारा कक्ष बने होते है जिनकी ऐसी रचना बनाई जाती है कि उनम भरे पट्रोल का समुद्री जल से सम्पर्क बना रहता है। नीचे जाते जाने के दौरान टकी म जल भरता जाता है और पैट्रोल को सपीडित करते हुए प्लव के भीतर तथा बाहर की दाबो को बराबर कर देता है।

सतोष की सास भरते हुए पिकार्ड और वाल्श ने देखा कि बेथिस्कैफ इस तरह ठीक काय कर रहा था और लगभग ४ मिनट मे २५० फुट नीचे चला गया। किन्तु उसके छह मिनट बाद ३०० फुट पर वह एकदम रुक गया। उस समय

उहान ताप प्रवणता पार की थी अथात व गम हल्के जल म म ठडे आर सघनतर जल म जा रहे थ। सघनतर जल का प्रभाव बेथिस्कैफ के भार का इतना
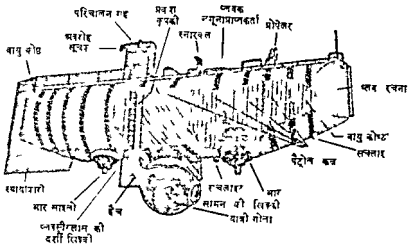
चित्र ६७ बेथिस्कैफ ट्रीस्टे उस समय नीचे डूबने लगता है जब प्लव रचना के अंतिम सिरा में स्थित वायु-कोष्ठो में जल प्रविष्ट कराया जाता है, अथवा जब कक्षा में से पैट्रोल बाहर छोडा जाता है। यह तब भी नीचे बैठता जाएगा जब पैट्रोल ठडा होकर अधिकाधिक सिकुडता जाएगा। बेथिस्कफ का भार कम करने और उसे ऊपर उठाने के लिए, यात्री-गोले के दोनों पार्श्वों पर स्थित सिलिंडराकार साइलो में से छोटी छोटी लोहे की गोलिया बाहर निकाल दी जाती हैं।

कम कर देने वाला था कि वह बीच गहराई म तिरन लगा।

ट्रीस्टे म इस प्रकार की व्यवस्था की गई ह कि गोताखोर कुछ पैट्रोल बाहर निकाल कर इसका भार अधिक कर सकते हैं। इसके विपरीत वे तब तक प्रतीक्षा भी कर सकते है जब तक ठडे जल से पैट्रोल ठडा होकर सिकुड नही जाता। इससे भी उनका भार पर्याप्त इस हद तक ब सकता है कि नीचे चलना फिर से शुरु हो जाए। पिकाड की इच्छा नही थी कि वह थो से भी उस पट्रोल का बाहर छोडे जो उन्ह फिर से ऊपर लान मे उछाल का काय करता है। किन्तु गतिहीन अवस्था म मध्य-गहराई पर तिरत रहन के लिए भी वह इतना ही अनिच्छुक था।

उसन एक वाल्व खोला और ट्रीस्टे ने धीरे से नीचे चलना शुरू कर दिया। लेकिन ३५ फुट आगे, और पुन ४२५ फुट तथा ५३० फुट पर गोताखोरो

ने अपने गहराई गेजा पर देगा ता पता चला कि वे वास्तव म पुन उल्टे ऊपर चल रह थे। जैक न टिप्पणी की कि ६५ वार गाता लगान म उस कभी भी ऐसे ताप रावियों का सामना नहीं करना पड़ा था। पैट्रोल की कुछ और मात्रा बाहर निकाल दी गई और उन्होंने धीरे धीरे जलपान का दम दिग दिखा कर जबर्दस्ती नींद का भगाया।

पहले ६५० फुट नीचे उतरने म आधा घटे से अधिक समय लग गया, जो प्रति सेकण्ड लगभग ४ इच की चाल थी। किन्तु एक बार ताप प्रवणता के क्षेत्र से पार हा जाने के बाद व बारह मिनट म १००० से २००० फुट पहुच गए। २२०० फुट पर एक प्रकाश रेखा दिखाई पडी और फिर उसके बाद सिवाय अन्धकार के तब तक कुछ न था जब तक २०००० फुट पर पुन एक रेखा दिखाई न दी।

गहरे सागर म पहले-पहल जाने का काय १९३४ मे आटिस बटन तथा विलियम बीब न किया था जबकि वे बर्मुडा के समीप अटलाटिक मे ३,००० फुट नीचे उतरे थे। उनके बेथिस्फीयर म उत्प्लावकता नही थी और उसे एक केबिल द्वारा उतारा गया था। उनके मामले म अगर कही केबिल टूट जाता तो मृत्यु निश्चित ही थी। १५ फरवरी, १९५४ का जाज होयो और लेफ्टीनेंट वीयर विल्म फ्रासीसी पश्चिमी अफ्रीका स्थित डकर के पार १३ २८७ फुट की उस समय तक की सबस अधिक गहराइ तक फासीसी-नासेना बेथिस्कैफ एफ० आर० एन० एस० ३ म बठकर उतरे थे। पिकाड और वाल्श न ७ जनवरी, १९६० का इस रिकाड का ताड दिया जब कि व २४००० फुट तक गाता लगा गए। २३ जनवरी का उनके गहराई-गेजा ने सकेत दिया कि वे पुन उसी गहराई पर पहुच गए और फिर भी उससे और अधिक नीचे चलते जा रहे थे।

२६,००० फुट की गहराई पर पहुचने के बाद उन्होंने अपनी नीचे उतरने की चाल का घटा कर दो फुट प्रति सेकण्ड कर दिया तथा ३०,००० फुट पर एक फुट प्रति सैकण्ड। बेथिस्कैफ के नीचे उतरने को धीमा करने के लिए अथवा उसे ऊपर उठाने के लिए उसका भार घटाना जरूरी होता है। यह काय एक मेधावी विधि के द्वारा किया जाता है जिसम वजना अथवा बैलास्ट का नीचे गिराते जाते है। बुदबुदे के दोनो तरफ दो सिलिंडराकार ढाल होते हैं जिनम चिडिया को मारने वाले छर्रों के समान ८½ टन छोटी छोटी लोहे की गोलिया भरी होती है। ये ढाल या साइलो तली मे बने और समुद्र म खुलने वाले एक सूराख की ओर सकीर्ण होते जाते है। यह छिद्र एक विद्युत-कुडली द्वारा घिरा रहता है और जब तक इस कुडली म से विद्युत धारा बहती रहती है तब तक

गालिया चुम्बकीय हुई रहती है और इस तरह वे साइलो से बाहर नहीं निकल पाती। विद्युत् धारा रोकते ही गालिया छिद्र में होकर बाहर गिरने लगती हैं जिससे जलपोत हल्का होता जाता है।

यह निभार व्यवस्था बडी ही सुग्राही है और एक बार मे बहुत थोडे थोडे भार गिराए जा सकते हैं। यदि कभी ट्रीस्टे पर बैटरी शक्ति फेल हो जाए तो, अथवा अन्य किसी आकस्मिक सकट में पूरे साइलो गिरा दिए जाते हैं। उस स्थिति में बेथिस्कैफ का भार उस बिन्दु तक घट जाता है तो कि पैट्रोल उसे सतह तक ले आएगा।

३३,००० फुट की गहराई पर, जो कि प्रत्याशित तली से केवल ६०० फुट रह गई थी, प्रतिध्वनि गभीरतामापी पर कुछ भी प्रकट नहीं हुआ। ३४००० फुट पर भी कुछ नहीं था—अर्थात "तली" के ४०० फुट नीचे—या ३५,००० फुट पर भी। जक ने वाल्श की ओर मुडते हुए पूछा कि क्या उसके ख्याल में वे तली तक नहीं पहुचे। डान ने सोचा कि ऐसा होने की सम्भावनाएं नहीं हैं।

अन्तत गभीरतामापी पर एक सकेत प्रकट हुआ—तली उनके ३०० फुट नीचे थी। शीघ्र ही सर्चलाइट की किरणें तली से परावर्तित होती दिखाई पडी। अभी २०० फुट जाना है अब १०० और अब ५० फुट। ४८ फुट पर उन्हें मारियाना ट्रेंच का फर्श दिखाई पडा। दोपहर के एक बजकर छह मिनट पर ट्रीस्टे प्रशात की सतह के ३५ ८०० फुट नीचे ससार से दूर एकात में अवसाद के गलीचे पर उतरा।

मानो वैज्ञानिक खोजबीन में अपने प्रयोग को सही ठहराने के रूप में बेथिस्कैफ एक वास्तविक मछली के कुछ ही फुट पास तक आ गया था। ऐंडी रीहिनटज़ेर की इच्छा पूरी हुई। सामने की खिडकी से जैक ने एक सोल मछली जैसा प्राणी देखा जो भोजन की तलाश में इधर उधर मुह चला रहा था। उसका शरीर चपटा था, और शीप के दोनों पार्श्वों पर आखें बनी थी और लम्बाई में लगभग एक फुट था।

धातु के बने राक्षस के अचानक प्रकट होने से, आखों में तथा समुद्र की तली की सतत रात्रि में चकाचौंध करने वाली रोशनी पडने में वह मछली तनिक भी विक्षुब्ध नहीं हुई। कदाचित वह नत्रहीन थी क्योंकि वह धीरे धीरे शातिपूर्वक आहार के लिए तली के सिंधुपंक को मथती जा रही थी। मछली ने उस प्रश्न का उत्तर दिया जिसे समुद्र विज्ञानी पिछले सौ वर्षों से पूछते आ रहे थे—क्या जगत महासागर के गभीरतम भागों में जीवन मौजूद है?

गैलथिया ने ड्रेज द्वारा ३२ ३४१ फुट की गहराई पर से बैक्टीरिया और

अकशेरुकी प्राणियो को प्राप्त किया था, और डा० ऐंटन ब्रुन ने पूर्व घोषणा की थी कि "कुछ सौ मीटर¹ और नीचे" मारियाना ट्रच की सबसे अधिक गहराई में जीवन पाया जाएगा (पृष्ठ १७६ देखिए)। तथापि, सबसे अधिक गहरी परिचित मछली केवल २३,४०० फुट से प्राप्त की गई थी और ३५,८०० फुट की गहराई पर एक रीढधारी जीव को पाना एक महत्त्वपूर्ण खोज थी। इसके द्वारा मछलियो के वितरण का परास १२,४०० फुट और नीचे पहुच गया और यह सिद्ध हो गया कि इन गहराइयो के लिए न केवल अकशेरुकी ही अनुकूलित हुए थे बल्कि अधिक उन्नत और जटिल जन्तु भी।

इस मछली ने उन ऊर्ध्वाधर धाराओ के पाए जाने का भी सत्यापन किया जो गभीरतम ट्रेंचो की तली तक आक्सीजन ले जाती हैं। पिकार्ड ने इन धाराओ के मापन का प्रयत्न किया, लेकिन उसके यन्त्र इतने पर्याप्त सवेदी नही थे। उसने रेडियोऐक्टिविटी मापने का भी प्रयत्न किया लेकिन उसको कोई धनात्मक सकेत नही मिला। इतनी गहराई पर ताप ३७.४° फा० था और वहा का जल कदाचित दक्षिण ध्रुव महासागरीय जल तथा उत्तर अटलाटिक के गभीर जल का रूपान्तरित मिश्रण था जो अटलाटिक और हिन्द महासागरो से फैल रहा था।

जैक ने पुन अगली खिडकी की ओर देखा और उसे जन्तु जीवन की दूसरी झलक दिखाई दी। एक चमकदार लाल श्रिम्प, जो एक इच के लगभग लम्बी थी उस कीचड भरे बादल में तिरती निकल गई जो ट्रीस्टे के कारण हिलकर उठ गया था।

जब वे २० मिनट तक उस ट्रच की तली में रह कर अपना कार्य कर चुके तो जैक ने वह स्विच खींचा जिससे बैलास्ट बाहर निकलना था और वे ऊपर उठने वाले थे। लोहे के छर्रों की एक धारा "टल्क के पाउडर के समान नम" अवसाद में बह निकली। उनके ऊपर एक विशाल चमकता हुआ बादल छा गया। और एक लम्बे चौडे फैलते जाते हुए कपासी बादल की तरह फैल गया।'

ट्रीस्टे धीरे धीरे इस बादल मे से होता हुआ ऊपर उठता गया और शीघ्र ही यह बादल उनके नीचे वितल रात्रि में विलीन हो गया। पैट्राल के फैलते जाने के साथ-साथ उनकी चाल तीव्रतर होती गई—एक फुट प्रति सैकण्ड फिर २॥ फुट प्रति सैकण्ड। २०,००० फुट पर वे तीन फुट प्रति सैकण्ड के हिसाब से ऊपर उठे—"जो लगभग प्राडो के ऐलिवेटर की चाल के बराबर था"। उनकी सबसे तेज चाल चार फुट प्रति सैकण्ड रही। सतह के समीप, ताप प्रवणता के ऊपर के

---

१ एक मीटर ३ २८ फुट के बराबर होता है।

गरम जल ने उनकी आभासी भार बढा दिया जिससे उनका ऊपर उठना धीमा हो गया ।

शीघ्र ही खिडकियो पर दिन का प्रकाश प्रकट हुआ और शाम के ४ बजकर ५६ मिनट पर ट्रीस्टे सतह पर आकर लगा । ऊपर उठकर आने की क्रिया मे तीन घंटे सत्ताइस मिनट का समय लगा—जो कि नीचे जाने की यात्रा से एक घटा और ग्यारह मिनट कम था । सतह पर आने के विषय म डॉन वाल्श ने कहा हम प्रति चरम का आभास हो रहा था ।"

जैक पिकार्ड और लैफ्टीनेंट डॉन वाल्श उससे अधिक गहरे गए थे जितना कि उनसे पहले कोई भी अन्य मनुष्य नही गया था । उन्होने हमारे भू-ग्रह की अन्तिम और कठिनतम सीमा पर विजय प्राप्त की । उनके इस साहसिक कार्य ने समुद्र विज्ञान को एक नया यन्त्र प्रदान किया । परम्परागत पनडुब्बियो के द्वारा जितनी दूर तक गोता लगाया जा सकता था उसकी अपेक्षा बेथिस्कैफ ने गोते की गहराई को ६० गुना अधिक कर दिया । अब तमाम जगत् महासागर व्यक्तिगत अन्वेषण के लिए खुल गया है ।

आज समुद्र विज्ञानी गहरे जल मे वही कर सकता है जो कि स्कूबा (Scuba)[१] निमज्जन ने उसे उथले जल म कर सकने की क्षमता प्रदान की है—अर्थात जिस पर्यावरण का वह अध्ययन कर रहा हो उसका अधिक से अधिक निकट का सम्पर्क प्राप्त कर सकने की । इससे निकलने वाले अनेक नतीजो और लाभो का अब उल्लेख किया जा सकता है । नौसेना ने पहले ही ट्रीस्टे मे एक यान्त्रिकीय भुजा लगा ली है जिससे तली के नमूने लिए जा सकते हैं । तथापि, इस नए यन्त्र के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण लाभ पर कदाचित् अभी तक लोगो का ध्यान नही गया है । जैसा कि नौ सेना इलेक्ट्रॉनिक्स प्रयोगशाला के डा० राबर्ट एस० डीटज़ ने कहा है, 'बेथिस्कैफ का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रयोग उन प्रक्रमो की खोज करना होगा जो महासागर म होते रहते है और जिनके बारे मे हम अभी तक पूरी तरह अनभिज्ञ हैं ।'

सागर में ध्वनि

मारियानाज़ ट्रेंच की तली से परावर्तित और यू० एस० एस० ल्यइस तक लौटने वाली ध्वनि-तरगें एक ट्रासफार्मर मे से गुज़ार कर डा० रेक्नीटज़ेर

१ यह "सेल्फ कंटेंड अडरवाटर ब्रीदिंग ऐपैरेटस" के मूल अग्रेज़ी प्रथम अक्षरो से बनाया गया सक्षिप्त रूप है ।

के हड-मेट म पहुचाई गई थी जहा पर एक लघुपथिक युक्ति से उनके द्वारा एक "क्लिक" अथवा खटके की आवाज पैदा कराई जाती थी। रेरनीट्जेर ने इन प्रतिध्वनिया के समय का एक स्टापवाच की मदद से नापा, लेकिन यह भी सम्भव है कि एक यथाथ स्वचालित घ.ी द्वारा उनका समय मापन किया जा सके तथा प्रतिध्वनि का एक गभीरता मापक्रम पर अभिलेखन किया जा सके।

अभिलेखी यन्त्र मे प्राय एक कलम अथवा विद्युत-सुई होती है जा फैदमा या मीटरो से अकित एक कागज पर चलती जाती है। जब सुई शून्य के चिह्न पर होती है ता एक स्विच चलाया जाता है और एक ध्वनि-स्पदन भेजा जाता है। जब प्रतिध्वनि प्राप्त की जाती है और पुन वापस सुई म पहुचती है, तब तक सुई उस समय के अनुपात म कुछ दूर आगे खिसक चुकी होती है जो प्रतिध्वनि को लौटकर आने म लगा हाता है, और इस तरह जो कि गहराई के अनुपात म होता है। लौटकर आने वाला हर सकेत मापक्रम पर दी गई अनरूप गहराई के सामने एक चिह्न लगा देता है जिसके द्वारा जल की गहराई का एक सतत रिकाड प्राप्त हो जाता है तथा जहाज के नीचे महासागरीय फश का एक आलेखी चित्र बन जाता है।

विस्फोटा तथा अन्य श्रवणशील ध्वनिया का तलिया की प्रतिध्वनि के स्रोत के रूप मे प्रयाग करना बहुत लाभप्रद नही है। अध जलीय विस्फाट से एक गैस-बुदबुदा बन जाता है जो कम्पन करत और फूटते समय विघ्नकारी ध्वनि तरगें उत्पन्न करता है। साथ ही इस प्रकार की श्रवणशील ध्वनि, जैसी कि विद्युत नियत्रित उन हथौडा से पैदा की जाती है जा जहाज के बाजुओ पर टक्कर मारते हैं प्राय इजना और प्रापेलरा के शोर-गुल मे विलीन हो जाती है।

आधुनिकतम गभीरतामापिया मे पराश्रव्य तरगा (ultrasonic waves) के सूक्ष्म स्पदना का प्रयाग किया जाता है अर्थात उस आवत्ति वाली ध्वनि-तरगा का जो मनुष्य के कान द्वारा सुनी जा सकने वाली आवत्ति से अधिक होती है। इन्हे एक विद्युत् स्फुलिंग विसजन द्वारा उत्पन्न किया जाता है जिसमे एक विशेष दाब विद्युत् (piezoelectric) क्रिस्टल का प्रयाग किया जाता है जा प्रत्यावर्ती धारा लगाने पर फैलता और सिकुडता जाता है, अर्थात उस विधि का प्रयोग, जिसे **चुम्बकीय विरूपण** (magneto-striction) कहते हैं। इस चुम्बकीय विरूपण नामक प्रभाव मे पहले बढते जाते और फिर घटते जाते चुम्बकीय क्षेत्र के द्वारा अनेक पतली निकेल प्लेटें सकुचित होती और फिर फैलती है। दूसर शब्दा मे वे कम्पन करने लगती हैं। ये कम्पन "युग्मित"

किए जाते अथवा जल म पहुचा दिए जाते हैं और वे पर्याप्त तीव्र हुए ता उनसे पराश्रव्य तरगे उत्पन हा जाती हैं ।

शुरू शुरू म ध्वनि एक ट्रासमीटर द्वारा भेजी जाती थी और अलग एक हाइड्राफोन द्वारा प्राप्त की जाती थी। अब एक **ट्रासडयूसर** (transducer) सकेतो का भेजता और प्राप्त भी करता है जिसमे वह विद्युत-स्पदना का ध्वनि म बदलता और ध्वनि का विद्युत-स्पदना म बदलता है । या ता दाब विद्युत क्रिस्टल या निकेल-प्लेटें कुछ समय सकेत भेजती और कुछ समय उन्हे प्राप्त करती ह। धातु प्लेटा के मामले म वापस आती हुइ प्रतिध्वनिया उनसे टकराती और उन्हे कम्पित कर देती हैं । य कम्पन एक विद्युत्-कुडली मे स्थित एक चुम्बक का आगे-पीछे हिलाते है जिससे एक प्रत्यावर्ती धारा उत्पन्न हाती है । एक धारा क्रिस्टल म उस समय उत्पन्न होती है जब उस पर ध्वनि तरगें टकराती और उसे फैलाती एव सिकोड देती है । दाना मामला मे आता हुआ सकेत प्रवधित किया जाता है और एक अभिलेखी पर पहुचा दिया जाता है ।

यदि पर्याप्त उच्च ऊर्जा के ध्वनि-स्पदन का प्रयोग किया जाए ता वह तली के अवसादा से होकर गुजरेगा और उसके नीचे की विभिन परता के बीच की सीमाआ से परावर्तित हागा। इस प्रकार यह सम्भव हो गया है कि अवसाद परता का बहुत अधिक गहराई तक का, यहा तक कि तली के नीचे एक हजार फुट तक का सतत अभिलेख प्राप्त किया जा सके । एक युक्ति, जिसे 'थम्पर" कहते है यही काय एक ऐल्युमिनम प्लेट के द्वारा जल को थपथपा कर करती है। थपथपाहट तब पैदा हाती है जब विभिन्न सधारित्र (कडेसर) अपन आवेश को एक भारी कुडली म डाल देते है जिससे कि प्लेट तीव्र बल के साथ उससे दूर हटती है । एक तीव्र विद्युत-स्फुलिंग के द्वारा भी ऐसी ध्वनि तरगें उत्पन की जा सकती ह जिनम इतनी पर्याप्त ऊर्जा होती है कि वे सतह से भी नीचे पहच सकें । अधिकतम वधन एक 'बूफर' के द्वारा प्राप्त किए जाते हैं—यह एक ऐसी युक्ति है जा एक तोप-सरीखी नलिका मे थोडी-थोडी मात्रा मे लगातार गैस को जलाती और विस्फोटित करती जाती ह । इन अवतलीय गभीरता मापिया के द्वारा लिए गए अभिलेखा की समय समय पर क्रोडा का लेकर व्याख्या की जाती है ताकि वास्तविक परता की मोटाइ और उनकी सरचना निधारित की जा सके ।

मछलिया मे भी प्रतिध्वनिया लौट कर आएगी । सन १९३३ मे गभीरता मापिया का इस तरह प्रयोग किया गया था कि मछलिया के समूहा को पहचाना जा सके और उन समूहा मे उपस्थित प्राणिया की सख्या के बारे मे कुछ अनुमान

लगाया जा सके । मछली पकडने वाले अधिकतर जलपोतो मे आजकल 'फिश-स्कोप" लगे होते है, और प्रतिध्वनि से मछली पकडन की विधि द्वारा मछली पकडन मे बहुत वृद्धि हुई है—विशिष्टत ब्रिटेन और नार्वे के समुद्रा म हैरिंग तथा कॉड मछलिया के पकडने म। कुछ मजे हुए मछवे तो यहा तक दम भरते है कि वे प्रतिध्वनि के द्वारा मछली की वास्तविक स्पीशीज तक बता सकते है।

समुद्री जतुओ के दैनिक ऊर्ध्वाधर प्रवास (पृष्ठ १६३ देखिए) का एक गभीरतामापी के द्वारा देखा गया है। जहाज को चौबीस घटे तक एक ही मछली समूह के ऊपर बनाए रखकर जीव विज्ञानियो ने यह देखा कि यह मछली समूह रात मे यहा तक ऊपर उठता चला आया कि "अन्त मे जल की सतह को चीरती हुई मछलियो के शोर को सुना जा सकता था।" यह दैनिक गति अक्सर होती देखी गई है और सदैव ही कुछ तीक्ष्ण और स्पष्ट चिह्न छोड जाती है।

एक अन्य प्रकार का भी धुधला धुधला फैला हुआ चिह्न मिलता है जिससे दैनिक ऊर्ध्वाधर परिवर्तन का प्रदर्शन होता है लेकिन ऐसा होने का कारण अभी तक भी सागर का रहस्य बना हुआ है। इन न पहचाने गए चिह्नो मे—जो कि हर महासागर और हर उथले जल मे पाए गए है—ऐसी परतो का प्रतिदर्श मिलता है जो ३०० फुट तक बहुत ज्यादा मोटी होती है और जो सैकडो-सैकडो मील तक फैली होती हैं। उनकी अविच्छिन्नता कभी-कभी महासागर की एक झूठी तली का भ्रम पैदा कर देती है। इन्हे गभीर प्रकीर्ण परतो (deep scattering layers) (अग्रेजी के अक्षरो के आधार पर सक्षिप्त रूप मे "डी० एम० एल०") का नाम दिया जाता है। ये सबसे अधिक सामान्यत १००० और १५०० फुट के बीच की गहराई पर पाई जाती है और अनेक विभिन्न प्रकारो के रूप मे प्रकट होती है जिनमे दैनिक परिवर्तन सदा एक जैसा नही होता (**चित्र ६८**)।

डी० एम० एल० की ऊपर नीचे की गति और गहराई मे ऐसा सकेत मिलता है कि वे किसी प्रकार के जतुओ की प्रतिध्वनिया है। गहरे जल मे हो सकता है इसके होने का कारण श्रिम्प-सरीखे यूफौजिइड प्राणियो के समान प्लवक जीव हो। तथापि, इस विचारधारा के पक्ष मे मिलने वाला प्रमाण निर्णायक सिद्ध नहीं होता। ये परतें प्लवक पर आहार करने वाली ऊपर आती हुई मछलियो के कारण भी हो सकती है। इस स्थिति मे, मछलियो की वायु-थैलिया (air bladders) ध्वनि को फैलाते हुए प्रतिध्वनिया पैदा करेगी। इसके विपरीत ध्वनि का परावर्तन चाहे जिस चीज से भी होता हो, वह इतने सघन और विस्तृत वितरण वाली जान पडती है कि उन्हें मछलियो के समूहो से उत्पन्न

हुआ होना मानना कठिन है। मछलियां महाद्वीपीय शेल्फा अथवा खुले समुद्रों में निश्चित क्षेत्रों में सकेन्द्रित हैं जहां पर आहार की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है। निस्सन्देह, यदि ऐसा सिद्ध होता है कि प्रतिध्वनियां मछलियों के कारण हैं तब गभीर महासागर में मछलियों के वितरण के सम्बन्ध में हम अपने विचार बदलने होंगे।

वुड्ज़होल के समुद्र विज्ञानियों ने ऐसा प्रयत्न किया है कि इससे पहले कि इन परतों में पाए जाने वाले कोई भी जन्तु भागकर निकल जाए, बहुत फुरती से उन परतों में कमरे उतारे जाएं। इस संस्थान के डा० हैरोल्ड एजर्टन ने एक ऐसे कमरे का आविष्कार किया है जो एक ध्वनि टकार भेजता है और जैसे ही

चित्र ६८ वुडज होल के डा० रिचार्ड बैकस एक प्रतिध्वनि गभीरतामापी अभिलेख पर गभीर प्रकीर्ण परत के एक अंश का अध्ययन कर रहे हैं।
फोटो वुडज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीटयूशन

कमरा लौटकर आती हुई प्रतिध्वनि प्राप्त करता है कि वह स्वचालित रूप में चित्र ले लेता है। ऐसे ही एक कैमरे का डी० एस० एल० में इस आशा से तेजी से उतारते हुए कि वह जन्तुओं का अनजाने में ही पकड़ लेगा, उसने ६००० फुट जल में १०० फुट गहराई पर आठ बिना जानी हुई मछलियों का चित्र लिया। साथ ही ध्वनि-तरंगों को छानते हुए यह पता चला कि परावर्तनकारी वस्तुएं लगभग एक फुट लम्बी है और कम-से-कम एक उदाहरण में तो ऐसा था ही।

ऐसी आशा की जाती थी कि बेथिस्कैफ के द्वारा गोता लगाने पर इन रहस्यों पर से परदा उठेगा। लेकिन उन समतलों पर, जहां प्रकीर्णन सामान्यत पाया जाता है, जन्तुओं का कोई विशेष अलग सघनन नहीं पाया गया। अवश्य ही कोई व्हेल के आकार का 'दैत्य" है जो अपनी गति से जल को विक्षुब्ध कर देता है और दूसरे विभिन्न जीव उससे दूर भाग जाते हैं। पिकार्ड ने कहा है कि उसे "तीव्र गति से नीचे उतरने पर कभी भी कोई मछली देखने को नहीं मिली। यहां तक कि नीचे उतरने की गति धीमी होने पर भी प्लवकों के अलावा अन्य जीवित वस्तुएं बहुत ही कम अथवा अपेक्षाकृत अधिक आदिम स्पीशीजें दिखाई पड़ती हैं।"

अभी तक किए गए कार्य में केवल इतना निष्कर्ष निकलता है कि गंभीर प्रकीर्ण परतें सदैव एक ही जीवों द्वारा नहीं बनती। स्पष्टत एक ही समय पर विभिन्न स्थानों पर विभिन्न प्रकार की परत पाई जाती है। यह एक रोचक समस्या है जो अपने हल के लिए केवल यन्त्रों और टेक्नालॉजी में सुधार का इन्तज़ार कर रही है।

बोलते डॉल्फिन

बहुत समय तक ऐसी धारणा बनी रही है कि गहरा समुद्र स्थिर, जीवरहित और शांत रहता है। पिछले अध्यायों में हमने यह देखा कि न यह स्थिर ही है और न ही जीवनरहित। साथ ही कुछ समय पूर्व से यह भी पता चल गया है कि ये शांत नहीं है। मछलियां, स्तनधारी और विभिन्न अकशेरुकी तरह-तरह के शोर पैदा करते है। कुछ मादा मछलियां सरगम-स्वर उत्पन्न करती है जो न केवल उनकी अलग अलग स्पीशीजों की दृष्टि से विशिष्ट होते हैं बल्कि उनकी भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से भी। उत्तर ध्रुव की श्वेत व्हेल 'एक गाना गाती है" जिसे डा० एलिशा केन ने १८५४ में वर्णन करते हुए "एक सीटी और टाइरोली अलापने के बीच का बताया है। मलय के मछुए जल में अपने जाल फेंकने से पहले मछलियों की "हौंक" सुनने के लिए अपने सिरों को पानी के

भीतर ले जाते है। ऐटलाटिस ने एक बार बर्मुडा के तट के पार गहरे जल मे कुछ विचित्र चीखने और कराहट की आवाजें प्राप्त कीं। वास्तव मे स्वय इन नामो जैसे "ड्रमफिश', 'क्राकर', "सी-कैनरी" और "सी रोबिन" से उस शोरगुल का बोध होता है जो "शात सागर" मे होता रहता है।

इस शोरगुल को द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान उस समय स्पष्ट रूप से रिकार्ड किया जा सका था जब हाइड्राफोनो को लगातार जल मे रखा गया और उनके द्वारा पनडुब्बियो के आने का बोध प्राप्त किया जा रहा था। १९४२ म चेसापीके की खाडी के प्रवेश पर रखे हाइड्रोफोनो न ऐसी ध्वनिया प्राप्त की जो किसी सडजे को तोडत जान वाली वातिल वधक मशीन के समान थी। उसी समय मछुआ न ऐसा हिसाब लगाया कि उस खाडी मे ३०,०० ००,००० (३० करोड) से ऊपर मछलिया थी। इनम स कुछ मछलिया पकड ली गइ और उन्हें ले जाकर एक जीव-जलाशय मे रख दिया गया जहा पर उनकी आवाजो को रिकाड किया गया। तुलना के द्वारा उस सन्देह की पुष्टि हो गइ कि चेसापीके की खाडी का "समूहगान' क्राकर मछलिया के सघन समूहो द्वारा उत्पन हुआ था। इसी तरह, प्रशात तट पर सतत चटचटान की आवाजो का कारण एक श्रिम्प (क्रैगन कलिफोर्निएन्सिस) पता चली है जो विशाल सख्या म समुद्र की तली मे पडी रहती है और अपन नखरो से खटका करती रहती है।

मछलियो मे आवाज पैदा करने म सबसे सामान्यत काम मे आने वाला अग उनकी वायु-थैली होती है। कुछ मछलिया अपनी देह भित्ति की पेशिया को तीव्रता से फैला और सिकोड सकती ह जिससे कम्पन पैदा होत है और इन कम्पनो से वायु थैली के भीतर एक अनुनादी आवाज उत्पन्न होती है। सी रोबिन और क्राकर मछलिया इस झिल्लीदार थैली की दीवारो के भीतर भीतर बनी थाप मारने वाली पेशियो के द्वारा अपनी वायु-थैलिया के पार्श्वों पर थाप मारती है। कुछ स्पीशीजो मे इस थैली का एक भाग सतह की खाल के समीप आ जाता है और इसे पसो द्वारा थपथपाया जाता है। मछलियो की ध्वनियों का तारत्व निम्न होता है तथा वह कण्ठ से निकलन वाली ध्वनि जैसी लगती है एव कपमान होती है।

मछलियो द्वारा ध्वनि उत्पन्न करने का तब कोई अर्थ नही था यदि अन्य मछलिया म उन्हे सुनने की शक्ति न होती। यह निश्चित हो चुका है कि मछलिया अवश्य सुन सकती है—विशिष्टत उनके द्वारा निकाली जाने वाली निम्न-आवृत्ति ध्वनिया को। हर उदाहरण मे इन ध्वनियो के उद्देश्य स्पष्ट नही है। हो सकता है कि इन ध्वनियो द्वारा मछलिया सगम के लिए अडे देने के लिए

तथा अन्य सामुदायिक कार्यकलापों के लिए काम आती हों। हो सकता है उन्हें एक सुरक्षा साधन के रूप में प्रयोग किया जाता हो। ऐसा विचार रखा गया है कि गहरे समुद्र की कुछ स्पीशीज़ों में वे प्रतिध्वनि गभीरतामापी के रूप में कार्य करती है, जिससे मछली समुद्र के फर्श तक की दूरी पता लगा सकती है।

विभिन्न सूस और डॉल्फिने क्लिकों की तरंगावलियाँ छोड़ती हैं अथवा चरचराहट पैदा करती हैं जो "सानार" (ध्वनि परासन और संचालन उपकरण) की तरह कार्य करता है। ध्वनि-स्पंदों की प्रतिध्वनियाँ जल की विभिन्न वस्तुओं में परावर्तित होने के बाद इन जन्तुओं द्वारा प्राप्त कर ली जाती हैं। इस प्रकार वे वस्तुओं की स्थिति की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, उन तक की दूरी जान सकते हैं, और जो एक चीज़ सानार से भी उत्तम है, वे प्रतिध्वनि के स्वरूप के आधार पर विभिन्न प्रकार की मछलियों में भी भेद कर सकते हैं। नौ-सेना के टक्नीशियन इन जन्तुओं का अब इस आशा से अध्ययन कर रहे हैं कि उसके आधार पर वे अपने यन्त्रों में सुधार कर सकें।

बाटलनोज़ डॉल्फिनें जैसी कि संयुक्त राज्य अमरीका के पूर्वी तट पर पाई जाती है, एक-दूसरे से सीटी बजाने जैसी ध्वनियाँ, बत्तख जैसी कर्कश चिड़ियों की चीं चाँ, या भेड़ों के मिमियाने जैसी आवाजें पैदा कर के एक-दूसरे से संचार करती हैं। यदि कोई डाल्फिन मुसीबत में हो तो वह दो विशेष और असमान सीटियाँ लगातार बार-बार बजाती जाती है। इस संकेत से आसपास की अन्य सभी डाल्फिन शांत हो जाती है और वे तुरन्त इस संकेत के स्रोत की तलाश करने लगती हैं। विपत्तिग्रस्त प्राणी को ढूंढ लेने पर वे उसे धक्का देकर ऊपर सतह पर ले आती हैं और उसके साथ जटिल सीटियों का आदान प्रदान करती हैं।

ताप और लवणता का मापन

पिछले अध्यायों में हमने सतह के हजारों फुट नीचे जल के नमूनों को प्राप्त करने और ताप मापन का उल्लेख किया है। इससे यह प्रश्न उठता हो सकता है कि ऐसा करने में ऊपर नीचे लाने ले जाने समय जिस जल में से यन्त्र गुज़र रहा हो उसके द्वारा नमूने का 'दूषण' हुए बिना कैसे रह जाता है।

संयुक्त राज्य अमरीका में सबसे अधिक प्रयोग में लाया जाने वाला जल का नमूना प्राप्त करने वाला उपकरण नासेन बाटल (Nansen bottle) होता है जिसका उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में फ्रिट्जॉफ नानसन ने पहले पहल नमूना तैयार किया था (चित्र ६९)। यह अनिवार्यतः पीतल की बनी

एक साथ दोनों ओर बन्द कर देते हैं। भीतर व बाहर की ओर ऐलुमिनियम की और भीतर की ओर चांदी अथवा टीन का विद्युत्-लेपन किया जाता है ताकि संक्षारण न हो सके। बोतल को तार पर जोड़ने और समुद्र के नीचे गिराने समय दोनों सिरे खुले रखे जाते हैं ताकि जल में नीचे चलते जाते समय नलिका में से जल स्वच्छन्दतापूर्वक चलता रहे। यदि नीचे गिराते समय वाल्व खुले नहीं होंगे तो बढ़ती जाती हुई दाब से बोतल भीतर को पिचक जाएगी।

जब बोतल नमूना लेने वाली गहराई पर पहुंच जाती है तो डेक पर से एक सन्देशवाहक (भार) तार पर से फिसलते हुए नीचे छोड़ा जाता है। यह सन्देशवाहक नमूना प्राप्त करने वाली बोतल का ऊपरी भाग तार पर से विमुक्त कर देता है और वह अपने नीचे के जुड़े स्थान पर घूमती हुई ऊपर से नीचे उलट जाती है। इस उलटन की क्रिया पूरी होने पर एक यान्त्रिकीय संयोजन दोनों वाल्वों को बन्द कर देता है और इस प्रकार वांछित गहराई का जल भीतर
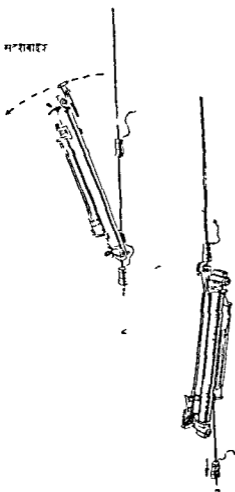
चित्र ६९ नान्सेन बोतल के द्वारा विभिन्न गहराइयों पर जल के नमूने लेने की विधि। (१) बोतल ऊपर और नीचे दोनों सिरों पर तार से जुड़ी है और दोनों वाल्व खोलकर नीचे गिराई जाती है ताकि उसमें से जल स्वच्छन्दतापूर्वक गुजर सके। निश्चित गहराई पर पहुंचाने के बाद एक भार, अथवा सन्देशवाहक, तार के सहारे-सहारे नीचे गिराया जाता है जो नमूना प्राप्तकर्ता के ऊपरी भाग को मुक्त कर देता है। (२) बोतल उलट जाती है, अर्थात अपने नीचे के जोड़ पर घूम जाती है तथा उसी क्षण उससे दोनों वाल्व बन्द हो जाते हैं और इस प्रकार वांछित गहराई पर जल का एक नमूना भीतर बन्द हो जाता है। (३) जब बोतल उलट जाती है तो दूसरा सन्देशवाहक जो कि इसके निचले सिरे पर जुड़ा होता है, मुक्त होकर तार पर नीचे फिसल जाता है और अगली गहरी बोतल को उलट देता है।

बन्द हो जाता है। इसके उलटते ही इस बोतल के निचले भाग से जुड़ा हुआ दूसरा संदेशवाहक मुक्त हो जाता है। यह दूसरा संदेशवाहक तार से नीचे फिसलता है और उससे अगली गहरी नमना प्राप्त करने वाली बोतल को उलट देता है और इस तरह अंतिम बोतल तक यह क्रम चलता रहता है।

तापमापियों को बोतल के बाहर जोड़ा गया होता है (चित्र ७०) और उलटने की क्रिया में वे भी सक्रिय कर दिए जाते हैं। इन तापमापियों को उत्क्रमण तापमापी (reversing thermometers) कहते हैं। इनमें दोहरे सिरे होते हैं। एक सिरे पर बना पारे का एक बड़ा कुंड एक केशिका अथवा बहुत महीन नलिका के द्वारा दूसरे सिरे पर स्थित एक सूक्ष्म बल्ब से जुड़ा होता है। बड़े कुंड के ठीक ऊपर केशिका सीधी चलती और कुछ दूर पर महीन हो जाती है। जब नीचे उतारते समय तापमापी सीधी स्थिति में रहता है तो पारा कुंड और केशिका में पूरी तरह तथा दूसरे सिरे पर बने बल्ब में केवल अंशतः भरा होता है। यंत्र को वांछित गहराई पर गिरा चुकने और उसे संतुलनावस्था में आने देने के बाद संकीर्णन के ऊपर के पारे की मात्रा जल के ताप पर निर्भर होगी। जब तापमापी उलट दिया जाता है तो पारे का स्तम्भ संकीर्णन पर टूट जाता है और नीचे बहता हुआ छोटे बल्ब को तथा अंशतः केशिका के कुछ भाग को भर देता है। केशिका में पारे की ऊंचाई से उलटने की गहराई पर पाए जाने वाले ताप का पता चल जाता है।

तापमापियों की सुरक्षा के लिए, और इसलिए कि दाब के द्वारा कांच पिचक कर पारे को धक्का लगाते हुए कहीं गलत रीडिंग न आ जाए इसलिए इन्हें मोटी कांच नलियों में बंद किया जाता है। नलिका को सीलबंद कर के कुंड के बाहर-बाहर के उस भाग को छोड़कर, जिसे पारे से भर दिया जाता है ताकि बाहरी जल की ऊष्मा का संचलन न हो सके, शेष भाग को खिन्न कर दिया जाता है। दाब "त्रुटि" (प्रति ३०० फुट गहराई के लिए लगभग दो डिग्री) की आभासी वृद्धि को उत्क्रमण की गहराई के निर्धारण में प्रयोग किया जा सकता है। यदि असुरक्षित तापमापी के (जो कि सीलबंद नलिका में बंद न किया गया हो) साथ साथ एक सुरक्षित तापमापी का जोड़ा बना लिया जाए तो रीडिंगों के बीच का अंतर दाब पर, और इसलिए गहराई पर, निर्भर होगा। यह खासकर खराब मौसम में उपयोगी होता है जब वह तार जिस पर बोतलें जोड़ी जाती हैं जहाज के विस्थापन के कारण काफी बड़ा कोण बनाता हुआ चलता है और छोड़े गए तार की मात्रा से बोतलों की वास्तविक गहराई पता नहीं चलती।

नासेन बोतलों में से जहाज की 'आर्द्र' प्रयोगशालाओं में पानी लौटा

किया जाता है और उसकी लवणता, घुली हुई गैसों (आक्सीजन तथा कार्बन-डाइआक्साइड) अम्लता तथा वनस्पति जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण पोषक पदार्थों के मान के लिए उसका विश्लेषण किया जाता है। इनमें से कुछ विश्लेषण, जैसे कि आक्सीजन के लिए किए जाने वाले विश्लेषण तुरन्त करने होते हैं जब कि अन्य विश्लेषणों के लिए जल को संचित किया जा सकता है ताकि उसका तट पर स्थित प्रयोगशालाओं में बाद में परीक्षण किया जा सके।

पुराने दिनों में लवणता को एकमात्र रासायनिक विधि से निर्धारित किया जाता था जिसमें सिल्वर नाइट्रेट के साथ अनुमापन (ट्राइटेशन) किया जाता है

फोटो यू० एस० नेवी
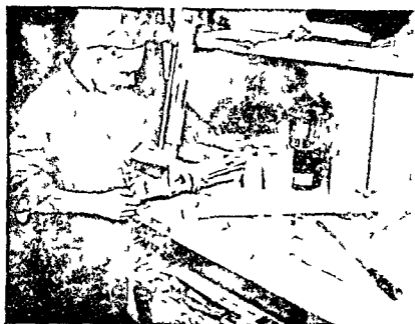
चित्र ७० लेखक उत्क्रमण तापमापियों को होल्डरों में डाल रहे हैं, जो नानसेन बोतलों के बाहर जुटे होते हैं।

किन्तु आजकल इसे अधिक परिशुद्धता से और बहुत कम समय लगाकर एक लवणतामापी (salinometer) द्वारा मापा जा सकता है। इस यंत्र में इस तथ्य का फायदा उठाया जाता है कि समुद्री जल का विद्युत रोध उसमें घुले हुए लवणों की मात्रा के साथ-साथ कम होता जाता है या दूसरे शब्दों में स-

सकत है कि विद्युत चालकता लवणता के साथ साथ बढ़ती जाती है। एक ऐसे मानक नमूने की चालकता, जिसकी लवणता रासायनिक विधि से निर्धारित की गई हो, एक विद्युत सेतु पर मापी जाती है। तब अज्ञात नमूना की लवणता को, मानक के साथ उनकी चालकता की तुलना करते हुए निर्धारित किया जाता है। (चित्र ७१)।

किसी स्थान पर समुद्र विज्ञान सम्बन्धी अध्ययन करने के दौरान तार पर अनेक, यहा तक कि बारह बोतले, सतह से नीचे वाछित गहराई पर विभिन्न जगहो पर लगाई जाती है। गहराई पर निर्भर रहते हुए एक अध्ययन म एक

फोटो। वुडज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीटयूशन
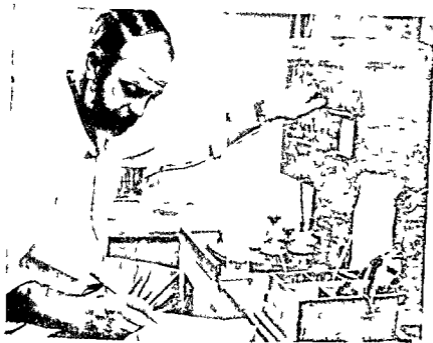
चित्र ७१ तट पर वुडज होल प्रयोगशाला में लवणतामापी चलाते हुए डा० जाना डस्मोर। लवणता का निर्धारण जल की विद्युत चालकता को माप कर किया जाता है, उसमें जितने अधिक लवण होगे उतनी ही सुगमता से उसमें विद्युत चालन होगा।

से छह घंटे या उससे भी अधिक समय लग सकता है। यह काय सम्पूर्ण होने पर विंच द्वारा इस गीयर को डेक पर खीच लाया जाता है और जहाज अगले नए

स्थान के लिए चल देता है। यह सब कार्य समय लेने वाला और बड़े परिश्रम का होता है तथा इसके द्वारा एक ही अथवा कभी-कभी दूर-दूर फैली हुई स्थितियों में केवल सीमित संख्या में ही मापन किए जा सकते हैं। इस प्रकार के प्रेक्षणों से, जो सृष्टि में क्या हो रहा है उसका एक अपेक्षाकृत सामान्य अनुमान ही प्राप्त हो सकता है।

किन्तु समुद्र विज्ञान आज पहले ही इस बिंदु तक उन्नति कर चुका है कि विज्ञानियों के सामने महासागर में होने वाली स्थितियों का एक मोटा और औसत चित्र बन चुका है। लेकिन कुछ ऐसे ऋतुपरक और अपूर्वघोषणीय साप्ताहिक और यहां तक कि दैनिक परिवर्तन होते हैं जो इस सामान्य चित्र के ऊपर अतिव्याप्त होते हैं। इस परिवर्तनों के कारण और उनके प्रभावों के निर्धारण के लिए यह जरूरी है कि अधिक समीप समीप प्रेक्षण किए जाएं जो कि अधिक बड़े क्षेत्र में ही एक समय पर या कम-से-कम एक ही ऋतु में, लिए जाएं। इस प्रेक्षणों का अंतिम उद्देश्य यह है कि समुद्र विज्ञानी गण समुद्र की दिन प्रतिदिन की परिस्थितियों की बहुत कुछ उसी प्रकार से पूर्व घोषणा कर सकें जैसे कि स्थल पर मौसम का पूर्वानुमान लगाया जाता है।

इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे यन्त्र उपलब्ध हों जो जहाज की गति के दौरान लगातार मापन और अभिलेखन कार्य करते रहें। इस प्रकार का एक सबसे पहला यन्त्र एक ताप बल्ब था जो जहाज के ढांचे पर लगा दिया गया था और उसे एक अभिलेखी के साथ जोड़ दिया गया था। इस युक्ति के द्वारा ताप लगातार, किन्तु केवल सतह के समीप ही, मापा जाता था। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान एक ऐसा बेथीथर्मोग्राफ (bathythermograph) (बी०टी०, B T) तैयार किया गया जो उस समय भी ऊपर-नीचे ले जाए जाते समय लगातार ताप-अभिलेख प्राप्त करता रहता है जब कि जहाज काफी तेज़, यहां तक कि १८ नाट की गति, से चल रहा हो (चित्र ७२)। यह अभिलेख एक धूमित काच की स्लाइड पर लिया जाता है और दाब (गहराई) के प्रति ताप के ग्राफ़ के रूप में प्रकट होता है। हालांकि इसका प्रयोग ९०० फुट तक ही सीमित है तथापि इसे जल्दी-जल्दी उपयोग में लाया जा सकता है और इसके द्वारा ऊपरी परतों में जहां कि सबसे अधिक उग्र परिवर्तन होते हैं पाए जाने वाले ताप वितरण का एक विस्तृत चित्र मिल जाता है।

कुछ हाल के विज्ञानियों ने एक **थर्मिस्टर शृंखला** (thermistor chain) का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। यह एक ६०० फुट लम्बी जंजीर होती है जिसमें पास-पास लगे हुए संवेदी तत्त्व लगे होते हैं जिन्हें थर्मिस्टर कहते

है और इन थर्मिस्टरो का विद्युत प्रतिरोध ताप के साथ बदलता रहता है। जब इसे किसी स्थिर गति से चलते हुए जहाज के पीछे-पीछे खींचा जाता है तो प्रत्येक "थर्मामीटर" लगभग एक ही गहराई पर चलता जाता है और इन गहराइयो पर होने वाले परिवर्तन जहाज़ के ऊपर अभिलिखित होते रहते हैं।

इस प्रकार के यन्त्र भी विकसित किए गए है जो किसी गतिहीन जहाज़ पर से नीचे समुद्री फर्श की ओर गिराए और उठाए जाते समय ताप लवणता अथवा घनत्व को लगातार मापते जाते है। किन्तु इनमे से अभी तक कोई भी यन्त्र व्यापक रूप मे प्रयोग नही किया जाता है।

चित्र ७२ एक बेथीथर्मोग्राफ को पुन प्राप्त करते हुए। यह यन्त्र जहाज के चलते रहने के दौरान ९०० फुट की गहराई तक जल के तापो का मापन कर सकता है।

फोटो वुड्ज होल ओशेनोग्राफिक इन्स्टीट्यूशन

"गेक" नामक यन्त्र
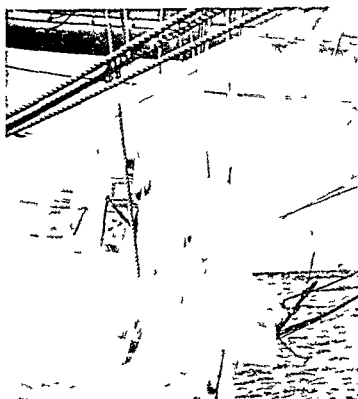
धारा की दिशा सर्वैव उस दिशा के रूप म दी जाती है जिसकी ओर धारा बहती जाती ह क्योंकि सचालक यह जानना चाहता है कि उसका जहाज़ किस ओर विस्थापित होगा। सचालकगण विस्थापन का बड़ा ध्यान रखते हैं, और उनके रिकार्डों स धाराओ के विषय म बहुत मूल्यवान जानकारी प्राप्त होती है। यदि उन धाराओ के प्रारम्भ होन का बिन्दु पता चल जाए तो धारा सूचकों के रूप म विस्थापनशील वस्तुए एव परित्यक्त सम्पत्ति उपयोगी होती हैं। उत्तर अमरीका के पश्चिमी तट पर पाए गए चीनिया के दुघटनाग्रस्त जहाजो के मलबे से उत्तर प्रशात के आर पार पश्चिम से पूव को बहन वाली धाराओ का सबसे पहला प्रमाण प्राप्त हुआ । पश्चिमी द्वीपसमूह से आई हुई उतराती हुई लकडी और वहा की स्वदेशीय झाडियो से, जो कि यूरोप के तटो पर आ गिरी हुई पाई गई थी पहली बार उस सतही जल के उत्तर-पूर्वी विस्थापन का पता चला जो उत्तर अटलांटिक क एक छोर से दूसरे छोर की ओर चलता जाता है। साथ ही, हिमशैलो को भी विश्वसनीय धारा "मीटरो के रूप मे प्रयोग किया गया है क्योकि उनकी सहति का नौ दसवा भाग जलमग्न होता है और उनके इधर-उधर चलने मे हवा का बहुत ही कम प्रभाव होता है।

इसी प्रकार से विस्थापनशील बोतलो का प्रयोग करना धाराओ के निर्धारण का एक सस्ता और आसान तरीका है। लम्बी, सकीर्ण बोतल पर, जिसे सील बन्द कर दिया जाता है तथा जिस पर उचित रूप मे इतना भार लगा दिया जाता है कि उसकी गर्दन ठीक जल म डूबी रह हवाओ का लगभग कोई प्रभाव नही पडता। बोतलें सतह पर तब तक विस्थापित होती रहती हैं जब तक कि वे कही किसी पुलिन पर नही जा गिरती अथवा किसी मछुए के जाल म नही फस जाती। हर बोतल म विभिन्न भाषाओ म छपा हुआ एक प्रश्न-पत्र होता है। इस पत्र के प्राप्तकर्ता से यह प्रार्थना की जाती है कि वह इसे प्राप्त करने के समय और और स्थान की सूचना प्रदान कर। इस पत्र को वापस लौटाने के लिए कभी-कभी कुछ पुरस्कार भी दिया जाता है।

विस्थापन बोतलो की स्पष्ट हानि यह है कि उनसे केवल सतह की परत की गति के ही आकडे प्राप्त होते ह। अधिक गहरी धाराओ को मापने के लिए विविध प्रकार क प्रवाह मीटर एक तार पर नीचे गिराए जाते हैं। एक पिच्छ फलक मीटर को धारा की दिशा म ले जाता है और गतिशील जल के द्वारा एक नोदक (प्रापलर) के घूमते जाने से अथवा एक लोलक (पेंडुलम) पर दाब पडने से उसकी चाल को मापा जाता है। प्रति मिनट घूमनो की सख्या अथवा दाब और

धारा की चाल के बीच एक साधारण सम्बन्ध पाया जाता है। अनुप्रस्थ-अटिकदिक्सूचक युक्तियों के प्रयोग द्वारा विच्छ फरक की दिशा निर्धारित की जाती है।

इनमे से कोई भी मापक यन्त्र अत्यन्त धीमी धाराओं का मापन नहीं कर सकता। साथ ही, उनकी रीडिंग लेने के लिए उन्हें सतह पर लाना होता है। जलधारा-मापियों की डोरी में भी वही कमी है जो कि नानसेन बोतलों की डोरी में है। इसी कारण से सतत अभिलेखी क्रम वाले अनेक विविध प्रकार के धारा मापियों का आविष्कार किया गया है। इनमे से एक प्रकार में घूमता जाता हुआ नोदक एक विद्युत् सम्पर्क को बनाता और तोड़ता जाता है। ये सम्पर्क और विच्छेद रिले करके एक जलरोधी केबिल में से गुजरते हुए एक स्थल पर स्थित उस ड्राम मोटर में पहुचा दिए जाते हैं जो कि तटवर्ती रिकार्डिंग स्टेशन पर रेडियो सकेत भेजने के लिए सेट किया रहता है। ये मापी किसी लगर वाले जहाज द्वारा भी चलाए जा सकते है।

गतिशील जहाज पर से सतही धाराओं को मापने की एक मेधावी विधि वुड्जहोल के डा० विलियम वान आर्क्स ने विकसित की थी। डा० वान आक्स ने अपने यन्त्र का जियोमैग्नेटिक एलेक्ट्रोकाइनेटोग्राफ (geomagnetic electrokinetograph) (भू चुम्बकीय विद्युत-चलगति लेखी) नाम दिया है लेकिन कार्यशील समुद्र विज्ञानी उसे संक्षेप में "गेक" (GEK) कहते हैं। इस पर उस सिद्धान्त का प्रयोग किया गया है कि जब किसी चुम्बकीय क्षेत्र में एक चालक घुमाया जाता है तो उसमे विद्युत धारा उत्पन्न होती है। चूकि समुद्री जल मे विद्युत चालन होगा इसलिए जैसे ही यह पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में से होकर गुजरता है वैसे ही इसमें एक विद्युत धारा उत्पन्न होती है। इस उद्देश्य के लिए, पृथ्वी के क्षेत्र को स्थिर माना जा सकता है जिससे कि उत्पन्न होने वाली विद्युत धारा केवल जलधारा की चाल पर निर्भर होगी। निस्सन्देह धाराएं अत्यन्त सूक्ष्म होती हैं किन्तु उन्हें मापने के लिए "गेक" की सवेदनशीलता पर्याप्त होती है। धारा की दिशा को जहाज के दिक्सूचक द्वारा निर्धारित किया जाता है और एक ऐसा साधन लगा होता है जिससे जहाज की गति को जल की गति से पृथक् किया जा सकता है।

नौसेना तथा वुडजहोल द्वारा १९५० तथा १९६० में गल्फ स्ट्रीम के बहु-यान सर्वेक्षणों में गेक का अन्य आधुनिक यन्त्रों के साथ साथ प्रयोग किया गया। इन सर्वेक्षणों का उद्देश्य यह निर्धारित करना था कि धाराओं मे दिन प्रतिदिन किस प्रकार परिवर्तन होते हैं और ऐसे मानचित्र खीचना था जो एक ही समय पर विस्तृत क्षेत्र में लिए गए समकालिक प्रेक्षणों पर आधारित हों।

इस प्रकार के मानचित्रों को सिनाप्टिक (Synoptic) मानचित्र कहते हैं और ये बहुत कुछ वैसे ही होते हैं जैसे कि दैनिक अथवा साप्ताहिक मौसम मानचित्र होते हैं।

गल्फ स्ट्रीम की 'जलवायु सम्बन्धी' दशाएँ अथवा वर्ष प्रतिवर्ष की इसकी आसन गतियों का विवेचन चौथे अध्याय में किया जा चुका है। तथापि यदि इसकी विभिन्न शाखाओं तथा भंवरों पर ध्यान रखा जाए तो पता चलेगा कि उनमें मौसम की ही तरह अक्सर परिवर्तन होता रहता है हालांकि धीमी गति से होता है। मान लिया कोई जहाज उत्तर की ओर बहती हुई किसी शाखा का लाभ उठाता हुआ चल रहा हो तो हो सकता है कि वह वास्तव में अपने आप को दक्षिण दिशा में बहती हुई ठंडे पानी की एक तीव्र धारा पर उछाल भरता हुआ अनुभव करे। ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये विमर्द एक व्यवस्था का अनुसरण करते हैं जिसका मौसम के साथ निकट का सम्बन्ध होता है। यही व्यवस्था तथा मौसम महासागर सम्बन्ध तो वह चीज है जिसे समुद्र विज्ञानी खोजने का कार्य कर रहे हैं। एक बार यह व्यवस्था पता चल जाने और समझ में आ जाने के बाद धारा गतियों की पूर्व सूचना दी जा सकती है।

"इमरतियां" "विस्थापन बोतलें" तथा सिरे के बल खड़ी होने वाली पनडुब्बियां"

दो या अधिक जहाजों के द्वारा सर्वेक्षण करना बहुत महंगा पड़ता है, तथा गल्फ स्ट्रीम का अविच्छिन्न वाद प्राप्त करते रहना तब तक सम्भव नहीं हुआ जब तक वुड्ज़होल के डा० विलियम एस० रिचार्डसन ने यन्त्रीकृत इफनट उत्प्लव विकसित नहीं कर लिया (चित्र ७३)। आज इसी प्रकार के १४ चमकदार नारंगी रंग के उत्प्लव ममचमट स्थित मार्थाज वाइनयार्ड से लेकर बर्मुडा स्थित सेंट जार्ज तक ६७० मील की रेखा में लंगर डाल खड़े किए गए हैं। कुछ को तीन मील से अधिक गहरे जल में लंगर डाल खड़ा किया गया है तथा अन्य को महाद्वीपीय शेल्फ पर उथले जल में खड़ा किया गया है। लंगर की डोरी पर थोड़ी-थोड़ी दूरी पर धारा मापी लगाए गए हैं जिनसे प्राप्त होने वाले आंकड़े सतह पर एक फिल्म पर रिकार्ड होते रहते हैं।

हर उत्प्लव एक गोल इमरती जैसी शक्ल का आठ फुट चौड़ा प्लास्टिक प्लव होता है। इस प्लव के ऊपर दस फुट ऊंची धातु की बनी एक तिपाई खड़ी होती है। तिपाई पर ये सब चीजें लगी होती हैं फिल्म अभिलेखी हवा की चाल और दिशा के मापक-यन्त्र संकेत भेजने वाले तथा पहचान करने वाले

सूचना को ब्रॉडकास्ट करने के लिए एक रेडियो ट्रांसमीटर तथा उपयुक्त रोशनियां। इन सबमें ऐसी बैटरियों की शक्ति प्रदान की जाती है कि जो लगभग तीन महीना तक चलने के लिए बनाई गई होती है। सतत समुद्र विज्ञान सम्बन्धी मापना के लिए खुले महासागर में स्थापित की जाने वाली यह सबसे पहली प्लव शृंखला है।

ठीक इसी प्रकार के प्लव, जो स्वच्छंद तैर रहे हों विगद "विस्थापन
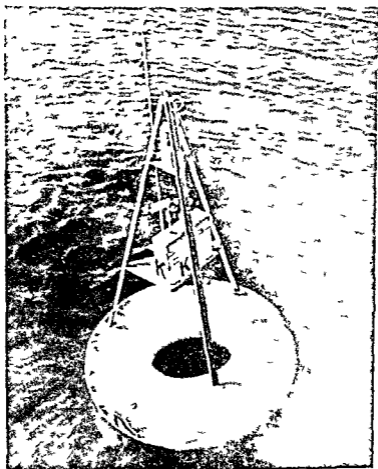
फोटो वुडज होल ओशेनोग्राफिक इंस्टीट्यूशन

चित्र ७३ "इमरती" प्लव। गहरे जल में अथवा महाद्वीपीय शेल्फ पर लंगर द्वारा स्थिर किए गए ये प्लव महासागरीय धाराओं की तथा सतही हवाओं की चाल और दिशा को बिना रुकते हुए लगातार मापते जाते है।

वोनाग के रूप म भी प्रयोग किए जा सकते हैं। विस्थापन या अनुसरण रडियो मवेता द्वारा किया जा सकता है तथा उसी प्रकार का दूर मापन यन्त्र, जैसा कि उपग्रहा म लगाया जाता है तटवर्ती स्टेशना पर हवा, ताप, तरगा की ऊचाई, आदि पर आकडे भेजन के लिए प्रयाग किया जा सकता है। धाराआ के विषय म रेडिया प्लवा स प्राप्त आकडे बातल आकडा की अपेक्षा कही ज्यादा उत्तम हाते है क्याकि इनके द्वारा यह बताया जाना सम्भव है कि छाडे जान के स्थान से लेकर प्राप्त किए जाने के स्थान तक प्लव ने कौन-सा माग अपनाया है। प्राप्त किए जान का यथाथ समय भी जाना जा सकता है जब कि बोतल, हो सकता है कई-कई दिना तक पुलिन पर पडे रहने के बाद ही उठाई जाए।

लगर डाल गए प्लवा का आकार "इमरती" प्लवा से लेकर ऐसे बडे कृत्रिम द्वीपा तक के रूप म हो सकता है जिन पर आदमी भी रह रहे हा। बीच महासागर म लगर डाले गए ऐस कृत्रिम द्वीप उन टेक्सास टॉवर प्लेटफार्मो के भी गभीर-जल प्रतिरूप हागे जो कि शीघ्र सूचना सुरक्षा के लिए महाद्वीपीय शेल्फ पर तयार किए गए है। ऐसा सुझाव दिया गया है कि एक सिरे पर खडी की गई पनडुब्बी जिस उचित रूप म भार द्वारा सन्तुलित किया गया हा, और जिसके शीष पर हेलिकाप्टर डेक जसा एक प्लेटफाम बनाया गया हो इस काम के लिए आदश व्यवस्था हागी। छोटे आकार के प्लवा को, हा सकता है किसी दिन लहरा अथवा सूय की ऊर्जा स शक्ति प्रदान की जा सके। सयुक्त राज्य अमरीका के परमाणु-ऊर्जा आयाग न पहले ही एक ऐसा परमाणु शक्ति चालित प्लव छाडा हुआ है जिसम बिना दुबारा इधन डाले हुए उसकी दस वष तक चलते रहने की आशा है। यदि एसा अधिक अच्छा समझा गया कि प्लवा पर हवाआ सतह की धाराआ लहरा आदि का प्रभाव न पडे तो उन्हें जलमग्न भी रखा जा सकता है। यन्त्र लगा हुआ एक ऐसे अध जलीय प्लव का नमूना बनाया जा चुका है जा एक ध्वनि सकत प्राप्त करने के बाद अपने लगर-सूत्र से मुक्त हाकर सतह पर आ जाएगा ताकि उस पुन प्राप्त किया जा सके। मक्सिका की खाडी मे आजकल सतह पर स्थिर किए गए प्रायागिक मौसम-सम्बधी प्लव प्रभजना का पता लगान तथा उनकी पूव-सूचना के सम्बध मे महत्त्वपूण आकडे प्रदान कर रहे हैं।

वुडजहोल ने ऐसे पुन प्राप्त उत्प्लव (रिकवरी ब्वाय) अथवा व्यक्ति-विहीन बथिस्कफ का भी प्रयाग किया है जो भार तथा उत्प्लावकता के द्वारा नीचे जाता और ऊपर आता है। इसके भीतर के यन्त्र नीचे जान वाली यात्रा के दौरान ताप तथा अय सूचना का रिकाड करते जाते हैं। जब यह

उत्प्लव तली से छूता है तब एक लगर अथवा भार निकाल दिया जाता है और ऊपर आने के दौरान यन्त्र रिकाड करने का काय जारी रखत है। मतह पर पहुच जान पर यह युक्ति एक मकेत छोडती है ताकि इस ढू ढ कर प्राप्त किया जा सके। इस प्रकार के उत्प्लव मे लगर केबिल, तारा विंचा आदि की आवश्यकता नही रहती और इमके द्वारा जहाज एक ही ममय पर एक स अधिक प्रकार के यन्त्रा का जल म छाड सकता ह।

अध जलीय हेलिकाप्टर

यह विचित्र बात ह कि गभीर सागर अवपण के लिए पनडुब्बिया का और अधिक प्रयाग नही किया गया है। यह खास तौर से इसलिए मत्य ह क्योकि एसा बहुत बडी मख्या म पनडुब्बिया ह जिन्हे पुराना घापित कर दिया गया है अथवा जा सुरक्षा-बेडा म बेकार पडी हुइ है। पनडुब्बिया मे खिडकिया का हाना उस ममय तक एक मानक उपकरण माना जाता था जब तक कि यह निष्कप नही निकाल लिया गया कि उनसे पानी बहुत बुरी तरह रिसता ह। लेकिन आज का टेक्नालॉजी की दशा म पुरानी पनडुब्बी म न रिसन वाली खिड्की फिट करना एक मामूली-मा इजीनियरी काय होगा। ऐम वाहन से बहुत मा उपयागी ममुद्र विज्ञान सम्बन्धी काय किया जा मकता ह।

आजकल एक ऐमी नयी 'वितल पनडुब्बी का विकास किया जा रहा ह जा अधिक गहराइया पर दाब सहन कर सकेगी। यह पोत बहुत ज्यादा, यहा तक कि १५,००० फुट, की गहराइ पर काम कर सकेगा जब कि पुरानी परम्परा गत अपरमाणु पनडुब्बिया केवल लगभग ६०० फुट तक ही काय कर सकती था। इसके द्वारा ममुद्री फश के ६० प्रतिशत भाग की सीधी खोज की जा सकती है। इस पात का, जिसे ऐलुमिनाट (Aluminaut) कहा जाता ह डा० एडवड वच (कनीयस) आर डा० लुई रेनॉल्डस ने आविष्कृत किया ह। यह एलुमिनम का बना हाता ह तथा इसमे अधिक गहराई तक जान आर पनडुब्बी क समान स्थिति-परिवतन कर मकन के लाभ जुडे है। इसका नमूना ऐमा बनाया गया ह कि यह परम्परागत पनडब्बी की विधि म नीचे चलता जाता ह—अथात रिक्त भार टकिया म जल भरते जाते हुए। मामान्य पनडुब्बी मतह पर आन क लिए उच्च दाब वायु द्वारा टकिया मे से जल बाहर निकालत हुए ऊपर आती ह किन्तु ऐलुमिनौट ऊपर आन के लिए बेथिस्कैफा की तरह लाहे के छरा का भार नीच गिरात जात हुए ऊपर उठता ह। इस नए वाहन म लगभग १० मील का

यात्रा का पराम होगा और इसम तीन व्यक्तियों को १०० घंटे तक सतह के नीचे रखने की क्षमता होगी।

आगस्टे तथा जक पिकर्ड आजकल एक 'अध जलीय हलिकाप्टर" की योजना बना रहे है—जो जल के भीतर डूब सकेगा और जिसके शीर्ष पर दो बटरी चालित प्रापलर बने होंगे जिनके द्वारा इसे लगभग ६,००० फुट की गहराई तक चलाया जा सकेगा। जैक पिकर्ड ने इस मेसोस्कैफ (mesoscaph) अथवा 'मध्य गहराई पात' का एक बड़े, जल मे हल्के बुदबुदे अथवा केबिन के रूप म कल्पना चित्र बनाया है जो प्लेक्सीग्लास का बना होगा। मध्य गहराई पर पाई जान वाली साधारण दाबें इस प्रकार के हल्के पदार्थ का प्रयोग करने द सकेंगी और प्लेक्सीग्लास के द्वारा हर दिशा म बिना रुकावट देखा जा सकेगा। यदि प्रापलर चलाने वाले मोटर चलाना रोक दिया जाए या किसी कारण स्वय उनका काम करना बन्द हो जाए तो यह मेसोस्कैफ स्वत सतह पर उठ आएगा क्योंकि यह समुद्री जल की अपेक्षा हल्का होगा। बुदबुदे के शीर्ष पर ऐलुमिनम तथा प्लेक्सीग्लास का एक कमरा बना होगा जिसम एक पैट्रोल इजन तथा मेसोस्कैफ को क्षतिज चलाने वाला एक सामान्य प्रापलर लगा होगा। बेथिस्कफ की तुलना म इसमे यह लाभ होंगे कि यह हल्का तथा कम मूल्य का होगा, इसकी चाल और स्थिति परिवतन क्षमता दोनो अधिक होगी, दृश्यता अधिक उत्तम होगी और किसी 'माता' जहाज से पूणत स्वतन्त्र चलेगा।

सामान्य हेलिकाप्टरों तथा वायुयानो का समुद्र विज्ञान सम्बन्धी काय के लिए वाहकों के रूप म प्रयोग करने की उपेक्षा नहीं की गई है किन्तु इसके विपरीत कदाचित उनका पूरी तरह स लाभ भी नहीं उठाया गया है। वुडजहाल के विज्ञानी एक बड़ा समुद्र यान प्रयोग करते हैं जिससे वे उष्णकटिबन्धीय प्रभजनो के निमाण म महासागर के योग का तथा सयुक्त राज्य अमरीका की तट रेखा की आकृति पर तरग अपरदन के प्रभाव का अध्ययन करते हैं। डा० रिचाडसन ने एक ऐसा तापमापी बनाया है जो वायुयान में से ही जल द्वारा छोड़े जाने वाले अवरक्त विकिरण की मात्रा का मापन करके समुद्र की सतह का ताप निर्धारित करता है। वुडजहाल के डा० एलिन सी० वाइन ने यह पूव घोषणा की है कि इस दशक के समाप्त होने से पहले ही यह सम्भव हो सकेगा कि फ्लोरिडा से लेकर ग्रीनलैंड तक गल्फ स्ट्रीम का वायुयान द्वारा एक ही दिन म अनुसरण करते हुए उसकी सतह का ताप एक डिग्री के कुछ दसवें हिस्सा तक मापा जा सकेगा।

समुद्र के विषय मे नयी समस्याओ ने पुराने वाहनो तथा पुराने यन्त्रो के लिए

नए उपयाग उपलब्ध कराए है। इसी प्रकार से पुरानी समस्याओ के परिणाम स्वरुप नए वाहन और यत्र विकसित किए गए ह। इन दाना ने मिलकर समुद्र विज्ञान नामक विज्ञान-समूह का नई दिशाए प्रदान की ह।

फोटो यू० एस० कोस्ट एण्ड जियाडेटिक सर्वे

चित्र ७४ समुद्र विज्ञान सम्बन्धी ज्हाज एक्सप्लोरर के डेक पर, एक चैल-ड्रेज को खींचते हुए। ड्रेज के सामने के सिरे पर भारी धातु के बने ओष्ठ महासागरीय फश पर उठी हुई चटटानो के टुकडे तोडते जाते हैं और जजीर उसकी मजबूत जाली को तली पर घिसटते जाते समय टूटने से बचाती हैं।

यहा हमन अधिक सामान्यत प्रयाग म आन वाल तथा प्रतिनिधिस्वरूप

कुछ यन्त्रों एवं प्रविधियों का वर्णन किया। इनके अतिरिक्त जीव विज्ञानी गण अनेक विविध जालों, ड्रेजों तथा ट्रालों (चित्र ७४) का प्रयोग करते हैं, तथा शल्कों के अतिरिक्त तली से नमूने प्राप्त करने की लगभग उतनी ही अधिक संख्या
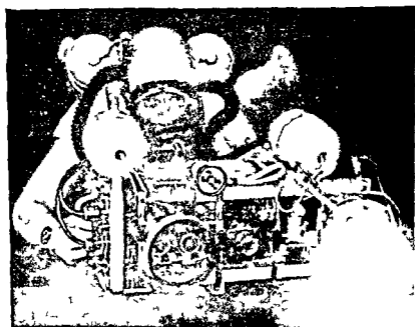
फोटो डेविड ओवेन, वुड्ज होल ओशेनोग्राफिक इंस्टीटयूशन

चित्र ७५ जल के नीचे छिपी हुई दुनिया के जीवों और वहाँ की घटनाओं की फोटो लेने के लिए वुड्ज होल के डेविड एम० ओवेन विशिष्ट प्लेक्सीग्लास में बंद "स्कूबा" गीयर तथा कैमरों का प्रयोग कर रहे हैं। बाईं ओर का कैमरा एक त्रिविमीय फ्लैश कैमरा है। दाहिनी ओर वाला कैमरा स्वचालित स्थिर कैमरा है जिसके द्वारा एक ही गोते में रंगीन अथवा सफेद काली दोनों ही प्रकार की फोटो ली जा सकती है। श्री ओवेन द्वारा निर्मित यह उपकरण ४०० फीट जल के तुल्य दबाव परीक्षा पर पूरा उतरा है।

में युक्तियाँ हैं जितने कि समुद्र विज्ञानी। अधजलीय कैमरे तथा टेलीविजन भू भौतिकी यन्त्रों के समान विशिष्ट उपकरण और 'स्कूबा' गीयर इन सबका भी समुद्र विज्ञान में महत्त्वपूर्ण स्थान है (चित्र ७५)। इस अध्याय का यह उद्देश्य नहीं था कि समुद्र के अध्ययन करने में काम आने वाली हर युक्ति और

हर विधि की गिनती कराई जाए, बल्कि यह दर्शाता था कि किस प्रकार विज्ञान और टेक्नालॉजी एक-दूसरे का पोषण करते है। यन्त्र विधियों मे उन्नति होने से अधिक सुचारु वैज्ञानिक आंकडे मिलते है—अर्थात नए प्रकार की जानकारी मिलती है। इस जानकारी के आधार पर पुरानी समस्याए हल कर ली जाती हैं तथा नए सिद्धान्तो और नई समस्याओ का जन्म होता है। इन नई समस्याओ के हल करने तथा इन नए सिद्धान्तो के सत्यापन के लिए और अधिक उत्तम यन्त्रो की आवश्यकता होती है। इस प्रकार से विज्ञान और टेक्नालॉजी परस्पर लाभकारी है।

१३
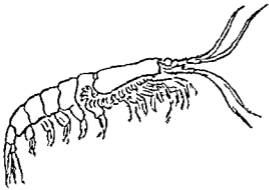
महासागर का भविष्य

"इसमें शक नहीं कि जल को उलटना पलटना उससे कहीं अधिक आसान है जितना कि थल में हल चलाना।"—इजेलिन

अभी तक हमने जिन बातों का जिक्र किया वे बीते दिनों की खोज-यात्राओं के बारे में तथा समुद्र के सम्बन्ध में हमारी आधुनिक जानकारी के बारे में थीं। किन्तु जगत महासागर का भविष्य भी है। हालांकि समुद्र के बारे में बहुत ज्यादा काम किया गया है तथा उसके बारे में बहुत कुछ विचारा गया है, तथापि आज भी समुद्र विज्ञान बहुत ही छोटी अवस्था का है—इतनी छोटी अवस्था का कि इसने अभी तक मानव जाति को कोई खास व्यावहारिक लाभ नहीं पहुंचाया है। किन्तु यह एक सबसे तेजी से बढ़ते जाने वाला विज्ञान है और वह दिन दूर नहीं जब समुद्र विज्ञानी गण इंजीनियरों तथा टेक्नीशियनों को इतनी पर्याप्त जानकारी प्रदान कर सकेंगे जिसके द्वारा वे समुद्र के इस विशाल आहार तथा खनिज सम्पत्ति के भंडार का सदुपयोजन कर सकेंगे जिसका अभी तक कोई उपयोग नहीं किया गया है।

केवल १५० वर्ष पहले थल भी खनिज सम्पत्ति का एक विशाल अप्रयुक्त स्रोत था। तब औद्योगिक क्रांति के दौरान फैक्टरियां उसी तरह से खड़ी होती गईं जैसे वसंत के सागर में डायटमों की वृद्धि होती है। नए उद्योगों के लिए विभिन्न धातु अयस्क, तेल और कोयला पोषण स्वरूप सिद्ध हुए। पृथ्वी के भीतर इन वस्तुओं के भंडारों के निर्माण में युगों-युगों का भू-वैज्ञानिक समय लगा

किन्तु पिछली डेढ़ शताब्दी में ही इनमें से बहुत से खानों में इतना अधिक किया गया है कि वे लगभग खाली हो गए हैं।

अब चूंकि यह कच्ची सामग्री विलीन होती जा रही है मनुष्य कुछ ब से नए-नए स्रोतों की खोज कर रहा है। संयुक्त राज्य अमरीका में अब आयात करने पर आ रहे हैं तथा उन निक्षेपों की ओर ध्यान देने लगे हैं जो अ सम्पन्न नहीं हैं और जिनकी ओर अभी तक ध्यान नहीं दिया गया था। त निम्नकोटि के अवस्कर को धातु में बदलने का कार्य एक महंगा प्रक्रम है उसके द्वारा तेजी से घटती जाती तेल और कोयला सप्लाई पर बहुत ज मार आ जाता है। साथ ही, आजकल धातुओं और इनके निम्न निक्षेपों को ढूंढ सकना भी कठिन होता जा रहा है।

खाली होते जाने की यह क्रिया इसलिए गम्भीर है क्योंकि अवस्करों नवीकरण नहीं हो सकता। एक बार अवस्कर को धातु में बदल देने पर या बार ईंधनों में संचित ऊर्जा को विमुक्त कर देने पर वे कभी भी पुनः प्र नहीं होते। लगभग ६½ अरब टन खनिज तथा कार्बनिक पदार्थ हर वर्ष नदि और हवाओं द्वारा महासागर में पहुंचते रहते हैं। इस विधि से जगत महासा ने कोई लगभग पांच करोड़ अरब टन घुले हुए लवण संचित कर लिए हैं जि वह खनिजों का सबसे अधिक सम्पन्न भंडार बन गया है। यह साधन इसी नवीकरणीय है क्योंकि सप्लाई उस गति से लगातार पुनः प्राप्त होती रहती जिससे कि मनुष्य की तमाम आवश्यकताएं सुगमता से पूर्ण हो सकती यदि हम इन साधनों का, कारण एवं प्रभाव के आज के अधिक बोध, उनके अधिक जागरूकता और उनकी अधिक जानकारी के आधार पर, अपने निय में कर सकें तो कदाचित् बीते समय की अपनी भारी गलतियों का दुबारा होना रोक सकेंगे।

भू-भौतिकी वर्ष के दौरान और उसके बाद गंभीर-सागर तलमाजन फोटोग्राफी से यह पता चला है कि महासागर की तलियों में विशेषकर प्र प्रशांत में मैंगनीज, तांबा, कोबाल्ट और निकेल छितराए पड़े हैं—"इ अधिक मात्रा में छितराए पड़े हैं कि उनके उपभोग की आज की दर के हिसाब दस लाख वर्ष तक मनुष्य की आवश्यकताएं पूरी होती रह सकती हैं। (चि ७६ और ७७)।

ये खनिज विचित्र ढेलों, अथवा ग्रन्थिकाओं, के रूप में पाए जाते हैं। छिद्रिल होते हैं तथा मटियाले काले अथवा भूरे, वजन में हल्के और प्राय आ की नाप के होते हैं। ग्रन्थिकाओं का पहली बार अटलांटिक प्रशांत और हि

महासागरों के फर्श पर से चैलेंजर ने प्राप्त किया था। अन्य अभियानों ने भी उन्हें ड्रेज द्वारा ऊपर प्राप्त किया लेकिन यथार्थत तब तक उनकी ओर ध्यान नहीं गया जब तक भू-भौतिकी वर्ष नहीं आया। उस समय होराइजन नामक पोत पर सवार स्क्रिप्स के विज्ञानियों ने प्रशांत महासागर के लाखों-करोड़ों वर्गमील के क्षेत्र में ग्रंथिकाओं का उच्च संकेन्द्रण पाया। उन्होंने नमूनों के आमापन से यह पता चलाया कि प्रत्येक ग्रंथिका में बहुत ज्यादा, यहां तक कि ५० प्रतिशत तक, मैंगनीज और कोबाल्ट, तांबा तथा निकेल में से प्रत्येक का दो प्रतिशत भाग पाया जाता है। इन ग्रंथिकाओं के उद्भव के बारे में अभी तक कोई जानकारी नहीं है।

यह खोज इस दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है कि संयुक्त राज्य अमरीका में मैंगनीज के उच्चकोटि निक्षेप नहीं हैं तथा इसका नब्बे प्रतिशत भाग आयात करना पड़ता है। ग्रंथिकाओं के खनन की व्यापारिक सम्भावनाओं के अध्ययन के लिए १९५७ में एक सरकारी प्रायोजना स्थापित की गई थी, जिसमें कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय का "इंस्टीट्यूट आफ मरीन रिसोर्सेज" तथा "डिपार्टमेंट आफ मिनरल टेक्नालाजी" शामिल थे। स्क्रिप्स से आए हुए विज्ञानियों के साथ काम करके उन्होंने मैंगनीज सम्पन्न ग्रंथियों की एक पट्टी उत्तर और दक्षिण अमरीका के पश्चिमी तट के ८०० मील पार स्थित पाई जो टेक्सास राज्य के लगभग आठ गुने बड़े क्षेत्र में फैली हुई है। दो अन्तर्जलीय कैमरा अध्ययनों से पता चला है कि इस प्रदेश में समुद्र की तली के हर वर्ग फुट में बहुत ज्यादा, यहां तक कि पांच से सात पौंड तक की ग्रंथिकाएं पाई जाती हैं। इंस्टीट्यूट आफ मरीन रिसोर्सेज के जान मेरो के अनुसार समुद्री फर्श का खनन तब भी

चित्र ७६ एक गहरे समुद्र के कैमरे को अटलांटिक के डेक से समुद्र में नीचे उतारा जा रहा है। कैमरे पर लगी सिलिण्डर के आकार की युक्ति एक "पिंजर" है जो कैमरे तथा तली के बीच की दूरी को निरंतर दर्शाती रहती है।

फोटो वुड्स होल ओशेनोग्राफिक इंस्टीट्यूशन

आर्थिक दृष्टि से अच्छा रहता यदि वहा केवल एक पाउ प्रति वा फुट ही पायी जाती।

चित्र ७७ १८ हजार फुट की गहराई पर लिए गए इस चित्र में अटलांटिक महासागर के फर्श के ६ फुट वर्ग क्षेत्र पर प्रचुर मात्रा में प्राप्त मैंगनीज ग्रथिकाओं को दर्शाया गया है।

क्रिसमस द्वीप तथा ताहिती के दक्षिण म हवाई के पश्चिम तक चलत हुए टआमाटू कटको पर कोबाल्ट की उच्च मात्रा से युक्त ग्रथिकाए पाई गई ह। य निक्षेप एक मील गहरे से भी कम है जब कि अय क्षेत्रा मे ये औसतन तीन मील पर पाए जाते है। कि तु इतना होने पर भी परम्परागत ड्रज के द्वारा खनन करन क लिए ये सीमा से अधिक गहरे है। यह डेज अनिवायत एक चपटी आयताकार बाल्टी होती है जिसे समुद्र फश पर घसीटा जाता है (चित्र ७८)। ४००० फुट स अधिक गहर जल मे इस बाल्टी का नीचे गिराने और ऊपर लान म बहुत ज्यादा समय लगेगा और "खनक गण' महासागरीय फश पर इसकी स्थिति को अच्छी तरह नियत्रित नहा कर पाएगे।

आवश्यकता इस बात की ह कि कोई विशाल पम्प करन वाला तन्त्र होना

चाहिए कुछ-कुछ वसा ही जैसा कि जल भरी हुई खाना म से जल आर शैला का पम्प करके निकाल्न म प्रयाग किया जाता ह। जान मेरा न इस उद्देश्य क लिए उस चीज़ का नमूना तैयार किया है जिस वह "भीमकाय वैकुअम-क्लीनर" कहते है। एक ऐसी बहुत लम्बी नली (करीब तीन मील) के अलावा, जिसके एक सिर पर चपण शीष बना हागा इस युक्ति म एक पम्प, एक मोटर और दो उत्प्लावी प्लव हागे। मोटर द्वारा चलन वाला पम्प समुद्री फश की एक पतली परत चूसता जाएगा आर उस उठाकर सतह पर एक बाज पर पहुचा देगा। नली मोटर और पम्प के भार का उन प्लवा द्वारा साधा जाएगा जा सतह से लगभग २०० फुट नीचे स्थित रहग जहा पर हवाओ आर लहरा द्वारा वे उछाले नहीं जा सकेंगे। निर्वातमाजक (वकुअम-क्लीनर) नली रस्सा पर नियमित दूरिया पर लगे छोटे-छोटे नावका के द्वारा तली पर चलाया जा सकेगा।

समुद्री फश के उत्पाद

फास्फारस एक ऐसा तत्त्व ह जो हर प्रकार क जीवन के लिए अनिवाय है। मनुष्य की अधिकतर ऊर्जा उसके शरीर म पाए जाने वाले एक प्रतिशत फास्फारस-यागिका म सुरक्षित रहती है। मनुष्य का यह कच्चा पदाथ पौधा म प्राप्त करना हाता है आर पौधे इसक खनिज रूपा का अपन जीवद्रव्य (प्राटाप्लाज्म) निर्माण करन वाले कावनिक यागिका मे शामिल करते हैं। इसी कारण स सयुक्त राज्य अमरीका म खनन किए जाने वाले २० लाख टन फास्फेट शैला का अधिकतर भाग खाद क लिए प्रयाग किया जाता है। तथापि, अनक कृषि क्षत्रा का मिट्टी म पहले से ही फास्फारस का अभाव है। इसके अतिरिक्त हर वष इसकी ३५ लाख टन मात्रा बहकर समुद्र मे पहुचती जाती है। इसका कुछ भाग मछलिया आहार शृखला क द्वारा अपन शरीर म शामिल कर लेती है आर लगभग ७०००० टन प्रति वष मछलिया का आहार करने वाले पक्षिया की मल विष्टा म होकर यह पुन थल पर पहुच जाता है। कुछ स्थाना म, जस पीरू म इसी का ग्वाना क रूप म लादा जाता ह, लेकिन यह हानि की पूर्ति के समीप नहीं पहुचता। फास्फारस का यह गम्भीर अवक्षय यह समस्या उत्पन्न करता ह कि कोई ऐसी विधि निकाली जाए जिसक द्वारा इसे समुद्र मे से पुन प्राप्त किया जा सके।

समुद्र विज्ञानिया ने फॉस्फारस-युक्त अवसादा को महासागर के अनक उथले क्षेत्रा म स ड्रज द्वारा प्राप्त किया ह। इन क्षेत्रा मे आस्ट्रेलिया, जापान, स्पेन, दक्षिण अफ्रीका के तट, दक्षिण अमरीका का पश्चिमी तट आर सयुक्त राज्य

अमरीका के दोनों तट शामिल है। यह समुद्री फर्श पर छोटे छोटे दाने, चपटी सिल्लियाँ और बहुत बडी, यहा तक कि तीन फुट तक मोटी, ग्रन्थिकाओं के रूप में पाया जाता है। मेरा के दल ने कैलिफोर्निया तट के पार १२५ स्थितियों से ऐसी ग्रन्थिकाएं पाई हैं जिनमें फॉस्फोरस की मात्रा उतनी ही है जितनी फ्लोरिडा और इडाहो में आजकल खनन की जा रहे अयस्क में है। चूकि ये बहुत ज्यादा उथले, यहा तक कि ३०० फुट तक उथले, पानी में पाई जाती है इसलिए इन्हें केवल समुद्र की तली पर बाल्टी-ड्रेज को घसीट कर ही प्राप्त कर लिया जा सकता है।

खनिजो के एक नए साधन के रूप मे महासागरीय फर्श पर बिछे अवसादो पर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। लाल मृत्तिका में लगभग २० प्रतिशत ऐलुमिनम और स्थल पर पाए जाने वाले शैलों में जितना तांबा होता है उससे दस गुना तक अधिक तांबा पाया जाता है। मेरो ने हिसाब लगाया है कि यदि और यह "यदि" बहुत बडा है, कोई ऐसी विधि मालूम कर ली जाए जिससे गभीरतम जल में सस्ते मे काम किया जा सके तो लाल चादरो में से इतनी अधिक मात्रा में ये खनिज प्राप्त हो सकेंगे कि वह आज की उपभोग-दर के अनुसार दस लाख वर्ष तक चलेगी। डायटम सिन्धु-पक से डायटोमाइट प्राप्त होता है जो फिल्टरो तथा ऊष्मा एवं ध्वनि-रोधियो और नाइट्रोग्लीसरीन मे काम आता है। ग्लोबिजेराइना सिंधुपक चूने का बहुत अच्छा साधन है, जो कि कंक्रीट एवं चूने के मसाले के लिए एक आवश्यक पदार्थ है। समुद्री खनन उद्योग के एक उपजात के रूप में बाहरी अंतरिक्ष मे से आए हुए लघु उल्कापिंडो तथा धूलि को चुम्बको के द्वारा अवसादों में से प्राप्त किया जा सकता है जिनमें से निकल और लोहा ससाधन द्वारा निकाला जा सकता है। एक अन्य महत्त्वपूर्ण उपजात शार्कों के असंख्य दांत और व्हेलों एवं मछलियों की कर्णास्थियां होंगी जिनमें एक फास्फोरस धारी खनिज का लगभग ३५ प्रतिशत भाग होता है।

महासागर के "क्षीण अयस्क"

स्वयं समुद्र के जल की भी खनिज साधन के रूप में कुछ आशा की जा सकती है। इसके प्रत्येक घन मील के अंदर लगभग १६ करोड ६० लाख टन लवण घुले हैं जिससे कि समस्त जगत महासागर में इनकी कुल मात्रा लगभग ५ करोड अरब (५० के आगे ५० शून्य) टन है। इसमे १५ अरब टन तांबा, ७००० अरब टन बोरान, १५ अरब टन मैंगनीज, २० अरब टन यूरेनियम, ५० करोड टन चांदी और एक करोड टन सोना घुले हुए है। कहने में ये संख्याएं बहुत ज्यादा।

खनिज लवणों की थोड़ी थोड़ी मात्राओं से अलग किया जाता है और उसके बाद विभिन्न लवणों को एक-दूसरे से पृथक किया जाता है। यदि जल से खनिजों को सीधा अलग किया जाए तो यह कहीं अधिक सस्ता पड़ेगा। भविष्य में यह कार्य कदाचित् इन कई सम्भावित विधियों द्वारा सम्पन्न हो सकेगा। समुद्र के पानी को रजिनों अथवा मृत्तिकाओं में से गुज़ारने के द्वारा जो खनिजों को विभिन्न दरों में सोखते हुए उन्हें पृथक् करती हैं छिद्रिल खोलों अथवा झिल्लियों द्वारा, जो जल को गुज़रने देती हैं लेकिन लवणों को नहीं विद्युतीय विधि से लवणों या जल में से आकर्षित अथवा प्रतिकर्षित करने से अथवा हिमीभवन से।

आजकल संयुक्त राज्य अमरीका में अलवण जल वर्षा द्वारा सप्लाइ होता है लेकिन वर्षा समान रूप से वितरित नहीं होती तथा वहां के अनेक भाग तथा संसार के अनेक देश सूखे से तथा जल के सतत अभाव से ग्रस्त रहते हैं। साथ ही, "डिपार्टमेंट ऑफ दि इंटीरियर" ने यह पूर्वधारणा की है कि १९८० तक संयुक्त राज्य अमरीका में प्रयोग होने वाले जल की मात्रा उपलब्ध मात्रा से अधिक हो जाएगी। कोई भी प्रविधि जो सस्ते ढंग से समुद्री जल में से खनिजों को निकाल देने के लिए पर्याप्त कारगर होगी, उसे महासागर के पर्याप्त जल को अलवण जल में परिवर्तित करने में प्रयोग किया जा सकेगा ताकि जल की समस्याएं हल की जा सकें। आज समस्त संसार में जल के अभावग्रस्त क्षेत्रों में लगभग १५ करोड़ गैलन पानी जल को प्रतिदिन लवण मुक्त किया जा रहा है। लवण निकाले गए जल का मुख्य दोष यह है कि इसका मूल्य बहुत ज्यादा बढ़ता है।

जब कृत्रिम वाष्पन से निकली भाप को द्रवित करके शुद्ध जल प्राप्त किया जाता है तो इस प्रक्रम को आसवन (distillation) कहते हैं।

अधिकतर परिवर्तन-संयंत्रों में आसवन ही प्रयोग किया जाता है, लेकिन यह प्रक्रम महंगा है और इस प्रक्रम को चलाने के लिए आवश्यक ऊष्मा उत्पन्न करने के वास्ते बहुत-सा ईंधन जलाना पड़ता है। कुछ उदाहरणों में निम्न दाबों पर आसवन करने से इस कठिनाई से अंशतः बचा जा सकता है। (घटती जाती दाब से जल के खौलने का ताप बिंदु भी घटता जाता है।) आवश्यक ऊष्मा परमाणु ऊर्जा के द्वारा भी सप्लाई की जा सकती है। विभिन्न प्रकार की परमाणु भट्टियों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों को आसवन के लिए ऊष्मा प्रदान करने के रूप में प्रयुक्त करना सम्भव हो सकना चाहिए।

ब्रोमीन, मैग्नीशियम, नमक और अलवण जल उन ६० आर्थिक महत्त्व वाले बहुमूल्य खनिजों में से चार हैं जिनका समुद्री जल में पाया जाना मालूम

जा सके अथवा उन्हें छाना जा सके, तथा उन्हें ससार के बाजारो म वाहित किया जा सके, तो हम आहार की एक नई और सीमा रहित सप्लाई मिल जाएगी। तट के पार के जलो मे तथा सारगैसो सागर म जल द्वारा प्राप्त किए गए प्लवक म ५५ प्रतिशत प्रोटीन, १५ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट (शकरा एव स्टाच) और ४ प्रतिशत वसा और उनके साथ-साथ कुछ विटामिन भी—अर्थात सुसतुलित भाजन के सभी तत्त्व—पाए गए है।

वान टिकी के नाविकदल ने महीन जाली के रेशमी जालो मे प्लवक पकडा था। उन्होने अनुभव किया था कि यह स्वाद मे "बिल्कुल बेकार" लगता था लेकिन यदि पकड मे अधिकतर कोपीपोड प्राणी ही शामिल हो तो उसका स्वाद श्रिम्प, लॉब्स्टर अथवा केकडे जैसा लगता है। यदि पकड मे अधिकतर मछली के लार्वा हो तो वह "कैवियर" (मछली के अचार) अथवा यहा तक कि कस्तूरा जसे स्वाद की लगती है। मनुष्य पूणत इस प्रकार के भोजन पर ही जीवित रह सकता है अथवा नही, यह एक अलग प्रश्न है। चूहो पर किए गए प्रयोगो स यह सिद्ध हो गया कि वे सीधी प्लवक खूराक पर जीवित नही रह सकते किन्तु व समुद्री आहार तथा अनाज के मिश्रण पर पर्याप्त काल तक जीवित रह सकते हैं। हालाकि मनुष्य पर नियन्त्रित प्रयोगो का परीक्षण नही किया गया है किन्तु ऐसा लगता है कि प्लवक कम से-कम उसके आहार का पोषक पूरक तो हो ही सकता है।

कुछ कठिनाइया भी हैं। प्लवक मे पाए जाने वाले जीव ऋतु ऋतु म और यहा तक कि दिन और रात म भी इस प्रकार से विभिन्न होते जाते है कि उनके बारे म पहले से कुछ नही कहा जा सकता। जबकि प्लवक म प्राय अधिकतर कोपीपोड अथवा मछलियो के लार्वा होते ह कभी कभी पकड मे कृमियो और जेली फिशो का प्रमुख्त्व भी हो जाता है। कुछ प्लवक-जीव विषैले होते हैं और जब उन्हें अन्य जन्तु खा जाते हैं तो वे भी विषैले बन जाते है। सबसे बडी कठिनाई तो यह है कि सूक्ष्मदर्शीय पौधे और जन्तु समस्त सागर म इतनी दूरी-दूरी पर फैले होते है कि आहार की कुछ भी पर्याप्त मात्रा प्राप्त करने के लिए जल की बहुत ज्यादा तादाद छाननी पडेगी।

टकियो अथवा तालाबो म प्लवक की खेती कर के इन दोनो कठिनाइयो को दूर किया जा सकता है। अब ऐसे प्रयोग किए जा रहे है जिनम खनिज पोषण जल मे मिला दिए जाते है और तब इस घोल मे से कार्बन डाइऑक्साइड गुजारी जाती ह। जब क्लारेला नामक एककोशिकीय अलवण जलीय शैवालो को, ताप और प्रकाश की सावधानीपूर्वक नियत्रित परिस्थितियो मे, इस जल म

रखा जाता है तो उनमें तेज़ी से प्रगुणन होता है तथा वे भारी मात्रा में पादप पदार्थ का निर्माण करते हैं जिसका प्रयोग आहार के रूप में किया जा सकता है। इस प्रकार की शैवाल खेती की हर तीन दिन बाद फसल प्राप्त की जा सकती है, जब कि मक्का व समान खेती को बोने और काटने के बीच में ९ से लेकर १३ सप्ताह तक का समय लगता है। साथ ही एक एकड़ तालाब में हर वर्ष ३० टन शैवाल प्राप्त होगे जब कि प्रति एकड़ स्थल पर औसतन एक टन गेहूं उगता है। अन्तरिक्ष में लम्बी उड़ानों के लिए सूक्ष्म शैवाल 'फ़ार्मों' के बारे में गम्भीरतापूर्वक विचार किया जा रहा है। इसके द्वारा अन्तरिक्ष यान के भीतर की वायु को शुद्ध होना तथा आहार के रूप में एक साधन प्रदान करना, ये दोनों ही कार्य सम्पन्न हो सकेंगे।

शैवालों में कृत्रिम रीति से मांस अथवा साधारण सब्जियों-जैसा स्वाद लाया जा सकता है। चूंकि उनमें ५० प्रतिशत से ऊपर प्रोटीन होता है इसलिए इनका पोषण महत्त्व भी ठीक उतना ही होगा। एक नए प्रकार का ऐसा सफेद शैवाल तैयार किया गया है जिसका स्वाद कुदरती ही मधुर होता है। सुखा लेने पर यह आटे जैसा हो जाता है तथा इसे पका कर केक एवं डबलरोटी बनाई जा सकती सकती है।

प्लवक पाक

समुद्र में छितराए हुए सूक्ष्मदर्शीय प्लवक को छानने में ऊर्जा की जो विशाल मात्रा खर्च होगी उसकी समस्या हमारे लिए यही कार्य बहत्तर जन्तुओं द्वारा कराने से हल की जा सकती है—अर्थात किसी ऐसे जीव के द्वारा, जो परम्परागत विधि से पकड़े जाने के लिए पर्याप्त बड़ा हो, और जिसकी जनन दर अधिक हो। ऐसे जीव की तब तक प्रतीक्षा की जाए जब तक वह प्लवक को अपनी देह में जीवद्रव्य के रूप में संघनित न कर ले। इस विधि में आहार शृंखला में एक चरण ऊपर जाने में ऊर्जा की काफी अधिक मात्रा बेकार चली जाएगी लेकिन दूसरी ओर इसकी आसानी और सुविधा से यह हानि बराबर हो जाएगी।

जैसा कि छठे अध्याय में बताया जा चुका है ऊर्जा उन रासायनिक बन्धनों में सुरक्षित रहती है जो किसी जन्तु अथवा पौधे के अणुओं को परस्पर जोड़े रखती है। जब किसी जीव का पाचन होता है तो यही रासायनिक ऊर्जा ऊष्मा के रूप में निकलती है—इस ऊष्मा ऊर्जा की मात्रा का मापन कलोरियों में किया जाता है। डायटमों अथवा अलवण-जलीय शैवालों में संचित हर १,००० कैलोरी में से केवल १०० से १५० कलोरी ही उन्हें खाने वाले जन्तुओं

के जीवद्रव्य में जुड़ती है। इससे यह मनुष्य लगा कि यदि हम डायटमों और शैवालों की बजाय यूफाजिड झिम्पों पर निर्वाह करने का निर्णय कर तो हमें १० प्रतिशत की हानि उठानी होगी। किन्तु यह उससे कहीं अधिक अच्छा है कि हम यह इन्तजार करें कि छोटी मछलियां इन झिम्पों को खाएं और तब मछलियों से हम केवल ३० प्रतिशत कैलोरी ही प्राप्त कर। इसमें से भी मनुष्य अपने शरीर में वसा और पेशियों के निर्माण में केवल छह कैलोरी का प्रयोग कर पाएगा। यदि हम और भी किसी अधिक वृहत् मछली का इन्तजार कर जो इन छह कैलोरियों को अपने शरीर में जोड़े और तब उस बड़ी मछली को खाए तो हम केवल एक कैलोरी से कुछ ही अधिक ऊर्जा प्राप्त करेंगे। दूसरे शब्दों में, सूक्ष्मतम आहार शृंखला पर अधिकतम जनसंख्या का निर्वाह हो सकता है, या यूं कह सकते हैं कि आहार-शृंखला में जितना नीचे चलते जाएंगे उपलब्ध होने वाली ऊर्जा की मात्रा भी उतनी ही बढ़ती जाएगी।

हेरिंग मछली, भारी भरकम धूप स्नान वाली शार्क तथा विशाल दन्तहीन व्हेलें, ये सब ऊर्जा के घटने वाले क्रम की विविध अवस्थाओं को लांघ कर सीधे 'प्लवक-सूप" का आहार करती हैं। दक्षिण ध्रुव व्हेल अथवा पीले पेट वाली व्हेल, जो कि १०० फुट तक लम्बी हो जाती है तथा १५० टन[1] तक भारी वजन की हो जाती है, केवल यूफोजिया सुपर्बा (Euphausia Superba) की खुराक पर जीती है—ये सूक्ष्म चटकील-लाल यूफौजिड प्राणी हैं जिन्हें व्हेल पकड़ने वाले क्रिल कहते हैं (इस अध्याय के प्रारम्भ में दिया गया चित्र देखिए)। कैलिफोर्निया के पासाडेना कालेज के प्राणि-विज्ञान के प्रोफेसर डा० विलियम ई० पर्केनेंट ने अनुमान लगाया है कि ९० टन वजन वाली नीली व्हेल अथवा पीले पेट वाली व्हेल को हर रोज १० लाख कलारी से अधिक की आवश्यकता होती है। "पीली ताम्र वाला" यह प्राणी हर रोज जल में से एक से लेकर तीन टन तक क्रिल अपने मुंह के जाल में फंसाता है। जब वह अपने मुंह को बन्द करता है तो उसके चुन्नटदार निचले जबड़े की पेशियों के संकुचन से वह जल को अपनी बैलीन प्लेटों के झालरदार सीमांत के बीच में से भींच कर बाहर निकालता है (चित्र ७८)। प्लेटें छलनी का काम करती हैं और क्रिल को भीतर रख कर जल बाहर निकाल देती हैं। उसके बाद गला खोल कर खाना सटक लिया जाता है। व्हेल जल के नीचे रहते हुए भी खाना खा सकती है और जल

---

[1] यह एक आसत हाथी के वजन का ३५ गुना है और बड़े से बड़े विल्प्स टान्तासार का तीन गुना है।

चित्र ७८ एक छोटी बैलीन व्हेल के मुख का प्लवक दृश्य। (नीचे का जबड़ा और जिव्हा काट दी गई है) पानी बलीन की प्लेटो की झालरो में से आसानी से गुजर जाता है, परन्तु छोटे पशु फस जाते हैं और हड़प कर लिये जाते हैं।

फोटो वुडज होल प्रोशेनोग्राफिक इस्टीटयूशन

उसके फेफडा म तनिक भी नही जा पाता क्योकि उसकी श्वास-नली उसके वात छिद्र से एक पथक नलिका के रूप म गले म से होकर गुजरती है।

पीले पेट वाली व्हेल का आकार और उसकी ताकत क्रिल के पोषण महत्त्व का पर्याप्त प्रमाण है। पेकेनट न पहले से ही यह अनुमान लगा लिया है कि ये क्रिल सुस्वादु होगे तथा उसका विश्वास है कि ससार के खाद्याभाव को पूरा करने के लिये य पर्याप्त मात्रा म है। उसने अनुमान लगाया है कि डायटम व्हेलो के प्रति एकड आहार क्षेत्र पर १,००० पौड क्रिल का आश्रय प्रदान करते हैं। उसके परिकल्पना से यह प्रकट होता है कि व्हेल के शिकार की अपेक्षा क्रिल को जाल स पकडना कही अधिक लाभकर होगा और इस प्रकार पकडी जाने वाली कुल मात्रा सयुक्त राज्य अमरीका की सम्पूर्ण जनसख्या की वार्षिक आहार-आवश्यकता की पूर्ति कर सकती है।

ज्वार की ऊर्जा क प्रयोग म भी प्लवक की सम्पन्न खेती काटी जा सकती है। प्रोफेसर ऐलिस्टर हार्डी का सुझाव है कि यह कार्य समुद्र के सकरे भागो तथा ज्वारीय ऐस्चुअरी म बारीक खाना वाले जालो को रख कर पूरा किया जा सकता है। उसने हिसाब लगाया है कि इस प्रकार के ज्वारो के द्वारा दो नाट वाले ज्वार मे स प्रति घटा २२,००० टन जल छाना जा सकता है। ऐसे एक हजार जाल, जो हर रोज १२ घटे काम कर, ३५,७०० लोगो के खाने के लिए पर्याप्त भोजन प्रदान कर सकेंगे, बशर्ते कि वे लोग इसे खा सके।

मत्स्य-पालन

प्रोटीन की खेती बढाने का एक अन्य तरीका शेल फिश (सीपिया) का पालन करना है। हालाकि कस्तूरा कलँमा और सीपिया की ससार के अनेक भागो मे खेती की जाती है, फिर भी इस साधन से होने वाला सम्पूर्ण खाद्य-उत्पादन नगण्य है। ये जन्तु आहार शृंखला मे बहुत नीचे स्थान पर आते हैं और

सीध प्लवक एव अपरद पर निर्वाह करते ह और इसलिए वे समुद्र की कावनिक-उत्पादकता का पूणतर लाम उठाते है। कस्तूरा अनिवायत एक पम्प अथवा निर्वात-माजक के रुप म काय करता है। यह अपन तन्त्र म से प्रतिदिन बहुत ज्यादा, यहा तक कि १०० गैलन तक, जल निकाल्ता है और अपने आवश्यक आहार क लिए प्लवक का छाट लेता तथा अपरद को बाहर निकाल दता है।

हर बार अडे देने के समय मादा-क्लैम १० लाख या उससे कुछ अधिक अडे देती है आर मादा-कस्तूरे करोडा के लगभग। इन सन्ततिया म से ९५ प्रतिशत से अधिक पहले वष मे ही नष्ट हो जाते ह। यदि वे सब जीवित रह पाते और जनन कर सकते ता कुछ ही दजन कस्तूरा की सन्तति बहुत ही थाडे समय म इतनी पयाप्त मात्रा मे हो सकेगी जा समस्त ससार के निर्वाह के लिए पयाप्त हागी। प्राकृतिक रूप मे पाए जाने वाले अनेक निवास क्षेत्रा के अतिरिक्त सयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया, फ्रास इगलड, हालड नार्वे, जापान तथा हागकाग म कस्तूरा की खेती भी की जाती है।

हागकाग के क्षेत्र मे, पुरानी विधि के अनुसार समद्री फश पर केवल शैल और पत्थर फैला दिए जाते हैं जो बच्चा कस्तूरा का चिपकन का स्थान प्रदान करत हैं। जब य बच्चे बढ कर पूरे बन जाते है तो इन्हें या तो गोताखोर एकत्रित कर लात हैं या लम्बे-लम्बे चिमटा से उन्हे प्राप्त कर लिया जाता है। यहा पर हाल ही म ऐसे सफल प्रयोग किए गए है जिनमे सवधन की 'लटकती बूद' विधि स सवधन किया गया। इसमे ताजा-ताजा दिए गए अड-समूहा को तारा अथवा नाइलान की डोरिया पर चिपका दिया जाता है जिन्हें ड्राप कहते ह आर जिन्हें बास की चाटिया से लटका दिया जाता है। यहा पर वे बढते और परिपक्व हाते है। लगभग पाच महीनो की आयु के हाने पर इन शिशुआ को ड्रापा पर पहुचा दिया जाता है और लगभग एक वष का होने पर उनकी खेती काट ली जाती" है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से न्यू इगलैंड के तट के सहारे क्लैम-पालन म बहुत रुचि बढी है। अनेक अनुभवी व्यक्तिया ने क्लैम-सवधन के उद्देश्य के लिए मैसैचुसेट राज्य द्वारा दी गई अन्तर ज्वारीय स्थल की पट्टिया का पूरा-पूरा फायदा उठाया। ऐसा इसलिए किया गया था क्याकि इन जीवा की माग उसस कही ज्यादा बढ गई थी जितनी सख्या मे ये जीव प्राकृतिक रूप मे प्राप्त हा सकते थ। हाल ही मे इन खेता मे हास न्यू केकडा, वेधन घोघा, तथा हरे केकडा न भारी सख्या म आक्रमण किया—य जन्तु क्लैमो को बहुत सख्या म मार कर खा जाते हैं। य परभक्षी मैसैचुसेट से लेकर कनाडा तक प्राकृतिक एव सवर्धित दाना ही

प्रकार के निवासतलों को भारी क्षति पहुचाते हैं। कस्तूरा निवास-तलों को इसी प्रकार की क्षति स्टारफिशें भी पहुचाती हैं।

कर्कट और कस्तूरा-पालन की समस्याओं को सुलझाने के लिए समुद्र की तली के पर्यावरण और वहां पर रहने वाले समुदाय के बारे में आधारभूत ज्ञान आवश्यक है। जब यह जानकारी प्राप्त हो जाएगी तब उपयुक्त तटवर्ती स्थल के उन बड़े-बड़े क्षेत्रों से जिनकी ओर अभी तक ध्यान नही दिया जाता है अथवा पाड अतिरिक्त आहार प्राप्त किया जा सकेगा। उन तुलनात्मक जल के तटवर्ती तालाबों, ज्वारीय चपटे क्षेत्रों एव ...... जिनकी ओर अभी तक ध्यान नही दिया गया है अथवा जिनका दुरुपयोग किया गया है किसी दिन शेलफिशों के उगाने के लिए अथवा मेनहैडन समुद्री ट्राउट, समुद्री बास, मलेट, कार्प अथवा अन्य मछलियों के पालन-क्षेत्रों के रूप में प्रयोग किया जा सकेगा।

आज मानव समुद्र में वैसा ही जीवन निर्वाह करता है जैसा कि हजारों लाखों वर्ष पहले आदिम मानव थल से किया करता था। वह समुद्र के जगल में शिकार करता और जानवर पकड़ता है, जिसमें उसकी केवल सहज प्रवृत्ति तथा उसके मछुए पूर्वजों की परम्पराए ही मार्ग-दर्शन करती है। इस विशाल जगत के केवल सीमान्त मात्र में ही खेती की जाती है। ससार में दूर-दूर छितराए केवल कुछ ही ...... तथा लवणजलीय तालाबों में मछलिया, मवेशियों तथा सूअरों की भांति सीमित रखी जाती खिलाई पिलाई जाती, और उनकी देखभाल की जाती है। सयुक्त राज्य अमरीका की विस्तृत मत्स्य-उत्पत्ति शालाए इस श्रेणी में नहीं आती। बच्चा मछलियों की सुरक्षा और उनके पोषण के लिए वे कुछ भी करती हो अन्तत मछलियों को मुक्त कर दिया जाता है तथा उनका अन्त में पकड़ा जाना पुरानी शिकार विधियों पर निर्भर होता है।

फिलिपीन, इडोनेशिया और चीन के लोगों ने लवण जल तालाब में मत्स्य-सवर्धन की कला कम से कम ५०० वर्ष पहले से विकसित कर ली है। तथापि, पूर्वी मत्स्य-पालन अनुभव पर आधारित नियम और पुराने तरीकों से किया जाता है जिनमें वैज्ञानिक जानकारी का कोई लाभ नही उठाया जाता। अनेक स्थानों पर तालाब केवल पकड़ने के जालमात्र होते हैं जिनमे उच्च ज्वार के समय जन्तुओं को भीतर प्रवेश कराने के लिए द्वार होते हैं। तब इन जन्तुओं को इन घेरों में बढ़ने और मोटे होते जाने के लिए छोड दिया जाता है। किन्तु इस विधि में लाभप्रद आहार्य मछलियों के शत्रु और परभक्षी भी उनके साथ-साथ घेरे में फस जाते हैं और वे भी बढ़ते जाते तथा मोटे होते जाते हैं। वांछित प्रकार की बच्चा मछलियों को पकड कर और उन्हें परभक्षियों से मुक्त उपयुक्त तालाबों

म छाल्कर सग्रधन अधिक चयनात्मक हो सकता है। कृषक चाहे तो उन्हें कुदरती तौर पर बढ़ने दे सकता है अथवा वह उन्हें सीधे या जल में खनिज पोषण तत्त्व एवं पौधे डालकर, पोषित कर सकता है। फिलिपीन द्वीपों में मत्स्य-पालन द्वारा हर वर्ष १ करोड़ ७० लाख पौंड मछली पैदा होती है।

सावधानीपूर्वक सग्रहण छांटने पोषण प्रदान करने तथा उर्वरक द्वारा तटवर्ती मत्स्य-पालन केन्द्रों से प्रति वर्ष प्रति एकड़ ६०० पौंड मछली मास प्राप्त हो सकता है। और तो और, अहातों का प्रयोग करते हुए, जन्तुओं को उसमें प्रवेश होने देने, बिना अपनी ओर से उन्हें खिलाए अपने आप बढ़ने देने से भी, प्रति एकड़ उससे १०० से २५० पौंड अधिक प्राप्त होगा जितना कि खुले समुद्र में शिकार करने से होता है। अनेक स्थानों पर इसके द्वारा प्रति एकड़ उन ७०० पौंड मवेशियों से अधिक आहार पैदा हो सकता है जिनको सम्पन्न चारा स्थलों का आश्रय मिलता है।

मत्स्य-उत्पत्तिशाला कार्यों तथा खुले समुद्री क्षेत्रों के कृत्रिम उर्वरण से, हो सकता है कि स्थानीय प्रदेशों में पकड़ी जाने वाली मछलियों आदि की मात्रा में वृद्धि हो जाए लेकिन समुद्र में प्राकृतिक घट-बढ़ पर काबू पाने के लिए इनका महत्त्व सदिग्ध है। इन विधियों द्वारा ससार का खाद्याभाव कम किया जा सकता ऐसी कुछ कम ही आशा प्रतीत होती है। अत्यधिक खिंच खिंच वाले अथवा अनुपयुक्त क्षेत्रों में मछलियों को उन क्षेत्रों में प्रतिरोपण करना जहा आहार प्रचुर मात्रा में हो, काफी सफल रहा है, विशेषकर उत्तर सागर तथा हवाई द्वीपों में। लेकिन प्रतिरोपण करने से पहले इस बारे में निश्चय करने के लिए गहन अध्ययन करना बहुत आवश्यक है कि कहीं प्रकृति का सन्तुलन तो गड़बड़ नहीं हो जाएगा। यदि मछली भडार अत्यधिक तीव्रता से हटाए जाए, तो हो सकता है कि वे या तो स्वय ही समाप्त हो जाए, या उपलब्ध आहार की होड़ में अन्य महत्त्वपूर्ण आहार्य मछलियों को ही समाप्त कर दें।

अब आगे यह आवश्यक नहीं है कि हर मछुआ शिकार करने वाला हो। समुद्र के सीमांत पर अलग-अलग स्थानों पर जो सैकड़ों वर्ष से होता चला आ रहा है वह ससार की तमाम तट रेखाओं और बाहर खुले समुद्र तक फैल सकता है। यहा ताप, लवणता तथा अन्य भौतिक रोधों के रूप में प्राकृतिक चहार-दीवारियां बनी हुई हैं। मनुष्य यह जानकारी प्राप्त कर सकता है कि ये चहार-दीवारियां कहा पर हैं और ऋतुओं के साथ साथ उनमें किस तरह अन्तर पड़ता है। अन्तत, हो सकता है कि वह इन रोधों में इस तरह फेर बदल कर सके अथवा कृत्रिम रोध उत्पन्न कर सके, कि वे उसकी आवश्यकताओं के लिए अधिक

उपयुक्त सिद्ध हो सके। हो सकता है कि किसी दिन वह उन प्राणिरूपों की वृद्धि को रोक सके जो वांछित नहीं हैं तथा महत्त्वपूर्ण आहार्य मछलियों की वृद्धि में प्रोत्साहन दे सके और इस तरह समुद्र से भरपूर और सम्पूर्ण फसल प्राप्त कर सके।

पृथ्वी की ऊष्मा के जमा खर्च का संतुलन

जैसा कि तीसरे अध्याय में उल्लेख किया गया था पृथ्वी की ऊर्जा का ९९ प्रतिशत से अधिक भाग (वास्तव में ९९.९९९८ प्रतिशत) सूर्य से ऊष्मा और प्रकाश के रूप में आता है। शेष रेडियोऐक्टिव पदार्थों के क्षय तथा ज्वारों के घर्षण से आती है। सूर्य की ऊर्जा का लगभग एक तिहाई भाग बादलों के शीर्षों, हिम तथा रेगिस्तानों से परावर्तित होकर पुनः अन्तरिक्ष में लौट जाता है। शेष ऊर्जा सतह पर सोख ली जाती है और स्थल एवं महासागरों को गर्म करने, हवाओं तथा धाराओं को उत्पन्न करने, जल को भाप बनाने और बर्फ को पिघालने में काम आती है। भीतर आने वाली ऊर्जा के एक प्रतिशत का केवल लगभग २५वां भाग प्रकाश-संश्लेषण में प्राप्त कर लिया जाता है और पौधों के माध्यम से जीवित वस्तुओं में पहुंचता है।

अपनी उच्च आपेक्षिक ऊष्मा (पृष्ठ ७४) के कारण महासागर उससे कहीं अधिक ऊष्मा का अवशोषण एवं संचय करता है जितना कि स्थल। यदि ढाई वर्ष की अवधि में पृथ्वी पर पहुंचने वाली तमाम ऊष्मा-ऊर्जा महासागर में संचित हो जाती तो उससे महासागर का औसत ताप लगभग २ फा० बढ़ जाता। फिर भी ऊष्मा की यही मात्रा दक्षिण ध्रुव प्रदेश को ढके रहने वाली अधिकांश बर्फ और हिम को पिघलाने के लिए पर्याप्त होती। चूंकि यह ऊर्जा एक के बाद

चित्र ७९ जब तक समुद्र में व्यावहारिक दृष्टि से न खोजा गया और संभवतः असीमित खाद्य भण्डार है, तब तक पृथ्वी के किसी भी प्राणी को भूखे रहने की आवश्यकता नहीं है।

फोटो यू०एस० मत्स्य तथा वन्य जीवन सेवा

महामागर के उल्ट-पलट हाने का भी जलवायु पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पडता ह क्योकि इसके द्वारा उस ऊष्मा की मात्रा मे विभेद आ जाता है जो वायुमण्डल म स्थानातरित हाती ह। तथापि, यह उल्ट-पल्ट और उसके परिणाम उतनी अच्छी तरह ज्ञात नही है जितनी कि हवा की उल्ट-पल्ट और उसके परिणाम। सबमे पहले तो हम यह भी नही मालम है कि ऐसा वास्तव म किस प्रकार सम्पन्न हाता है। ठडा जल उच्च अक्षाशा मे नीचे गहरा-गहरा बैठता जाता है आर विषुवत-वत्त की ओर बहता जाता ह। गम जल सतह की ओर उठकर आता और ध्रुवा की आर बहता जाता है और पुन चक्र पूरा करता है। प्रश्न उठता है कि क्या यह अपशाकृत गम जल विषुवतीय अपसरणो मे ऊपर का उफनता ह अथवा क्या यह ताप प्रवणता म से हाता हुआ क्रमिक आर क्रमिक उभार है जैसा कि स्टौमेल की कल्पना थी (पष्ठ ११८)।

महासागर का ऊपर मे नीचे उल्टने मे कितना समय लगता है ? गभीर जल महतियो म घुली हुई कावन डाइऑक्साइड मे शेष बचे रडियो ऐक्टिव कार्बन १४ (पष्ठ २९ देखिए) की मात्रा उनकी 'आयु" का सकेत देती ह अथात यह कि उसके बाद से कितना समय बीत गया है जब व सतह पर थी। उत्तर अटलाटिक का ताप प्रवणता मे नीचे का जल औसतन लगभग ५०० वष पुराना है। दक्षिण अटलाटिक का जल आर दक्षिण ध्रुव महामागर की तली का जल २०० वष स कम पुराने है तथा हिद महामागर व प्रशात महामागर का गभीर जल, इस विधि के अनुसार करीब १ ३०० वष पुराना है। इन तिथियो से ऐसा सकेत मिलता ह कि गभीर जल का नवीकरण अथवा महासागरो का ऊपर-नीचे उलटना हर १,००० वष म लगभग एक बार हाता है। लेकिन इसके पक्ष मे मिलने वाला प्रमाण निश्चायक नही है। उलटने का काल लगभग सैंकडा वर्षो भी हो सकता है तथा अनेक हजार वष भी। इसम इस बात से आर भी जटिलता बढ जाती है कि कार्बन तिथि निधारणा से ऐसा सकेत मिलता है कि अधिक गहराइयो म जल का प्रवाह बहुत धीमा हाता है—६० मील प्रति वष से भी कम। तथापि, स्वालो द्वारा किए गए गल्फ स्ट्रीम के नीचे के गभीर प्रवाह के सीधे मापन से ऐसा लगता ह कि तली के समीप का जल दो मील प्रति दिन की चाल स चलता है।

उल्टने से सम्बधित एक अय तीसरा प्रश्न भी है। क्या यह न्यूनाधिक रूप मे सतत है अथवा, जैसा कि रॉजेर रवेले ने कहा है 'यह किसी पात्र को बीच-बीच मे जल से लबालब भरते जाने के रूप म है'। जैसा कि हम पाचवें अध्याय मे देख चुके ह मोटियोर द्वारा लिए गए गभीर जल नमूनो की ऑक्सीजन

इतनी अधिक मात्रा म कार्बन डाइऑक्साइड छोड रहा है जितनी कि उसमे पहले उसने कभी नहीं छोडी थी।[1] यह गैस इतनी मात्रा मे जुड चुकी है जो कि वायुमण्डल मे सामान्यत पाई जाने वाली कुल मात्रा की १२ प्रतिशत है। चकि कार्बन डाइऑक्साइड गर्मी सोखती है, इसलिए इसम होने वाली किसी भी वृद्धि से अन्तरिक्ष म विकिरित होने वाली मात्रा मे कमी हो जाएगी और इस तरह पृथ्वी का ताप बढता जाएगा

महासागर म कार्बन डाइआक्साइड सोखने की विशाल क्षमता होती है और कदाचित जितनी भी यह निकली है उसका अधिकतर भाग उसने सोख लिया है। किन्तु ऐसा अनुमान लगाया गया है कि अगले १०० वर्षों म उद्योगो द्वारा १७०० अरब टन अतिरिक्त कार्बन डाइआक्साइड उत्पन्न होगी—अर्थात् वायुमण्डल म पाई जाने वाली इसकी आज की मात्रा की ७० प्रतिशत अतिरिक्त। इसम से लगभग दो तिहाई भाग समुद्रो द्वारा सोख लिया जाएगा जिसके कारण कदाचित २० या ३० प्रतिशत तो अवश्य ही वायु म जुड जाएगा। इसके द्वारा हो सकता है पृथ्वी की गर्मी कई डिग्री बढ जाए। वास्तव म १८५० से तापो म वृद्धि होती आ रही है किन्तु यह बात नहीं है कि यह वृद्धि पहले ही छोडी जा चुकी कार्बन डाइआक्साइड के कारण हुई अथवा नहीं।

वुड्ज होल के एल० वी० वार्थिगटन का कहना है कि इस गर्म होते जाने की प्रवृत्ति ने पिछले २० वर्षों म उत्तर ध्रुव प्रदेश के शीत तापो म ५ की वृद्धि कर दी है। उसका विश्वास है कि ऐसा हो जाने के कारण शीत ऋतुओ म अब इतनी पर्याप्त तीव्रता नहीं रही है कि उनके कारण इतना पर्याप्त ठडा और सघन जल बन सके जो नीचे डूबता जाए, और यही वह क्रियाविधि है जिसने ध्रुवीय जल प्रपातो को बन्द कर दिया है तथा उलटने की क्रिया को रोक दिया है। उसका विचार है कि तली के जल का नवीकरण तब तक नहीं होगा, अथवा उलटने की क्रिया तब तक पुन आरम्भ नहीं होगी, जब तक कि जलवायु ठडा नहीं होगा। आक्सीजन के मापनो के आधार पर वार्थिगटन का यह तर्क है कि पिछला अंतिम नवीकरण १८०० के आस-पास हुआ था, अत गभीर जल केवल १५० वर्ष पुराना है न कि ५०० वर्ष जैसा कि कार्बन तिथियो से पता चलता है।

यदि महासागर का उलटना नहीं होता तो न केवल उसकी ऊष्मा-स्थानातरण

---

१ तमाम कार्बन तिथि निर्धारणो मे एक शुद्धि कर लेनी चाहिए जो कि उद्योगो म से एव परमाणु-बम से निकलने वाले कार्बन १४ के जुडते जाने के सदर्भ म जरूरी है।

क्षमता मे ही रूकावट पैदा होती है वरन् उसकी सतह भी कार्बन डाइआक्साइड स सतप्त हो जाती है और वह उसे और आगे अवशोषित नही कर सकती। इससे यह गैस वायुमण्डल म एकत्रित होती जाएगी और गर्म करते जाने की प्रवृत्ति म और भी वद्धि कर देगी। यह प्रवृत्ति तब और भी आगे जारी रहती जाएगी जब उच्चतर तापो से वाष्पन अधिक होने लगेगा और हवा मे ऊष्मा-शोषी आद्रता और अधिक बढ जाएगी। तथापि, तापो की वद्धि की भी सीमाए होगी, क्योकि अतिरिक्त आद्रता द्रवित होकर बादलो का निर्माण करेगी। बादलो स, आने वाले विकिरण का और अधिक परावर्तन होगा और इस तरह पथ्वी ठडी होती जाएगी।

इस प्रकार, हवा का महासागर और जल का महासागर दोनो एक साथ मिलकर ऐसी एकल, सम्मिश्र मशीन के रूप मे कार्य करते हैं जो जलवायु एव मौसम का निर्माण करती है। घर्षण के प्रतिरोध म कार्य करते हुए यह मशीन ऊष्मा को उष्णकटिबन्धी प्रदेशो से ध्रुवी प्रदेशो तक ले जाती है जिससे सूर्य की ऊर्जा के विसन्तुलन की क्षतिपूर्ति होती है और पथ्वी पर ऐसे ताप बनाए रखती है जो जीवन को सुरक्षित बनाए रखने के लिए आवश्यक है। इस मशीन को चलाने के लिए आवश्यक ऊर्जा बहुत विपुल मात्रा मे चाहिए—यह लगभग ७० लाख परमाणु बमो के तुल्य होती है, अथवा सयुक्त राज्य अमरीका मे काम करने वाले तमाम शक्ति सयत्रो स उत्पन्न होने वाली उस कुल ऊर्जा से भी अधिक, जो वे १०० वर्षों मे उत्पन्न कर सकगे। घर्षण इस ऊर्जा को इतनी तीव्रता स क्षय करता है कि यदि सूर्य निरन्तर नई ऊर्जा प्रदान न कर तो पथ्वी के तमाम पवन ९ स १२ दिन के अदर ही समाप्त हो जाएगे। उस स्थिति मे, ऐसा अनुमान लगाया गया है कि महासागरो मे इतनी पर्याप्त ऊर्जा सचित है कि वह सतही परिसचरणो को और अगले तीन वर्षों तक चलाती जाएगी।

जलवायु मशीन किस प्रकार कार्य करती है इसकी सामान्य विधि की हम जानकारी प्राप्त है। यह एकदम समान और एक लय के साथ नही चलती बल्कि सदा, कभी तेज और कभी धीमी और डोलती हुई चलती है जिसके परिणामस्वरूप मौसम और ऋतु को हानि पहुचती है। चूकि इसकी प्रवत्तिया एव दोलन के आधार पर इसकी औसत चालन-परिस्थितियो के बारे मे कुछ नही कहा जा सकता है इसलिए अगले ५० वर्षों के लिए और यहा तक कि अगले एक वर्ष के लिए भी पहले से ही मौसम की पूर्व घोषणा नही की जा सकती है—और न ही हम जलवायु के क्रातिक परिवर्तनो की, जसे कि हिम-युगो की ही पूर्व घोषणा कर सकते हैं। अत सागर-वायु के परिसचरण के अध्ययन का एक मुख्य उद्देश्य यह है कि हम

मामम और जलवायु की पूव घोषणाओ क लिए पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर सकें जो कि पृथ्वी के सभी लोगो के लिए लाभदायक होगी।

जलवायु नियन्त्रण

आज मानव इस बात क लिए जागरूक है कि वह औद्योगीकरण से अपने पर्यावरण को बदलता जा रहा है। इसी जागरूकता के फलस्वरूप वह उन विधियो पर ध्यान दे रहा है जिनसे वह जलवायु के सप्रयोजन परिवतन एव नियन्त्रण म काम म ला सकता है। उसने इस बात पर गौर किया है कि महस्थलो एव उत्तर ध्रुव के प्लावी हिम पुज के ऊपर कालिख का आवरण फैलाकर वह पृथ्वी स परावर्तित होने वाली ऊर्जा की मात्रा म फेर-बदल कर सकता है, यह कालिख रेत अथवा बर्फ की अपेक्षा ऊर्जा का परावतन कम और अवशोषण अधिक करेगी। (बर्फ और हिम अपने ऊपर पडने वाली ऊर्जा का बहुत ज्यादा, यहा तक कि ९० प्रतिशत भाग परावर्तित कर देते है।) पृथ्वी की सतह के बडे-बडे क्षेत्रो म इस कालिख के आवरण को फैलाना और पवन, पिघलती हुई बर्फ, प्रवाहित रेत हिमपात आदि के विपरीत उसे कायम बनाए रखने म जो समस्याए आएगी उनसे यह विचार अव्यावहारिक हो जाता है।

अनुमानत यह कालिख इतनी पर्याप्त ऊर्जा सोख लेगी जिससे बर्फ पिघलने लगेगी लेकिन मौसम ब्यूरो के अनुसधान के अध्यक्ष डा० हैरी वक्सलर ने उत्तर ध्रुवी बर्फ से छुटकारा पाने का एक तीव्रतर उपाय सुझाया है। उसने हिसाब लगाया है कि ठीक स्थिति म रखे गए ऐसे दस हाइड्रोजन-बम जिनम से हरएक बम एक करोड टन टी० एन० टी० के तुल्य होगा, उत्तर ध्रुव महासागर के नीचे छोडे जाने पर इतनी वाष्प उत्पन्न कर देंगे कि उसम पृथ्वी का शीर्ष पूरी तरह हिम-कोहरे से ढक जाएगा। सतह से पाच मील की ऊचाई तक फैला हुआ यह कोहरा अतरिक्ष म खो जाने वाली ऊष्मा म एक नाटकीय कटौती कर देगा और उसके कारण बर्फ के पिघलने म बहुत ज्यादा तीव्रता आ जाएगी। उत्तर ध्रुव का प्लावी हिमपुज तिरती हुई एक पतली झिल्ली मात्र है और इसलिए उसके पिघलने स समुद्र की सतह म कोई खास वद्धि नही होगी, ठीक उसी तरह जसे किनार तक भर जल के गिलास मे डूबे हुए बर्फ के टुकडो के पिघलने स जल बाहर को नही बहने लग जाता। इसके विपरीत, यदि दक्षिण ध्रुव प्रदेश के ८००० फुट ऊचे आवरण वाला बर्फ पिघल जाए तो समुद्र की सतह लगभग २०० फुट ऊची उठ जाएगी।

रूस-वासी उत्तर ध्रुव हिम को पिघलाने की दिशा म सोचते आ रहे हैं

ऐसा करने से उनके उत्तरी बन्दरगाह वर्ष पर्यन्त खुले रह सकेंगे और अटलांटिक एव प्रशात के बीच एक नया छोटा मार्ग प्रदान कर सकेंगे और साथ ही न्ययार्क लन्दन एव मॉस्को के अक्षाशो के औसत ताप बहुत ज्यादा यहा तक कि १० डिग्री फारेनहाइट तक ऊचे उठ सकेंगे। यह कार्य पूरा करने के लिए सोवियत लोगो का ऐसा प्रस्ताव है कि बेरिंग जलडमरूमध्य पर एक बाध बनाया जाए और प्रशात म स गम जल को उसम पम्प द्वारा पहुचाया जाए, किन्तु विज्ञानियो को इस बार म बहुत सन्देह है कि यह चीज योजना के अनुसार काय कर सकेगी।

जैसा कि डा० वेक्स्लर ने कहा है हम जलवायु मशीन के बारे म इतनी कम जानकारी है कि इससे छेडखानी करने से हो सकता है कि "हम इलाज की एक ऐसी दु खद स्थिति मे पहुच जाए जो स्वय बीमारी से भी अधिक बुरी होगी। एविंग तथा डान के अनुसार हिम विमुक्त उत्तर ध्रुव एक अय हिम युग को ला आएगा। उत्तर ध्रुवी जाडे आज विशाल हिमनदो के निर्माण के लिए पर्याप्त ठडे हैं किन्तु उन्हें भरने के लिए पर्याप्त हिमपात नही हो रहा है। शीत ऋतु म जो वर्फ गिरती भी है वह ग्रीष्म मे पिघल जाती है। एविंग और डान का विश्वास है कि यदि उत्तर ध्रुव महासागर खुला होता तो उससे अवक्षेपण का एक ऐसा साधन उपलब्ध हो जाता जिससे हिम-युग के अनुपात वाले हिमनद बन जाते।

इस सिद्धात के अनुसार अटलाटिक से आने वाले गम जल के उत्तर ध्रुव महासागर के जल मे मिल जाने के कारण प्लावी हिमपुज की मोटाई आजकल घटती जा रहा है। यदि यह पतले होते जाने की क्रिया जारी रहती है तो कुछ ही शताब्दियो म बर्फ लुप्त हो जाएगी अथवा मानवीय हस्तक्षेप के कारण तीव्रता लाने पर यह उससे भी पहले ही लुप्त हो जाएगी। तब खुला समुद्र सूय की ऊष्मा के अवशोषण और अटलाटिक जल के अधिक मिश्रण के कारण धीरे धीरे थल की अपेक्षा अधिक गम हो जाएगा। उसकी सतह से जल का वाष्पन होता जाएगा और हवा द्वारा अधिक ठडे परिवर्ती स्थल के ऊपर उठता जाएगा जहा पर वह हिमीभूत होकर हिम के रूप मे नीचे गिरता जाएगा। हजारो-हजारो फुट मोटे हिमनद बन जाएगे और अपने ही भार के कारण दक्षिण म बहुत दूर यहा तक कि न्यूयाक और क्लीवलैंड तक श्यान सफेद अलकतार की तरह बहते चले आएगे।

हिम-युग की उस समय लगभग अचानक समाप्ति हो जाएगी जब जगत महासागर का करीब ३०० फुट जल बर्फ के रूप म कैद हो जाएगा। उसके परिणामस्वरूप समुद्र-तल के नीचे गिरने के कारण ग्रीनलैड और नार्वे के बीच म

पाए जाने वाले अध जलीय कटक उघड जाएगे और उत्तर ध्रुव तथा अटलाटिक महासागरो के जल का आदान प्रदान एकदम घट जाएगा। गर्म जल के भीतर आने म कटौती हो जाने तथा परिवर्ती हिमनदो के ठडे करने के प्रभाव, इन दोनो से समुद्री बर्फ की एक नई चादर बनने लगेगी जिससे कि हिम-अवक्षेपण का साधन बद हो जाएगा। तब हिमनद पिघलने लगेगे और जल कटको को ढक लेगा और पुन वही स्थिति आ जाएगी जैसी आज है।

एविंग और डान का विश्वास है कि यह एक चक्रीय क्रियाविधि है जिसने पिछले लगभग ५०० ००० वर्षो क चार हिम-युगो को जन्म दिया, और "अगले कुछ हजार वर्षो म पाचवे हिमयुग के आने की प्रत्याशा की जा सकती है। उनका विचार है कि ये चक्र मूलत तब शुरू हुए थे जब उत्तर और दक्षिण ध्रुव क्रमश समीप उत्तर प्रशात तथा दक्षिण अटलाटिक से खिसक कर उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुव प्रदेशो म आज की स्थितियो म पहुच गए थे। इस प्रवास का कारण प्रावार अथवा आतरिक भाग के ऊपर पृथ्वी की भू-पपटी का विसर्पण हुआ होना समझा जाता है। निस्सन्देह इस सिद्धात म अनुमान का पुट अधिक है और अभी तक यह सिद्ध नही हो सका है। किन्तु इस एक बात मे यह सिद्धात महत्त्वपूर्ण अवश्य है कि इसम कहा गया है कि हिम-युगो के होने के कारण पूर्णत स्थानीय परिस्थितियो ह और बाहरी प्रभावो तथा उल्कातिक घटनाओ का इसम कोई हाथ नहीं रहा है।

अत, हमारी आज की जानकारी इस स्थिति पर है कि हम यह मालूम नही है कि उत्तर ध्रुवी बर्फ के साथ छेडखानी करने पर हम एक अन्य हिम-युग मे पहुच जाएगे अथवा उष्णकटिबधी युग म। यह तो हम मालूम ही है कि हमारी पृथ्वी मध्य-अक्षाशो म लगभग दो डिग्री प्रति शताब्दी की दर स गर्म होती जा रही है और यह कि उत्तर ध्रुवी प्लावी हिमपुज तथा ग्रीनलैंड का हिम-आवरण, न कि दक्षिण ध्रुवी हिम आवरण धीरे धीरे पिघलते जा रहे हैं। इसके फलस्वरूप समुद्र की सतह लगभग ४½ इच प्रति शताब्दी ऊपर उठती जा रही है अर्थात समुद्र का स्थल पर एक धीमा अतिक्रमण हो रहा है जिसका निकट भविष्य म ही उन निम्न भूमि क्षेत्रो पर, जैसे कि सयुक्त राज्य अमरीका के पूर्वी तट हालैड तथा प्रशात अडल द्वीपो पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड सकता है।

जलवायु द्वारा नियन्त्रण का एक अधिक आशातीत क्षेत्र वुड्जहोल के डा० जान्हन एम० माल्कस क अनुसधानो स खुला है। अपने कार्य के आधार पर डा० माल्कम एसा विश्वास करती है कि महासागर अपनी अधिकतर गर्मी विषुवत वृत्त तथा ३०° उत्तर एव दक्षिण के बीच के क्षेत्र म वायुमण्डल म पहुचाता है।

इस क्षेत्र म वाष्पित आद्रता व्यापारिक हवाआ द्वारा विषुवतीय प्रदेशा मे ले जायी जाती है। वहा पर यह ऊपर उठनी तथा कपास वर्षी मेघ (Cumulonimbus) नामक विशाल उत्तुग तूफानी बादला के रूप मे द्रवित हा जाती हे। द्रवित मेघ बुदिकाए तब तक परस्पर जुटती जाती अथवा एक दूसरे मे शामिल होना जाती है जब तक वे इतनी बडी और भारी नही हो जाती कि ऊपर उठनी जाती हुई हवा म से गुजर कर वे वर्षा के रूप म नीच न गिरने लग। इन बुदिकाआ द्वारा ले जाइ जान वाली ऊष्मा पीछे रह जाती है आर वही उस ऊजा का साधन होती है जा हवाआ का ध्रुवा की दिशा म चलाती जाती है।

वुडजहाल म किए जाने वाले सैद्धातिक काय से ऐमा सकेत मिलता है कि एक ही समय पर विषुवत-वत्त का चारा आर से घेरे हुए ये कवल १,५०० से ५००० कपास-वर्षी मेघ ही इसके लिए पर्याप्त होगे कि व्यापारिक हवाआ में आयात की गई तमाम जल-वाष्प को उस ऊर्जा मे परिवर्तित कर दें जा परिसचरण मशीन का शक्ति प्रदान करने और उच्चतर अक्षाशा म ऊष्मा जमा-खच के सन्तुलन के लिए आवश्यक है। चकि हमार वायुमण्डल का चलान के लिए उत्तरदायी तत्त्व अपक्षाकृत इतन थोडे है इसलिए डा० माल्क्स यह उत्तेजक प्रश्न करती है कि "क्या ऊर्जा सप्लाई शृखला मे ऐमी काई कडी नही हा सकती जिसम मानव द्वारा हस्तक्षेप मम्भव हो सकता हा?'

एक अय जलवायु-परिवतन याजना म महासागर के फश पर परमाणु भट्टिया का रखा जाना शामिल है। उत्पन्न हाने वाली ऊष्मा से तली का जल इतना गम हा सकेगा कि वह उलटना शुरू कर दे और जीवनदायी पोषका का सतह तक ले जाए। इम विचारधारा के प्रस्तुतकर्त्ताआ के अनुमार 'इसके द्वारा स्थानीय जलवायु पर भी प्रभाव पडेगा। लेकिन महासागर के एक छाटे-से क्षेत्र म भी उलटन का दर म वद्धि हान से वायुमण्डल म से कावन डाइआक्साइड के अवशोषण की मात्रा बढ जाएगी आर विकिरण का पकडने वाली उपलब्ध मात्रा मे कमी हा जाएगा। अत "स्थानीय जलवायु का प्रभावित करने" के लिए इतनी मामूली सा याजना स भी हा सकता है, ऐसे परिणाम निकलें जा दूरगामी और अपूर्व-घाषणीय हा।

हम विभिन्न योजनाओ से ऐसा कहना जरूरी है कि वे उसम, जिसकी हम बहुत ही कम जानकारी है, जा कुछ रूपातरण करन जा रही है अत्यत सतकता पूवक कर। अभी सब से सुरक्षित रास्ता यही है कि तमाम परियाजनाआ का ताक म रख दिया जाए आर आधारभूत अनुसधान के साधना की मदद से इस जलवायु मशीन का और अधिक गहरा अध्ययन किया जाए। हम इसके तमाम

गियरा एव कडिया को ढूढ निकालना होगा और यह अध्ययन करना होगा कि वे सब एक साथ मिलकर, और अलग-अलग भी, किस तरह काय करते हैं। हमे यह बोध होना जरूरी है कि प्रकृति किस तरह काय करती है (और यही तो वास्तव म विज्ञान का सच्चा उद्देश्य भी ह) उसके बाद ही हम यह पूव घोषणा कर सकेंगे कि क्या-क्या परिवतन होगे। एक बार जब हम प्रकृति मे होन वाले आगामी परिवतनो का ठीक अदाजा लगा सकेंगे, तो उन पर नियत्रण पाने की दिशा मे भी हम बहुत आग बढ चुके होगे।

निष्कर्ष

"मनुष्य की प्रगति की कहानी अन्धकार से प्रकाश की ओर बढते जाने का एक सतत सघर्ष है, एक बार मनुष्य ने जानते जाना बन्द कर दिया तो उसका अस्तित्व भी समाप्त हो जाएगा।"—नानसेन

हमने देखा कि समुद्र विज्ञान का इतिहास चार अवस्थाओं मे विभाजित है। पहली अवस्था १८७३ ७६ म चैलजर की खोजयात्रा से प्रारम्भ हुई और उस समय तक चली जब १९२५ म मीटियोर समुद्र म पहुचा। यह एक ऐसा काल था जिसम अव्यवस्त छानबीन और यत्र-तत्र खोजें हो रही थी। इस अवस्था के दौरान अध्ययन काय दूर-दूर किए गए थे और प्रेक्षण बहुत ज्यादा बिखर बिखर थे। प्रारम्भ म इस प्रकार की छानबीन आवश्यक थी क्योकि तब तक बहुत ही कम जानकारी थी। इस काल म महासागरीय द्रोणियो की मोटी मोटी सामान्य रूपरेखाए निर्धारित की गई और जगत् महासागर के मुख्य मुख्य लक्षण पता चले।

दूसरी अवस्था का प्रारम्भ जमन दक्षिण अटलाटिक अथवा मीटियोर खोज यात्रा थी और यह अवस्था १९२५ से लेकर भू-भौतिक वष के आरम्भ तक चली। इस अवस्था के दौरान समुद्र विज्ञानियो को महासागर की समस्याओ की अधिक अच्छी अनुभूति हुई और उसके विषय मे बहुत अच्छी तरह सोचे-समझे और उत्तर-प्राप्य प्रश्नो के हल निकले। यह काल था महासागर के एकल क्षेत्रो अथवा उसकी विशिष्टताओ के बडे पैमाने पर किए जाने वाले और व्यवस्थापूर्ण अन्वेषणो का। यही काल था उन्नत यन्त्रो और विधियो का भी—अर्थात प्रतिध्वनि

गभीरतामापियो, श्राइका गभीरता-तापमापियों, भूकम्पी परावर्तन और अपवर्तन का तथा लोरन एव राडार के समान समुद्र पर स्थिति पहचानने की सरायन विधियो का।

तीसरी अवस्था सागर के अध्ययन मे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की है। इसका उदाहरण भू भौतिकी वर्ष का महान प्रयास है जब ४० विभिन्न राष्ट्रो के प्रतिनिधि स्वरूप ६० जलपोतो का बेडा जगत महासागर पर चला—खोज के एक शान्तिमय उद्देश्य के लिए ऐसी खोज के जिसके द्वारा मनुष्य उस ग्रह के बारे मे जिस पर वह रहता है और अधिक अच्छा जानकारी प्राप्त कर सके। इस काल के दौरान सबसे अधिक विस्तृत कार्य अटलाटिक मे किया गया। इसका कारण यह था कि इस महासागर मे पहले से ही काफी सम्पूर्ण अवेक्षण किए गए थे, तथा नए मापनो की पुरानी मापनो से तुलना की जा सकती थी ताकि यह पता चल सके कि किस प्रकार की दिशा प्रवृत्तिया है अथवा अपेक्षाकृत दीर्घकालीन परिवर्तन किस प्रकार के है।

इस अवस्था की एक मुख्य विशेषता थी—अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान सम्मेलन जो १९५९ मे न्यूयार्क मे सयुक्तराष्ट्र के प्रधान कार्यालय पर ३० अगस्त से ११ सितम्बर तक हुआ। इस सम्मेलन मे एक हजार से ऊपर की सख्या मे विज्ञानियो ने भाग लिया जिनमे वे समुद्र विज्ञानी शामिल थे जो नियम पूर्वक समुद्र पर जाते थे और वे स्थल-सीमित विज्ञानी भी जो सैद्धातिक काम करते थे—अर्थात वे सभी लोग जिनकी रुचि समुद्र की समस्याओ मे थी। समुद्र विज्ञान के इतिहास मे यह पहला मौका था जब कि इसकी तमाम विभिन्न शाखाओ के लोग जानकारी के आदान प्रदान करने अपनी विचारधाराओ पर विवेचन करने तथा समान समस्याओ पर बातचीत करने के लिए एकत्रित हुए थे।

अन्तर्राष्ट्रीय भू भौतिकी वर्ष ने ही, एक ही क्षेत्र मे एक साथ अनेक जलपोतो का कार्य करते देखा। महासागर मे अल्पकालिक परिवर्तनो की खोजबीन के लिए इस प्रकार का कार्य करना आवश्यक है और यह स्वभावत धीरे धीरे चौथी अवस्था—ऋतु-मानचित्र समुद्र विज्ञान मे—पहुच जाता है। ऋतु मानचित्र सम्बन्धी समुद्र विज्ञान मे एक ही समय पर विभिन्न स्थानो पर अनेक मापन किए जाते है—इस उद्देश्य से कि आगामी परिस्थितियो का पूर्वानुमान लगाया तथा उनकी पूर्व घोषणा की जा सके। इस अवस्था की प्रतिरूप थी १९६० की वुड्ज़होल खोज यात्रा जिसके दौरान चार जलपोतो और एक विमान ने हैटरास अन्तरीप के दक्षिण से लेकर ग्रैंड बैंक्स के पूर्व तक गल्फ स्ट्रीम के अध्ययन मे पूरे २½ वर्ष बिताए।

आज के समय, न तो सभी दल चौथी अवस्था में खोज यात्राएं कर रहे हैं और न ही सभी महासागर खोजबीन की इस चौथी अवस्था में ही हैं। संयुक्त राज्य अमरीका पश्चिम उत्तर अटलांटिक में ऋतु मानचित्र सम्बन्धी अध्ययन कर रहा है, किन्तु उत्तर प्रशांत में उसके द्वारा किए जाने वाले अध्ययन दूसरी और तीसरी अवस्था के बीच-बीच में ही चल रहे हैं। हाल की विभिन्न दलों द्वारा भेजी जाने वाली खोजयात्राएं इन्हीं अवस्थाओं में अतिव्याप्त होती हैं। हिन्द महासागर तथा दक्षिण प्रशांत में होने वाली खोज अभी भी चैलेंजर अवस्था में ही है।

अन्तर्राष्ट्रीय भूभौतिकी वर्ष के दौरान प्राप्त होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का समुद्र विज्ञान पर गहरा प्रभाव पड़ा किन्तु यह विशाल कदम केवल प्रारम्भ ही था। अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान को स्थायी आधार प्रदान करने और लम्बे अन्तर्राष्ट्रीय भूभौतिकी-वर्ष उत्तरकालीन प्रोग्राम को स्थापित करने के लिए वैज्ञानिक संघों की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद ने समुद्र विज्ञान विषयक विशिष्ट कमेटी (स्पेशल कमेटी ऑन ओशेनोग्राफी, जिसका अंग्रेजी संक्षिप्त रूप एस० सी० ओ० आर०, SCOR है) का संघटन किया। चूंकि हिन्द महासागर हमारे इस ग्रह का एक सबसे कम जाना पहचाना क्षेत्र है, इसलिए एस० सी० ओ० आर० ने वहां पर एक विस्तृत खोज-यात्रा का कार्य चालू किया है जो १९६० में आरम्भ हुआ और १९६४ में पूरा हुआ। इस खोजयात्रा में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग निहित है जो सम्पूर्ण हिन्द महासागर में तमाम ऋतुओं में पास-पास किए जाने वाले प्रेक्षणों के जाल बनाएगा। इस कार्य की तीव्रतम गति १९६२ और १९६३ में होगी।

ध्रुवी अक्षांशों से उष्णकटिबन्धी अक्षांशों तक फैला हुआ यह हिन्द महासागर एक सम्पूर्ण महासागर तन्त्र होते हुए भी इतना पर्याप्त छोटा है कि उसका कुल इकाई के रूप में अध्ययन किया जा सकता है। हालांकि किसी एक अकेले राष्ट्र के प्रयासों के लिए यह बहुत ज्यादा बड़ा है किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्रयास के लिए यह आदर्श है। इस खोज में लगभग ३५० विज्ञानियों की सुख-सुविधाओं से युक्त लगभग २० जलपोत भाग ले रहे हैं। उन देशों के जिनमें अनुसंधान-पोत उपलब्ध नहीं हैं, और विशेषतः उन देशों के, जो हिन्द महासागर को घेरे हुए हैं विज्ञानियों को अन्य देशों के जलपोतों पर कार्य करने के लिए आमन्त्रित किया गया है। १७ राष्ट्रों ने, जिनमें संयुक्त राज्य अमरीका और रूस भी शामिल हैं अपने जहाजों और विज्ञानियों के दलों को भेजना स्वीकार कर लिया है।

हिंद महासागर की खोजयात्रा में संयुक्त राज्य अमरीका के शामिल होने का उत्तरदायित्व नेशनल ऐकेडेमी ऑफ साइंसेज की एक विशिष्ट कमेटी—कमेटी ऑन ओशेनोग्राफी—सम्हालती है। कैलिफोर्निया इंस्टीटयूट ऑफ टक्नालाजी के डा० हैरिसन ब्राऊन की अध्यक्षता में काम करने वाली यह कमेटी समुद्र विज्ञान के सम्बन्ध में तमाम दीर्घकालीन परियोजनाएं बनाने के लिए पूर्णत उत्तरदायी है। ब्राऊन कमेटी की पहली बैठक नवम्बर, १९५७ में हुई थी और उसके बाद से उसने समुद्र विज्ञान की आवश्यकताओं और समस्याओं का विस्तृत अध्ययन किया है।

इसने पता लगाया है कि विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में होने वाले प्रयासों की अपेक्षा समुद्र के विज्ञान में होने वाली प्रगति धीमी रही है। यह अनुभव करते हुए कि इस क्षेत्र में उपेक्षा करने में 'हो सकता है अन्त में यह नतीजा निकले कि वैज्ञानिक तकनीकी और सैनिक दृष्टिकोण से हम एक बहुत ही कठिन स्थिति में फस जाएं" कमेटी ने यह सिफारिश की है कि अगले दस वर्षों में मूलभूत अनुसंधान कार्य को दूना कर दिया जाए समस्त महासागर में फैले हुए प्रेक्षणों का एक नया कार्यक्रम बनाया जाए और सैनिक सुरक्षा समुद्री साधनों एवं समुद्री रेडिया-ऐक्टिविटी के क्षेत्रों में अधिक अनुसंधान किया जाए। इस विस्तार किए गए प्रयास में ६५ करोड़ १८ लाख १० हज़ार (६५,१८,१०,०००) डालर का खर्चा आएगा।

कमेटी ने ऐसे विशेषज्ञों की अनेक सूचियां तैयार की जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्रों में विशिष्ट समस्याओं का अध्ययन किया तथा विशिष्ट सिफारिशें दीं। इन सिफारिशों में एक यह सिफारिश भी शामिल थी कि विश्वविद्यालयों में सुविधाएं तथा छात्रवृत्तियां बढ़ाई जाएं ताकि अधिक संख्या में तथा अधिक अच्छे सुशिक्षित समुद्र विज्ञानी गण उपलब्ध हो सकें, और यह भी कि ७० नए अनुसंधान पोतों का निर्माण किया जाए (चित्र ८०) जिनके साथ-साथ १५ अन्य पोतों का आधुनिकीकरण भी किया जाना चाहिए। (संयुक्त राज्य अमरीका में आज समुद्र-विज्ञान सम्बन्धी ८५ जलपोतों का बेड़ा है।) अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के मामले पर कार्य करने वाले दल ने यह सिफारिश की है कि ऐसे कदम उठाए जाएं जिससे कि एक भविष्यविश्वव्यापी (समुद्र विज्ञान संघटन स्थापित किया जा सके। जिसके माध्यम से वे सभी सरकारें जो संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्य हैं महासागर के विषय में मनुष्य की जानकारी बढ़ाने में अपना सहयोग दे सकें।

रेडियोऐक्टिव अपशिष्ट द्वारा महासागर एवं उसके जीवों के संदूषण की समस्या का अध्ययन करने वाले दल ने एक ऐसे कार्यक्रम की सिफारिश की

जिससे यह निर्धारित किया जा सके कि तट के समीप और खुले समुद्र मे फेंका जाने वाला अपशिष्ट परिसंचरण एवं सम्मिश्रण द्वारा किस प्रकार विसर्जित किया जा सकेगा। उन्होंने यह सलाह भी दी है कि समुद्री जल के माध्यम से पौधा
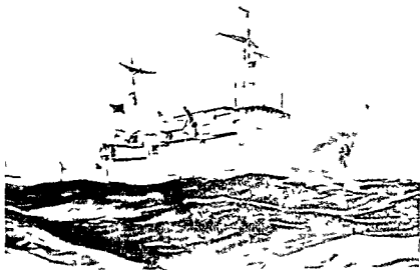
फोटो वुडज होल ओशेनाग्राफिक इंस्टीटयूशन

चित्र ८० नए एटलांटिस द्वितीय का वास्तु शिल्पियो द्वारा बनाया गया चित्र। २१० फुट लबा और ३८ लाख ७६ हजार डालर की लागत से केवल ओशेनोग्राफी के लिए बनाया गया यह सर्वप्रथम अमरीकी जहाज होगा। इससे पहले इसी प्रसिद्ध नाम के जहाज का निर्माण सन १९३१ में किया गया था। इस जहाज का परास ८ हजार मील होगा, इसमें २५ विज्ञानियो और २८ नाविको के आवास की व्यवस्था के अतिरिक्त ऐन्टीरोल टंक, अध समुद्री झरोख और क्रेन द्वारा डेक पर स्थापित की जाने वाली और वहा से उठा ली जाने वाली विशिष्ट उद्देश्यो से बनाई गई प्रयोगशालाएँ होगी।

जन्तुओ और जमादा म होने वाले रेडियाऐक्टिव तत्त्वो के स्थानान्तरण के विषय म भी अध्ययन किए जाए। यह सुझाव भी रखा गया है कि ऐसे अध्ययन किए जाए जिनसे पता चल सके कि रेडियाऐक्टिव पदार्थ के सकेन्द्रण एव वितरण पर जन्तुओ का क्या प्रभाव पडता है। सिफारिश करने वाले इस दल ने यह प्रस्ताव

भी रखा है कि समुद्री जीवों एवं उनकी सन्ततियों के जीवन तथा स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दीर्घकालीन प्रभावों का अध्ययन किया जाना चाहिए।

हम ऐसे आहार साधन का संदूषित किया जाना हरगिज बर्दाश्त नहीं कर सकते जो अंततः संसार के अनेक खाद्याभावग्रस्त क्षेत्रों में प्रोटीन भुखमरी की समस्या को सुलझा सकेगा और यदि कभी परमाणु युद्ध की आग फैली, तो हो सकता है इस भू ग्रह पर यही एक ऐसा साधन बचा होगा जहां संदूषण से अछूता रह गया आहार उपलब्ध हो सकेगा।

समुद्र विज्ञान पर कार्य करने वाली विशिष्ट कमेटी की "ओशेनोग्राफी १९६० टु १९७०" शीर्षक रिपोर्ट में यों सभी सिफारिशें शामिल हैं और अब इस पर कांग्रेस तथा अन्य सरकारी एजेन्सियां गौर कर रही हैं। कांग्रेस ने अभी तक रिपोर्ट के अनुसार कार्य नहीं किया है, लेकिन मार्च, १९६१ में राष्ट्रपति जॉन एफ० कनेडी ने उससे यह अनुरोध किया था कि वह महासागर से सम्बंधित अनुसंधान पर खर्च की जाने वाली सरकारी वित्तीय सहायता को दूना कर दे। राष्ट्रपति ने ९ करोड़ ७५ लाख १ हजार (९ ७५ ०१,०००) डालर की प्रार्थना की जिससे आहार एवं खनिज के भावी समुद्री साधनों का विकास किया जा सके, जलवायु को नियंत्रण करने वाली क्रियाविधियों का अध्ययन किया जा सके, और अघ समुद्री नौसंचालन क्रिया में लाभप्रद नए तथ्यों को इकट्ठा किया जा सके।

राष्ट्रपति कैनेडी की प्रार्थना में समुद्र विज्ञान के व्यावहारिक प्रयोग पर बल दिया गया है जबकि ब्राऊन कमेटी की रिपोर्ट में आधारभूत अनुसंधान की आवश्यकता पर जोर दिया गया है—ऐसे अनुसंधान पर जो प्रयोग के विचार से रहित, केवल ज्ञान की दृष्टि से किया जाता है। व्यावहारिक समस्याओं में प्रयोग किए जाने वाले अनुसंधान की सफलता इस बात पर निर्भर है कि आधारभूत ज्ञान का भंडार पूरा भरा हो।

अनेक विज्ञानियों के लिए व्यावहारिक पहलू सबसे अधिक रोचक एवं उत्तेजनाकारी होते हैं अन्य के लिए प्रकृति के रहस्यों की खोज का रोमांच—अर्थात प्रकृति के नए-नए नियमों की खोज की चुनौती ही—मानो उनके लिए जीवन है। दोनों ही वर्ग उस चीज के अंश हैं जिसे 'विज्ञान' कहते हैं। जैसा कि कुछ लोग परिभाषा देते हैं विज्ञान 'व्यवस्थित ज्ञान राशि' नहीं है। विज्ञान जानकारी का केवल एक "ढेर" नहीं है। यह एक अनुशासित विचार है एक जिज्ञासा है, एक सर्जन है स्वयं विज्ञानी गण है और उसके द्वारा प्रयोग

की जाने वाली विधिया है। यह वह आशा है—अर्थात वह वम है—कि विश्व म व्यवस्था है, कि मानव उस व्यवस्था का ढग निकालगा, कि किसी दिन वह उस परिवेश का, जिसका वह आज दास मात्र है, भविष्य म नियत्रण कर सकेगा। यही सब वे चीज़ें ह जो कुल मिलाकर उस गतिमान, सतत परिवतनशील चीज को बनाती है जिसे हम "विज्ञान" कहते हैं।

लेकिन "ससार को अधिक अच्छी रहने वाली जगह बनाने वाला विज्ञान नहीं होगा, और न ही विज्ञान "ससार का नष्ट करेगा। यह सब कुछ करने वाला होगा मानव। विज्ञान ने उसे इनमे से कोई सी भी चीज करने के लिए साधन प्रदान किए है—वह क्या करना पसन्द करता है यह हर मानव की जिम्मेदारी है।

सदर्भ ग्रन्थ तथा और अधिक अध्ययन के लिए कुछ सुझाव

अध्याय १

"बायोग्राफी आफ दि अथ", ले० जाज गमा। न्ययाक न्यू अमरिकन लाइब्रेरी (मेंटर पपरबैक), १९८८
पथ्वी क उदभव क विभिन्न सिद्धाता पवत निर्माण महाद्वीपा के उद्भव, बीत युगा क जलवायु तथा पथ्वी की आन्तरिक रचना के बारे म एक बहुत ही स्पष्ट रूप म लिखा हुआ और काफी सरल विवरण।

"दी निवेशन आफ यनिवस", वही १९५७
आकाश गगाआ तारा और ग्रहा क उद्भव स सबधित विभिन्न सिद्धाता का एक रोचक विवरण।

अध्याय २

"दी वायेज आफ दी बीगल', ले० चाल्स डार्विन। न्यूयाक बैंटम बुक्स, इन० (पपरबक), १९५८
डार्विन की साहसिक यात्रा, उसक अपन ही शब्दा म।

"दी फिजिक्स एण्ड केमिस्ट्री आफ लाइफ"। न्ययाक सिमन एण्ड शुस्तर इन० (पेपरबैक), १९५५

साइटिफिक अमेरिकन नामक पत्रिका से लिए गए, जीवन क लिए आवश्यक विविध भातिकीय एव रासायनिक प्रक्रमा से सम्बन्धित अधिकारपूर्ण लेखा का सग्रह।

"दी ओरिजिन आफ लाइफ", ले० ए० आई० आपरिन। न्यूयार्क डावर पब्लीकेशन्स, इन० (पेपरबैक), १९५३
इस पुस्तक की विषय सामग्री का पूरा तरह समझने के लिए रसायन और जीव विज्ञान की कुछ जानकारी आवश्यक है किन्तु इस विलक्षण पुस्तक को पढ़ने से हर किसी का लाभ होगा।

अध्याय ३

"रिपोर्ट ऑन दी साइंटिफिक रिजल्टस आफ दी एक्सप्लोरिंग वायेज आफ एच० एम० एस० चलेंजर", १८७३-७६। ले० खोजयात्रा के सदस्य तथा अन्य। एडिम्बरा, दी चलेंजर आफिस १८७६-१८९५ ५० जिल्द। जिल्द १ में "नैरेटिव ऑफ दी क्रुइज" इस यात्रा का विस्तृत विवरण है और पढ़ने में बड़ा ही रोचक। जिल्द २ में इस प्रसिद्ध खोजयात्रा के प्रारम्भ तक का समुद्र विज्ञान सम्बन्धी पूर्ण इतिहास दिया गया है।

"दी ओशन्स", ले० एच० यू० स्वेरड्रुप, मार्टिन डब्ल्यू० जॉनसन और रिचार्ड एच० फ्लेमिंग। न्यूयार्क प्रेंटिस हाल, इन० १९४२
समुद्र विज्ञानियों की "गीता"—समुद्र विज्ञान का प्रामाणिक मूलपाठ और सहायक पुस्तक।

अध्याय ४

"फार्देस्ट नार्थ", ले० फ्रिटजॉफ नानसेन। लन्दन जार्ज न्यूनस लि०, १८९८। २ जिल्दें।
जलयान फ्राम के विस्थापन और नानसेन की स्लेज यात्रा का रोमांचकारी, अत्यन्त पठनीय विवरण।

"दी गल्फ स्ट्रीम", ले० हेनरी स्टामेल। बर्कले दी यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, १९५८
अधिक गहन अध्ययन करने वाले के लिए इस महान धारा-तन्त्र का तकनीकी वर्णन।

"दी सकुलेशन आफ दी ओशन", ले० वाल्टर मंक। "साइंटिफिक अमेरिकन" सितम्बर १९५५ का एक लेख।

"दी ऐनाटमी आफ दी ऐटलांटिक", ले० हेनरी स्टामेल। "साइंटिफिक अमेरिकन", जनवरी, १९५५
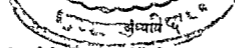
"फिजिकल जियाग्रैफी ऑफ दी सी", ले० मथ्यू फौटेन मारी। न्यूयार्क : हार्पर एण्ड ब्रदर्स, १८५५।
समुद्र विज्ञान पर अग्रेजी भाषा म लिखी गई पहली पुस्तक। हालांकि इसम निकाल गए अनेक निष्कर्ष अब पुरान हो चुके है, फिर भी पुस्तक बडे ही मनाग्राही और आलकारिक ढग से लिखी गई है, और रोचक तथा पढन योग्य है।

"दी सकुलेशन आफ दी एबिस", ले० हनरी स्टौमल। "साइटिफिक अमेरिकन", जुलाई, १९५८
इसम महासागर की गहराइया म होन वाले परिसचरण से सम्बधित स्टामल का नया सिद्धात दिया गया है।

अध्याय ६

"कान टिकी", ले० थार हयरडहाल। शिकागो रैंड मैकनली एण्ड क०, १९५०
साहसिक काय समुद्र, अथवा उसम पाए जान वाले जन्तुआ म रुचि रखन वाल हर किसी क पढन क याग्य अति-आवश्यक पुस्तक।

"दी ग्रेट एण्ड वाइड सी", ले० आर० ई० कावर। चैपल हिल, यूनिवर्सिटी ऑफ नाथ कैरालिना प्रेस, १९४७।
समुद्र विज्ञान के तमाम पहलुआ से सम्बधित पुस्तक, किन्तु जिसम समुद्र म पाए जाने वाले जीवा से सम्बधित सात उत्कृष्ट अध्याय दिए गए है।

"दी एज ऑफ दी सी", ले० रचेल कासन। बास्टन हफटन मिफिलन क०, १९५५ न्यूयार्क दी न्यू अमेरिकन लाइब्रेरी (मटर पेपरबैक) १९५९
समुद्र तट क समीपवर्ती जीवा के बार म एक मनोहारी पुस्तक जिसम सही-सही और आकषक चित्र दिए गए ह और पुस्तक के अत म समुद्री जन्तुआ के वर्गीकरण और उनके सक्षिप्त विवरण पर एक परिशिष्ट दिया गया है।

अध्याय ७

"दी गलेथीया डीप सी एक्सपेडीशन", ले० आजयाशा के सदस्य गण। लन्दन जाज ऐलेन एण्ड अनविन लि०, १९५६ न्यूयार्क दी मैकमिलन क०, १९५६

गहराइयों पर पाए जाने वाले जीवन से लेकर कुछ हिन्द प्रशान्त द्वीपों के विचित्र निवासियों तक इस खोजयात्रा के तमाम पहलुओं पर लिखे गए लेखों का आवश्यक संग्रह।

"दी ओशेन सी—इटस नेचुरल हिस्ट्री दी वर्ल्ड आफ प्लैंकटन", भाग I, ले० ऐलिस्टर सी० हार्डी। लन्दन कौलिन्स एण्ड सन्स, लि० १९५६ बास्टन हफ्टन मिफ्लिन क०, १९५६

"दी ओशेन सी—इटस नेचुरल हिस्ट्री फिश एण्ड फिशेरीज", भाग II वही १९५९

समुद्र के जीवों के बारे में चित्रों से भरपूर एक सम्पूर्ण और सुलभ विवरण।

अध्याय ८

"विंड वेव्ज ऐट सी, ब्रेकर्स एण्ड सर्फ", ले० हनरी बी० बीग्लो तथा डब्ल्यू० टी० एडमन्डसन। यू० एस० नेवी हाइड्रोग्राफिक आफिस, प्रकाशन संख्या ६०२ वाशिंगटन यू० एस० गवर्नमेंट प्रिंटिंग आफिस, १९४७

खुले समुद्र और तट-रेखा के सहारे-सहारे, दोनों की लहरों का एक रोचक और अत्यन्त पठनीय विवरण।

"ओशन वेव्ज", ले० विलार्ड बास्कोम। साइंटिफिक अमेरिकन, अगस्त, १९५९

अध्याय ९

"दी हार्ट आफ दी ऐंटार्कटिक", ले० ई० आर० शैकल्टन। फिलाडेल्फिया जे० बी० लिपिनकट क०, १९०९, २ जिल्दें।

१९०७ ८ की ब्रिटिश ऐंटार्कटिक एक्सपेडिशन के अनुभव के आधार पर दिया गया यह विवरण पाठक को दक्षिण ध्रुव प्रदेशों में "पहुंचा देता है।" साथ ही यह भी देखिए—"दी होम ऑफ ब्लिजर्ड" ले० डागलास मौसन। वही, १९१४

"ऐंटार्कटिक स्काउट", ले० रिचार्ड ली चैपल। न्यूयार्क डाड मीड एण्ड क०, १९५०

१९५७ ५८ के अन्तर्राष्ट्रीय भू भौतिकी वर्ष के उपलक्ष्य में दक्षिण ध्रुव-प्रदेश की खोजयात्रा पर कैसा कुछ लगा, उसका एक बाय-स्काउट द्वारा दिया गया विवरण जिसने शीत ऋतु लिटिल अमेरिका पर बिताई थी।

"**एब एण्ड फ्लो दी टाइडस आफ अथ, एयर एण्डवा टर**", ले० ऐलनट डफाट । ऐन आबर दी० यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगेन प्रेस, १९५८
एक अध-तकनीकी पयवेक जिसम पाठक को ज्वार यान्त्रिकी और सिद्धान्तो का पूरा और सक्षिप्त विवरण पढ़ने को मिलेगा।

"**दी टाइड**", ले० एच० ए० मारमर। न्यूयाक डी ऐप्पलटन एण्ड क०, १९२६
हालाकि यह पुस्तक कुछ वष पुरानी हो गई है फिर भी उस समय से अब तक ज्वार सिद्धात म अधिक जानकारी नही बढ़ी है और इसमे ज्वारो के सम्बध म बहुत ही स्पष्ट रूप म लिखा हुआ और आसानी से समझ म आ जाने वाला विवरण दिया गया है ।

अध्याय १० और ११

"**वेस्टवड हो विद दी ऐल्बेट्रास**", ले० हैस पैटसन। न्यूयाक ई० पी० डटन एण्ड क० १९५३
१९४७ ४८ मे पूरी पथ्वी की परिक्रमा करने वाली स्वीडिश गभीर सागर खाज यात्रा के इस अत्यन्त पठनीय वणन मे गभीर क्रोड और तली के नमूने लेने के बारे म बहुत जानकारी है।

"**दी ओशन फ्लोर**", ले० हैस पैटसन। न्यू हवन येल यूनिवर्सिटी प्रेस, १९५४।
समुद्र के फश पर पाई जाने वाली दशाओ का तथा वे वहा किस प्रकार बनी, इस सम्बध मे प्रस्तुत सिद्धातो का एक सामान्य विवरण ।

"**दी अथ बिनीथ दी सी**", ले० फ्रासिस पी० शेपड । बाल्टीमूर दी जान हापकिस प्रेस, १९५९
समुद्र भू विज्ञान पर एक आधुनिक तथा लोकप्रिय पुस्तक, जिसम तट रेखा तथा पुलिन क्रम भी शामिल है चित्रो से अच्छी तरह सुसज्जित ।

"**ए होल इन दी बाटम ऑफ दी सी**", ले० विलार्ड बैस्कोम । न्यूयाक डबलडे एण्ड क०, इन १९६१
मोहोल योजना का इतिहास और उसकी पष्ठभूमि ।

अध्याय १२

"**सेवन माइल्स डाउन**", ले० जक्स पिकाड एण्ड रावट एस० डीटज। न्यूयाक जी० पी० पुटनाम्स सस ।

टीर्स द्वारा गाता लगान के सब पुरान रिकाडा का ताड देन वाले गान का विवरण, जिसके साथ साथ उसके तथा एफ० आर० एन० एस० २ क द्वारा लगाए गए कई अन्य गोता का भी विवरण दिया गया है।

"ओशेनोग्राफी एण्ड मैरीन बायोलाजी", ले० एच बानम। लन्दन जाज एलन एण्ड अनविन लि०, १९५९ न्यूयाक दी मैकमिलन क० १० ० इसम "व्यापार के औजारा मे से अनक का विवरण दिया गया है तथा जल के नीचे काम करने वाले टेलीविजन तथा जीव विज्ञानिया द्वारा प्रयाग किए जान वाले जाला तथा ट्राला पर भी अध्याय दिए गए है।

अध्याय १३

"दी सन, दी सी एण्ड टुमारो", ले० एफ० जी० वाल्टन स्मिथ तथा हेनरी चैपिन। न्यूयाक चाल्स स्क्रिब्नस सस १९५८ समुद्र का आहार ऊर्जा तथा खनिजा के स्रात के रूप म लिया गया है।

"लिविंग रिसोर्सेज आफ दी सी", ले० एल० ए० वाल्फार्ड। न्यूयाक दी रानल्ड प्रेस क०, १९५८

"सी वीड्ज एड देयर यूसेज", ले० ज० जे चपमन। न्यूयार्क जी० पी० पुट नामस सस, १९५२

"वाटर मिरक्ल आफ नेचर", ले० टी० किग। न्यूयाक दी मैकमिलन क०, १९५५

"ओशनोग्राफी १९६० टु १९७०", ले० कमिटी आन ओशनाग्राफी। वाशिंगटन नेशनल एकेडमी आफ साइसेज—नेशनल रिसर्च काउंसिल। ११ अध्याय। इसके विशिष्टत तीसरे अध्याय—"ओशेन रिसोर्सेज", तथा पाचव अध्याय—"आर्टिफिशल रेडियोएक्टिविटी इन दी मरीन एनवाइरनमेंट" का देखिए। हर अध्याय एक पृथक पुस्तिका के रूप म भी प्रकाशित हुआ है और व प्राथना पर प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग आफिस एन० ए० एस०—एन० आर० सी०, २१०१ कन्स्टीटयूशन ऐवे० वाशिंगटन २५, डी० सी० स प्राप्त किय जा सकते है।

हिन्दी-अंग्रेजी शब्दावली

अ

अंतरातारकीय	interstellar
अंतरिक्ष	space
अंतःधारा	undercurrent
अंतर्भौमिक	subterranean
अंतःसर्पी	telescopic
अकशेरुकी	invertebrate
अटॉल	atoll
अतितप्त	superheated
अत्यंतनूतन युग	pleistocene
अधस्तल	floor
अधःप्रवाह	undertow
अध्यारोपण	superimposition
अनुनाद ज्वार	resonance tide
अनुनादी	resonating
अनुमाप	scale
अन्योन्यक्रिया	interaction
अपकेन्द्री बल	centrifugal force
अपघटन	decomposition
अपरदन	erosion
अपवर्तन	refraction
अपक्षय	weathering
अप्रयोग	disuse
अभिसरण	convergence
अयस्क	ore
अरेडियोजेनी	nonradiogenic
अर्ध आयु	half life
अर्ध-ठोस	semisolid
अल्पकालिक झंझा	squall
अवतलन	subsidence
अवधाव	avalanche
अवपंक	slime
अवरक्त	infrared
अवशेष	rudiment
अवसाद	sediment
अवक्षय	depletion
अशन-साधन	feed back mechanism
असांतत्य	discontinuity

आ

आकाश गंगा	galaxy milky way
आधार समतल	datum plane
आमापन	assay

हिन्दी	English
आद्रता	humidity, moisture
आलेखन	plotting
आवर्त काल	period
आवृत्ति	frequency
आश्मिक	stony
आसवन	distillation
उ	
उत्तरजीविता	survival
उत्तर ध्रुव वृत्त	arctic circle
उत्पाद	product
उत्परिवर्तन	mutation
उत्प्लावकता	buoyancy
उद्गार	eruption
उद्भव	origin
उपस्कर	equipment
उभार	rise, relief
उर्वरक	fertilizer
उर्वरण	fertilization (of soil)
उल्कापिण्ड	meteorite
ऊ	
ऊर्जा	energy
ऊर्ध्वाधर	vertical
ऊर्मिका	ripple
ऋ	
ऋतु मानचित्र	synoptics
ए	
एककोशिक	unicellular
एन्जाइम	enzyme
ऐ	
ऐमिनो अम्ल	amino acid
ऐम्फिबियन	amphibian
ऐलुमिनाट	alumnot
क	
कपासी वर्षी मेघ	cumulonimbus
कवच	shell
कशाभिका	flagellum
कशेरुक	vertebra
कक्षा	orbit
कारक	factor
कुतुबनुमा (दिक्सूचक)	compass
कुहासा	fog
केबिल	cable
कैलॉरी	caloric
कैशलॉट	cachalot
कोशिका	cell
क्रमिक	graded
क्रोड	core
क्रोमोसोम	chromosome
क्षितिज	horizon
क्षुद्र ग्रह	asteroid
ख	
खगोलज्ञ	astronomer
खनिज जल	mineral water
ग	
गठन	architecture
गणित्र	counter
गर्त	depression
गंभीर खड्ड	canyon
गभीरता मापन	sounding
गाद	silt
गिरिपिण्ड	massif
गिल रचना	gill raker
गुरुत्व	gravity

गुरुत्वमापी	gravimeter
गुहा	cave
गयो	guyot
गोलाश्म	boulders
ग्रन्थिकाएं	nodules
ग्रह	planet
ग्रेनाइट	granite
घ	
घटी यन्त्र	clock work
घर्षण	friction
घाटी	valley
घूर्णन	rotation
घूर्णन ऊर्जा	rotational energy
च	
चक्रण	spinning
चाटी	raft
चाल	speed
चुम्बकीय विस्फपण	magnetostriction
ज	
जलसह	waterproof
जीन	gene
जीवन्त	living
जीवन संघर्ष	struggle for existence
जीव रसायन	biochemistry
जीव संदीप्ति	bioluminescence
ज्वार रेखा	tide line
ज्वारीय धाराएं	tidal currents
ज्वालामुखी उद्भव	volcanism

झ	
झंझा	gale
झंझावात	blizzard
झोंक	gustiness
ट	
टाइफून	typhoon
ट्रेंच	trench
ड	
डायटम	diatom
डॉल्ड्रम	doldrum
डेक	deck
ड्रेज	dredge
त	
तट	coast
तटीय प्रवाल भित्ति	fringing reef
तरंग	wave
तरंग पराम	fetch
तरंग द्रोणी	trough of waves
तरंग रोध	breakwater
तरंग श्रृंग	crest of waves
तरंगिकाएं	rip currents
तल मार्जन	dredging
तली	bottom
ताप प्रवणता	thermocline
तारत्व	pitch
तिमिवसा	blubber
त्रिविमीय	three dimensional
द	
दक्षिणावर्त	clockwise
दाब	pressure
दाब विद्युत	piezoelectric

दिक् सूचक (कुतुबनुमा)	compass
दिनांक रेखा	date line
दीर्घ वृत्त	ellipse
दूर दर्शक	telescope
देशांतर	longitude
दोलन	oscillation
द्रवण	condensation
द्रव्यमान	mass
द्रोणी	basin
ध	
धातुमल	slag
धारा रेखित	streamlined
धूमकेतु	comet
धूमिल	smoked
ध्रुवीय वाताग्र	polar front
ध्वनि-परास	sound ranging
न	
नासाद्वार	nostril
निक्षेप	deposit
निमग्न	submerge
नियंत्रक	regulator
निर्गम	output
निर्वात मार्जक	vacuum cleaner
निवेश	input
नीहारिका	nebula
नौतल	keel
न्यूक्लिइक अम्ल	nucleic acid
प	
पक्ष	fin
पठार	plateau
पदार्थ	matter
पनडुब्बी	submarine
परभक्षी	predator
परमाणु	atom
परवर्ती	secondary
पराबैंगनी विकिरण	ultraviolet radiation
परावर्तन	reflection
पराश्रव्य	ultrasonic
परिक्रमण	revolution
परिचालन गृह	conning tower
परिच्छेदिका	profile
परिध्रुव धारा	circumpolar current
परिपथ	circuit
परिसंचरण	circulation
पात	node
पाद	limb
पारगामी	transparent
पालिपक्ष	lobefin
पिच्छफलक	vane
पुच्छ पालि	fluke
पुलिन	beech
पूरवेला (चढ़ती ज्वार)	flood tide
पूर्वघोषणा	prediction
पोषण	nutrition
प्रकाश संश्लेषण	photosynthesis
प्रकाश-स्तम्भ	lighthouse
प्रक्रम	process
प्रतिकृति	replicate
प्रतिचक्रवाती	anticyclonic
प्रतिच्छेद	intersection
प्रतिचयन	sampling
प्रतिचयनी	sampler

प्रतिधारा	countercurrent
प्रतिध्वनि	echo
प्रतिबल	stress
प्रतिसार	recession
प्रत्यावर्ती धारा	alternating current
प्रदीपी	luminous
प्रभंजन	hurricane
प्रमापी	gauge
प्ररोह	shoot
प्रवर्धन	amplification
प्रवाल	coral
प्रवाल भित्ति	coral reef
प्रवाल रोध	barrier reef
प्रवेश कूपकी	entrance shaft
प्रसुप्त	dormant
प्रायोजना	plan
प्रावार	mantle
प्रेक्षण	observation
प्लव	float
प्लावी हिमपुंज	pack ice
प्लावी हिमशैल	iceberg
प्लूटो	Pluto
फ	
फर्थ	firth
फासिल	fossil
फैदम	fathom
फुप्फुस	lung
फेनिल तरंग	surf
फ्लूक	fluke
ब	
बंसी मछली	angler fish
बाज	barge
बालू भित्ति	sand bar
बीजाणु	spore
बुदबुदा	bubble
बुध	Mercury
बृहत ज्वार	spring tide
बृहस्पति	Jupiter
बेथिस्कैफ	bathyscaph
बेथिस्फीयर	bathysphere
ब्वॉय	buoys
भ	
भार साइलो	ballast silo
भग्नोर्मि	breaker
भार	ballast
भाटा	ebb
भूकम्प	earthquake
भूकम्प लेखी	seismograph
भूकम्पी-तरंग	seismic wave
भृगु	cliff
भू गणितीय	geodetic
भू-पपड़ी	crust of earth
भू भौतिकी	geophysics
भू भौतिक विज्ञानी	geophysicist
भूस्खलन (भू भ्रंश)	land slide
भ्रंश	fault
म	
मंगल	Mars
मत्स्य	fish
मत्स्य-उत्पत्तिशाला	hatchery
मत्स्य-पालन	fish farming
मत्स्य पालन केन्द्र	fish farm
मलिनता	turbidity
महातरंग	swell
महाद्वीप	continent

महाद्वीपीय शेल्फ	continental shelf
मान	value
मानव-जाति विज्ञान	ethnology
मानव विज्ञान	anthropology
मापना	scale
मिलिगैल	milligal
मेथेन	methane
मैग्मा	magma
य	
याट	yacht
याम्योत्तर	meridian
युक्ति	device
युग	epoch
यूरेनस	Uranus
यौगिक	compound
र	
रुण्डित	truncated
रश्मियोजना	radiogeny
ल	
लघु उल्कापिंड	micrometeorite
लघुतम ज्वार	neap tide
लघुनिवेशिका	cove
लघुपथ युक्ति	short circuited
लवण जल	salt water brine
लवणतामापी	salinometer
लोलक	pendulum
लौह उल्कापिंड	iron meteorite
व	
वक्रता	curvature
वर्णक	pigment
वायवीय बरमा	pneumatic drill
वायु-धौंकनी	airbladder
वायु पुनरुत्पादक	air regenerator
वायुमंडलीय दाब	atmospheric pressure
वाष्पन	evaporation
वाष्पमुख	fumarole
विंच	winch
विकास	evolution
विक्षेप	deflection
विघटन	disintegration
वितल	abyss
विदारी	disrupting
विद्युत रोधी	insulator
विभंग	fracture
विरलित गैस	rarefied gas
विशिष्टीकरण	specialization
विषुवत्-वृत्त	equator
विसर्जन	discharge
विसर्प	meanders
विस्थापन	drift
वेग	velocity
श	
शनि	Saturn
शर्करा	sugar
शामक औषध	sedative
शारीर	anatomy
शिला निक्षेप	ledge
शीतलन	cooling
शीतोष्ण	temperate
शैल	rock
शैवाल	alga
शुक्र	Venus
शख-कृमि	bristle worm
शाख-वाहिका	fellow lups